UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182458

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—552—7-7-66—10,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83/B22G Accession No. H1426

Author

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.

सासामयिक हित्य-माला का २०वाँ पुष्प : सम्पादक—श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी'

गण-देवता

(सामाजिक उपन्यास)

★

मूल लेखक

ताराशंकर बन्ध्योपाध्याय

अनुवादक

बी० पी० 'माधव'

संपादक—'विश्वबंधु'

प्रकाशक—

सामयिक साहित्य-सदन,

लाहौर

प्रकाशक—

उमाशंकर त्रिवेदी, एम० ए०

व्यवस्थापक—सामयिक साहित्य-सदन,

चेम्बरलेन रोड, लाहौर।

प्रथमावृत्ति १९४७

मूल्य ५)

मुद्रक—

ला० खुशहालचन्द 'आनन्द

वीर मिलाप प्रेस,

बाहर मोरी दर्वाज़ा, लाहौर।

अनुवादक की ओर से

राष्ट्र-भारती के पुजारियों ने ताराशंकर बंध्योपाध्याय की समर्थ कला को समझने में विलम्ब नहीं किया। आपके 'मन्वन्तर' का प्रथम संस्करण प्रकाशित होने के कुछ दिन बाद ही समाप्त हो गया था। अब आपकी दूसरी कृति 'गण-देवता' राष्ट्र-भाषा को भेंट की जा रही है।

'गण-देवता' मूलतः सामाजिक उपन्यास है। इसमें तारा बाबू ने उस भारतीय समाज-व्यवस्था के खण्डहरों की चर्चा की है जिसमें व्यक्ति ग्राम से और ग्राम शतग्राम से जुड़ा हुआ था। आपने उन कारणों का भी विशद् दिग्दर्शन कराया है जिनसे यह भव्य शृंखला छिन्न-भिन्न हो गई है। भारतीय समाज व्यवस्था के केन्द्र को ही आपने 'गण-देवता' कहा है और उसे शांति एवं संतोष पूर्ण माना है। 'मन्वन्तर' के कुछ पाठकों को ऐसा जान पड़ा है कि तारा बाबू कम्यूनिष्ट हैं। हम तारा बाबू की राजनीतिक विचार-धारा से परिचित नहीं हैं; अपने साहित्य में वे विशुद्ध साहित्यकार ही हैं। इसीलिए उन्होंने 'गण-देवता' के प्रथम भाग के अंतिम परिच्छेद में वर्तमान मशीनी सभ्यता की दिखाऊ चमक-दमक और अंतर के अनंत हाहाकार का खेद के साथ उल्लेख किया है। हमारी नम्र सम्मति में 'गण-देवता' वह पहला उपन्यास है जिसमें व्यक्ति को कहानी का लक्ष्य न बना कर संस्कृति के परिवर्तन को लक्ष्य माना गया है और भारतीय संस्कृति का कलापूर्ण एवं मनोरम चित्रण हुआ है।

भारतीय संस्कृति के भग्नावशेष अधिकांशतः देहात में ही हैं। 'गण-देवता' का क्षेत्र भी देहात ही है। उसके पात्र समाज के सब वर्गों से लिए

गये हैं, परन्तु अधिकांश वे हैं जिन्हें समाज में ऊंचा नहीं माना जाता। नगर का कोई चित्र इस उपन्यास में नहीं आया। इस दृष्टि से भी यह हिन्दी में अपने ढंग का पहला उपन्यास है। ऐसा भी कोई उपन्यास हम ने नहीं देखा जिस में देहात के दैनिक जीवन का ऐसा मर्मस्पर्शी, व्यापक एवं सूक्ष्मातिसूक्ष्म चित्रण हुआ हो। ताराबाबू की सूक्ष्म अनुभूति एवं समर्थ लेखनी के निकट यह आश्चर्य की बात नहीं है कि वे ऐसी कठिन पृष्ठभूमि में भी पूर्ण सफल हुए हैं और उपन्यास का मूलतत्व कहीं भी खण्डित नहीं हुआ। पाठक के सामने चल-चित्र जैसे दृश्य आते हैं और वह उन में तन्मय हो जाता है। महामहिम न्यायरत्न, सती स्वैरिणी दुर्गा, धार्मिक देबू और विलक्षण हरिघोष ही नहीं प्रत्येक पात्र इतना सजीव है कि आंखों से ओझल ही नहीं होता।

'गण-देवता' का अनुवाद करने वाले के सामने कई कठिनाइयाँ थीं। उपन्यास का क्षेत्र शस्य श्यामला बंग-भूमि है। यह विशेषता हटा कर उसे सारे भारत के देहात पर चिपकाने की चेष्टा की जाती तो उपन्यास का आधा सौंदर्य नष्ट हो जाता। बंग-भाषा को देहात का चित्रण करने में एक सुविधा है कि वह प्रांतीय भाषा है और उस के पाठक देहात के दैनिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाली शब्दावली से परिचित हैं। राष्ट्र-भाषा का क्षेत्र व्यापक है और उसमें यह सुविधा नहीं है। देहात के दैनिक जीवन से सम्बन्धित शब्दावली भी अभी पूरी नहीं हुई। जहाँ तक हो सका प्रयत्न किया गया है।

आशा है कि पाठक तारा बाबू की इस कृति का भी आदर के साथ रसास्वादन करेंगे और इसका दूसरा खण्ड तथा तारा बाबू की अन्य कृतियाँ भी राष्ट्र भारती के भण्डार में आ जायेंगी।

—अनुवादक

—एक—

बात साधारण है, परन्तु गाँव भर में बेचैनी और हलचल फैल गई है। गाँव के लुहार अनिरुद्ध कर्मकार और बढ़ई गिरीश सूत्रधर ने नदी पार वाले कस्बे में एक-एक दूकान खोल ली है। दोनों बड़े सवेरे जाते हैं और रात में दस बजे लौटते हैं। इससे गाँववालों की असुविधा का कोई ठिकाना नहीं रहा। वही जानते हैं कि इस फ़सल में उन्हें कितना हैरान होना पड़ा है। हल में फार लगवाने और गाड़ियों के पहिए ठीक कराने में लोहे के चने चबाने पड़े हैं। गिरीश के घर पर गाँव भर की लकड़ी के ढेर फाल्गुन और चैत्र से पड़े हैं, लेकिन नये हल अब तक नहीं मिले।

गाँव वाले अनिरुद्ध और गिरीश पर बुरी तरह क्रुद्ध हो हो रहे थे, परन्तु फ़सल के समय में उन बातों पर बिगड़ने का वक्त भी उनके पास न था। उन्हें आवश्यकतानुसार मीठी

बातें बना कर अपना काम निकालना था, वे रात रहते ही अनिरुद्ध के घर गये हैं, और उसे रोक कर अपना काम करा लिया है, बड़ी जरूरत पड़ने पर फार लिए और गाड़ी के पहिए तथा हाल घुमाते हुए, कस्बे की तरफ़ दौड़े हैं। कस्बा गाँव से कुल चार मील दूर है, लेकिन अकेली मयूराक्षी नदी ही बीस कोस के समान हो जाती। वर्षा में भरी नदी पार करने में हो डेढ़ घण्टे लग जाते हैं। गर्मी में जब नदी सूख जाती है, तब आधे मील तक फैली रेत में गाड़ी ले जाना आसान काम नहीं होता। नदी पर रेलवे का एक पुल है, परन्तु वहाँ तक पहुँचने में चक्कर लगाना पड़ता है, फिर लाइन के पास रास्ता इतना ऊँचा और तंग है कि गाड़ी चढ़ा ले जाने में एड़ी का पसीना चोटी पर पहुँचता है।

अब खेती पक गई है, काटने के लिए हँसिओं की जरूरत है। लुहार सदा से लोहा लेकर हँसिए बनाता रहा है—पुराने हँसियों पर सान धरता रहा है, बढ़ई उनमें बेंट लगाता रहा है। परन्तु लुहार और बढ़ई एक समस्या हो गये हैं, जो अनिरुद्ध के हाथ से पार हो गया है, वह गिरीश के हाथ में अटका पड़ा है और परेशान हो रहा है। अंत में गाँव वालों ने पंचायत बुलाई। एक दिन निश्चित करके आस-पास के दोनों गाँवों के आदमी जमा हुए, अनिरुद्ध और गिरीश को भी बुलाया गया, शिवाले के पास चण्डी मण्डप में पंचायत बैठी। शिवाले में महेश्वर महादेव की मूर्त्ति है, पास ही ग्राम-देवी भाँगा-

काली की वेदी है । कालीजी का मंदिर जब बनाया गया है तभी टूट गया है, इसीलिए उनका नाम भाँगा काली पड़ गया है। चंडी-मण्डप भी बहुत पुराना है, छत में लगी मजबूत लकड़ियों से ऐसा जान पड़ता है कि इसे अजर अमर बनाने की चेष्टा की गई है। नीचे की गच सनातन रीति से मिट्टी की ही बनी है। इसी चण्डी-मण्डप में दरी, चटाई और टाट आदि बिछाए गये हैं और पंचायत बैठी है।

गिरीश और अनिरुद्ध से भी आये बिना नहीं रहा गया, यथासमय वे दोनों उपस्थित हुए। पंचायत में दोनों गाँवों के मातबर आदमी जमा हो चुके हैं। हरीश मण्डल, भवेश पाल, मुकुन्द घोष, कीर्तिवास मण्डल, नटवर पाल—ये सब वजनदार आदमी और गाँव के मातबर किसान हैं। बगल वाले गाँव से द्वारिका चौधरी भी आ गये हैं। चौधरी इस इलाके के विशिष्ट प्रवीण और माननीय व्यक्ति हैं। उनका आचार-व्यवहार और विचार-विवेक सब की श्रद्धा प्राप्त करता है। चौधरी के पुरखे ही इन दोनों गाँवों के जमींदार थे—ये सम्पन्न किसान ही रह गये हैं। दूकानदार वृन्दावन दत्त भी उपस्थित है। साधारण स्थिति के अल्पवयस्क किसान गोपेन पाल, राखाल मण्डल और रामनारायण घोष भी पहुँच गये हैं। इस गाँव में रहने वाले एकमात्र ब्राह्मण हरेन्द्र घोषाल और उस गाँव के निशि मुखर्जी और पियारी बाड़ुज्या भी बैठे हैं।

पंचायत में बीच के प्रतिष्ठित स्थान पर छिरू पाल जमा है,

वह स्वयं ही इस स्थान पर आकर डट गया है। छिरू या श्री हरि पाल इस गाँव का नया धनी है। लोगों का अनुमान है कि छिरू इस इलाके के धनियों में किसी से कम नहीं है। छिरू की आकृति लम्बी-चौड़ी और प्रकृति हल्की एवं दुर्धर्ष है। इसीलिए उसे वह प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं हुई जो समाज धनियों को दे देता है। अभद्र, गँवार, क्रोधी और चरित्रहीन धनी छिरू पाल से लोग मन में घृणा करते हैं। प्रकट रूप में डरते हुए भी उसे सम्पदोचित सम्मान नहीं देते। छिरू सबसे इसीलिए क्षुब्ध और विरक्त रहता है कि वे उसका आदर नहीं करते। उसने बलपूर्वक प्रतिष्ठा प्राप्त करने का निश्चय भी कर लिया है, इसीलिए सामाजिक अवसरों में प्रतिष्ठित स्थान पर ही डट कर बैठता है।

एक बलिष्ठ, दीर्घकाय और श्यामवर्ण युवक उदासीन भाव से एक खम्भे के सहारे खड़ा है। वह इस गाँव के एक किसान का लड़का देवनाथ घोष है। देवनाथ अपने हाथ से खेती नहीं करता बल्कि स्थानीय यूनियन बोर्ड के फ्री स्कूल में पंडित हो गया है। पंचायत में आने की विशेष इच्छा न होते हुए भी वह आया है। वह जानता है कि अनिरुद्ध जो अन्याय कर रहा है उसकी जड़ कहाँ है और जिस पंचायत में छिरू पाल जैसा व्यक्ति शिरोमणि बन कर बैठा हो उस पंचायत पर वह आस्था नहीं कर सकता। इसीलिए उसके चेहरे पर निस्पृहता है और वह मौन उपेक्षा के साथ एक ओर खम्भे के

सहारे खड़ा है। उस गाँव के कृपण महाजन—रामहरि चक्रवर्ती के पोष्य पुत्र—हेलाराम चटर्जी और इस गाँव के डाक्टर जगन्नाथ घोष ही दो ऐसे व्यक्ति हैं जो पंचायत में नहीं आए। गाँव का चौकीदार भूपाल तक हाजिर है। मण्डप के एक ओर बच्चे अपनी पंचायत कर रहे हैं और दूसरी ओर हरिजन किसान खड़े हैं। यही इस गाँव के किसान-मजूर हैं—अमुविधा का तीन-चौथाई भार इन्हीं की गरदन पर पड़ता है।

अनिरुद्ध और गिरीश पंचायत में आकर बैठे। दोनों की वेशभूषा पर शहर की छाप लगी है। पंचायत के पास पहुँच कर ही उन्होंने सिगरेट फेंकी है।

अनिरुद्ध ने ही बात प्रारंभ की; बैठते ही हाथ से अच्छी तरह मुँह पोंछ कर बोला; "हाँ फिर, जो कहना हो, कहा जाय। हम तो मेहनत-मजूरी करके खाते हैं। हमारा आधा दिन ही मिट्टी हो गया।"

बात की भंगिमा और स्वर से पंचायत कुछ चौंकी। प्रवीणों ने खाँस कर गला साफ़ किया, अल्पवयस्कों में एक गुंजन उठा। छिरू उर्फ़ श्रीहरि पाल बोला—"आधा दिन मिट्टी हो गया तो यहाँ आये ही क्यों?"

हरेन्द्र घोषाल बोलने के लिए बेचैन हो रहा था, बोला, "तुम उठ कर जा भी सकते हो। कोई पकड़ कर नहीं लाया, बाँध कर भी नहीं रखा।"

हरीश मण्डल ने कहा-"तुम सब चुप रहो। जब यहाँ बुलाया

गया है तब आना ही पड़ेगा, तुम आये हो, अच्छा किया है, ठीक किया है, अब बात-चीत होगी, हमें जो कुछ कहना है, कहेंगे, तुम्हें जवाब देना हो वह तुम देना, फिर फ़ैसला हो जायगा। जल्दी क्यों मचाते हो ?"

गिरीश बोला, "तो आप की नालिश हमारे ही ऊपर है ?"

अनिरुद्ध बोला, "यह तो हमने कुछ-कुछ समझा था। अच्छा क्या कहना है, कहिए हम जवाब देंगे, लेकिन जब आप सब एक तरफ़ हो गये हैं तब फ़ैसला कौन करेगा ? आप ही जब नालिश करनेवाले हैं, तब आप ही फ़ैसला कैसे करेंगे ?"

द्वारिका चौधरी अकस्मात् खाँसे—यह उनके बोलने का पूर्वाभास है। सब ने चौधरी की ओर देखा। चौधरी की आकृति और भंगिमा में एक विशेषता है। गौरवर्ण एवं पकी और उज्वल दाढ़ी ने उन्हें पंचायत में और भी विशिष्ट बना दिया है। चौधरी बोले, "देखो कर्मकार, बुरा न मानना, बेटा, तुम्हारी बात-चीत के ढंग से ऐसा जान पड़ता है कि तुम झगड़ा बढ़ाने के लिए तैयार होकर आए हो। यह तो बुरी बात है, बैठो, शांत होकर सुनो।"

अनिरुद्ध ने विनय के साथ गरदन झुका कर कहा, "बहुत अच्छा, कहिए।"

हरीश मण्डल ने ही आरम्भ किया—"देखो भाई, महाभारत कौन खोले, संक्षेप में ही कहता हूँ। तुम दोनों ने कस्बे में दूकानें खोल ली हैं। अच्छा किया है। आदमी को जहाँ दो

पैसे मिलेंगे वहीं जायगा, लेकिन यह नहीं हो सकता कि तुम यहाँ का काम बंद करदो और हम लोग कंधे पर लोहा-लकड़ लाद कर दो कोस ज़मीन जायें आयें, नदी पार करें। खुद सोचो, इस बार तुमने हम को कितना हैरान किया है।"

अनिरुद्ध बोला, "जी हाँ, असुविधा तो आप को कुछ हुई है।"

छिरू या श्रीहरि गरजे—"कुछ हुई है! कुछ कैसी रे। तुम्हें पता नहीं है, जब ज़मीन में पानी था, तब फार नहीं मिले और खेती बंद हो गई। अपने ही खेत देख लो, घास भरी है। अच्छे फारों की कमी से घास की जड़ तक नहीं उखड़ी। ग्वलिहान में तुम धान लेने के लिए बोरे लेकर खड़े हो जाओगे और काम के वक्त कस्बे में बैठे रहोगे—यह तो अंधेर है।"

हरेन्द्र ने तुरंत समर्थन किया—"यही बात है।"

सारी पंचायत बोली—"यही।"

प्रवीणों ने भी गरदन हिलाई।

अनिरुद्ध ज़रा जम कर बैठा और बोला, "यही आपकी नालिश है न? अब हमारा जवाब भी सुन लीजिए। मैं आप के फार तेज़ करता हूँ, हँसिए बनाता हूँ, गाड़ी के पहियों में हाल लगाता हूँ और आप मुझे हल पीछे कभी पाँच सेली धान देते हैं। गिरीश सूत्रधर·····"

छिरू पाल ने बात काटी, "गिरीश की बात से तुम्हारा क्या सम्बन्ध?"

छिरू बात समाप्त नहीं कर सका, द्वारिका चौधरी बोले,

"बेटा श्रीहरि, अनिरुद्ध ठीक कह रहा है । दोनों की एक ही बात है। एक ही कह देगा तो कोई हर्ज न होगा।"

छिरू चुप हो गया। अनिरुद्ध ने सहारा पाकर कहा, "चौधरी जी न हों तो पंचायत की शोभा ही न रहे।"

"बोलो अनिरुद्ध, तुम क्या कहते हो ?"

"जी, हाँ, हमें अर्थात् कर्मकार को हल पीछे पाँच सेली और सूत्रधर को हल पीछे चार सेली धान देने का क़ायदा है, लेकिन चौधरी जी, धान हमें प्रायः पूरे नहीं मिलते।"

"नहीं मिलते ?"

"जी नहीं।"

गिरीश ने भी समर्थन किया—"जी नहीं, हर घर में कुछ न कुछ बाकी रह जाता है । कहते हैं, फिर देंगे—अगले साल देंगे। फिर वे धान हमें नहीं मिलते।"

छिरू पाल ने काले साँप की तरह फुंकार मारी, "नहीं मिलते ? कौन नहीं देता ? कह देने से ही तो काम न चलेगा। बताओ किसके पास तुम्हारे धान बाकी हैं ?"

क्रोध-से भरे अनिरुद्ध ने विद्युत गति से गरदन घुमाकर श्रीहरि की ओर देखा और बोला, "किसके पास बाकी हैं ? नाम बताना पड़ेगा ? अच्छा तुम्हारे ही पास बाकी हैं।"

"मेरे पास ?"

"हाँ तुम्हारे पास। दो वर्ष से तुमने धान दिए हैं ?"

"और मैंने जो तुम्हें हैण्ड नोट पर रुपये दिए हैं ! उनमें से

कितने रुपये तुमने दिए हैं ? पंचायत में धान देने की बात तो तुमने कहदी, वह भी तो बता दो।"

"लेकिन उसका तो हिसाब-किताब है ? धान के दाम तुमने हैण्ड नोट की पीठ पर वसूल पाये लिख लिए होते ? चौधरीजी हैं, मण्डल महाशय बैठे हैं, वे बताएँ क्या मैं झूठ कहता हूँ।"

चौधरी बोले—"श्री हरि, तुम बेटा, हैण्डनोट की पीठ पर, धान के दाम वसूल कर लो और अनिरुद्ध तुम बाकी धानों की एक सूची बना कर मण्डलजी को दे दो। पंचायत में यह झगड़ा उठाना ठीक नहीं। मण्डलजी वसूल करवा देंगे और तुम गाँव में भी एक दूकान रखो—जैसे पहले काम करते थे वैसे ही करते रहो।"

देवनाथ ने इतनी देर बाद मुँह खोला—प्रवीण चौधरी का निर्णय उसे अच्छा लगा। वह जानता था कि अनिरुद्ध और गिरीश को पूरे धान नहीं मिलते, इसीलिए उसकी धारणा हो गई थी कि पंचायत दोनों के साथ अन्याय कर रही है। वैसे वह गाँव की समाज-शृंखला को स्थिर रखने का पक्षपाती है। चौधरी जी को छिरूपाल जैसे व्यक्ति के अन्याय का निर्णय करते देखकर देव और भी प्रसन्न हुआ: उसने सोचा कि अब अनिरुद्ध और गिरीश को झुकना चाहिए। वह बोला, "अनि भाई, अब तुम्हें आपत्ति नहीं करनी चाहिए।"

चौधरी ने पूछा—"अनिरुद्ध ?"

"जी !"

"क्या कहते हो ?"

अनिरुद्धने हाथ जोड़ कर कहा, "जी हमें माफ़ करें, हमसे अब काम न होगा।"

पंचायत में असन्तोष का कलरव उठा।

"क्यों ?"

"क्यों न करेंगे ?"

"कारण तो बताओ ?"

"चालाकी करते हैं ?"

"गाँव में नहीं रहते ?"

चौधरी ने लम्बा हाथ उठा कर चुप रहने का संकेत किया।

हरीश ने विरक्ति के साथ कहा, "चुप रहो छोकरों, चुप रहो। हम अभी मरे नहीं गये। अल्पवयस्क हरीन्द्रको पालने! मैट्रिक पास किया है, उसने प्रचण्ड चीत्कार के साथ कहा, "ऐ साइलेंस ! साइलेंस !"

अंत में द्वारिका चौधरी उठकर खड़े हो गये। खड़े होने का फल भी मिला। वे बोले, "हल्ला-गुल्ला करना बेकार है। कर्मकार से पूछना चाहिए कि वह क्यों काम नहीं कर सकता। उसे कहने भी दो।"

सब चुप हो गये। चौधरी भी बैठ गये। और बोले—"बेटा अनिरुद्ध, बताओ तुम काम क्यों नहीं कर सकते ? तुम्हारे पुरखे यही काम करते रहे हैं—तुम न करोगे तो गाँव की

व्यवस्था कैसे चलेगी ?"

देवनाथ ने कहा, "अन्याय, अनिरुद्ध और गिरीश अन्याय कर रहे हैं।"

हरीश बोले, "तुम्हारे पुरखे महाग्राम में रहते थे। इस गाँव में कोई कर्मकार न था, इसीलिए तुम्हारे पितामह को यहाँ बसाया गया। यह तो तुम भी जानते हो। अब तुम काम क्यों न करोगे ?"

अनिरुद्ध ने कहा, "जी यह सब ठीक है, लेकिन यह भी तो सोचिए कि—गाँव में पहले कितने हल चलते थे और अब कितने चलते हैं। मैंने हिसाब लगाया है कि ग्यारह घरों के हल अब नहीं चलते। उनकी जमीन कंकना के जमींदारों ने ले ली है। कंकना में दूसरा लुहार काम करता है। हमारे ग्यारह हल के धान कम हो गये हैं। फिर फसल के वक्त हम हल आदि का काम करते थे। बाद में लोग घर-बार बनाते थे। मैं उनके लिए कील-काँटे, फावड़े, कुदाल आदि तैयार करता था। गाँववाले ये चीजें खरीदते थे। अब गाँव वाले ये सब चीजें बाजार से लाते हैं—कहते हैं, वहाँ सस्ती मिलती हैं। गिरीश दरवाजे, खिड़कियाँ आदि बनाते थे। अब लोग बाहर से सस्ते मिस्त्री लाकर ये चीजें बनवाते हैं। इसके अलावा यह भी तो सोचिए कि—धान के दाम इस वक्त सवा या डेढ़ रुपया है और दूसरी चीजें मँहगी हो रही हैं, हम इसी तरह बैठे रहें तो गुजारा कैसे हो ? बाल-बच्चों के मुँह में दो दाने तो डालने ही

पड़ेंगे। आजकल का रहन-सहन भी पहले जैसा नहीं—"

छिरू अब तक भीतर ही भीतर उबल रहा था। मौका मिलते ही उसने बात काट दी—"क्यों नहीं, आजकल वार्निश किया जूता चाहिए, लम्बा कुरता चाहिए, सिगरेट चाहिए, घर के लिए शेमीज़ चाहिए: बाडी चाहिए—"

"ऐ छिरू चौधरी, ज़रा हिसाब से बात करो।" अनिरुद्ध ने कड़े स्वर में प्रतिवाद किया।

छिरू इधर-उधर हिल-जुल कर बोला—"हिसाब किया ही हुआ है रे। पच्चीस रुपये नौ आने तीन पैसे। दस रुपये असल, पन्द्रह रुपये, नौ आने, तीन पैसे ब्याज। अंकगणित जानता है, हिसाब जोड़ ले।"

छिरू ने हैण्ड नोट पर दिए रुपयों का हिसाब बता दिया। अनिरुद्ध पहले स्तब्ध हो गया, फिर पंचायत की ओर देखने लगा। पंचायत भी इस आकस्मिक और अप्रत्याशित रूढ़ता से स्तब्ध हो रही थी। अनिरुद्ध उठकर खड़ा हो गया।

छिरू ने धमकी के साथ कहा—"जा कहाँ रहा है?"

अनिरुद्ध लापरवाही के साथ चला गया।

चौधरी ने कहा, "श्रीहरि!"

छिरू बोला—"मुझे आँखें न दिखाइए चौधरीजी। दो-तीन बार आपने मुझे रोका है और मैं मान गया हूँ। अब मैं न मानूँगा।"

चौधरी ने चद्दर उठाकर कंधे पर रखी और बाँस की लाठी

उठाकर खड़े हो गये, बोले—"फिर मैं चला। ब्राह्मणों को प्रणाम—तुम सब को नमस्कार।"

गाँव के पालू लाल मोची ने आगे बढ़कर और हाथ जोड़ कर कहा, "हमारा भी फैसला कर दीजिए, चौधरीजी।"

चौधरी ने सावधानीके साथ पंचायत से बाहर निकलने का उद्योग करते हुए कहा, "ये सब बैठे हैं, इनसे कहो।"

"चौधरीजी ?"

चौधरी ने देखा, अनिरुद्ध लौट आया है।

"जरा ठहर जाइये चौधरीजी, मैं रुपये ले आया हूँ। आप छिरू पाल से हैण्ड नोट दिलवा दीजिए।"

पंचायत में भी चेतना आई, सब ने चौधरी से बैठने का अनुरोध किया, परन्तु वे न माने, चले गये।

अनिरुद्ध ने पचीस रुपये दस आने पंचायत के सामने रखकर कहा, "छिरू पाल अभी हैण्ड नोट ले आवे।"

हैण्ड नोट वापस लेकर वह बोला—"वह एक पैसा मुझे न चाहिए। तुम पान खा लेना। आओ गिरीश, चलो।"

हरीश बोला, "अरे तुम तो जा रहे हो, जिस के लिए पंचायत बुलाई गई···"

अनिरुद्ध ने उत्तर दिया—"हम काम न करेंगे—यही हमारा उत्तर है और जो पंचायत छिरू चौधरी को बस में नहीं रख सकती, हम उसे नहीं मानते।"

वे दोनों तेजी के साथ चले गये। पंचायत भंग हो गई।···

दूसरे दिन सवेरे ही सुना गया कि—अनिरुद्ध के दो बीघे अधपके धान कोई खेत से काट ले गया है।

—दो—

सूने खेत की मेड़ पर खड़ा अनिरुद्ध कुछ देर तक स्थिर दृष्टि से देखता रहा। निष्फल रोष से उसकी दोनों मुट्ठियाँ बँध गईं और लोहा पीटने वाले हाथ लोहे जैसे कड़े हो गये। कुछ सोच कर वह तुरन्त घर पहुँचा और आधी बाँह की कमीज़ पहनते-पहनते फिर लौटने लगा।

अनिरुद्ध की स्त्री का नाम पद्ममणि है। दीर्घांगी और काली पद्ममणि रूपवती नहीं है, परन्तु उसके परिपूर्ण यौवन, नुकीली नाक और बड़ी-बड़ी उज्वल आँखों ने उसे एक शोभा दी है। पद्म के शरीर में अद्भुत शक्ति है, सवेरे से शाम तक वह निरंतर परिश्रम करती है। सांसारिक बुद्धि भी उसकी तीक्ष्ण है। अनिरुद्ध को इस तरह बाहर जाते देख कर वह लपकी और पति के सामने आकर खड़ी हो गई, बोली, "कहाँ चले ?"

अनिरुद्ध ने कड़ी दृष्टि से देख कर कहा, "फिरकी की तरह पीछे क्यों लग गई ? कहीं जाऊँ, तुझे क्या करना है ?"

पद्म ने हँस कर उत्तर दिया, "पीछे नहीं लगी, सामने आकर खड़ी हुई हूँ। और मुझे करना क्यों नहीं है। तुम लड़ाई-दंगा करने न जाने पाओगे।"

अनिरुद्ध बोला, "लड़ाई-दंगा करने नहीं जाता, थाने जा

रहा हूँ, रास्ता छोड़ दे।"

"थाने ?"····पद्म के स्वर में उद्वेग झलका।

"हां थाने। साले छिरू के नाम रिपोट करूँगा।" गुस्से से अनिरुद्ध का कण्ठ-स्वर झनझनाने लगा।

पद्म ने दृढ़ता के साथ सिर हिला कर कहा, "नहीं, सच होते हुए भी इस बात पर कौन विश्वास करेगा कि—छिरू चौधरी ने तुम्हारे धान चुराये हैं ?"

अनिरुद्ध ऐसी सलाह सुनने की अवस्था में न था। उसने पद्म को धक्का देकर बाहर जाने का उद्योग किया।

अनिरुद्ध का अनुमान ठीक है—धान श्रीहरि पाल ने ही काटे हैं।

किन्तु पद्म ने जो कुछ कहा है वह भी निष्ठुर सत्य है, धनी को चोर सिद्ध करना आसान काम नहीं होता और श्रीहरि धनी है।

इस इलाके में आस-पास तीन गाँव हैं—कालीपुर, शिवपुर और कंकना। तीनों गाँवों में श्रीहरि के धन की बड़ाई फैली है। कालीपुर और शिवपुर सरकारी खाते में दो गाँव हैं—जमींदार के हिसाब में भी दो स्वतंत्र मौजे गिने जाते हैं, परन्तु कार्यतः एक ही गाँव है, दोनों के बीच में केवल एक तालाब है। इन दोनों गाँवों में श्रीहरि की समता करने वाला कोई नहीं है, शिवपुर के हेला चटर्जी भी मालदार गिने जाते हैं, लेकिन लोग कहते हैं, श्रीहरि के घर में सोने की ईंटें हैं, कोस भर

पर बसा हुआ कंकना अवश्य समृद्ध गाँव है, वहाँ कितने ही सम्भ्रांत ब्राह्मण परिवार रहते हैं। उन में से मुखर्जी बाबू लाखों रुपये के स्वामी हैं—इस इलाके के अधिकांश गाँव उन्हीं की कोख में समा गये हैं। महाजन से वे प्रबल प्रतापी जमींदार बन गये हैं। शिवपुर और कालीपुर भी उनके ग्रास के आकर्षण से सर्पिल जिह्वा की ओर बढ़ रहे हैं। ऐसे कंकना में भी श्रीहरि का नाम धनियों में गिना जाता है। मयूराक्षी के उस पार कस्बा अर्थात् आधा शहर है, वहाँ रेलवे जंक्शन है, चावल के दस-बारह मिल हैं, दो तेल निकालने और एक आटा पीसने का मिल है। कई धनी मारवाड़ियों की गद्दियाँ हैं—वहाँ भी हरिपाल को घोष महाशय के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इलाके का थाना भी इसी कस्बे में है।

पद्म का अनुमान ग़लत नहीं है। कंकना या कस्बे में कोई भी इस बात पर विश्वास न करेगा, परन्तु शिवपुर कालीपुर में कोई भी अविश्वास नहीं कर सकता। सब जानते हैं कि छिरू भयंकर आदमी है—वह सब कर सकता है। धान काटने का आशय अनिरुद्ध से बदला लेना ही नहीं है, चोरी भी एक उद्देश्य है। शिवपुर कालीपुर के बच्चे-बूढ़े सब इस पर विश्वास करते हैं, परन्तु कोई कहने का साहस नहीं कर सकता।

श्रीहरि का शरीर विशाल है, परन्तु वह स्थूल नहीं है, मेद की ज़रा सी भी शिथिलता नहीं दीख पड़ती। हाथ-पैर की हड्डियाँ बाँस जैसी मोटी हैं, और उन पर कठिन पेशियाँ हैं।

लंबे चौड़े और तगड़े हैं। सिर बड़ा है, आँखें बड़ी हैं और मुख का गह्वर कान तक फैला है। इतने बड़े शरीर को लेकर भी वह चोर की तरह चुपचाप और तीव्रतर गति से चल सकता है। दूसरों के बाँस काट कर वह रातों रात अपने तालाब में डाल लेता है, दूसरों के तालाब की पाली हुई बड़ी मछलियाँ जाल से पकड़ कर अपने तालाब में भर देता है। वर्षा में अपने घर की दीवार स्वयं गिरा देता और नई दीवार बनाते समय दूसरे की थोड़ी-बहुत जगह दबा लेता है। कोई प्रतिवाद नहीं करता, परन्तु वह किसी व्यक्ति की जमीन दबाता है तब प्रतिवाद करना ही पड़ता है। तब छिरू पाल फावड़ा लेकर खड़ा होता है और पोपले मुँह से कुछ कहता है। उसकी बात समझ में नहीं आती, परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि एक पशु गर्जन कर रहा है। चवालीस वर्ष की आयु में ही उसके दाँत गिर गये हैं, यौन-व्याधि के आक्रमण से वह क्षीण हो गया है। हरिजन-बस्ती के पुरुष संध्या के बाद जब मद-विभोर हो जाते हैं तब छिरू पाल चुपचाप शिकार करने निकलता है। कई बार लोगों ने उसे पकड़ने की चेष्टा की है, परन्तु छिरू अंधकारचारी हिंसक श्वापद की भाँति निकल जाता है।

ऐसे हैं श्रीहरि चोर उर्फ छिरू पाल या छिरे चौधरी।

श्रीहरि को अच्छी तरह जानते हुए भी अनिरुद्ध ने इसी बात पर विचार नहीं किया, बल्कि उसे धक्का देकर हटा

किया और रास्ते में उतर गया। बुद्धिमती पद्म ने राम या अभिमान नहीं किया, फिर पुकारा—"ए जी, सुनो, सुनो, सुनो, तो···"

क्षीण मुस्कान के साथ वह फिर बोली—"पीठ-पीछे बुला रही हूँ—सुनो!"

अनिरुद्ध दबी हुई पूँछ वाले साँप की तरह घूम कर खड़ा हुआ।

पद्म ने हँसकर कहा, जरा सा पानी पी लो!

अनिरुद्ध ने पद्म के गाल पर एक करारा चाँटा मार कर कहा—"फिर पीठ पर आवाज देगी?"

पद्म का सिर चकरा गया, अनिरुद्ध के लोहा पीटने वाले हाथ का चाँटा—'बाप रे' कहकर वह बैठ गई और मुँह हाथ से ढक लिया।

अनिरुद्ध घबरा गया, उसने सुन रखा है कि ऐसी वैसी जगह चाँटा लग जाने से भी आदमी मर जाता है। भीत स्वर में उसने पुकारा—"पद्म! पद्म! ए री!"

पद्म का शरीर थरथर काँप रहा है, वह फफक कर रो रही है।

अनिरुद्ध बोला, "यह ले भई—कपड़ा उतार दिया, थाने नहीं जाता। उठ, न रो, न, ओ पद्म।···उसने पद्म का हाथ पकड़ कर खींचा। ओ पद्म!·····पद्म ने मुँह से हाथ हटा दिया और खिलखिला कर हँसने लगी। मुँह ढक कर भी वह रो न रही थी, चुपचाप हँस रही थी। अद्भुत् शक्ति है पद्म

बैं, फिर अनिरुद्ध के चाँटे और घूँसे खाना उसका अभ्यास भी हो गया है—एक चाँटे से क्या होगा !

अनिरुद्ध के पौरुष को शायद चोट लगी, वह गुम-सुम होकर बैठ गया। पद्म थोड़ा सा गुड़, एक कटोरी में लाई और लोटे में घड़े का ठंडा पानी ले आई और अनिरुद्ध के सामने रख कर बोली, "तुम छिरू चौधरी की रिपोर्ट करोगे तो तुम्हारी गवाही कौन देगा ? गाँव वाले तो कल से बिगड़े बैठे हैं।"

कल शाम को फिर पंचायत हुई थी। अनिरुद्ध की इस बात ने सब को उत्तेजित कर दिया था कि मैं ऐसी पंचायत को नहीं मानता। फ़ैसला किया गया है कि अनिरुद्ध और गिरीश के विरुद्ध जमींदार के पास नालिश की जाय।

अनिरुद्ध को फ़ैसला याद आया परन्तु उसका मन शान्त न हुआ।

—तीन—

पद्म ने हुक्के का पानी बदल दिया, कायदे के साथ चिलम सुलगाई और प्रतीक्षा करने लगी। अनिरुद्ध ने जलपान समाप्त किया तो हुक्का उसके हाथ में देकर बोली—"पिओ !" अनिरुद्ध हुक्का गुड़गुड़ाने और नाक तथा मुँह से धुँआ निकालने लगा। पद्म ने कहा—अब तो गुस्सा ठण्डा हुआ ?

"गुस्सा ?" अनिरुद्ध ने मुँह ऊपर उठाया, उसके दोनों

ओंठ काँप रहे हैं। 'यह गुस्सा मेरा तूफ़ान की आग है, जबतक मर न बुझेगा। मेरे दो बीघे धान के धान—'

अनिरुद्ध बात समाप्त नहीं कर सका। पद्म की बड़ी-बड़ी आँखों में आँसू छलक आये। दो-चार ढुलक भी पड़े।

अनिरुद्ध बोला—'तू रोती क्यों है? दो बीघे धान गये—जाने दे। मैं तो हूँ। देख मैं क्या करता हूँ।'

आँखें पोंछते-पोंछते पद्म ने कहा—किन्तु थाने-पुलिस का ख्याल छोड़ दो। तुम्हारे दोनों पैर छूती हूँ। वे साँप होकर काटते हैं और आग होकर झुलसते हैं। मेरे बाप के घर डकैती हुई—बाबू ने एक आदमी को पहचाना, लेकिन पुलिस ने उसे छुपा भी नहीं और बाबू के ढेर के ढेर रुपये खर्च हो गये। घर की औरतें तक हैरान हो गईं—कभी दारोगा आता, कभी इन्स्पैक्टर आता, कभी साहब आता—पर कहते इजहार दो। फिर न जाने कहाँ से, कुछ पुराने पड़े गड़े मुर्दों को पाखाड़ करने के लिए पोतों तक का जेल-खाना पड़ा। गाली-गलोच और धमकियाँ तो मामूली बात थी।"

"हुँ"—चिंतित अनिरुद्ध ने हुक्के को अपनी ओर खींच कर कहा—"परन्तु इसका कुछ न कुछ प्रबंध तो करना ही पड़ेगा। आज धान गये हैं, कल तालाब की मछलियाँ जायेंगी, परसों शायद घर में—"

"अनि भाई हैं?" अनिरुद्ध की बात पूरी होने से पहले ही किशोर ने बाहर से पुकारा और घर में प्रवेश

दिया। रूपा ने आकर घूँघट खींच कर जूठे बर्तन हटा दिए। खिड़की से घर की तरफ़ चली गई।

अनिरुद्ध ने एक लम्बी साँस लेकर कहा—"दो बीघे खीर के धान काट ले गये, एक बाली भी नहीं छोड़ गये।"

गिरीश ने भी लम्बी साँस ली—"सुना है।"

"सोचा था कि—थाने में रपट लिखा दूँगा लेकिन घरवाली मना करती है। कहती है, इस बात पर विश्वास कौन करेगा कि छिरू पाल ने चोरी की है। और गाँव में से कोई मेरी गवाही भी न देगा।"

"हाँ, कल शाम को चण्डीश्वर में फिर पंचायत हुई थी। लोग कहते हैं हमने गाँव का अपमान किया है। ज़मींदार से शिकायत करेंगे।"

ओंठ तिरछा करके अनिरुद्ध ने कहा, "बड़ा ज़मींदार! ज़मींदार हमारा सिर काट लेगा!"

गिरीश को बात पसन्द नहीं आई। वह बोला, 'ऐसा न कहो, ज़मींदार के भी बुद्धि है, वही फ़ैसला कर दें।"

अनिरुद्ध ने कई बार गरदन हिला कर अस्वीकार किया—"ऊँ हुँ। ज़मींदार क्या फ़ैसला करेगा! उसने भी तीन साल से धान नहीं दिए। वह तो उन्हीं की हाँ में हाँ मिलाएगा, तुम देख लेना।"

गिरीश ने उदास होकर कहा, "तुमसे चार साल से नहीं मिले।"

अनिरुद्ध बोला, 'देखो भाई, जब कह दिया कि हम काम न करेंगे तब चाहे जो हो जाय मैं काम न करूँगा। स्वर्ग से मेरे पिता ही क्यों न आ जाएँ। तुम अपनी बात सोच लो।"

गिरीश बोला—"तुम बेफ़िक्र रहो, जब तक तुम सुलह न करोगे, मैं भी राज़ी नहीं होता।"

अनिरुद्ध ने प्रसन्न होकर हुक्का गिरीश के हाथ में दे दिया। उँगली और अँगूठे के सहारे से हुक्का पीते हुए गिरीश ने कहा, "इधर मामला भी काफ़ी गंभीर हो गया है। हमीं दो तो नहीं हैं ज़मींदार किसका किसका फ़ैसला करेगा, नाई, धोबी, चमार, चौकीदार, बरबाहा और घाट का मल्लाह सब कहते हैं—'हम धान लेकर काम नहीं कर सकते।" तारा नाई तो आज से ही घर के दरवाज़े ईंट रख कर बैठ गया है, कहता है, 'पैसा लाओ और हजामत कराओ!"

अनिरुद्ध ने चिलम झाड़ कर तम्बाकू रखते-रखते कहा, "ठीक तो है। पैसा फेंको, मेवा खाओ!"

गिरीश की बातचीत में विज्ञता-प्रचार की एक भंगिमा रहती है, यह उसका विश्वास हो गया है। वह बोला, "यही बात है। पहले की बात दूसरी थी। सस्ते-मद्दे बाज़ार में धान से ही काम चल जाता था—हम भी करते रहे। अब काम नहीं चलता तो क्या करें।"

बाहर रास्ते में बाइसिकल की घण्टी बजी, साथ ही साथ आवाज़ आई—"अनिरुद्ध!"

पुकारने वाले डाक्टर जगन्नाथ घोष हैं।

अनिरुद्ध और गिरीश बाहर निकल आए। मोल मटोल डाक्टर साइकिल के सहारे खड़े थे। डाक्टर ने कहीं पढ़-लिख कर डाक्टरी पास नहीं की। चिकित्सा उनकी परम्परागत विद्या है और तीन पुश्त से चली आ रही है। बाबा कविराज थे, पिता ने वैद्यक भी पढ़ी और डाक्टरी भी। जगन्नाथ केवल डाक्टर है, परन्तु कभी-कभी मुष्टियोगों की व्यवस्था भी कर देते हैं और इनसे फल भी तुरंत एवं अच्छा मिलता है। गाँव के सब आदमी डाक्टर के पास आते हैं, परन्तु पैसे कोई ही देता है। डाक्टर इस बात से भी असन्तुष्ट नहीं हैं। बुलाते ही जाते हैं और उधार के ऊपर उधार देते हैं। दूसरे गाँवों में भी उनका पुश्तों के समय से ही प्रसार है—वहीं की आमदनी से खर्च भी चलता है। किसी दिन शाक-भात और एक ही अन्न, तो किसी दिन छप्पन भोग—जिस दिन जैसी आमदनी हो गई। घोष परिवार पहले सम्पत्तिशाली और प्रतिष्ठित घर था, परन्तु एक बार कंकना के लखपती मुखर्जी से एक हजार रुपया ऋण लेना पड़ा। धीरे-धीरे वह चार हजार हो गया और घोष परिवार की सब सम्पत्ति लेकर विदा हुआ। पुरखों के तिरोधान के साथ पुराना सम्मान भी चला गया है। अकातर चिकित्सा और अमूल्य औषधि की सहायता दे कर भी जगन्नाथ वह सम्मान फिर प्राप्त नहीं कर सके। वह किसी की रियायत नहीं करते। रुढ़ भाषा और

उच्च कण्ठ से कहते हैं, "चोर हैं, सब चोर हैं. जानवर कहीं के !" पीठ पीछे नहीं मुँह पर कहते हैं और उनके साधारण अन्याय का भी कठोर प्रतिवाद करते हैं।

गिरीश और अनिरुद्ध को देखकर डाक्टर ने बिना किसी भूमिका के ही पूछा, "थाने में रिपोर्ट लिखाई ?"

"जी, नहीं।"

"नहीं क्या ? जाओ रिपोर्ट लिखा आओ।"

"जी सब मना करते हैं, कहते हैं, इस बात पर विश्वास कौन करेगा कि छिरूपाल ने चोरी की है।"

"क्यों ? उसके पास रुपया है इसीलिए ?"

"यही तो सात-पाँच सोच रहा हूँ।"

विद्रूप से तीक्ष्ण मुस्कान के साथ डाक्टर ने कहा, "फिर इस दुनिया में जिसके पास धन है वही साधु है और जितने ग़रीब हैं सब बदमाश हैं। क्यों ? कौन कहता था ?"

अनिरुद्ध चुप हो गया। घर के भीतर से बरतनों की आवाज़ आ रही है। पद्म लौट आई है और सुन रही है। उत्तर गिरीश ने दिया—"रिपोर्ट लिखाने से ही क्या होगा, डाक्टरजी। वह रुपये देकर दरोग़ा का मुँह बंद कर देगा। जमादार के साथ भी छिरू की दोस्ती है। एक साथ शराब पीते हैं, भाँग खाते हैं और—"

डाक्टर बोले—"मैं जानता हूँ। दरोग़ा रिश्वत ले लेगा तो उसका भी उपाय है। बाबा के भी बाबा होते हैं। दरोग़ा के

ऊपर पुलिस के साहब हैं, मजिस्ट्रेट हैं, उनके ऊपर कमिश्नर हैं, उनके ऊपर छोटे लाट हैं, बड़े लाट हैं।"

अनिरुद्ध बोला, "यह तो ठीक है, लेकिन मैं सोच रहा हूँ कि औरतों को इजहार-विजहार देना पड़ेगा।"

औरतों को इजहार! डाक्टर हैरान हुए। "धान खेत से चुराये गये हैं, इससे औरतों का क्या वास्ता? उन्हें क्यों इजहार देना पड़ेगा? अंधेरगर्दी है क्या?"

अनिरुद्ध उठ कर खड़ा हो गया।—"फिर मैं अभी जाता हूँ।"

डाक्टर भी साइकिल पर बैठ गये और बोले—"हाँ, निश्चिंत होकर जा। मैं शाम को थाने जाऊँगा। यह न कहना कि उसने चोरी करने के लिए धान काटे हैं, कहना, गुस्से में मुझे नुकसान पहुँचाने के लिए चोरी की है।"

अनिरुद्ध इस भय से घर के भीतर भी नहीं गया कि कहीं पद्म फिर न रोक दे। वह डाक्टर की साइकिल के साथ साथ चलने लगा। गिरीश से बोला, "दूकान की चाबी माँग लाना, भाई!"

उस पार कस्बे में जो दूकान खोली है उसकी चाबी। गिरीश को घर के भीतर जाकर चाबी माँगनी नहीं पड़ी। किवाड़े की आड़ से झनकार के साथ वह फेंकी गई और गिरीश के सामने गिरी। गिरीश झुक कर उठाने लगा। पद्म ने झाँक कर देखा—डाक्टर और अनिरुद्ध कुछ दूर चले गये

हैं। वह थोड़ा सा घूँघट निकाल सामने आई और बोली, "ज़रा उन्हें बुलाओ।"

मुँह उठा कर एक बार पद्म की ओर और एक बार अनिरुद्ध की ओर देख कर गिरीश ने कहा, पीठ पीछे पुकारने से न.राज होगा।

"होगा तो लेकिन भात? भात कौन ले आयगा? आज क्या उपास होगा?

गिरीश और अनिरुद्ध सवेरे उठ कर कलेवे चले जाते हैं, इसके पहले ही उसके लिये भात तय्यार हो जाता है। वे साथ ले जाते हैं और दोपहर में दूकान पर खाते हैं। शाम को घर लौटकर भोजन करते हैं। गिरीश ने कहा, "मुझे दे देना, ले जाऊँगा।"

× × × ×

पद्म अपने परिवार में अकेली है। दो वर्ष पहले सास का देहान्त हुआ है, तब से उसे पूरा दिन अकेले ही बिताना पड़ता है। स्वयं वह बन्ध्या है। ऐसी स्थिति में गाँवों में मुहल्ले में चक्कर लगाना और दूसरों की चर्चा में रस लेना एक मनोहर कर्मान्तर हो जाता है, परन्तु पद्म का स्वभाव ऐसा नहीं है। वह दिन भर अपनी गिरस्ती का जाल बुनती रहती है। धान और फलियाँ धूप में डालती है, उन्हें उठा कर रखती है, मिट्टी और रोड़ों से घर के चौतरे ठीक करती है, राख से माँज कर बरतन भी साफ करती है, जाड़े के लिहाफ उलट कर बदलती है। इनके

अतिरिक्त रसोई और सफाई आदि नियमित काम तो होते ही रहते हैं।

आज पद्म को कोई काम करने की इच्छा न हुई। वह खाट पर पैर फैला कर बैठ गई। केवल भविष्य की अशांति को रोकने ही के लिए अनिरुद्ध को थाने जाने से उसने मना किया है और हास-परिहास करके शांत करने की चेष्टा की है। दूसरी ओर सीर के दो बीघे धान जाने का भी उसे अपार दुख हुआ है। धीमे स्वर में उसने छिरू पाल को शाप देना आरंभ कर दिया।

"आँख फूटेगी, काने होंगे, अंधे हो जायँगे, हाथ में कोढ़ फूटेगा, सर्वनाश होगा—भीख माँगेंगे।"

सहसा कहीं प्रचण्ड कलरव उठता जान पड़ा। पद्म ने कान लगा कर सुना। शोर चमरहा से उठ रहा है। कोई कर्कश कण्ठ से अश्लील भाषा में गर्जन-तर्जन कर रहा है। पद्म को भी जैसे उसकी हवा लग गई। वह भी ऊँचे स्वर से मुहल्ले भर को सुना कर शाप देने लगी—दोनों बैठे एक ही बिछौने पर एक संग मरेंगे। मेरी जमीन के धानों से हैजा होगा। वंश-नाश हो जायगा, खुद भी मरेंगे, काने होंगे, आँखें फूटेंगी, हाथों में कोढ़ होगा। सर्वनाश हो जायगा, आग लग जायगी। भीख माँगेंगे।"

पद्म छिरू पाल की स्थिति के साथ मिला कर गालियाँ दे रही थी। सहसा उसने देखा कि तालाब के उस पार रास्ते में छिरू

पास खड़ा है। वह पद्म की गालियों को मजे के साथ सुन रहा है और हँस रहा है। छिरूपाल पातू मोची को मार-पीट कर लौटा है। चमरहा का शोरगुल उसी के विक्रम का प्रसाद था। लौटते हुए उसकी नजर पद्म पर पड़ी और वह गालियों में आनन्द लेने और हँसने लगा। उस हँसी में एक अन्य प्रकार की कुटिल प्रवृत्ति की प्रेरणा अथवा ताड़ना भी थी पद्म उठ कर घर में घुस गई। छिरू सोचने लगा कि एक छलाँग मार कर घर में घुस जाय या नहीं। परन्तु दिवालोक का वह भय करता है। वह दुविधा में पड़ गया। सहसा पद्म का कण्ठस्वर सुनकर उसने घूम कर देखा परन्तु किसी वस्तु की प्रतिबिम्बित आलोक-छटा उसकी आँखों में चुभी और उसने आँखें फेर लीं।

"वीर पुरुष धार की परीक्षा करने के लिए एक ही वार में दो बकरों को काट कर मेरा काम बढ़ा गये है। खून के दाग अब नहीं धोए—घर मे डाल गये हैं! मैं अब बेगार भुगतूँ!"

पद्म के हाथ में एक खाँडा है, उस पर धूप पड़ रही है और वह झकमक कर रहा है। उसी की छटा छिरू की आँखों पर पड़ी है। और उसने आँखें फेर ली हैं। छिरू पैर पटक कर जल्दी जल्दी अपने घर की ओर बढ़ने लगा। पद्म के मुख पर निष्ठुर कौतुक की एक मुस्कान दौड़ पड़ी।

—चार—

गाँव से बाहर निकलते ही पंचग्राम का लगभग ६ मील

लंबा और ६ मील चौड़ा मैदान मिलता है। कंचना, कुसुमपुर, महाग्राम, शिव-कालीपुर और देवुड़िया की सीमाएँ इसी मैदान में मिलती हैं। मैदान के दक्षिण में पूरब-पश्चिम में मयूराक्षी नदी बहती है। मयूराक्षी के तट का यह विस्तृत मैदान उर्वरता के लिए विख्यात है। इस में भी शिव कालीपुर की सीमा में जो भूमि है वह और भी उत्कृष्ट है। इसी भूमि का नाम अमरकुण्ड का मैदान है। शिवपुर की भूमि का भाग ऊपर थोड़ा ही है। शिवपुर की अधिकांश भूमि उत्तर की ओर है। कालीपुर के अधिकांश खेत गाँव के दक्षिण और पूर्व में हैं। शिव कालीपुर नाम मात्र के लिए ही दो गाँव हैं, दोनों गावों की आबादी में केवल एक तालाब का व्यवधान है। कालीपुर गाँव बड़ा है, जन-संख्या भी इस की अधिक है। श्रीहरि और देबू आदि इसी गाँव में रहते हैं।

शिवपुर गाँव बहुत समय पहले एक मुहल्ले के रूप में था, तब अर्थात् अब से लगभग अस्सी-नब्बे वर्ष पूर्व इस में एक विशेष सम्प्रदाय का वास था। वे अपने आप को देवज ब्राह्मण कहते थे। वे अपने हाथ से खेती न करते थे, शिव कालीपुर के बूढ़े शिव की सेवा-पूजा का भार उनके ऊपर था। अब देवल सम्प्रदाय का कोई व्यक्ति यहाँ नहीं है। काल-चक्र से जो थोड़े घर बच गये थे वे दूसरी जगह चले गये हैं। इन में से कुछ पाँच कोस दूर रघेरार गाँव में और कुछ दो कोस दूर जलेश्वर गाँव में शिव की सेवा करने वाले

अपने जाति भाई पशुओं के साथ रहते हैं। शिव भक्त देवलों ने ही गाँव का नाम शिवपुर रखा था। देवलों के जाने के बाद कालीपुर के चौधरियों ने गाँव खरीद लिया और शिवपुर में रहने लगे। अपनी ही जाति की प्रजा से अलग रहने के लिए उन्होंने यह व्यवस्था की थी। चौधरियों ने ही शिवपुर को एक स्वतंत्र मौजा बनाया था, उनके पतन के साथ शिवपुर का तेज भी बुझ गया।

प्रवीण व्यक्ति कहते हैं कि जिस गाँव के खेत उत्तर-पश्चिम में हैं उन में लक्ष्मी नहीं रहती और जिन के खेत दक्षिण-पूर्व में हैं उन पर लक्ष्मी की अपार दया है। बात यह है कि उत्तर और पश्चिम का मैदान गाँव की अपेक्षा ऊँचा है, दक्षिण और पूर्व की ओर की भूमि बराबर ढालू होती गई है। इस कारण गाँव का सारा पानी दक्षिण और पूर्व के खेतों में ही जाता है। गाँव से निकले हुए पानी में उर्वरता अधिक होती है। इस के अतिरिक्त नीचे के खेतों को गाँव के तालाबों की सुविधा भी मिल जाती है। इसलिए शिवपुर और कालीपुर की जमीन में बहुत अन्तर है और इस के लिए शिवपुर वालों को कालीपुर वालों का अहंकार भी सहना पड़ता है। शिवपुर के चौधरी जब जमींदार थे तब कालीपुर वालों को शिवपुर का आधिपत्य सहन करना पड़ा था, कालीपुर के वर्तमान अहंकार में इसी की प्रतिक्रिया भी सम्मिलित है।

द्वारका चौधरी शिवपुर के जमींदार चौधरियों के ही

वंशज हैं। चौधरियों की समृद्धि बहुत दिन की बीती बात हो चुकी है। द्वारका चौधरी के एक पीढ़ी पहले ही सम्मान और समृद्धि का भण्डार खाली हो गया था। चौधरी अपने अभिजात्य का गुमान भी नहीं करते, पुरानी बात वह भूल से ही गये हैं। वह किसानों के साथ समान रूप से मिलते जुलते हैं, उनके साथ बैठ कर तमाकू पीते हैं और सुख-दुख की बातें करते हैं। तब भी चौधरी के रंग ढंग और बातचीत में एक विशेषता है। वह बोलते कम हैं और जो कुछ कहते हैं वह भी मृदु स्वर में। कोई उनकी बात का प्रतिवाद करता है तो चौधरी उसे उत्तर नहीं देते, कभी-कभी प्रतिवाद करने वाले की बात संक्षेप में ही स्वीकार कर लेते हैं, कभी चुप रह जाते हैं और कभी उस दिन की तरह उठकर चले आते हैं। सीधी बात यह है कि बदली हुई अवस्था में भी चौधरी शांत भाव से ही जीवन बिता रहे हैं।...

वृद्ध द्वारका चौधरी छाता और लाठी लेकर कालीपुर के मैदान में नदी के किनारे रबी फसल की खेती देखने निकले हैं। कालीपुर की जमींदारी चौधरी वंश के हाथ से निकल गई है परन्तु जोत की जमीन काफी है। कालीपुर के दक्षिण में अमर कुण्ड का मैदान है, यहाँ की फसल कभी नष्ट नहीं होती— यहाँ कभी सूखा नहीं पड़ता। मैदान के सिरे पर सोतों के दो कुण्ड हैं, एक चौड़े और छिछले कुण्ड से नाला निकला है और नदी तक गया है। कुण्ड सदा जल से भरे रहते हैं, कभी

खाली नहीं होते। दोनों कुण्ड धरती माता के वक्ष से निकलने वाली दुग्ध-धारा जैसे जान पड़ते हैं। जब पानी कम होता है तब किसान नाले में बाँध लगा कर पानी मोड़ लेते हैं और अपने खेत सींचते हैं।

अगहन के आरंभ से ही हेमंती धान पकने लगे हैं, हरा रंग पीला होने लगा है। अमर कुण्ड के मैदान के एक किनारे से लगा कर दूसरे किनारे तक नदी के बाँध तक धानों के हरे और पीले रंग की एक अपूर्व शोभा फैल गई है। धान के बाहुल्य से खेतों की मेंड़ तक नहीं दीख पड़ती। सोते वाले नाले की सर्पिल मेड़ पर ताड़ के जो पेड़ लगे हैं, उनकी टेढ़ी-मेढ़ी पंक्ति ही धानों के बीच में सिर उठाये है। हेमन्त के पीताभ रौद्र से मैदान झलमला रहा है। आकाश में शरत की नीलिमा का आभास अब तक है, अभी वायु से धूल नहीं उड़ती। खेतों के अंत में नदी पर बाढ़ रोकने के लिए जो बाँध बनाया गया है उसके पास बने पेड़ों की एक पंक्ति हरे रंग की दीवार जैसी खड़ी है, उसके ऊपर सफ़ेद फूलों का समारोह वैसा ही जान पड़ता है जैसे मकान के मत्थे पर बनी सफ़ेद चूने की मुँड़ेर।

कालीपुर के पश्चिम में सम्भ्रांत धनियों का गाँव कंकन है। ग्राम की वन-रेखा के ऊपर मकानों की सफ़ेद, लाल और पीली मुंडेरें चमक रही हैं। मैदान में बने स्कूल, अस्पताल और बाबुओं का थियेटर बिल्कुल साफ़ दीख पड़ता है।

बाबुओं ने रुपये में एक पैसा धर्मादा लेना आरंभ किया है। रुपया देते समय भी धर्मादा देना पड़ता है और लेते समय भी। धर्मादा की रकम से पर्व के दिनों में यात्रा और थियेटर होता है। चौधरी ने एक साँस ली—लंबी साँस। साल में डेढ़-दो रुपया उसे भी धर्मादे में देना पड़ता है। अमर कुण्ड के खेतों में अब तक पानी भरा है। ऐसे पानी में मछलियाँ बहुत होती हैं। डोमों, चमारों और पासियों की औरतें खेतों की मेड़ काट कर और कटी मेड़ के सामने टोकरी लगा कर मछलियाँ पकड़ रही हैं। कुछ खेतों में भी घूम रहीं हैं, परन्तु दीख नहीं पड़तीं। उनके चलने-फिरने से धान के पेड़ों में रास्ता-सा बन जाता है, वही रास्ता दीख पड़ता है जैसे छिछले पानी में मछली के निकल जाने के बाद जल की एक रेखा सी बन जाती है। कुछ औरतें घास काट रही हैं; किसी के पास अपने पशु हैं और कोई बेच कर दो पैसे प्राप्त करेंगी।

अमरकुण्ड मैदान के बीच में एक चौड़ी मेड़ है, वही आने-जाने का मार्ग है। चौड़ी का अर्थ यह है कि उस पर एक आदमी आराम से और दो असुविधा के साथ चल सकते हैं। गाँव के पशु इसी राह से नदी के किनारे चरने जाते हैं। पशु धान न चर लें इसीलिए उनके मुँह पर रस्सी का एक जाल बाँध दिया जाता है। प्रौढ़ चौधरी के मुँह पर हताशा की एक रेखा झलकी—इतनी गोचर भूमि नहीं रह गई कि पशुओं

के मुँह का जाल तो खोल दिया जाय।

बाँध के उस ओर नदी ने जो भूमि छोड़ दी है उसे तोड़ कर रबी की फ़सल बोने की चेष्टा हो रही है। किसानों के सामने कोई और उपाय भी न था। अमरकुण्ड के मैदान की आधी से अधिक भूमि कंकना के विभिन्न भले आदमियों के हाथ में चली गई है। कितने ही किसानों के पास रत्ती भर भी ज़मीन नहीं रह गई। उन्होंने पहले-पहल नदी किनारे का गोचर तोड़ कर रबी की खेती आरम्भ की थी। अब देखा-देखी सब ने आरंभ कर दी है। यह भूमि उर्वरा भी खूब है। वर्षा भर भूमि नदी के जल में डूबी रहती है और मिट्टी भीग कर सोना बन जाती है। वह सोना फ़सल की बालियों में फलता है; गेहूँ और सरसों खूब होता है, चना इन से भी बाज़ी मार ले जाता है। इस चर का नाम ही चना कुण्ड पड़ गया है। परन्तु अब आलू ही अधिक बोया जाता है। आलू भी बड़ी मात्रा में और मोटा होता है। कस्बे में आलू की माँग भी बहुत रहती है। कलकत्ते के महाजन आलू ख़रीदने आते हैं। फ़सल के दिनों में उनके आदमी आढ़त खोल कर बैठ जाते हैं—जो आलू ले जाता है उसे नकद रुपये मिलते हैं। बड़े किसानों को दस-बीस रुपये उधार भी मिल जाते हैं।

चौधरी को भी गोचर तोड़ कर आलू, गेहूँ और चने की खेती करनी पड़ी है। जब आस-पास की ज़मीन पर खेत हो

गये हैं तब अकेले चौधरी के गोचर में भी पशु नहीं चराये जा सकते। न जाने कब नासमझ जानवर किसी के खेत में चले जायँ और सारी मेहनत चौपट कर दें ! इधर अमरकुण्ड के मैदान में जो दोमट भूमि है उस पर रबी की फ़सल बोना भी असंभव हो गया है। कंकना के भले आदमियों की भूमि खाली पड़ी रहती है। वे रबी की फ़सल बोने का झंझट नहीं करते, खाद आदि पर रुपया खर्च करना भी बेकार समझते हैं। फलतः धान कटने के बाद उनकी भूमि पड़ी रह जातीतु है। जहाँ अधिकांश भूमि में खेती हो वहाँ थोड़ी सी भूमि में गोचर जितना असंभव है, उस से भी अधिक असंभव यह है कि जहाँ अधिकांश भूमि खाली पड़ी हो वहाँ थोड़ी सी भूमि में खेती की जाय। गाय-बैल तो सँभाले भी जा सकते हैं, परन्तु मनुष्यों और बन्दरों को वश में नहीं किया जा सकता। वे सारी फ़सल ही चौपट कर देंगे। परन्तु कालीपुर की दोमट सोने की दोमट है !.....

चौधरी सोच रहे हैं, अंग्रेज़ों ने जर्मनों के साथ युद्ध क्या किया दुनिया ही उलट दी। दुःख-दुर्दशा सदा रहे हैं, परन्तु युद्ध के बाद इन दिनों जो कुछ हुआ है वह और कभी नहीं हुआ। धोती जोड़ा सात-सात रुपये में मिलता है, दवाओं के दाम आग हो रहे हैं—कील और सुई की कीमत तक चौगुनी हो गई है, धान-चावल के दाम भी दुगुने हुए हैं लेकिन कपड़े-लत्ते के दाम बिगुने हो गये हैं, जमीन के दाम

भी दूने हुए हैं। पैसा देख कर अभागे मूर्खों ने अपनी भूमि कंकना के बाबुओं को सौंप दी है, अब अफ़सोस करने से क्या होता है, मरें—मरना ही तो उनके भाग्य में है। आह—१६१४ में युद्ध आरंभ हुआ था और समाप्त हुआ १६१८ में, अब १६२२ है, परन्तु बाज़ार की आग अब तक नहीं बुझी। कंकना के बाबू मिट्टी-कंकर बेचकर रुपया बटोरते हैं और मोटी रकम देकर कालीपुर की ज़मीन ख़रीद लेते हैं। मिट्टी कंकर ही तो है, मिट्टी खोदने से कोयला निकलता है—वही कोयला बेचकर पैसा जमा होता है। पहले कोयला तीन आने चौदह पैसे मन बिकता था। अब चौदह आने मन बिकता है। जले पर नमक—इस मँहगी में पंचायत बिठाकर टैक्स लगाया गया है। यूनियन बोर्ड! ये बाबू ही सब पँचायत बनाकर दण्ड-मुण्ड के मालिक बन बैठे हैं और कहते हैं, तुम सब टैक्स दो। टैक्स वसूल भी किस धूम-धाम से हो रहा है। चौकीदार और दफ़ादार को साथ लेकर और खाता बगल में दबाकर दुर्गामिसिर जैसे लाट साहब बन गया है!·····

सहसा चौधरी चौंके और खड़े हो गये। कोई कहीं रो रहा है? लाठी बगल में दबाकर और धूप रोकने के लिए भौंह पर हाथकी आड़ लगाकर चौधरीने पहले इधर-उधर देखा, फिर पीछे की ओर घूमे, हाँ, कुछ गाँव वाले इधर ही आ रहे हैं, इन्हीं में से कोई रो रहा है, रोने वाली स्त्री है, वह दीख

नहीं पड़तो, सामने वाले पुरुष की आड़ में छिप गई है। अरे, पुरुष ने काले साँप की तरह पीछे घूम कर स्त्री की चोटी पकड़ी, घूँसों से मारना आरंभ कर दिया। चौधरी ने यहीं से ललकारा, 'ऐ, ए, अरे, ओ·····!'

पता नहीं, उन लोगों ने सुना या नहीं, परन्तु स्त्री ने रुदन बन्द कर दिया। पुरुष ने भी उस को छोड़ दिया। चौधरी थोड़ी देर देखते रहे, फिर चलने लगे। वे सोचने लगे—इन्हें नीच क्या यों ही कहा जाता है। लज्जा है न शर्म! रीति-नीति तो कभी न जानेंगे, इतना भी नहीं जानते कि स्त्री के बदन पर हाथ लगाने से सर्वनाश हो जाता है। दस सिर और बीस हाथ वाला रावण जिस के एक लाख लड़के और एक लाख नाती थे, वह भी सीता को सताने के कारण मिट गया!

चौधरी बाँध के निकट आ गये हैं। पीछे की ओर गैरों की आवाज़ सुनकर रुके और घूमे, देखा गुस्से से भरा पातू मोची पुराने सुअर की तरह सीधा चला आ रहा है। उसके पीछे धमधम करती और दौड़ती हुई एक स्त्री आ रही है। वह शायद पातू की घरवाली है। वह अब तक धीरे-धीरे रो रही है और बीच बीच में आँखें पोंछ लेती है। चौधरी कुछ घबराये। पातू जिस गति से आ रहा है उसे देखते हुए उन्हें ही रास्ता छोड़ना पड़ेगा। पातू के आगे-आगे चलने की शक्ति चौधरी में नहीं है। परन्तु पातू ने स्वयं ही मार्ग बना

लिया। वह बगल के खेत में उतर कर आगे जाने के लिए उद्यत हो गया, परन्तु सहसा वह रुक गया और चौधरी को जुहार करके बोला—'देखिए, चौधरी जी देखिए !'

चौधरी पातू के मुँह की ओर देख कर काँप उठे । उसके सर में लगी ताज़ी चोट से खून निकल रहा है और सारे चेहरे को रँग रहा है।

'ए जी बाबू जो ! खून कर डाला जी ! ···साथ ही साथ पातू की स्त्री ज़ोर से रोने लगी।

'ए !' पातू गरजा, 'ससुरी फिर चिल्लाने लगी।'

स्त्री का स्वर नरम हो गया, वह सिसक कर रोने लगी—'गरीब को मार डाला जी ! आप इंसाफ़ कीजिए !'

पातू घूम कर खड़ा हुआ और पीठ दिखा कर बोला, 'देखिए, पीठ देखिए।' पीठ पर लंबी रस्सी जैसे प्रहार चिह्न हैं। ऐसा जान पड़ता है कि इनसे खून छलकने ही वाला है। चिह्न भी एक दो नहीं हैं—सारी पीठ क्षत-विक्षत हो रही है !

चौधरी आंतरिक ममता और सहानुभूति से विचलित हो गये, आवेग विगलित स्वर में बोले—'राम ! राम ! यह किसने मारा, पातू ?'

'जो, वही छिरूपाल।' गुस्से में भन्नाते हुए पातू ने प्रश्न के पहले ही उत्तर दिया। 'बात नहीं, चोत नहीं, आते ही रस्सी लेकर जुट गया और यह हालत कर दी, देखिए !' उसने पीठ फिर चौधरी को दिखाई और फिर घूम कर बोला, 'रस्सी

पकड़ ली तो बाँस से खोपड़ी तोड़ दी।'

छिरूपाल—श्रीहरि घोष ? अविश्वास का कोई कारण नहीं। ओह बड़ी बेदरदी से मारा है उसने ! चौधरी की आँखों में आँसू आ गये। एक समय ऐसा भी होता है जब मनुष्य दूसरे के दुख से इतना विचलित हो जाता है कि अपना सारा दुख भूल जाता है और पीड़ित की वेदना अपने मन और शरीर पर प्रत्यक्ष रूप से अनुभव करता है। चौधरी इसी अवस्था में पहुँच गये और सजल लोचनों से पातू की ओर देखते रहे, उनके दंतहीन मुख के शिथिल ओंठ थर थर काँपने लगे।

पातू बोला—'सब चौधरियों के पास हो आया हूँ। किसी ने कोई उपाय नहीं बताया। दुश्मन के लिए सब दरवाज़े खुले हैं।'

पातू की बहू सिसकी के साथ कह रही थी, 'उस सर्वनाशिनी मुँहजली के लिए ही जी—'

पातू ने धमकी के साथ कहा, 'ए, फिर तूने बकबक शुरू की तो—'

चौधरी ने कुछ सँभल कर कहा, 'क्यों ऐसे मारा ? क्या दोष किया था तुमने जो—'

पातू ने अभियोग के स्वर में उत्तर दिया—'उस दिन चण्डी-मण्डप की पंचायत में आपसे फ़ैसला करने को कहा था, आपने सुना ही नहीं, चले आये। मैं गाँव भर के आदमियों

को जूतियाँ देता हूँ, लेकिन मुझे कुछ नहीं मिलता ! लोहार ने जब अपनी बात की तब मैं भी कहने जा रहा था कि अब जूतियाँ·····। कल शाम को पाल का आदमी तगादा करने आया था—मैंने कह दिया पैसे ले आओ ! बस आफ़त आ गई ! सबेरे-सबेरे आकर पीट दिया !'

चौधरी चुप हो गये। पातू की बहू ने बार बार गरदन हिला कर और धीमे रुदन के स्वर में कहा, 'नहीं जी, बाबू जी—'

पातू ने उसकी बात दबा कर कहा, 'हमारा पेट कैसे भरेगा, यह तो आप लोग सोचेंगे नहीं और यों ही मारेंगे ?'

चौधरी ने खाँस कर गला साफ़ किया और बोले, 'यह ठीक है कि श्रीहरि ने तुम को इस तरह मार कर महा अन्याय किया है—अपराध किया है, लेकिन जूती देने का मामला तुम नहीं समझते, बेटा पातू। गाँव में जो पशु मरते हैं, वे तुम्हें मिलते हैं, तुम उनका चमड़ा लेते हो, हड्डियाँ लेते हो, इसी के बदले में तुम्हें गाँव वालों को जूतियाँ देनी पड़ती हैं।'···पशुओं का माँस लेने का उल्लेख चौधरी ने घृणा के कारण नहीं किया।

पातू आवाक हो गया, बोला—'मरे पशुओं के बदले में ?'

'हाँ, तुम्हारे पुरखे सब जानते थे।'

'यही नहीं जी, वह जलमुँही कलंकिनी' पातू की बहू फिर बोली।

इस बार पातू ने भी साथ ही साथ कहा, 'जी हाँ, सिर्फ़ जूती ही नहीं—आप लोग भले आदमी हमारे घर की औरतों

पर आँख उठावें तो हम कहाँ जायँगे ?'

प्रौढ़ प्रवीण धर्म-परायण चौधरी बोल पड़े—'राम ! राम ! राम ! राधेकृष्ण ! राधेकृष्ण !'

पातू बोला, 'राम राम नहीं चौधरी जी। मेरी बहन दुर्गा जरा बज्जात तो है; ब्याह कर दिया था सो ससुराल से भाग आई है। उसी के साथ छिरूपाल साँठ-गाँठ करेंगे—जब तब बहाना बनाकर आवेंगे और घर में घुस कर बैठेंगे। मेरी माँ हरामजादी को तो आप जानते ही हैं। सदा से ही ऐसी है; वह छिरूपाल को बिठायेगी और उसके साथ खुस-फुस करेगी। घर में मेरी भी बहू है। उसको, माँ को और दुर्गा को मैंने दो हाथ लगा दिए थे और चौधरी से कहा था, अच्छी तरह कहा था कि चौधरीजी, मेरी जात-पाँत में निंदा होगी, आप यहाँ न आया करें। असली गुस्सा इसी बात पर है।'

चौधरी के दोनों हाथ लाठी और छाते में फँसे थे, कान में उँगली डालने का उपाय न था; घृणा के साथ थूक कर उन्होंने कहा, 'राधाकृष्ण ! राधाकृष्ण ! ठहरो पातू बेटा, रहने दो सवेरे-सवेरे मुझ से ऐसी बातें न करो। मेरे हाथ में है ही क्या ! शिव ! शिव !'

पातू कुछ रुष्ट हो गया, बिना कुछ कहे वह झपट कर चलने लगा। पीछे-पीछे उसकी स्त्री भी लपकी। स्वामी की नीरवता का सुयोग प्राप्त कर उसने फिर आरंभ किया—'हरामजादी अब अपने भाई के दुख से रोने का स्वांग करने बैठी है। अरे

मैं क्या करूँ रे !'

पातू बिजली की तरह घूमा, उसकी स्त्री भय से चीखी—'आँ—!'

पातू ने मुँह टेढ़ा करके कहा, 'चिल्ला न ससुरी ! तुझसे कुछ नहीं कहता।' स्त्री को धक्के से एक ओर हटा कर वह फिर चौधरी के सामने आया और बोला—'अच्छा चौधरीजी, अलीपुर के रहमत शेख ने कंकना के रमंद चटर्जी से मिल कर मरे पशुओं का चमड़ा ख़रीदने का जो पट्टा लिया है, उस पर आप क्या कहते हैं ?'

चौधरी ने आश्चर्य के साथ पूछा—'क्या ?'

मरे पशुओं का चमड़ा उनके सिवा हम किसी और के हाथ नहीं बेच सकते। वे कहते हैं, जमींदार के साथ हमने बंदोबस्त कर लिया है। खाल छुड़ाने की मजूरी और निमक के पैसे—ऊपर से दो-चार आने पैसे और दे दिए। इधर चमड़े के दाम बहुत बढ़ गये हैं।

चौधरी ने पातू की ओर देख कर फिर पूछा—'सच ?'

'झूठ निकले तो पचास जूते मारना—नाक रगड़वाना।'

फिर—चौधरी ने गरदन हिला कर कहा—'फिर तुम हज़ार बार कह सकते हो कि पैसे दो। गाँव वाले पैसे देने के लिए बाध्य हैं। परन्तु ज़मींदार के गुमास्ते से पूछा है ?'

पातू बोला,—गुमास्ते से क्यों ज़मींदार से ही पूछूँगा—अभी जाता हूँ। डाक्टर साहब ने कहा था, थाने जा। थाने

क्यों, अब पहले जमींदार के पास ही जाता हूँ । दोनों बातों का फ़ैसला हो जाय । देखें जमींदार क्या कहते हैं ।'

पातू फिर लौटा और सीधी मेड़ छोड़ कर दक्षिण की एक मेड़ पर कंकना की ओर जाने लगा । वृद्ध चौधरी नदी के चर की ओर चले । अब नदी के उस पार वाले मिलों की चिमनियाँ साफ़ दीखने लगी हैं । चौधरी भी ठिकाने पर पहुँच गये हैं । बेचारे हैरान होकर यही सोचते रहे हैं कि और तो सब हुआ, अब रमन्द चटर्जी चमड़ा बेच कर धनी होगा। छिः छिः ब्राह्मण वंश और यह काम !

—पाँच—

एक कहानी है कि राम और श्याम दो जुड़वा भाई थे । यमदूत भूल से राम के स्थान पर श्याम को ले गये और श्याम के स्थान पर राम को पकड़ लिया । मनुष्य ने व्यापक क्षेत्र में यमदूतों का अनुकरण किया है, फलतः अपनी अतिबुद्धि के कारण वह राम के अपराध में प्रायः श्याम को ही खींचता है । पुलिस वाले भी मनुष्य हैं, अतएव उनकी भी यही दशा है । दूसरे दिन पुलिसकी जाँच होगई। अनिरुद्ध ने क्रोध का कारण दिखा कर छिरूपाल पर सन्देह प्रकट किया था, परन्तु पुलिस ने खेतों के रक्षक सतीश पासी के घर की तलाशी ली और उसे पकड़ लाए । बेचारे को घण्टों जिरह में हैरान किया और अंत में छोड़ दिया । छिरू पाल की धान रखने की गुदाम भी

एक बार घूम फिर कर देखी गई, परन्तु वहाँ अनिरुद्ध के धानों का एक तिनका भी न मिला।

पुलिस चण्डी-मण्डप में ही बैठी थी। गाँव के चौधरी आदि भी चन्द्र-मण्डल के नक्षत्र सभासदों की भाँति चारों ओर डट कर बैठे थे और उत्तेजित भाव से आपस में काना-फूसी करते थे। छिरूपाल पुलिस के अति निकट और अत्यन्त गम्भीर मुद्रा के साथ बैठा था। उसके आकर्ण विस्तृत मुख-गह्वर की दाढ़ों के नीचे वाले दोनों हाड़ ऊँचे हो गये थे और कठिन जान पड़ते थे। अनिरुद्ध घुटने टेक कर सामने ही बैठा था और भूमि की ओर देख कर न जाने क्या सोच रहा था। जाँच के अंत में पुलिस उठी। साथ ही साथ अनिरुद्ध भी खड़ा हो गया, देखे बिना ही उसने अनुभव कर लिया था कि गाँव वाले उसे प्रतिहिंसा की तीक्ष्ण एवं कठोर दृष्टि से देख रहे हैं! प्रत्यक्ष यंत्रणा सहन हो सकती है, निरुपाय हो कर मनुष्य सहता ही है, परन्तु भावी यंत्रणा का संकेत असह्य हो जाता है। इसीलिए अनिरुद्ध भी पुलिस के साथ ही चला गया।

पुलिस वालों के जाते ही चण्डी-मण्डप कलरव से मुखरित हो गया। प्रत्येक व्यक्ति ने अपने मत की घोषणा आरंभ की और किसी को अपनी बात सुनते न देख कर अपना कण्ठस्वर यथासंभव ऊँचा कर दिया। किसानों में कोई श्रीहरि घोष को अच्छी दृष्टि से नहीं देखता, परन्तु अनिरुद्ध

कर्मकार ने जब पुलिस में रिपोर्ट लिखाई और उनके घर की तलाशी करवाई, उन के घर में पुलिस घुसेड़ दी, तब इस अपराध को उन्होंने सम्प्रदाय का प्रश्न बना लिया और उत्तेजित हो गये। उस दिन पंचायत में अनिरुद्ध ने जो कुछ कहा था उसने आज की घटना का गुरुत्व और भी बढ़ा दिया।

देवनाथ घोष की आवाज़ जितनी तीक्ष्ण है उतनी ही ऊँची है। गाँव भर के कलरव में उसका स्वर स्पष्ट सुन पड़ता है। इसके दो कारण हैं। किसान के घर में देवनाथ अपवाद है। मेधावी और बुद्धिमान देवनाथ विद्यार्थी-जीवन में भी कृती छात्र था। आर्थिक कठिनाई और परिवारिक स्थिति के कारण उसे मैट्रिक में ही पढ़ाई छोड़नी पड़ी है। अब यह इसी गाँव की पाठशाला में पण्डित है। ग्राम-जीवन की व्यवस्था-शृंखला का उसने व्यग्र कौतूहल के साथ अनुसंधान किया है। वह कह रहा था—लुहार-बढ़ई और नाई यह नहीं कह सकते कि वे काम न करेंगे। काम तो उन्हें करना ही पड़ेगा।

श्रीहरि उसी तरह गंभीर रूप में दाँत पर दाँत दबाए बैठा था, उसने न सोचा था कि बात यहाँ तक बढ़ जायगी, उधर श्रीहरि की धान की गुदाम में सूखने के लिए डाले हुए धानों को पैर से उलटती हुई छिरू की माँ अश्लील गालियाँ और निर्मम अभिशाप दे रही थी।

× × × × ×

पद्म दरवाज़े पर खड़ी थी और उत्कण्ठित दृष्टि से रास्ते की ओर देख रही थी। पुलिस से वह बहुत डरती है। छिरू की माँ जो गालियाँ और शाप दे रही है वह वहाँ से सुन पड़ते हैं। पद्म भी दुरन्त मुखरा स्त्री है—गाली-गलौज में किसी से दबना नहीं जानती। वह किसी का नाम न लेकर और उसकी अवस्था के साथ मिला कर ऐसे शाप दे सकती है कि वे शब्द-वेधी बाण की भाँति निशान के हृदय में आमूल बिंध जाते हैं। किन्तु आज दारुण उत्कण्ठा के कारण उस का मुँह बन्द है। इसी समय अनिरुद्ध ने घर में प्रवेश किया, पद्म ने संतोष की साँस ली और उसकी आँखों में चमक आगई, वह बोली, सुनते हो। मैं भी अब गालियाँ दूँगी!'

अनिरुद्ध की अवस्था बरफ की भाँति अनुतप्त-स्थिर और कठोर हो रही थी। वह बोला, नहीं, गालियाँ-वालियाँ नहीं देना है। घर चलो।'

पद्म ने दरवाज़े की ओर बढ़ते-बढ़ते कहा, 'ऐसे ही घर चलूँ—कान क्या बन्द हो गये हैं—गालियाँ नहीं सुनते?'

'तो जा, गालियाँ दे, गला फाड़ कर चिल्ला!'

पद्म कुनमनाती हुई भण्डार में घुसी और कटोरी में तेल लाकर बोली—'तुम ने आज मुझे कितना ख्वार किया है, सुनते नहीं?''' पद्म और अनिरुद्ध निस्संतान हैं इसीलिए छिरू की माँ अनिरु की निष्ठुरतम मृत्यु-कामना करने के बाद पद्म के लिए विनौनी उपजीविका का संकेत करके

अभिशाप दे रही है। पद्म तेल की कटोरी भूमि पर रख कर और अनिरुद्ध का एक हाथ खींच कर उस में तेल मलने लगी। अनिरुद्ध का हाथ कर्कश और कठोर है, उसके बाल आग की आँच से झुलस कर दाढ़ी के बालों की तरह खुरखुरे हो गये हैं, हाथ ही क्या शरीर, छाती, पेट और पैर—शरीर के सम्मुख भाग के सब अनावृत्त अंगों के बाल इसी तरह जल गये हैं। तेल मलते-मलते पद्म ने कहा, 'बाप रे हाथ हैं कि चैला!'

अनिरुद्ध ने पद्म की बात पर ध्यान नहीं दिया, बोला—'मेरी गुप्ती निकाल कर साफ़ कर देना।'

पद्म ने पति के मुँह की ओर देखकर कहा, 'मेरे पास भी एक खाँडा है, वह माँज-मूँज कर रखा है। एक दिन गला काट लूँगी।'

'क्यों?'

'तुम खून-खराबी करके फाँसी चढ़ोगे और मैं बंदर की बला तबेले के सिर भुगतने के लिए बची रहूँगी?'

अनिरुद्ध ने कोई उत्तर न दिया—'हूँ' कह कर वह चुप हो गया। अर्थात् बन्दर की बला तबेले के सिर की बात उसने न सोची थी, नहीं तो छिरू को घायल करके जेल जाने या मार कर फाँसी चढ़ने में उसे कोई विशेष आपत्ति न थी।

'कहा था कि थाने न जाओ! तुम ने सुना ही नहीं। क्या हुआ? पुलिस ने क्या किया? गाँव के साथ मुफ्त में झगड़ा

बढ़ गया। और मैंने गाली देने के लिए कहा तो शेर की तरह दहाड़ने लगे, नहीं, गाली नहीं दे सकती।'

रुँधे हुए क्रोध से अनिरुद्ध पहले ही बेचैन हो रहा था, पद्म की बात से वह और भी झुँझलाया। परन्तु कोई कड़ी बात कहने का साहस नहीं कर सका, इच्छा भी न हुई। बन्ध्या पद्म के साथ उसे बड़ी सावधानी के साथ व्यवहार करना पड़ता है। कभी-कभी वह मामूली बात पर ही अभिमान से भर जाती है और बालिका की तरह रो धोकर तथा सिर पीट कर अनर्थ उपस्थित कर देती है। कभी कभी जैसे प्रवीणा प्रौढ़ा उत्पाती बच्चे के दुलार और अत्याचार सहन करती है वैसे ही वह भी अनिरुद्ध के अत्याचार हँस कर टाल देती है, अनिरुद्ध के घूँसे खाकर वह खिलखिलाती है। अनिरुद्ध समझ लेता है कि पद्म अब किस तरफ जा रही है। आज की बातों में उस के अभिमान का सुर झलकने लगा है—इसीलिए अनिरुद्ध ने अपने आप को सँभाल लिया और तेल लगे पैर समेट कर बोला—'कहाँ, अँगौछा कहाँ है ?'

पद्म का अभिमान फिर भी शाँत नहीं हुआ; मुँह से कुछ न कह कर उसने विद्युत गति से अपना सिर उठाया और विचित्र दृष्टि से पति की ओर देखा फिर तेल की कटोरी उठाकर चली गई।

अनिरुद्ध ने विरक्ति के साथ भौंहें चढ़ा कर कहा—'वक्त का भी ख्याल है ? छाँह कहाँ पहुँच गई है। तीन तो

बजने ही वाले हैं।'

गंभीर मुख और व्यथित दृष्टि से पद्मने आँगन में पड़ी छाया की ओर देखा, अँगौछा लाकर दिया और बोली, 'बैठो, पानी ले आती हूँ, यहीं नहा लेना।'

कंधे पर अँगौछा डाल कर अनिरुद्ध ने कहा, देर हो जायगी, मैं गया और आया। पंचकौड़ी की तरह झट से गोता लगाऊँगा और निकल आऊँगा। तू थाली परोस दे, वह जल्दी से बाहर चला गया।

थाली परोसने के लिए पद्म रसोई की कुण्डी खोलने लगी, परन्तु जंजीर पर हाथ रख कर ही रुक गई! उसे ख्याल आया कि दाल और सब्जी तो ठण्डी हो गई है। बाबू को पसन्द ही न आयेगी! बाबू नहीं नवाब, जितनी आमदनी उतना खर्च। लुहार, कुम्हार, बढ़ई, नाई और सुनार खर्चे के लिए बदनाम होते ही हैं, लेकिन अनिरुद्ध जैसा खर्चीला पद्म ने नहीं देखा। कस्बे में दूकान खोलने से खर्च करने की सनक और भी बढ़ गई है। एक रुपये सेर की मछली इस गाँव में कौन खाता है? अब कोई गरम सब्जी न होगी तो नवाब साहब भात को हाथ लगा कर ही उठ जायँगे। खिड़की के पास जो तलैया है उस पर पद्म ने कुँआर में प्याज लगाया था, वह अब बड़ा हो गया है। पद्म ने सोचा, थोड़े से प्याज के पत्ते लाकर साग बना दूँ। खिड़की की ओर बढ़ते ही उसे बाहर कोई खड़ा जान पड़ा। सफेद कपड़ा झलक रहा है, पद्म सिहरी, उसे छिरू

पाल की कल वाली वीभत्स हँसी याद आगई ! दो-चार पग पीछे लौट कर उसने पूछा, 'कौन ? कौन खड़ा है ?'

आवाज़ सुन कर आदमी ने धीमी गति से घर में प्रवेश किया। पद्म को आश्वासन मिला—वह मर्द नहीं औरत है। दूसरे क्षण में ही वह स्तम्भित होगई—यह तो छिरूपाल की स्त्री है। उसकी आयु तीस-बत्तीस से अधिक न होगी, कभी वह सुन्दरी थी, परन्तु अब अकाल-वार्धक्य से जीर्ण-शीर्ण हो गई है। उसकी आँखों में करुण प्रार्थना है। उसने बिना भूमिका के ही दोनों हाथ जोड़ कर कहा—'लुहारिन बहिन !'

पद्म के मुँह से आवाज़ न निकली, छिरूपाल की बहू को वह अच्छी तरह जानती है, जानती है कि इतनी सीधी और भली स्त्रियाँ कम होती हैं। यह भी उसे पता है कि यह बड़े घर की बेटी है और इस की दुर्दशा भी उसने सुनी है, और छिरूपाल द्वारा पिटते भी देखा है—सास इसे जो गालियाँ देती है वह तो पद्म नित्य ही सुनती है।

छिरू की बहू ने पद्म के सामने कुछ झुक कर कहा, 'तुम्हारे पैर पकड़ने आई हूँ बहन !'

पद्म ने पैर पीछे हटाते हुए कहा, 'नहीं, नहीं, यह भी कोई बात है !'

'मेरे दोनों बच्चों को तुम शाप न देना, बहन, जिसने किया है उसे कोसो, मैं कुछ नहीं कह सकती !

छिरूपाल के सात बच्चों में से दो बचे हैं। वे भी पैतृक

गुप्त व्याधि के विष से जर्जर हैं-एक रुग्ण है, दूसरा पंगु जैसा हो गया है।

संतानवती स्त्रियों के लिए बन्ध्या पद्म में एक अचेतन गत हिंसा है। परन्तु इस समय वह हिंसा भी स्तब्ध होगई!

उसने केवल एक लम्बी साँस ली।

छिरूपाल की स्त्री बोली—'तुम्हारा बड़ा नुकसान किया है। किसान का घर—मैं जानती हूँ। तुम बहन ये रुपये रख लो—' स्तम्भित पद्म के हाथ में उस ने दस-दस रुपये के दो नोट गूँज दिए और बोली—'छिपा कर आई हूँ, बहन, पता लग जायगा तो जिन्दा न रखेंगे, और फिर जल्दी के साथ खिड़की की ओर बढ़ी। खिड़की पार करने के बाद वह फिर घूम कर खड़ी हुई और हाथ जोड़ कर बोली—'मेरे बच्चों का कोई अपराध नहीं है, पद्म मैं हाथ जोड़ जाती हूँ!'

क्षण भर में वह अदृश्य हो गई। पद्म निस्पन्द ही खड़ी रही।

× × × × ×

कोलाहल के आघात से पद्म की जड़ता भंग हुई। फिर कोई झगड़ा हो गया है। कोलाहल में एक आदमी का स्वर स्पष्ट सुन पड़ता है। पद्म उत्कण्ठित हुई; अनिरुद्ध तो नहीं है? नहीं वह नहीं है। फिर? छिरूपाल? पद्म ने कान लगा कर सुना और समझा कि यह छिरूपाल की भी आवाज नहीं है। फिर?···द्रुत गति से वह बड़े दरवाजे से निकली और

सामने राह में खड़ी हो गई। अब उसे मालूम हुआ कि स्वर गाँव के एकमात्र ब्राह्मण हरेन्द्र घोषाल का है। पद्म निश्चिन्त हुई, उसके मुख पर व्यङ्ग की हास्य-रेखा भी झलकी। हरेन्द्र के दिमाग में एक सनक है कि गाँव में वह सब से बड़ा आदमी है। छिरुपाल ने साइकल खरीदी तो घोषाल अपनी जमीन गिरों रख कर साइकल और गाने वाली मशीन ले आया। छिरुपाल ने उपहास करने के लिए हवा फैला दी है कि अब मैं एक घोड़ा खरीदूँगा। हरेन्द्र ने अपनी मान-रक्षा के लिए चिन्तित होकर माँ से परामर्श किया है कि छिरुपाल ने घोड़ा खरीदा तो मैं हाथी खरीद लूँगा।···आज ब्राह्मण को न जाने क्यों गुस्सा आ गया है ? रास्ते में कोई छोटा-सा बच्चा भी नहीं है जिससे पद्म पूछ ले !

पद्म ने देखा कि अनिरुद्ध आ रहा है। निकट आकर और पद्म की ओर देख कर अनिरुद्ध खिलखिला कर हँसने लगा।

पद्म बोली—'हँसते क्यों हो ?'

अनिरुद्ध की हँसी रुकती ही नहीं।

'आदमी बात बता कर हँसता है ! इतना हल्ला-गुल्ला किस बात का है ? हरु पंडित क्यों चिल्ला रहे हैं ?'

अनिरुद्ध ने मुश्किल से हँसी रोक कर कहा—'तारा नाई ने हरु पंडित को खूब छकाया है। आधे बाल बना कर·····' प्रबल हास्योच्छ्वास से बात अधूरी ही रह गई।

थाली पर बैठ कर अनिरुद्ध ने किसी तरह बात समाप्त

को। तारा नाई ने भी हम लोगों की देखादेखी कह दिया है कि धान लेकर मैं साल भर तक गाँव भर के बाल न बनाऊँगा। जिनके पास जमीन नहीं है—खेत नहीं है—वे तो धान देने ही नहीं, जिनके पास है, वे भी सब नहीं देते। उसने धान की जगह पर पैसे लेना शुरू किया है। आज हरू पंडित बाल बनवाने गये थे। तारा ने पैसे माँगे। कुछ देर झगड़ने के बाद पंडित ने कहा, पैसे देंगे और बाल बनवाने लगे।'

अनिरुद्ध बोला—'तारा नाई—नाई वैसे ही धूर्त होता है फिर तारा—आधे बाल बना कर उसने कहा, पैसा दे दो। हरू ने कहा, कल देंगे। तारा भी छुरा-उरा उठा कर घर में घुस गया, कह गया आज इतने ही रहने दो, बाकी कल बना देंगे। बस, हरू हिन्दी में, फारसी में, इंगरेजी में गालियाँ देने लगे। गाँव वाले फिर पंचायत बुला रहे हैं।' अनिरुद्ध फिर हँसने लगा। हँसने से उसके मुँह का भात छिटक कर रसोई भर में फैल गया।

पद्म जरा छुआ-छूत का ध्यान रखती है, और कोई दिन होता तो वह हल्ला-गुल्ला करती, परन्तु आज चुप रही। उसकी चुप्पी ने अनिरुद्ध का ध्यान आकर्षित किया। गहरे विस्मय के साथ उसने पद्म का मुँह देखकर पूछा—'आज तुझे क्या हुआ है?'

लम्बी साँस लेकर पद्म ने कहा, 'बिरूपाक्ष की औरत लुक-छिप कर आई थी।'

'कौन ?' अनिरुद्ध का विस्मय और भी बढ़ गया।

'छिरूपाल की औरत जी।' धीरे-धीरे पद्म ने सारी कहानी सुनाई और धोती के छोर में बँधे नोट दिखाए।

अनिरुद्ध चुप हो गया।

पद्म ने फिर लंबी साँस लेकर कहा, 'अहा बेचारी माँ है न !'

अनिरुद्ध कुछ देर तक स्तब्ध बैठा रहा फिर बदन झाड़ कर उठा, जैसे अपने आप को झकझोर कर उठा रहा हो। बोला—'दुनिया भर का काम पड़ा है और अभी डेढ़ कोस जमीन नापनी है।'

पद्म ने कुछ न कहा। हाथ मुँह धोकर मसाला मुँह में डालकर और एक बीड़ी सुलगा कर अनिरुद्ध ने एक मुस्कान के साथ कहा, 'एक नोट मुझे दे दे !'

पद्म ने भौंहें सिकोड़ कर अनिरुद्ध की ओर देखा। वह कुछ और हँस कर बोला—'पाँच रुपये का लोहा लेना है। छिरूपाल को रुपये देने में गाहक के भी पाँच रुपये टूट गये हैं। और—'

पद्म ने एक नोट अनिरुद्ध के सामने फेंक दिया।

नोट उठाकर अनिरुद्ध ने हँसते हँसते ही कहा, 'मैं खुद एक ही रुपया—तेरी कसम—एक रुपये से एक पैसा भी ज्यादा खर्च न करूँगा। तू ही बता कितने दिन से नहीं पी !'

अर्थात् शराब।

पद्म फिर भी कुछ न बोली, अकस्मात अनिरुद्ध से वह

चिढ़-सी गई।

—छ—

हरू घोषाल की आधी दाढ़ी बनाकर और आधी छोड़ कर तारा नाई ने चाहे जितनी परिहास रसिकता प्रकट की हो और गाँव वाले घोषाल का आधे नारीश्वर जैसा रूप देख कर चाहे जितना हँसे हों, परन्तु इसकी प्रतिक्रिया बहुत गम्भीर रूप में प्रकट हुई।

हरीश मण्डल प्रवीण और मातवर आदमी हैं। वही पहले बोला—'हँसो नहीं, हँसने की बात नहीं है। यह भी तो सोचो कि गाँव की हालत क्या हुई जा रही है?'

सब ने हँसी के वेग को कुछ रोक कर हरीश की ओर देखा। हरीश ने गम्भीर स्वर में कहा—'इसी का नाम अराजकता है!'

छिरू के चाचा भवेश पाल शरीर से स्थूल हैं फिर भी अपनी बुद्धिमत्ता दिखाने से नहीं चूकते, वे भी गंभीर होकर बोले—'कहते तो ठीक हो!'

देवनाथ हँसी-ठट्टे में हिस्सा लेने वाला आदमी नहीं है,—उसने बात को समझ कर कहा—'आप इसे रोकेंगे भी कैसे? गाँव में संगठन कहाँ है? लुहार-बढ़ई के मामले में पंचायत हुई तो छिरू ने द्वारका चौधरी का अपमान किया, चौधरी उठ कर चले गये, जगन डाक्टर आये ही नहीं—उलटे अनिरुद्ध को

भड़का दिया।'

भवेश ने एक लम्बी साँस लेकर कहा—'हरिनाम ही सत्य है! पुरुखों की यह बात झूठी नहीं हो सकती कि कलियुग में यवन ही रह जाँयगे। इसी तरह धर्म कर्म-मिट जायगा।'

हरीश बोला—'लुटनी दाई क्या कहती है, जानते हो? मेरे लड़के की बहू का नवाँ महीना है। कहलवाया था कि रात-विरात कहीं जाना हो तो पहले ख़बर ले जाना। उसने जवाब दिया कि आ जाऊँगी, लेकिन नगद विदाई देनी पड़ेगी।'

चिंता-सागर में डूब कर भवेश ने कहा—'हुँ।'

हरीश बोला—'कहते हैं, राजा के बिना राज नहीं रहता। हमारे ज़मींदार भी ऐसे ही हैं—उनका होना न होना बराबर है।

देवनाथ बोला—ज़मींदार की बात छोड़िए, वह बुरा भी किस बात में है? यह काम तो ज़मींदार का नहीं, आप लोगों का है। आप ज़रा कड़े होकर पंचायत बुलाइये। सब को सिर नवा कर आना पड़ेगा। आयेंगे क्यों नहीं—उन पर क्या कभी विपत्ति न पड़ेगी? सिर पर लोहा बाँध कर तो नहीं आये। चौधरी को बुलाइए, जगन डाक्टर को बुलाइए—बुला कर पहले घर समझ लीजिए। फिर लुहार, बढ़ई, मोची, दाई, धोबी और नाई को बुलाइये और न्याय के साथ फ़ैसला कीजिए।'

हरीश ने मातबरों की ओर देख कर कहा, 'देवनाथ कहते

तो ठीक है।' आपकी क्या राय है ?

भवेश बोले—'उत्तम परामर्श है।'

नटवर ने कहा—'यही करना चाहिए।'

देवनाथ के उत्साह की सीमा न रही। वह बोला,—'आज ही शाम को बैठ जाइये। मैं इन्तजाम कर दूँगा। स्कूल से गैस-बत्ती ला दूँगा। खबर भी सब को भिजवा दूँगा। क्या कहते हैं आप ?'

हरीश ने सब की ओर जिज्ञासा के साथ देखा, 'क्यों जी ?'

'ठीक है! जरा सी तमाकू और आग का डौल रखना भाई!'

बहुत दिन के बाद चंडी-मण्डप में फिर उजाला हुआ और गाँव की पंचायत जमी। तीस वर्ष पहले चंडी-मण्डप में प्रति-दिन ऐसी भीड़भाड़ रहती थी। तब गाँव के मामलों पर विचार होता था, संकीर्तन चलता था, शतरंज और चौपड़ खेले जाते थे। गाँव भर के परामर्श का केन्द्रस्थल यही चंडी-मण्डप था। गाँव में किसी के नाते-रिश्तेदार आते थे तो यहीं बिठाये जाते थे। क्रियाकर्म, अन्नप्राशन, विवाह, श्राद्ध सब चण्डी-मण्डप में ही होते थे। कितने ही मंगल-चिह्न शिवाले की दीवालों और चण्डी-मण्डप के खंभों में अब तक अंकित हैं, काल की धूल ने उन्हें छिपा भर दिया है। तब गाँवों में कोई अपने घर में बैठक न बनाता था। जगन डाक्टर के बाबा ने ही कविराज होने के बाद पहले-पहल अपनी स्वतंत्र बैठक

बनवाई थी। पहले वे भी चण्डी-मण्डप में ही बैठ कर रोगी देखते थे। इसके बाद अवस्था में परिवर्तन और ज़मींदार के गुमाश्ते से किसी बात पर झगड़ा होने के कारण कविराज ने घर में बैठक बनवाई और उसमें औषधालय खोला। कविराज ने तमाकू और पान की प्रचुरता के बल पर अपने घर की महफ़िल तगड़ी कर ली और चण्डी-मण्डप का रंग फीका कर दिया। फिर तो धीरे धीरे कितने ही घरों में एक एक बैठक बन गई और गाँव भर में कई छोटी-छोटी मजलिसें जमने लगीं। कोई-कोई अपनी बैठक में बत्ती जला कर अकेले ही बैठते और अँधेरे की ओर देखते रहते। लेकिन जगन डाक्टर की मजलिस अब तक सब से बड़ी रहती है। डाक्टर की रूढ़ दाम्भिकता के बावजूद रोगियों की देख भाल करने वाले वहाँ पहुँचते हैं, कुछ लोग डाक्टर के पास आने वाले अर्ध साप्ताहिक समाचार पत्र के लोभ में आ जाते हैं। देवनाथ घोष अप्रसन्न होते हुए भी जाता है। वही ज़ोर के साथ समाचार पत्र पढ़ता है और सब सुनते हैं। असहयोग-आंदोलन समाप्त हो चुका है, स्वराज्य पार्टी के उग्र भाषणों से पत्र भरा रहता है। श्रोताओं के मन चसकते हैं—बुझी हुई गति के गाँव वालों का रक्त भी एक गरम सिहरन अनुभव करता है।

आज की पंचायत देवनाथ के उद्योग से ही जुड़ी है, वही सब का स्वागत कर रहा है। प्रबन्ध भी उस ने पूरा किया है। चण्डी-मण्डप के बाहर देवालय के आँगन में बकुल का एक

पुराना पेड़ है, वही गाँव का षष्ठीतला है। वासुदेव की एक मूर्ति पेड़ की जड़ में गड़ी है। षष्ठी देवी के नाम पर उसी की पूजा होती है। वहीं एक पुरानी सूखी डाल जलाकर आग का प्रबन्ध किया गया है। आग के चारों ओर गाँव के हरिजन बैठे हैं। द्वारिका चौधरी, जगन डाक्टर, छिरूपाल तथा और दो एक आदमी अभी नहीं आए।

गैस बत्ती के प्रकाश से जगमगाते चण्डी-मण्डप की छत को देखकर भवेश बोले—'कितना सुन्दर बना है यह।'

हरीश ने पहले इधर उधर देखा, फिर कहा, 'अब इस की मरम्मत करानी चाहिए।' फिर प्रशंसा के स्वर में बोला, 'कैसा ढाँचा है, लकड़ी कितनी अच्छी है।'

देवनाथ बोला—'मण्डप के षड्दल में लिखा है कि 'यावत् चन्द्रार्कमेदिनी' अर्थात् जब तक चन्द्र, सूर्य और पृथ्वी है तब तक यह भी रहेगा।'

'रहेगा भाई, अवश्य रहेगा। बलिहारी है—बलिहारी—' भवेश पाल अकारण ही उच्छ्वसित और पुलकित हो गया।

ठीक इसी समय चौधरी लाठी टेकते टेकते आए और बोले—'बुलावा तो बड़े ज़ोर से दिया गया है।'

देवनाथ व्यस्त हो कर उठा, छिरूपाल और जगन डाक्टर को बुलाने के लिए दो आदमी भेज दिए। किन्तु डाक्टर न आये, साफ़ कह दिया—'मेरे पास समय नहीं है।' दूत ने बताया कि वे आँख पर चश्मा चढ़ा अखबार पढ़ रहे थे,

छिरू भी न आया, उसे बुखार आगया है, लेकिन उसने कहा है, 'पाँच भाई जो फ़ैसला करेंगे वही मैं भी मान लूँगा।'

छिरू की अयाचित विनय से देवनाथ आश्चर्य-चकित हो गया।

× × × × ×

छिरू की बात अस्वाभाविकता के दोष से दुष्ट है, विनय के पास से फटकना भी वह पसन्द नहीं करता। बुखार भी उसे नहीं आया, वह निर्मम क्रोध से भरे और गर्त में पड़े घायल अजगर की भाँति मन में ही चक्कर काट रहा था। वह घर के भीतर आँगन के चौतरे पर बैठा था, भारी हुक्के की नली मुँह में लगाये था और आँगन के एक बिन्दु को बराबर देख रहा था, उसके मस्तिष्क में कितनी ही चिन्ताएँ घूम रही थी!···

घर फूँक दिया जाय तो कैसा हो?···मन आनन्द से चंचल हो गया। फिर ख्याल आया, नहीं, अभी गुस्से में बिना सोचे-समझे कुछ कर बैठने से बाद में मुसीबत आ सकती है। आज जमादार बन्धु को पचास रुपये देने पड़े हैं! और इसीलिए माँ तब से बराबर गालियाँ दे रही है।

मर, तू मर जा। ऐसा गुस्सा है तेरा। ज़रा भी सबर नहीं। मूर्ख—गधा कहीं का। मेरे पचास रुपये पानी में चले गये! मेरी छाती पर पत्थर रख दे—मेरी हड्डियाँ ठण्डी हो जायँ···!

श्रीहरि का ध्यान इन गालियों की ओर नहीं है। और कोई समय होता तो वह बूढ़ी की चोटी पकड़ कर आँगन में पटक देता और मार-मार कर बेदम कर डालता, परन्तु आज वह निष्ठुर-प्रतिहिंसा की चिन्ता में डूबा है।

अनिरुद्ध उस पार से रात में नौ-दस बजे लौटता है। अँधेरे में आक्रमण कर दिया जाय—नहीं! साथ में गिरीश बढ़ई भी तो रहता है।...दोनों को घायल कर देना भी तो कोई बड़ी बात नहीं है। गडाँची मेरी मदद करेगा।...

क्षण भर बाद ही श्रीहरि चौंक पड़ा। पकड़ा गया तो फाँसी हो जायगी!...कमजोर निगाह वाली बूढ़ी माँ ने भी श्रीहरि को चौंकते देख लिया। रूढ़ भाषा में वह बोली—'मर, निमहराम! बच्चों की तरह चौंकता है, जैसे भूत देख रहा हो!'

श्रीहरि ने कठोर दृष्टि से माँ की ओर घूम कर देखा, और फिर हुक्के से चिलम उतार कर बोला—'सुनती है चिलम बदल दे।'

यह श्रीहरि ने अपनी स्त्री से कहा था। वह रसोई में भात की बटलोई पर निगाह जमाए बैठी थी। पास ही लैम्प की रोशनी में छिरू का बड़ा लड़का किताब खोले बैठा था, परन्तु उसकी दृष्टि अपने पिता पर लगी थी। दस वर्ष का शीर्ण और रुग्ण लड़का है—गले में तावीज़ों की एक माला पड़ी है। वह बड़ी-बड़ी आँखों की अद्भुत, स्थिर और मूढ़ दृष्टि से पिता की

प्रत्येक भावभंगी देख रहा है। श्रीहरि का छोटा लड़का प्रायः पंगु और गूँगा है, वह भी एक ओर बैठा है, मुँह की लार से छाती सदा भीगती रहती है। श्रीहरि ने एक बार लड़के की ओर देखा, लड़का भी विचित्र है। श्रीहरि की मार खाकर भी रोता नहीं, स्थिर दृष्टि से देखता रहता है। लड़के के कारण उस की माँ को पीटना भी कठिन हो गया है। वह माँ के आस पास ही घूमता रहता है, और उसे मारते देखकर हिंसा से भर जाता है। एक दिन उसने प्रहार-रत श्रीहरि की पीठ में सुई चुभा दी थी। लड़के की ओर से दृष्टि घुमा कर श्रीहरि ने स्त्री की ओर देखा—फीका गोरा रंग चूल्हे की आग की आभा से लाल हो गया है—चमड़े से ढका कंकालसार मुँह! श्रीहरि ने दृष्टि हटा ली।

हाँ, एक और उपाय है! अनिरुद्ध की अनुपस्थिति में दीवार फाँद कर पद्म लुहारिन को बाघ की तरह मुँह में दबा कर···श्रीहरि का दिल उछलने लगा!···किन्तु दीर्घांगी सबल-देहा लुहारिन का यह खाँडा बहुत तेज है। उसकी आँख की दृष्टि शीतल होते हुए भी क्रूर है। उस दिन खाँडे पर पड़ी धूप की छटा से मेरी आँखें चौंधिया गई थीं।

दुर्गा चमारिन लुहारिन की अपेक्षा अच्छी है। यौवन भी उच्छ्वसित है और वर्ण में भी वह गौरी है, रंग रस और लीला लास्य में तो वह अपूर्व ही है, परन्तु यह बहुभोग्या है। उसका आकर्षण अब श्रीहरि को उतना विचलित नहीं करता।

दुर्गा के भाई पातू ने ज़मींदार से श्रीहरि के नाम पर नालिश भी की है। चमार की हिम्मत तो देखो! श्रीहरि के मुँह पर उपेक्षा का व्यङ्ग हास्य झलका। ज़मींदार पुत्र के स्वर्णाभूषण श्रीहरि के पास रेहन पड़े हैं!''अकस्मात् श्रीहरि उठ कर खड़ा हो गया।

श्रीहरि की स्त्री चिलम में नई तमाकू चढ़ा कर ले आई, परन्तु श्रीहरि ने उधर देखा भी नहीं। कील में टँगे कुरते की जेब से बीडी दियासलाई लेकर वह चल दिया। अँधेरी गलियों से घूमते-फिरते वह हरिजन बस्ती के किनारे पहुँच गया।

प्रचण्ड कोलाहल उठ रहा है! बस्ती के किनारे बकुल का एक पुराना वृद्ध वृक्ष है। यह बस्ती का मर्मस्थल है। यहीं प्रति दिन शाम को हरिजनों की महफ़िल लगती है। वे गाते-बजाते हैं—कभी-कभी यहाँ झगड़ा भी होता है। आज झगड़ा ही हो रहा है। श्रीहरि एक पेड़ की छाया में छिप कर खड़ा हो गया और सुनने लगा।

पातू चिल्ला रहा है।

दुर्गा के तीक्ष्ण कण्ठ की ध्वनि आई—'भात देने के भतार नहीं मारने के गुसाईं दादा बनते हैं—दादा! क्यों मारेगा तू? मेरी जो खुशी होगी करूँगी। हज़ार आदमी मेरे आयेंगे तुझे क्या?'

दुर्गा की माँ भी चीख रही है। श्रीहरि मुस्कराया—झगड़े का कारण वही है!

सहसा वह पेड़ की आड़ से निकल कर चुपचाप बस्ती की ओर बढ़ा। बस्ती साँय साँय कर रही है। रहने वाले सब मजलिस में जमा हैं। श्रीहरि सावधानी के साथ दुर्गा के घर में घुसा। घर का मतलब दीवार के घेरे से हीन छोटा-सा आँगन और उस के इधर उधर दो दालानें और दो कोठरियाँ। एक में दुर्गा और उस की माँ रहती है, दूसरी में पातू। श्रीहरि की तीक्ष्ण दृष्टि पातू की कोठरी पर है। पातू की वह नाटी और गठीली बिल्ली जैसी बहू कहाँ है? श्रीहरि निराश हुआ। दरवाजा बंद है—दालान में भी सन्नाटा है।

एक कुत्ता कहीं से निकला और भागा। वह शायद सन्नाटे में कच्चे चमड़े का टुकड़ा चबाने में जुटा था। श्रीहरि ने हँस कर एक बीड़ी सुलगाई और उसे हाथ की मुट्ठी में छिपा कर पीता हुआ बाहर आ गया...कौन जाने दुर्गा के लिए कब तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी?...वह फिर पेड़ की आड़ में खड़ा हो गया।

उधर झगड़ा बराबर बढ़ता जा रहा है। श्रीहरि ने फिर एक बीड़ी सुलगाई। दो क्षण बाद पेड़ के नीचे से निकला और जलती हुई बीड़ी पातू के छप्पर में खोंस कर अपने घर की ओर चल दिया।

उधर चण्डी-मण्डप में प्रबल आलोचना हो रही है।

श्रीहरि मुस्कराया।

कुछ देर बाद गाँव के ऊपर का अँधेरा आकाश रक्ताभ

प्रकाश से भयानक हो गया। नक्षत्र तक छिप गये। फूस के जलते हुए टुकड़े फुलझड़ी की तरह आकाश की ओर उड़ने और बुझने लगे। बाँस के टुकड़े पटाखे की तरह चिटक कर बगीचे में गिरने लगे। आग! आग! भयार्त चीत्कार—स्त्रियों और बच्चों के हाहाकार से शून्य लोक मुखर भाराक्राँत हो गया।

हरिजन बस्ती की जमायत क्षण भर में भंग होगई। उसके बाद चण्डी-मण्डप की पंचायत भी उठ गई।

—सात—

पातू के घर की आग इतनी फैली कि सारी हरिजन बस्ती भस्म होगई। बड़े-बड़े पेड़ों की आड़ के कारण केवल दो-तीन घर ही बचे, बाकी फिर देखते-देखते ही जल गये। कोठरियों जैसे छोटे-छोटे घर, इन पर बाँस के ढाँचे पर छाया हुआ पतला फूस। कार्तिक के प्रारंभ से ही वर्षा नहीं हुई, इसलिए वह धूप में सूख कर बारूद जैसा भड़कने वाला हो रहा था। आग का स्पर्श होते ही विस्फोटक की भाँति जल गया। गाँव वाले विशेषतः नवयुवक दौड़ कर आये। चेष्टा भी उन्होंने पर्याप्त की, परन्तु पानी भरने के पात्रों की कमी और जलते हुए घरों में खड़े होने के स्थान के अभाव में वे कुछ कर न पाये। उनके नेता जगन डाक्टर थे। डाक्टर ने अग्नि-काण्ड में सेनापति की भाँति आदेश दे दे कर अपना गला ऐसा फाड़ लिया कि आग बुझने के पहले ही वह बैठ गया।

हरिजनों को रात चण्डी-मण्डप में बिताने की अनुमति दे दी गई थी, परन्तु विचित्र आदमी हैं। वे अपने जले हुए खण्डहरों की माया न छोड़ सके। उन्हीं के आस-पास किसी तरह जगह बना कर हेमन्त की शीत जर्जर रात बिताने का निश्चय कर लिया। लड़के सो गये; औरतें गाने के सुर में रोने लगीं और पुरुष परस्पर को दोषी ठहरा कर अपनी कार-गुज़ारी का वर्णन करने और जले घरों की आग से तमाकू पीने में संलग्न हो गये। प्रत्येक घर में दो-एक गायें तथा दो-चार बकरियाँ हैं, आग लगने पर उनके बन्धन तोड़ दिए गये थे। रात में यह जानने का उपाय भी नहीं है कि वे कहाँ गई हैं। मुरगियाँ और बतखें सब घरों में थीं; उनमें से कुछ जल गई हैं; दिखाई न पड़ने पर भी गंध से ऐसा अनुमान होता है; जो भाग गई थीं वे लौट आई हैं और अपने-अपने मालिकों के पास पर फुलाकर और देह सिकोड़ कर बैठ गई हैं। हरिजनों की सम्पत्ति में इनके अतिरिक्त मिट्टी की हाँड़ियाँ, पीतल काँसे के दो-चार बर्तन, फटी-पुरानी और दुर्गन्धयुक्त कथरियाँ, चटाइयाँ, मछली पकड़ने की जालियाँ तथा दो-चार कपड़े भी थे। इनमें से कुछ जल गये हैं और कुछ राख के नीचे दबे पड़े हैं। जो सामान किसी तरह बाहर निकाल लिया गया है उसे लोग अपने परिवार के घेरे में ही छाती से चिपकाए बैठे हैं। रात के अन्तिम भाग में जाड़े की तीव्रता के कारण लोग सिकुड़-सिमट कर कातर क्लांति की नीरवता में थोड़ी देर के

लिए तन्द्राछन्न हो गये।

सबेरा होते ही औरतें और एक बार शोकोच्छ्वास प्रकट करने के लिये रोने बैठीं। जब धूप निकली तब स्त्री-पुरुष अपने-अपने घर की राख उठाने और उसे अपने ही कूड़े के ढेर पर डालने लगे। अधजली लकड़ियाँ रसोई में जलाने के लिए एक ओर रखी गईं। राख के ढेर से बरतन भी अलग किए गये। हरिजन इन सब कामों में अभ्यस्त हैं। ऐसी घटनाएँ उनके जीवन में होती ही रहती हैं। प्रबल वर्षा में घरों के ऊपर वाले पतले छप्पर गिर पड़ते हैं, नदी का बाँध टूटता है तो बस्ती भर में पानी भर जाता है और घर बैठ जाते हैं; कभी-कभी दारू की तरंग में ये स्वयं ही जलाने के लिए इकट्ठे किए सूखे पत्तों में जलती हुई बीड़ी फेंक देते हैं; और आग लगा देते हैं। दुर्घटनाओं के बाद फिर गिरस्ती सँभालने की शिक्षा भी इनको परम्परा से मिलती आ रही है। घर द्वार साफ़ करने के बाद आहार की व्यवस्था होगी। शाम का बासी भात ही ये सबेरे खाते हैं। छोटे बच्चों को लैया आदि दे दी जाती है, परन्तु आज भात और लाई नहीं है। बच्चों ने अभी से चीत्कार आरंभ कर दिया है परन्तु उन्हें चुप करने का कोई साधन नहीं दीख पड़ता। दो-एक माताओं ने बच्चों को धमाधम पीट दिया है और कह रही है राक्षसों के पेट में आग लगी है। मरते भी नहीं, मरो, मरो, तुम मर जाओ!

घर-द्वार साफ करने के बाद सब अपने-अपने मालिक

के पास जाँयगे तब आहार का प्रबन्ध होगा। ऐसी स्थिति में मालिक सदा से ही इनकी सहायता करते आ रहे हैं। बस्ती के प्रायः सभी आदमी किसानों के यहाँ मजूरी करते हैं। बदले में बँधा हुआ वेतन या उपज का एक अंश इन्हें मिलता है। कुछ लोग खाना या उतना ही धान लेकर रखवाली करते हैं। जो छोटे बच्चे इस काम में लगते हैं उन्हें साल में सात हाथ की चार धोतियाँ मिलती हैं। अपेक्षाकृत बड़े लड़कों को महीने में आठ आने से लगा कर एक रुपये तक वेतन मिलता है—धान की मात्रा भी अधिक हो जाती है। पूर्ण युवकों में से अधिकांश उपज का एक तिहाई भाग लेकर किसानों के यहाँ खेती का काम करते हैं। मालिक खेती के समय में धान देते हैं, उसीसे इनके परिवार का खर्च चलता है। जब फ़सल कटती है तब इनके भाग से दिये हुए धान ब्याज समेत काट लिए जाते हैं। ब्याज की दर पच्चीस से तीस प्रतिशत तक होती है। जब सूखे या बाढ़ के कारण फ़सल नहीं होती और ऋण नहीं उतरता, तब असल और ब्याज मिला कर एक कर दिया जाता है और उस पर फिर ब्याज चलता है। ये लोग इस प्रथा को अन्याय नहीं समझते अपितु मालिकों के कृतज्ञ होते हैं। ये समझते हैं कि मालिक आपत्ति-विपत्ति में सहायता करते हैं, यही उनकी बड़ी दया है। इसी दया के भरोसे पर ये आहार की चिंता में व्याकुल नहीं होते। स्त्रियाँ किसान गृहस्थों के यहाँ इधर-उधर के काम कर देती हैं और बदले में

कुछ ले आती हैं। दूध आदि बेच कर भी कुछ उपार्जन किया जाता है, परन्तु दूध इस गाँव में नहीं बिकता। यहाँ तो किसानों के घर में ही दूध हो जाता है। बस्ती के हरिजन बाबुओं के गाँव कंकना में दूध देते हैं।

पातू के लिए ये सब सहारे भी नहीं हैं। वह जाति से चमार है। उसके पास कुछ चाकरान ज़मीन है; गाँव के सरकारी शिवतला, कालीतला और शिवपुर के चण्डीतला में वह रोज़ ढोल बजाता है, इसके बदले में उसे देवोत्तर भूमि के कुछ धान कई पुरत से मिलते आ रहे हैं। पातू के पास बैलों की एक जोड़ी है, इस जोड़ी से वह कंकना के बाबुओं की कुछ भूमि बटाई पर जोतता है। इसके अतिरिक्त मुर्दा पशुओं का चमड़ा उतार कर वह पहले चमड़े के व्यापारी शेखों के हाथ बेचता था। आपत्ति विपत्ति में वे दो चार रुपए उधार भी दे देते थे। अब जमींदार ने पशुओं के चमड़े का पट्टा कर दिया है; पातू को खाल उतारने की मजदूरी ही मिलती है, वह भी तीन चार आने से अधिक नहीं होती। इसी बात पर चमड़े वाले के साथ कुछ झगड़ा भी हो गया है, वह मदद क्यों करने लगा? जिस बाबू की ज़मीन बटाई पर जोतता है, वह देना चाहे तो कुछ दे सकता है, परन्तु वह कागज़ लिखवाए बिना कुछ न देगा। वह भी एक झगड़ा है। और पातू कागज़ लिखने से बहुत घबराता भी है। बाबू ने कहीं नालिश कर दी और यह घर भी छीन लिया तो वह कहाँ जायगा? संसार में वह घर ही

ही तो उस की सम्पत्ति है।···

पातू हाथ से राख बटोर रहा है, उसका मन इसी चिंता में उलझा है। छिरूपाल के हाथ से पिटने के बाद उस के मन में जो उत्तेजना उठी थी वह बराबर बढ़ी है। इसी उत्तेजना के कारण उस ने द्वारिका चौधरी को अपनी सहोदरा दुर्गा के कलंक की कहानी बता दी थी. और जमींदार से छिरूपाल के नाम पर नालिश कर आया था। कल शाम को इसी बात पर बिरादरी ने उसे लांछित किया है। बिरादरी ने पूछा था—'तुम तो अपने मुँह से ही चौधरी जी से और जमींदार की कचेरी में सब कुछ कह आये हो. कहा है कि नहीं ?'

'हाँ, कहा है।'

'फिर तुम बिरादरी से बाहर क्यों न किये जाओगे ?'

पातू ने पहले यह न सोचा था। वह चौंका था। कुछ देर तक चुपचाप बैठा रहा था, फिर उठकर घर गया था और दुर्गा की चोटी पकड़ कर उसे बिरादरी के सामने खींच लाया था। धक्के के साथ दुर्गा को भूमि पर गिरा कर उसने कहा था।—यह बात इस हरामजादी छिनार से पूछो। अलग चूल्हे वाला बाप भी पड़ोसी हो जाता है, मैं इससे अलग हूँ।

दुर्गा के पीछे-पीछे उसकी माँ चीखती हुई आई थी, उस के पीछे पातू की बिल्ली जैसी बहू भी थी जो रो रही थी। इस के बाद अश्लीलता की चरम सीमा पर पहुँचा हुआ वितण्डा-

बाद आरंभ हो गया। स्वैरिणी दुर्गा ने मुहल्ले की प्रत्येक स्त्री की कीर्ति का गुप्त इतिहास खोल कर पातू के मुँह पर सदम्भ घोषणा की थी—'घर मेरा है, मैं अपना रुज़गार करती हूँ, मैं जिसे चाहूँगी वही मेरे घर आयेगा! तेरा क्या, तू मेरा पेट भरता है--भरेगा? तू अपना घर सँभाल।'

पातू ने और दो चार हाथ जड़ दिए थे। पातू की बहू ने घूँघट के भीतर से ही तीक्ष्ण स्वर में ननद को गालियाँ देना आरंभ किया था, महफ़िल की गरमी में हाथापाई की नौबत आ गई थी कि—बस्ती में आग लग गई!...

दो दिन की उत्तेजना, उस पर घर जलने का अपार दुःख—पातू रुद्ध ज्वालागिरि की स्थिति में पहुँच गया था। वह चुपचाप काम कर रहा था कि—बहू के रोने की आवाज़ सुन पड़ी। वह गाय और बकरियों को खजूर के नीचे खूँटा गाड़ कर बाँध कर और बत्तखों को तलैया में उतार कर पति के काम में सहायता करने आ रही थी। बटोरी हुई राख को टोकरी में भर कर घूरे पर फेंकने लगी। पातू हिंसक पशु की भाँति दाँत निकाल कर और गरज कर बोला—'ए देख, तू मिन्न-मिन्न रोने का स्वाँग न कर। हड्डियाँ तोड़ दूँगा—हाँ।'

घर जलने के दुख और सारी रात के कष्ट ने पातू की बहू के मिजाज़ को बिगाड़ रखा था—वह भी जंगली बिल्ली की तरह हिंसक भंगिमा में फुसकार कर बोली—'क्यों, क्यों, मेरे हाड़ क्यों तोड़ दोगे? धोबी से जीते नहीं, गधे के कान ऐंठे,—

अपनी छिनाल बहन को तो डाँटने की हिम्मत नहीं—'

पातू सहन न कर सका, चीते की तरह उछल कर उसने बहू को ज़मीन पर गिरा दिया और छाती पर चढ़ कर गला घोंटने लगा। गुस्से ने उसे दीवाना बना दिया।

पातू की कोठरी के सामने ही आँगन के दूसरे छोर पर दुर्गा और उस की माँ का घर है। वे भी अपना घर साफ़ कर रही थी, बहू की बात सुन कर दुर्गा दंशनोद्यत सर्पिणी की भाँति घूम कर खड़ी हुई थी, किन्तु पातू की दण्ड-व्यवस्था देखकर बहू से कुछ न बोली, उसने विज्ञ भाव के साथ भाई से कहा—'हाँ, इसे ठीक किया कर!, बहुत सिर चढ़ाना अच्छा नहीं होता!'

उसी समय जगन डाक्टर की बैठी हुई आवाज़ सुन पड़ी 'हाँ हाँ' करता हुआ वह बोला—'छोड़ छोड़ हरामजादा चमार, मर जायगी।'

डाक्टर ने दौड़ कर पातू के बाल पकड़े और अपनी तरफ खींचा। पातू ने बहू को छोड़ दिया और हाँपते हुए कहा—'देखिए न, हरामजादी की हिम्मत घर में आग लगा कर—'

'पानी ला, पानी। जल्दी, हरामजादा गँवार-'जगन डाक्टर घुटने टेक कर बैठ गया। बहू बेहोश हो गई है और लकड़ी की तरह पड़ी है। डाक्टर ने व्यस्त होकर नाड़ी देखी।

पातू ने भी शंकित होकर और झुक कर बहू को देखा और अकस्मात् डिडकार छोड़ कर रोने लगा—'अरे राम रे!

मैंने बहू को मार डाला रे !

पातू की माँ भी साथ ही साथ रोई—अरे बेटा, क्या कर डाला रे !

डाक्टर ने व्यस्त होकर कहा—'अरे पानी, पानी ला जल्दी !'

दुर्गा दौड़ कर पानी लाई। बहू का सिर उठा कर अपनी गोद में रख लिया और उसकी छाती पर हाथ फेरने लगी; डाक्टर ने पानी के छपाछप छींटे मारते हुए कहा, 'मुँह से मुँह लगाकर फूँक तो मार, दुर्गा !'

फूँक मारने की आवश्यकता न पड़ी, बहू ने लम्बी साँस ली और आँखें खोल दीं। कुछ देर बाद वह उठी और रोने लगी—'दुनिया में मेरा कोई नहीं रहा रे ! सब मेरे दुश्मन हो गये रे !'''उसका गला बैठ गया है, आवाज़ नहीं निकलती, फिर भी वह प्राणपण से चिल्ला रही है।

\+ + + + + + +

जगन डाक्टर ने जले हुए घरों की संख्या गिन कर नोट बुक में लिख ली है, यह भी लिखा है कि कितने आदमियों को सहायता की आवश्यकता है। समाचार पत्र में समाचार देना है। मजिस्ट्रेट के पास भेजने के लिए एक प्रार्थना-पत्र उसने पहले ही लिख रखा है। आस-पास के चार-पाँच गाँवों से बाँस, फूस, चावल और पुराने कपड़े आदि इकट्ठे कराने के लिए वह एक सहायता-समिति बनाने की बात भी सोच रहा है। सब को बुला कर डाक्टर ने कहा, अपने मालिकों के पास

जाओ और दो बाँस, दस गट्ठे फूस और पाँच-सात दिन के लिए चावल माँगो। और जो कुछ जरूरत होगी उसकी जुगाड़ मैं करता हूँ। मजिस्ट्रेट साहब के पास एक दरख्वास्त भेजनी पड़ेगी, मैं लिख रखूँगा, शाम को आकर अगूँठे लगा जाना।

सब चुप हो गये। मजिस्ट्रेट के नाम से वे भड़क गये हैं। साहब-सूबा को वे दण्डमुण्ड का मालिक ही समझते हैं। कानसटेबल और दरोगा के भी ऊपर जो मजिस्ट्रेट है उसके नाम से ही डर जाते हैं। उसके पास दरख्वास्त भेजने से न जाने कैसा झगड़ा खड़ा हो जाय!

जगन बोला—'समझे मेरी बात? चुप क्यों हो गये!'

सतीश पासी बोला—'जी साहब के पास—'

'हाँ, साहब के पास—'

'कहीं कोई झगड़ा न खड़ा हो जाय!'

'झगड़ा कैसा? जिले का मालिक है, प्रजा के दुख-सुख का भार उस पर है। दुख में सहायता करनी ही पड़ेगी।'

'जी, वह सब—'

'वह क्या?'

'जी, कानसटबल-दरोगा-थाना-पुलिस--पकड़--धकड़-सफ़ाई-हजार बखेड़े हैं!

डाक्टर बिगड़ गया, उसकी बात का प्रतिवाद किया जाय तो वह नाराज हो जाता है। फिर इस लोक-हितैषणा के उपलक्ष में वह मजिस्ट्रेट साहब से परिचय प्राप्त करने की

वासना का भी पोषण कर रहा था। बहुत दिन से वह स्थानीय यूनियन बोर्ड का मेम्बर बनने की इच्छा कर रहा है। वह मान-मर्यादा प्राप्त नहीं करना चाहता, सेवा करने की आकांक्षा भी रखता है। परन्तु कंकना के बाबुओं ने ही बोर्ड की सब सीटें कब्जे में कर रखी हैं। यूनियन के सब गाँवों में कंकना के विभिन्न बाबुओं की ज़मींदारी है। पिछली बार जगन घोष मुकाबले में खड़ा हुआ था। लेकिन केवल तीन वोट मिले थे। सरकार की ओर से नामज़द होने वाले स्थानों पर भी कंकना के बाबू ही डटे हैं। साहब-सूबे इन्हीं को पहचानते हैं, कंकना में ही उनका आवागमन होता है, चुनाव के समय बाबुओं की दरख्वास्तें ही मंजूर हो जाती हैं। इसीलिए वह संकल्प किए बैठा था कि जब परहित व्रत का कोई आधार मिलेगा तब वह साहब से भेंट अवश्य करेगा। आज वह बहु आकांक्षित एवं परम काम्य अवसर मिला है, उसमें भी बाधा पड़ती देख कर डाक्टर गरम हो गया। बोला—'फिर मरो, हरामजादे मूर्ख कहीं के।'

क्या हुआ डाक्टर? वृद्ध द्वारका चौधरी पेड़ों की आड़ से निकल कर सामने आए। आगमन का उद्देश्य हरिजनों पर आई आकस्मिक विपत्ति में सहानुभूति प्रकट करना है। यह इनके पूर्वजों से चला आया कर्तव्य है। चौधरी आज भी यथा-साध्य इस कर्तव्य का पालन करते हैं। यद्यपि इसमें दया का प्राधान्य है परन्तु प्रेम का अंश भी सम्मिलित हो जाता है।

चौधरी को देख कर डाक्टर बोला, 'मूर्खों की बात तो सुनिए, कहता हूँ कि मजिस्ट्रेट के पास दरख्वास्त भेजो। ये कहते हैं, थाना-पुलिस दरोगा—मुफ्त के बखेड़े।'

चौधरी बोले—'इतनी बात के लिए साहब के पास जाने की जरूरत ही क्या है ? गाँव के पाँच आदमियों से ही इनका काम बन जायगा। मैं हर एक को दो गट्ठे फूस के दे दूँगा और पाँच बाँस दूँगा, इसी तरह—'

डाक्टर ने पूरी बात सुनना भी उचित न समझा। चल दिया। चलते-चलते बोला—'आना इसके बाद मेरे पास।...' कुछ दूर जाकर खड़ा हो गया और चिल्ला कर बोला—'कल रात में कौन कहाँ रहा है—कल ?'

चौधरी ने कुछ सोच कर कहा—'दरख्वास्त देने में भी कोई हर्ज नहीं है, बेटा सतीश। डाक्टर कहते हैं। साहब को दया आ गई तो तुम्हारा ही भला होगा! तुम डाक्टर के पास जाना।'

सतीश बोला—'कोई बखेड़ा तो न होगा चौधरी जी ? हमें डर लगता है न!'

'डर कैसा ? झगड़ा-बखेड़ा न खड़ा होगा। तुम चले जाना।'

शाम को पातू के सिवा और सब डाक्टर के पास हाजिर हुए।

डाक्टर प्रसन्न हो गया, सब को अच्छी तरह देख कर बोला—'पातू कहाँ है, पातू ?'

सतीश बोला—'पातू नहीं आया, वह कहता है, मैं गाँव में ही न रहूँगा।'

'गाँव में ही न रहेगा ? क्यों, इतना बिगड़ क्यों गया है ?'

'जी, वही जाने। वह उस पार कस्बे में रहेगा। कहता है, जहाँ मेहनत करूँगा वही भात मिल जायगा।'

'देवोत्तर ज़मीन मे उसका हिस्सा जो है ?'

'छोड़ देगा। कहता है, इससे पेट नहीं भरता। बड़े आदमियों की बातें। पातू मोची हम लोगों में बड़ा आदमी है। वकील बैरिस्टरों में शामिल है।'

'अहा, यही हो, वह बड़ा आदमी ही हो जाय ! तुम्हारे मुँह में फूल चन्दन !' दुर्गा सब के पीछे खड़ी थी, वही से बोली—'वह गाँव छोड़कर चला ही जाय तो किसी को क्या ? कोई वकील-बैरिस्टर क्यों कहे—दुनिया भर की बातें क्यों गढ़े ? वह चला जायगा तो तुम्हारा ही भला होगा। तुम्हारी भीख का हिस्सा बढ़ जायगा।'

जगन डाक्टर ने धमकी दी—'चुप रह, दुर्गा।'

'क्यों, चुप क्यों रहूँ—किसी की दबैल बस्ती हूँ ?···और फिर वह मुँह फिरा कर अपनी बस्ती की ओर चल दी।'

'ए, ए, दुर्गा, अँगूठा तो लगाये जा !'

'नहीं।'

'फिर सरकारी रुपयों में से मुझे कुछ न मिलेगा।'

दुर्गा घूम कर खड़ी हो गई और मुँह मटका कर बोली—

मैं अँगूठा लगाने नहीं आई, सुना था तुम ताड़ का पेड़ बेचते हो—खरीदने आई थी। उपाय रहते भीख क्यों माँगू? गले में रस्सी!……'फिर घूम कर अपनी तरंग के साथ चलने लगी।

रास्ते में बाँस-बन से घिरे पालों के ताल पर पहुँच कर दुर्गा ने देखा, बाँस-कोठी की आड़ में श्रीहरि खड़ा है। दुर्गा ने हँस कर दोनों हाथों से परिमाण बताते हुए कहा—'रुपये चाहिए—इतने—घर बनाऊँगी। समझे?'

श्रीहरि ने अनसुनी करके पूछा—'कैसी दरख्वास्त हो रही है?'

'मजिस्टर साहब के पास। घर जल गये हैं न।'

'अच्छा, मुझे निशाना बना कर दरख्वास्त करता है साला डाक्टर? साले को।'…'श्रीहरि का मुँह भयंकर हो गया।

दुर्गा ने तीक्ष्ण दृष्टि से छिरू की ओर देख कर ही अपराधी को पहचान लिया; बोली—'हाँ जी, तुम्हीं ने तो आग लगाई है!'

'तुझ से किस ने कहा! तू ने देखा था?'

'चोर की दाढ़ी में तिनका! हाँ, मैंने देखा क्यों नहीं?'

'चुप रह, तुझे इतने ही रुपये दूँगा मैं।'

दुर्गा चुप हो गई। क्षण भर ओंठ तिरछे करके विभिन्न दृष्टि से श्रीहरि को देखती रही। फिर अपनी राह पर चलने लगी। दंतहीन मुँह से मुस्काते हुए छिरू उसकी चाल देखते रहे।

—आठ—

दुर्गा पर्याप्त सुंदरी और सुडौल तरुणी है। उसके शरीर

का रंग तक गोरा है और यह बात उसकी जाति में जितनी दुर्लभ है उतनी अस्वाभाविक। इसके अतिरिक्त दुर्गा के रूप में एक सुलभ मादकता भी है जो साधारण मनुष्य के मन को मुग्ध करती है—अनिवार्य आकर्षण से खींचती है।

पातू ने स्वयं द्वारिका चौधरी से कहा था—मेरी माँ हराम जादी को तो आप जानते ही हैं। उसकी आदत नहीं गई।...' दुर्गा का अनहोना रूप पातू की माँ के इसी स्वभाव का सजीव प्रमाण है।

इस स्वभाव को दमन करने वाला कठोर दण्ड या बदलने वाला कोई आदर्श इनके समाज मे नहीं है। थोड़ी-बहुत उच्छृंखलता तो पति भी अनदेखी कर देता है, विशेष कर जब उस उच्छृंखलता के साथ उच्च वर्ण का कोई धनी पुरुष जड़ित होता है। परन्तु दुर्गा की उच्छृंखलता इस सीमा को भी पार कर गई है। वह दुरन्त स्वैच्छाचारिणी है, किसी भी सीमा को पार करने में उसे दुविधा नहीं होती। अंधेरी रात में वह कंकना के जमींदारों के प्रमोद-भवनों में जाती है, यूनियन बोर्ड के प्रेसीडेण्ट को जानती है, लोग कहते हैं, दरोगा और हाकम तक से वह अपरिचित नहीं है। अभी उस दिन वह डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के वाइस-चेयरमैन मुखर्जी साहब से आधी रात में परिचय कर आई है, दफादार शरीर रक्षककी भाँति उसके साथ गया था। दुर्गा इन सब बातों पर गर्व करती है, बिरादरी वालों से अपने आप को श्रेष्ठ समझती है। अपना कलंक वह छिपाती

नहीं। इस स्वभाव के लिए लोग उसकी माँ को उत्तरदायी ठहराते हैं, कहते हैं, उसीने लड़की को उसके पति से अलग कर दिया है और इस रास्ते पर डाल दिया है, परन्तु बात ऐसी नहीं है। दुर्गा का विवाह कंकना में हुआ था। दुर्गा की सास कंकना के एक बाबू के घर झाड़ू देने का काम करती थी। एक दिन सास बीमार हो गई और दुर्गा उसकी जगह काम करने गई। जब काम समाप्त हो गया तब बाबू के एक नौकर ने धमकी के साथ कहा, बाबू के बगीचे वाले बैठक में झाड़ू नहीं दी। और दुर्गा को एक सूने कमरे में ले गया। कमरे में बाबू बैठे थे, भयभीत दुर्गा घूंघट निकल कर दरवाज़े की ओर घूमी तो देखा कि वह बाहर से बंद है···।

घण्टे भर बाद दुर्गा घर लौटी—और उस की धोती के छोर में पाँच रुपये का एक नोट भी बँधा था। आतंक, अशाँति और ग्लानि के साथ-साथ बाबू के दुर्लभ अनुग्रह और अर्थ-प्राप्ति के आनन्द से भरी वह सीधी अपनी माँ के पास चली आई थी। माँ ने जब सारी घटना सुनी तो उस की आँखों में ऐसी चमक आगई जैसे उसके सामने एक उज्वल मार्ग खुल गया है। उसने लड़की को वही मार्ग दिखलाया। तब से दुर्गा इसी पथ पर चल रही है।

छिरूपाल के साथ दुर्गा का शुद्ध व्यावसायिक सम्पर्क है। है। छिरू के लिए दुर्गा के मन में कोई कोमल भाव कभी नहीं आया, परन्तु आज उसका अंतर दारुण घृणा और क्रोध से

भर गया है। पातू के साथ उसका कितना ही विरोध क्यों न हो, बिरादरी वालों को वह कितना ही हीन क्यों न समझती हो—आज उन सब के लिए उसने ममता का ही अनुभव किया। रास्ते भर वह यही सोचती रही कि छिरूपाल की शराब में जानवर मारने वाला बिष क्यों न मिला दिया जाय ?

'डाक्टर ने क्या कहा, पेड़ बेचेगा ?'—दुर्गा की माँ ने पूछा।...चिंता के चक्कर में दुर्गा को ख्याल ही न रहा कि घर पर पहुँच गई है।

चकित दुर्गा ने उत्तर दिया, नहीं।

'न बेंचेगा ?'

'पूछा नहीं।'

'मर! फिर गई क्यों थी ?'

दुर्गा ने तीव्र तियर्क दृष्टि से माँ की ओर देखा, मुँह से कुछ न कहा।

कन्या की देह बेचने से जो अर्थ मिलता है उसी से माँ का पेट भरता है। दुर्गा की तीक्ष्ण दृष्टि से संकुचित होकर वह चुप हो गई। थोड़ी देर बाद फिर बोली—'हमदू शेख आया था।'

दुर्गा ने इस बार भी कोई उत्तर न दिया।

माँ फिर बोली—'फिर आवेगा—धर्मराज तला में मुहल्ले के आदमियों से बात कर रहा है।'

दुर्गा बोली—'क्यों ? क्या जरूरत थी उस को ? मैं गाय बकरी न बेंचूगी।' दुर्गा के पास बकरियों का एक झुण्ड है,

कुछ गायें हैं और एक बछरा है। अग्निकाण्ड का समाचार पाकर शेख स्वयं दौड़ा आया है। इस बस्ती से वह बकरियाँ और गायें खरीदता है, आवश्यकता पड़ने पर चार आने, आठ आने या रुपया दो रुपया पेशगी भी दे देता है। बाद में जब पशु खरीदता है, तब कर्ज़ा व्याज समेत वसूल कर लेता है। आज भी वह पशु खरीदने आया है। किसी-किसी को पेशगी भी देगा! विपत्ति के ऐसे समय में वह रुपये दूसरे से कर्ज़ लेकर आया है। दुर्गा के बछरे पर हमदू की आँखें लगी हैं, कई बार खुशामद भी कर चुका है, परन्तु दुर्गा नहीं बेचती। आज वह फिर आया था और दुर्गा की माँ को चुपचाप चार आने पैसे भी दे गया है। पश्चिम की तरफ़ मुँह करके यह भी कह गया है कि सौदा हो गया तो वह चार आने और देगा। लड़की का उत्तर माँ को ज़रा भी अच्छा न लगा, वह थोड़ी सी खीज के साथ बोली—'न बेचेगी तो घर कैसे बनेगा?'

"तेरा बाप रुपये देगा, समझी हरामजादी, मैं अपने गहने बेचूंगी।" दुर्गा ने सोने के दो चार गहने भी बनवाये हैं, हैं वे बहुत हलके, परन्तु उनके लिए वही स्वप्न की सफलता के समान हैं।

दुर्गा की मां ने अब विस्फोटक की भाँति फूट पड़ने का उपक्रम किया परन्तु दुर्गा भी दबने वाली लड़की नहीं है।

उस ने पूछा—"हमदू शेख से कितने पैसे लिए हैं? समझती है कि मैं कुछ जानती नहीं, चावल का भात थोड़े ही खाती हूँ?"

विस्फोट के पहले ही दुर्गा की माँ जैसे प्रचण्ड वर्षा से भीग कर निस्तेज हो गई। उसने रोना आरंभ कर दिया, "मेरी लड़की होकर तूने मुझे इतनी बड़ी बात कह दी है।"

दुर्गा ने कोई परवाह न की, उसने कहा, "रहने दे, बहुत हो गया। पहले यह तो बता कि दादा कहाँ है? बहू कहाँ गई है?"

माँ रोती ही रही, दुर्गा के प्रश्न का उत्तर भी इसी में था—"मेरे गर्भ में आग क्यों नहीं लग गई है, पत्थर क्यों नहीं पड़ गये रे! मैं तो जीते जी जली जा रही हूँ रे। जैसा बेटा, वैसी बेटी, बेटी कहती है तू चोर और बेटा जाता है परदेश। दुनिया ताड़ के पत्ते लाकर अपने घर छा रही है और मेरा बेटा गाँव छोड़ कर जा रहा है। मरे, मरे, अगहन के जाड़े में सन्निपात हो जाय—"

अत्यन्त रूढ़ स्वर में दुर्गा बोली—"मैं कहती हूँ, भात-बात बनायेगी या भूँकती ही रहेगी? लीलना नहीं है?"

"नहीं बेटी, मैं अब न खाऊँगी, मैं तो गले में रस्सी बाँधूगी।" दुर्गा की माँ ने टुमुक टुमुक कर जवाब दिया।

दुर्गा चुपचाप उठ कर कोठरी के भीतर गई और गाय बाँधने की रस्सी लाकर माँ के सामने पटक दी—गले में बाँधने के लिए और फिर आग की खोज में बाहर निकली।

हरिजन बस्ती की बैठक का स्थान धर्मराज का वकुल वृक्ष है। वृक्ष बहुत पुराना है, और पत्र पल्लवों से विशाल है। बहुत

दिन पहले किसी प्रचण्ड आँधी में वृक्ष आधा उखड़ कर धरा-शायी जैसा हो गया था. फिर भी वह अब तक हरा भरा है। लोग इसे भी धर्मराज का एक चमत्कार समझते हैं। कहते हैं, इस तरह भूमि पर लेटा हुआ और हरा भरा पेड़ किसी ने कहीं देखा है? पेड़ की जड़ में मिट्टी के घोड़ों का ढेर लगा है, मानता मान कर लोग धर्मराज को घोड़ा दे जाते हैं। आस-पास का छायावृत्त स्थान इतना साफ़ है कि चमक रहा है। बस्ती का प्रत्येक व्यक्ति सवेरे लीपने का सामान दे जाता है, उसी से सम्पूर्ण स्थान स्वच्छ होता है। हमदू शेख यहीं बैठा है और बस्ती वालों के साथ पशुओं का मोल-भाव कर रहा है। पाँच-सात बकरियाँ और दो गायें एक ओर बँधी हैं, वे खरीदी जा चुकी हैं।

बस्ती के सारे पुरुष जगन डाक्टर के पास गये हैं। हमदू का कारबार स्त्रियों के साथ हो रहा है। स्त्रियों में से कोई उसकी मौसी है, कोई मामी, कोई दीदी, कोई चाची और कोई भाभी! हमदू एक पासिन भाभी से एक बकरी का मोल-भाव कर रहा है—"इसमें क्या है, तू ही बता भाभी? सिर्फ खाल और कुछ हड्डियाँ—गोश्त तो पाँच सेर भी न निकलेगा। बहुत होगा तो तीन सेर हो जायगा। सवा रुपया दे रहा हूँ—तू ही बता अन्याय करता हूँ? और भी तो हैं—इन्हीं से पूछ लो। और इस वक्त लेगा कौन? गरज तेरी है या दूसरे की? तू खुद सोच!" कहते-कहते ही उसने पुकारा, "ओ दीदी, दुर्गा दीदी, सुन तेरे घर पाँच बार गया हूँ, सुन तो!"

दुर्गा आग ढूंढने निकली है। दूर से ही बोली, "मैं न बेचूँगी।"

"अरे न बेचना, सुन तो ले। बेचने के लिए कौन कहता है!"

"क्या कहते हो? कहो।" दुर्गा आकर खड़ी हुई।

"अरे बाप रे दीदी तो मेरी घोड़े पर सवार है।"

"हाँ, लौट कर रसोई बनानी है। क्या कहते हो?"

"अच्छी बात ही कहता हूँ, कह रहा हूँ, घर पर टीन डालोगी? मेरी जाँच में सस्ती टीन है।"

"टीन?"

"हाँ बिलकुल नई, मशीन वाला बेच रहा है, लोगी? एक-दम बेफिकर हो जाओगी। कुल चालीस रुपये लगेंगे।"

दुर्गा ने कुछ देर तक सोचा। उसकी कल्पना ने देखा, घर के ऊपर टीन छाई है और धूप में चाँदी की चद्दर जैसी झलमला रही है, परन्तु उस ने आत्म-संवरण किया, "बोली—उँहुँ, नहीं।"

"रुपये न हों तो मुझे फिर दे देना, छह महीने—साल भर बाद—

दुर्गा ने हँसकर और गरदन हिला कर कहा, "ऊँ-हुँ! उस बछरे के नाम पर तुम हाथ धो डालो, हमदू भाई! अभी मैं उसे दो साल न बेचूँगी।" जवाब देकर और शरीर से एक हिलोर उठाकर दुर्गा चल दी।

आग लेकर घर लौटने पर दुर्गा ने देखा कि रस्सी वहीं

पड़ी है, माँ ने उसे छुआ भी नहीं, चूल्हे में आग जलाने के बाद अब वह पातू के साथ झगड़ रही है। पातू ने ताड़ पत्रों के दो बड़े गट्ठर लाकर आँगन में डाले हैं। परिश्रम से थककर वह हाँफ रहा है, साथ ही साथ वह क्रुद्ध बाघ की भाँति माँ की ओर देख रहा है। पातू की बहू लकड़ी की छिपाटियाँ इकट्ठी कर रही है, रसोई चढ़ायेगी।

दुर्गा ने बिना भूमिका बाँधे कहा। "बहू, तुम रसोई न बनाओ, मैं बना रही हूँ, साथ ही खा लेंगे।"

पातू ने दुर्गा की ओर देखकर कहा—'देख दुर्गा, देख! अम्माँ का मुँह देख! जो मन में आता है बक रही है, कहे देता हूँ अच्छा न होगा!"

"मैं ही क्या करूँ—अभी मेरे साथ भिड़ रही थी। माँ है गरभधारनी है—मार भी नहीं सकती, भगा भी नहीं सकती।"

"यह तो ठीक है, लेकिन इस गाँव में किस सुख के लिए रहूँ—तू ही बता?"

"सच क्या तुम जा रहे हो दादा? पुरखों की देहरी छोड़ दोगे?"

पातू कुछ देर चुप रहा फिर बोला—"इसी लिए तो अब पत्ते काट कर लाया हूँ, दुर्गा। नहीं तो जँकशन में काम और घर तो दुपहर में ही ठीक कर आया था।"

दोनों हाथों की उँगलियाँ मिला कर और उन्हें सिर पर रख कर पातू बड़ी देर तक भूमि की ओर देखता रहा।

दुर्गा बोली—"उठ, मेरे पास कई लम्बे बाँस हैं, उनको डाल ले और ऊपर पत्ते बिछा दे, पुरुखों की देहरी कभी कोई छोड़ता है ? तू ऊपर जा, मैं और बहू नीचे से दे देंगी।"

पातू एक लम्बी साँस लेकर उठा। दुर्गा ने धोती का आँचल कस कर कमर में खोंसा और बोली "वह सतीश-सतीश पासी—जगन डाक्टर से कह रहा था कि पातू चमार बड़ा आदमी है, बलिस्टर है, वकील है। मैंने कहा, तेरे मुँह फूल चन्नन ! कहता था, बड़ा आदमी है, गाँव छोड़े जा रहा है। अरे जायगा तो तुम को देहरी का दान-पत्तर लिख कर दे जायगा ! तुम सब भोग करना।"

बिल्ली जैसी हृष्ट-पुष्ट पातू की बहू काम करने में तगड़ी है-हल्के पैरों से लट्टू की तरह घूमती है, इतनी देर में ही वह बाँस उठाकर आँगन में ले आई है।

—नौ—

श्रीहरि ने सारा मुहल्ला जलाने का इरादा न किया था लेकिन जब जल ही गया तब उसे कोई खेद भी नहीं हुआ। ऐसी घटनाएँ होती रहें तो नीच आदमी ठीक रहते हैं, इधर ससुरों की हिम्मत भी बहुत बढ़ गई थी। पीठ पर मारने से कोई फ़ायदा नहीं होता—पेट की मार से ही आदमी काबू में आता है। शेर तक को आदमी पिंजरे में डाल कर और भूखा रख कर अपने वश में कर लेता है।

श्रीहरि दुर्गापुर के स्वनामधन्य त्रिपुरासिंह को अपना गुरु मानता है। दुर्गापुर यहाँ से लगभग दस कोस दूर है। श्रीहरि के नाना वहीं रहते थे, और त्रिपुरासिंह की खेती सँभालते थे। बचपन में श्रीहरि जब अपने नाना के पास गया था तब उसने त्रिपुरासिंह को देखा था। लम्बा, चौड़ा, रुआबदार चेहरा था। राजपूत त्रिपुरासिंह पहले साधारण आदमी थे, सम्पत्ति के नाम पर उनके पास कई बीघे ज़मीन ही थी। ठाकुर उस ज़मीन पर असुर की भाँति परिश्रम करते थे. ज़मींदार के घर में सिपाहगीरी करते थे साथ ही साथ तमाकू का व्यवसाय भी कर लेते थे। हाथ में लाठी और सिर पर तमाकू का बोझ लेकर वे गाँवों में फेरी करते थे, धीरे-धीरे महाजनी भी आरंभ की। महाजनी से पहले वे बड़े किसान हुए फिर अपने मालिक की थोड़ी सी ज़मींदारी ख़रीद कर छोटे-मोटे ज़मींदार बन गये। त्रिपुरासिंह ने अपनी दाढ़ी बड़े शौक के साथ बढ़ाई थी। दाढ़ी में गलपट्टा बाँध कर मोंछ पर ताव देते देते वे कहते थे—श्रीहरि ने स्वयं सुना है—"यह गाँव मैंने तीन बार फूँका है, तब ये साले मेरी मुट्ठी में आये हैं।"

अट्टहास के साथ त्रिपुरासिंह कहते थे—"पहिली बार घर जले तब कुछ आदमियों ने कर्ज़ लिया। जो पहली बार नहीं आये, वे दूसरी बार आये और जो दूसरी बार भी बच गये वे तीसरी बार फँसे। अपनी इस कीर्ति का वर्णन करते हुए त्रिपुरासिंह को कोई संकोच न होता था। कहते—"बड़े-बड़े ज़मींदारों

की कुण्डलियाँ ले आओ, मैं दिखा दूँगा कि सब ने यही किया है। मेरे बाबा रत्ननगर के ज़मींदार के यहाँ डकैत थे। बाबू डकैती का व्यवसाय करते थे। सीता नगर के चटर्जी बाबू तो अभी कल तक डकैती का माल लेते रहे हैं।"

त्रिपुरासिंह ने अपने मुँह से जो बातें नहीं कहीं, अथवा इतिहास का जो भाग श्रीहरि को स्वयं उन के ही मुँह से सुनने का सौभाग्य नहीं मिला, वह नाना ने सुनाया था। श्रीहरि को त्रिपुरासिंह के बल की उन कहानियों में रूप-कथाओं जैसा आनंद मिला था। त्रिपुरासिंह की ज़मीन के साथ बहुवल्लभपाल की एक छोटी सी बरिया थी। सिंह पाल को बरिया के लिए सौ रुपये तक देने को तैयार हो गये, लेकिन पाल ने न बेची। उसके सिर पर दुर्मति सवार थी। आख़िर वर्षा की एक रात में सिंह ने कुदाल उठाई और रात भर में बरिया काट कर अपने खेत के साथ ऐसी मिला दी कि सवेरे पाल भी यह न बता सका कि मेरी बरिया कहाँ तक और कितनी थी। बहुवल्लभ ने बरिया लेने के लिये मुकदमा किया, लेकिन वह हार ही नहीं गया, कुछ ही बाद उसकी तरुणी-पत्नी घाट पर पानी लेने गई तो वह भी न लौटी। न जाने किसने उसके मुँह में कपड़ा ठूँसा और उठा ले गया।

नाना ने चुपके से कहा था—'वह औरत अब बूढ़ी हो गई है और सिंह जी के घर में दासी है। एक नहीं, सिंहजी के घर में ऐसी पाँच सात औरतें हैं।"

त्रिपुरासिंह की विषय-बुद्धि और दूर-दर्शिता पर भी वृद्ध के मन में अपार श्रद्धा थी। वह कहता, "सिंह जी की बुद्धि तो देखो! जमींदार के यहाँ सिपाहगीरी करते-करते ही उन्होंने समझ लिया कि इस घर की जड़ नहीं रह गई। जमींदारी से सरकारी खजाना वसूल होकर आता, लेकिन खजाना जमा करने के वक्त उसका पता ही न चलता। तब सिंह जी स्वयं रुपये उधार देते। जब जरूरत पड़ती तब 'ना' न कहते, अपने पास न होता तो आठ आने के ब्याज पर खुद कर्ज लेते और रुपये ब्याज पर बाबुओं को दे देते। अंत में जब असल और ब्याज मिला कर और हैण्डनोट पलट-पलट कर उन्होंने अपने रुपये माँगे तब बाबुओं से जमींदारी ही ले ली। भाग्यशाली पुरुष है सिंह जो!" कह कर बूढ़ा अपने मालिक के उद्देश्य से प्रणाम करता।

श्रीहरि के पिता सफल किसान थे। उन्होंने एड़ी का पसीना चोटी पर पहुँचा कर परिश्रम किया था और बंजर भूमि को उत्कृष्ट उर्वरा कर दिया था। उनके श्रम और संचय के फल स्वरूप फसल में घर का आंगन धान की शोभा से मनोरम श्री भवन बन जाता था। पिता की मृत्यु के बाद श्रीहरि के हाथ में जब यह सम्पत्ति आई तो उसे नाना के स्वनामधन्य मालिक त्रिपुरासिंह का स्मरण हो गया। सिंह जी को अपना आदर्श मानकर श्रीहरि ने जीवन-यात्रा आरंभ की। परिश्रम करने में वह कभी पीछे न हटता, परिणाम में फसल भी खूब होती। इस उपज को वह अपने पिता की भाँति संचित ही न करता,

ब्याज पर उधार भी देता। धान के लेन-देन में पचीस से पचास सैंकड़े तक का ब्याज मिलता। एक मन धान दिए जाते तो वर्ष के अंत में एक मन दस सेर या डेढ़ मन होकर लौट आते। और इसे श्रीहरि का जुल्म भी नहीं कह सकते। ब्याज की यही दर प्रचलित है। प्रचलन के अभ्यास से लेने वाला इतने सूद को भी अधिक नहीं समझता, बल्कि अभाव और असमय में कर्ज़ देने वाले महाजन को श्रद्धा की दृष्टि से देखता है। श्रीहरि का भी लोग आदर करते हैं, परन्तु श्रीहरि इतने को ही पर्याप्त नहीं समझता। वह अनुभव करता है कि मौखिक श्रद्धा की आड़ में लोग मुझसे ईर्षा करते हैं, मेरे मरने की कामना रखते हैं। इसीलिए कभी-कभी वह चाहता है कि सारा गाँव जलाकर लोगों को कंगाल बना दे। राह में जगन डाक्टर जैसे शत्रु के घर पर जब दृष्टि पड़ती है तब उसकी यह दुरन्त अवाध्य इच्छा और भी भड़क जाती है। परन्तु श्रीहर में त्रिपुरासिंह जैसा दुरन्त साहस नहीं है। ज़माना भी वह नहीं रहा! त्रिपुरासिंह जो इच्छा पूरी कर सकता था, ज़माने के कारण श्रीहरि को वह दबानी पड़ती है। इसके अतिरिक्त काल के अंतर के कारण श्रीहरि में त्रिपुरासिंह की अपेक्षा अन्याय का बोध भी कुछ अधिक है।

अन्याय-बोध के कारण ही रात की दुर्घटना के लिए श्री हरि अपने मन में बार-बार सफ़ाई दे रहा है। आखिर वह उठ कर खड़ा हुआ और भस्मीभूत बस्ती की ओर ही चला। चलते

चलते भी वह कई बार ठिठक गया। उसे संकोच का सा अनुभव हो रहा है। अंत में वह अपने चरवाहे के घर को ही लक्ष्य बना कर अपसर हुआ। उसका चरवाहा है, घर का नौकर है, विपत्ति में उसकी देख-भाल करना आवश्यक कर्तव्य है। किसकी मजाल है जो उससे कुछ कहे! अपने में ही वह चीखा "ए!" जैसे श्रीहरि से जो कोई कुछ कहेगा उसे पहले से ही डाँट दिया! वास्तव में उसने अपने मन की अवाच्य स्मृति से उत्पन्न संकोच को ही धमकाया।

चरवाहा मालिक को यम ही समझता है। छिरू को देखते ही उसने सोचा—आज की गैरहाजिरी के लिए ही पाल उसकी गरदन नापने आया है। लड़का फूट कर रोने लगा—"घर जल गया सरकार—इसीलिए—"

गरीबों की जली हुई बस्ती की दशा देखकर श्रीहरि मन में लज्जित हुए बिना न रह सका, लड़के से स्नेह के साथ बोला—"तो रोता क्यों है? दैव पर किसका बश है? तू क्या करेगा? किसी ने जान-बूझ कर तो आग नहीं लगाई।"

चरवाहे का बाप बोला—"कौन लगाएगा सरकार—क्यों लगाएगा? हमने किसी का क्या बिगाड़ा है जो हमारे घर में आग लगायेगा?"

श्रीहरि चुपचाप जले हुए घरों की ओर देखता रहा।

चरवाहे का बाप ही फिर बोला—नीचों का मामला। सूखे पत्तों में आग लगादी है—और क्या?

"एक काम कर। जितना फूस लगे, मेरे घर से ले आ। बाँस और लकड़ी जो ज़रूरत हो वह भी ले लेना, घर बना डाल।" फिर चरवाहे की ओर देखकर कहा—घर से दस सेर चावल भी ले लेना। कल थोड़े से धान भी दे दूँगा, समझा!"

चरवाहे का बाप श्री हरि के पैरों पर लोट ही सा गया।

इतनी देर में और भी दो-चार आदमी आ गये थे। इनमें से एक ने हाथ जोड़ कर कहा—"हमें भी थोड़े से धान दें, सरकार!"

"धान?"

"जी, नहीं तो भूखे मर जाएँगे।"

"अच्छा, आज मैं घर पीछे पाँच सेर चावल दूँगा। वह तुम्हें लौटाना न पड़ेगा। कल थोड़े थोड़े धान भी दे दूँगा। और—"

जी?

दस गट्ठे फूस भी दूँगा मैं हर एक को। मुहल्ले में सब से कह दे।

"जय हो सरकार, आपकी जय हो। लक्ष्मी का भण्डार भरा रहेगा!" श्रीहरि के दाक्षिण्य से अभिभूत होकर वह मुहल्ले में समाचार देने के लिए दौड़ा। जब तक प्रत्येक घर में समाचार न पहुँचा देगा तब तक उसे शान्ति न होगी—इतना अस्थिर हो गया है।

दरिद्र और अशिक्षित मनुष्य श्रीहरि के दाक्षिण्य से जितने अभिभूत हुए हैं, उनकी सरल अकपट कृतज्ञता के गद्‌गद प्रकाश से श्रीहरि भी उतना ही अभिभूत हो गया है। इतने सामान्य दान से ही लोग उसके पैरों पर लोटने लगे हैं। श्री हरि को जान पड़ा कि कृतज्ञ और सजल आँखों के इस अश्रु प्रवाह में वह अपराध जो उसने रात में किया था, धुल कर साफ हो गया है। भावावेग से श्रीहरि का कण्ठ भी रुद्ध-सा हो गया। वह बोला—"आना, सब आना। चावल, धान, फूस ले जाना। बहुत कुछ हल्का और पवित्र चित्त लेकर वह लौटा।"

घर लौटते हुए श्री हरि ने कितनी ही कल्पनाएँ कीं।

गरमी में पानी की कमी से लोगों के कष्ट की सीमा नहीं रहती। पीने योग्य जल के लिए स्त्रियों को नदी के घाट तक जाना पड़ता है। सम्मान की दृष्टि से जो नहीं जातीं उनको रुँधे ताल का गन्दा और कीचड़ मिला पानी पीना पड़ता है। अब मैं एक कुआँ बनवा दूँगा।

गाँव की पाठशाला का सामान खरीदने के लिए पिछली बार घर-घर भीख माँगने पर भी पाँच रुपये से अधिक नहीं मिले। मैं सामान के लिए पचास रुपये दे दूँगा।

गाँव की सड़क पक्की करवा देने का निश्चय भी श्रीहरि ने किया।

चण्डी-मण्डप के कच्चे फ़र्श को पक्का बनवाने का विचार भी श्रीहरि ने किया। सीमेंट के फ़र्श पर लिखवा देगा—श्री

चरणाश्रित श्रीहरि घोष। जैसे कंकणा के चण्डी-मन्दिर में बरामदे के फ़र्श पर सफ़ेद संगमर्मर के बीच काले अक्षरों से कंकणा के बाबुओं का नाम लिखा गया है।

उसने कल्पना की कि इसके बाद गाँव वाले कृतज्ञता और संभ्रम के साथ उसे बड़ा आदमी मानते हैं, नमस्कार करते हैं और रास्ते से हट जाते हैं।

आज के नये अनुभव से श्रीहरि के अन्तर में एक नया मन, अनजाने में पड़े किसी बीज के अंकुर की भाँति, जाग्रत हो गया। कल्पना करते-करते वह कुछ देर तक मैदान में घूमता रहा। जब घर लौटा तब दोपहर होने वाली थी। घर पहुँच कर देखा कि दरवाज़े पर हरिजन अपराधी की भाँति खड़े हैं, और माँ निर्मम कटु भाषा में उन्हें गालियाँ दे रही है। गालियों की वर्षा इन हतभागों पर ही नहीं पड़ रही है, छिरू पर बौछार डालने में माँ कंजूसी नहीं करती। क्रुद्ध चित्त से ही वह घर में घुसा। माँ ने उसे देखकर गालियों की बाढ़ दूने वेग से दागनी आरंभ कर दी—"अरे मुँह जले, तू दाता कर्ण कब से बन गया? ये मरभुग्वे खड़े हैं—कहते हैं—"

श्रीहरि की नम्र प्रकृति का एक निष्ठुरतम स्वरूप है कि वह चिल्लाता नहीं; मौन परन्तु भयावह भाव-भंगिमा से मनुष्य या पशु को भयभीत कर देता है—जैसे जाड़े का स्वच्छ जल मनुष्य के हाथ पैर ठंडे कर देता है, उसकी साँस घोंटता है और मार डालता है। श्रीहरि को उसी स्वरूप में अपनी ओर

दरिद्र और अशिक्षित मनुष्य श्रीहरि के दाक्षिण्य से जितने अभिभूत हुए हैं, उनकी सरल अकपट कृतज्ञता के गद्‌गद प्रकाश से श्रीहरि भी उतना ही अभिभूत हो गया है। इतने सामान्य दान से ही लोग उसके पैरों पर लोटने लगे हैं। श्री हरि को जान पड़ा कि कृतज्ञ और सजल आँखों के इस अश्रु प्रवाह में वह अपराध जो उसने रात में किया था, धुल कर साफ हो गया है। भावावेग से श्रीहरि का कण्ठ भी रुद्ध-सा हो गया। वह बोला—"आना, सब आना। चावल, धान, फूस ले जाना। बहुत कुछ हल्का और पवित्र चित्त लेकर वह लौटा।"

घर लौटते हुए श्री हरि ने कितनी ही कल्पनाएँ कीं।

गरमी में पानी की कमी से लोगों के कष्ट की सीमा नहीं रहती। पीने योग्य जल के लिए स्त्रियों को नदी के घाट तक जाना पड़ता है। सम्मान की दृष्टि से जो नहीं जातीं उनको रुँधे ताल का गन्दा और कीचड़ मिला पानी पीना पड़ता है। अब मैं एक कुआँ बनवा दूँगा।

गाँव की पाठशाला का सामान खरीदने के लिए पिछली बार घर-घर भीख माँगने पर भी पाँच रुपये से अधिक नहीं मिले। मैं सामान के लिए पचास रुपये दे दूँगा।

गाँव की सड़क पक्की करवा देने का निश्चय भी श्रीहरि ने किया।

चण्डी-मण्डप के कच्चे फ़र्श को पक्का बनवाने का विचार भी श्रीहरि ने किया। सीमेंट के फ़र्श पर लिखवा देगा—श्री

चरणाश्रित श्रीहरि घोष। जैसे कंकणा के चण्डी-मन्दिर में बरामदे के फ़र्श पर सफ़ेद संगमर्मर के बीच काले अक्षरों से कंकणा के बाबुओं का नाम लिखा गया है।

उसने कल्पना की कि इसके बाद गाँव वाले कृतज्ञता और संभ्रम के साथ उसे बड़ा आदमी मानते हैं, नमस्कार करते हैं और रास्ते से हट जाते हैं।

आज के नये अनुभव से श्रीहरि के अन्तर में एक नया मन, अनजाने में पड़े किसी बीज के अंकुर की भाँति, जाग्रत हो गया। कल्पना करते-करते वह कुछ देर तक मैदान में घूमता रहा। जब घर लौटा तब दोपहर होने वाली थी। घर पहुँच कर देखा कि दरवाज़े पर हरिजन अपराधी की भाँति खड़े हैं, और माँ निर्मम कटु भाषा में उन्हें गालियाँ दे रही है। गालियों की वर्षा इन हतभागों पर ही नहीं पड़ रही है, छिरू पर बौछार डालने में माँ कंजूसी नहीं करती। क्रुद्ध चित्त से ही वह घर में घुसा। माँ ने उसे देखकर गालियों की बाढ़ दूने वेग से दागनी आरंभ कर दी—"अरे मुँह जले, तू दाता कर्ण कब से बन गया? ये मरभुग्वे खड़े हैं—कहते हैं—"

श्रीहरि की नग्न प्रकृति का एक निष्ठुरतम स्वरूप है कि वह चिल्लाता नहीं; मौन परन्तु भयावह भाव-भंगिमा से मनुष्य या पशु को भयभीत कर देता है—जैसे जाड़े का स्वच्छ जल मनुष्य के हाथ पैर ठंडे कर देता है, उसकी साँस घोंटता है और मार डालता है। श्रीहरि को उसी स्वरूप में अपनी ओर

बढ़ते देख कर माँ जल्दी से पीछे हटी और खिड़की से निकल कर भाग गई।

श्रीहरि ने स्वयं सब को चावल दिए। देने के बाद ही उसने मुँह खोला, कहा, "फूस और धान कल ले जाना।" अंत में बोला, "अम्माँ की बातों का ख्याल न करना, समझे!"

श्री हरि के पैर छू कर एक ने कहा—"राम राम, इन की बात का भी कोई ख्याल करता है।...फिर मामले को और हलका कर देने के लिए यथासाध्य बुद्धि लगाकर वह बोला—"माँ तो हमारी पगली माँ है! बिगड़ती है तो कोई ठिकाना नहीं रहता।"

श्रीहरि ने कोई जवाब नहीं दिया। वह सोचने लगा—"यह माँ हरामजादी मुझे कुछ करने न देगी। आज मैंने जो सोचा है वे सब काम करने में रुपये खर्च हुए तो यह हरामजादी अवश्य कोई बीभत्स काण्ड कर बैठेगी! लकड़ी के बड़े बकस की चाभी वह अब तक अपनी छाती से चिपकाए रहती है। रुपये निकालते ही आफ़त आ जायगी। लेकिन रुपये की क्या चिंता कुछ बड़े देनदारों से ब्याज ही मिल जाय तो सब काम हो सकते हैं।

श्री हरि ने यही करने का निश्चय कर लिया।

आज की यह छोटी सी घटना बरगद के छोटे से बीज जैसी जान पड़ती है। परन्तु इसी बीज में विराट महीरुह की संभावना छिपी है। इस संभावना के प्रारंभ में ही श्रीहरि

अपने अब तक के वह अंधकारपूर्ण और दुर्गन्ध मय जीवन-सौध के प्रत्येक कक्ष—शरीर की प्रत्येक ग्रंथि, प्रत्येक संधि में एक विचित्र स्पन्दन का अनुभव कर रहा है। जान पड़ता है कि यह सौध तड़क कर, फटकर टुकड़े टुकड़े हो जायगा।

—दस—

भूपाल चौकीदार के हाथ में एक नोटिस है। नोटिस पर यूनियन बोर्ड की मोहर लगी है। भूपाल कह रहा है, उसके आगे पातू ढोल बजा रहा है।

"एक सप्ताह में अषाढ़ और क्वांर की दोनों किस्तों का टैक्स अदा न किया गया तो जुर्माने समेत ड्योढ़ा टैक्स अस्थावर कुर्क करके वसूल किया जायगा।"

घोषणा सुनकर जगन डाक्टर जल कर खाक होगया। और पूछा—"क्या? क्या? क्या किया जायगा?" भूपाल ने भय के साथ नोटिस आगे बढ़ा दिया—"जी, यह देख लीजिए!"

जगन ने कठोर दृष्टि से भूपाल को देखकर कहा, "सरकारी वरदी पहन कर सिर झुकाना भी भूल गया है?"

घबरा कर भूपाल ने झटपट डाक्टर के पैर छुए और बोला—"राम, राम! देखिए तो कैसी भूल होगई! आप लोग ही तो हमारे माँ बाप हैं!"

पातू बोला—"लिच्चय!"

नोटिस देखकर जगन और भी बिगड़ा—"शैतानी सूझी है, जैसे सब बाप-दादे की दौलत है। लोगों के धान अभी खेत में

खड़े हैं और बाबुओं ने अस्थावर कुर्क करने का नोटिस निकाल दिया ! सरकार ने रियाया को तबाह करके टैक्स वसूल करने के लिए कहा है ? आज ही दरख्वास्त देता हूँ मैं।"

भूपाल ने हाथ जोड़े—"जी, हम तो नौकर हैं, हम से जो कहा है वही—"

"तुम्हारा क्या दोष ? तुम क्या करोगे ? अपना काम देखो—"

पातू ने ढोल पर करारी चोटें मार कर कहा—"डाक्टर जी, लवान्न बाइस तारीख को होगा।"

"नवान्न ? बाइस को ?"

"जी"

और सब से कहा मेरा गाँव वालों से कोई सम्बन्ध नहीं। मैं लवान्न करूँगा—जब मेरी इच्छा होगी ?"

पातू चुपचाप आगे बढ़ा। डाक्टर ने क्रुद्ध गांभीर्य से उस की ओर देख कर बुलाया —"ए, पातो, सुन !"

"जी", पातू घूम कर खड़ा हुआ।

उस दिन दरख्वास्त पर निशान लगाने नहीं आया—बड़ा आदमी हो गया है ? कस्बे में रहेगा, गाँव छोड़ देगा—!"

पातू की भौंहें टेढ़ी हो गईं फिर भी वह चुप रहा। डाक्टर ने कमरे के भीतर से दरख्वास्त निकाल कर स्नेह भरे शासन के स्वर में कहा, "ले, निशान लगा दे ! तेरे लिए अब तक रुकी पड़ी है।"

पातू ने बिना किसी आपत्ति के ही निशान लगा दिया। उस दिन वह सामयिक उत्तेजना के कारण सारा दिन कस्बे में ही बिता आया था। आज भी डाक्टर की कड़वी बात ने ही उसकी भौंहें टेढ़ी कर दी थीं, नहीं तो सहायता की भिक्षा लेने में उसे कोई आपत्ति नहीं है। गहरी कृतज्ञता के साथ ही उसने निशान लगाया है। निशान लगा कर अँगूठे की स्याही सिर में पोंछते-पोंछते उसने कृतज्ञ हँसी के साथ कहा—"डाक्टर जी की तरह ग़रीब ग़ुर्बा का उपकार कोई नहीं करता।" डाक्टर के जूते के नीचे की मिट्टी उँगली से उठा कर उसको सिर में लगाया। भूपाल ने भी उसका अनुकरण किया।

डाक्टर कुछ सोच से रहे थे, दो तीन बार गरदन हिला कर बोले—"ठहरो! एक और कागज़ पर निशान लगा दो!"

"जी!" पातू ने भय के साथ पूछा। अर्थात् अब फिर निशान कैसा? ये लोग अँगूठे के निशान देने से बहुत डरते हैं।

"इस टैक्स-वसूली के विरुद्ध एक दरख्वास्त दूँगा। तुम्हारे घर जल गये हैं, किसानों के धान खेत में खड़े हैं—ऐसे वक्त में अस्थावर कुर्क करने का नोटिस कोई अन्धेरगर्दी समझ ली है!"

पातू का मुँह सूख गया। यूनियन बोर्ड के हाकिम पर दरख्वास्त! उसने भूपाल चौकीदार की ओर देखा—वह भी घबरा गया है। डाक्टर ने फिर तगादा किया—'दे, निशान लगा दे!'

'न डाक्टर जी, यह हम से न होगा।' जवाब देकर पातू जल्दी-जल्दी चलने लगा। पीछे-पीछे भूपाल ने भी भागकर जान बचाई। भूपाल सोच रहा था—'पेसिडन' बाबू से चल कर कह दें—नहीं तो वे समझेंगे कि इसमें हम भी मिले हुए हैं।

क्रुद्ध डाक्टर भागते हुए पातू और भूपाल की ओर देखता ही रह गया। क्षण भर बाद वह फट पड़ा—'हरामजादे बदमाश, इनके भले की सोचे वह भी गधा!'...दरख्वास्त फाड़ देने के लिए तयार होगया!

'फाड़ो मत, डाक्टर, फाड़ते क्यों हो!' पाठशाला के पंडित देबू घोष ने रोका। वह कुछ दूर खड़ा देख रहा था। ऐसे मामलों में उस की सहानुभूति रहती है।

देबू घोष की प्रकृति भी विचित्र है। गाँव के पाँच व्यक्तियों में से एक होते हुए भी वह सब से कुछ पृथक है। उसका मतामत साधारण व्यक्तियों से स्वतंत्र रहता है। अपनी दुर्दशा दूर करने के लिए वह किसी से सहायता की भीख माँगना पसन्द नहीं करता, अनिरुद्ध या छिरू को रास्ते पर लाने के लिए उसने जमीदार के पास जाना स्वीकार नहीं किया। और पंचायत का प्रबन्ध उसी ने किया था। आज उस ने जगन डाक्टर को दरख्वास्त फाड़ने से भी रोका।

डाक्टर ने देबनाथ के मुह की ओर देखकर कहा, 'क्यों न फाड़ूँ? इन बेवकूफों का उपकार करूँ? तुम ने देखा नहीं?'

देबू इस पर बोला—'देखा तो परन्तु इन लोगों पर गुस्सा करने से क्या लाभ होगा ? दरख्वास्त मुझे दो, मैं दस्तखत करता हूँ, और भी दस आदमियों से करवाऊँगा।'

डाक्टर ने पंडित को बीड़ी और दियासलाई देकर कहा—'बैठो।' फिर घर की ओर मुँह करके आवाज दी। 'मिनू ! दो कप चाय लाना !'

मिनू डाक्टर की लड़की है।

डाक्टर ने फिर आरंभ किया—'लोग जानते हो क्या सोचते हैं ? सोचते हैं इन सब कामों में मेरा कोई स्वार्थ है। अन्याय अत्याचार दूर होगा तो औरों को तो जो मिलना होगा मिलेगा, लेकिन मैं राजा बन जाऊँगा !'

देबू ने बीड़ी सुलगा कर दियासलाई डाक्टर के हाथ में दी और बोला, 'तो स्वार्थ तो है डाक्टर !'

'स्वार्थ !' डाक्टर ने रुक्ष और विस्मित दृष्टि से पंडित की ओर देखा।

पंडित ने बीड़ी की आग पर दृष्टि जमाकर हँसते-हँसते सहज भाव से कहा—'स्वार्थ है क्यों नहीं ! तुम दस आदमियों में गण्यमान्य होगे, दो दिन बाद यूनियन बोर्ड के मेम्बर बन सकते हो, यह स्वार्थ नहीं ? मेरी समझ से तो संसार में अर्थ-चिंता के बिना मनुष्य रह ही नहीं सकता।'

डाक्टर के मत्थे पर बल पड़ गये, वह बोला—'यदि यह स्वार्थ है तो साधू और सन्यासी भगवान की जो तपस्या करते

हैं उस में भी स्वार्थ है ? वशिष्ठ और बुद्धदेव भी स्वार्थी थे ?"

"स्वार्थ को बुरा न समझा जाय तो यह ठीक है। परमार्थ भी तो अर्थ से अलग नहीं है।···देबू उसी तरह हँसता रहा।"

डाक्टर बोला—"यूनियन बोर्ड का मेम्बर मैं बनना चाहता हूँ—अवश्य बनना चाहता हूँ लेकिन चाहता हूँ, दस आदमियों की सेवा करने के लिए, परलोक-फरलोक और जप-तप में मेरा विश्वास नहीं है। वह छिरूपाल चोरी करता है—व्यभिचार करता है और घर में बैठकर जपन्तप करता है, समारोह के साथ काली पूजा करता है, ऐसे धर्म के मत्थे पर मैं पाँच झाड़ू मारूँ।"

डाक्टर ने एक लम्बा भाषण प्रारम्भ किया। इस संसार में मनुष्य जीवन कौन सफल करना नहीं चाहता? कोई जप-तप के द्वारा ईश्वर को प्रसन्न करके जीवन धन्य करना चाहता है और कोई मनुष्य की सेवा के द्वारा···आदि-आदि। भाषण के उत्तर में देबू घोष भी भाषण दे सकता था, किन्तु दिया नहीं, उसने कहा, "तुम गाँव वालों की भलाई चाहते हो, मंगल करना चाहता हो, अच्छी बात है फिर तुम इन को अपने से छोटा क्यों समझते हो ? आज ही तुम ने कहा है गाँव के साथ नवान्न न करूँगा ! गाँव में दो-दो पंचायतें हुईं तुम नहीं गये, उल्टे लुहार को भड़का दिया।"

"कभी नहीं, गाँव के विरुद्ध मैंने किसी को नहीं भड़काया। अनिरुद्ध के धान काट लिए थे। मैंने छिरू के नाम रिपोर्ट लिखने

को कहा था—बस !"

"अच्छा, पंचायत में क्यों नहीं गये ?"

"पंचायत ? जिस पंचायत में रुपये के ज़ोर से छिरूपाल चौधरी बन जाय—मैं वहाँ नहीं जाता।

"तुम उसका चौधरीपन तोड़ दो। पंचायत में पहुँच कर अपने ज़ोर से तोड़ो। घर में बैठे रहने से तो वह और बढ़ेगा।"

जगन निरुत्तर हो गए।

"अच्छा तुम गाँव के साथ नवान्न क्यों न करोगे ?"

जगन कुछ देर बाद बोला—'न करूँगा ऐसी कोई प्रतिज्ञा मैंने नहीं की।'

देबू प्रसन्न होगया, बोला हाँ, पाँच जने मिल कीजै काज, हारे जीते आवै न लाज, जो करो, सब मिलकर करो, फिर देखो, दो दिन में सब सीधे हुए जाते हैं। अनिरुद्ध लुहार, गिरीश बढ़ई, तारा नाई, पातू मोची—तुम्हारे छिरूपाल के भी कान पकड़ने पड़ेंगे।

डाक्टर बोला—'अच्छी बात है, मुझे कोई आपत्ति नहीं। लेकिन एक होंगे तो सब कामों में एक होंगे। यह नहीं कि गाँव की गरज के समय जगन डाक्टर और यूनियन बोर्ड की मेंबरी के वक्त कंकना के बाबू—छिरेपाल—'

देबू ने बीच में ही रोका—इस बार तीन नम्बर वार्ड से हम तुम दोनों खड़े होंगे। क्यों ?

+ + + + ÷ +

देवनाथ घोष—देबू पंडित स्वतंत्र प्रकृति का आदमी है। अपनी बुद्धि विद्या पर उसका अगाध विश्वास है। उसकी बुद्धि सम्बन्धी चेतना के साथ थोड़ी सी कल्पना—थोड़ी सी परार्थ-परता भी मिली रहती है। विद्या उसे अधिक प्राप्त नहीं हुई परन्तु वह इतनी ही पर्याप्त समझता है। इस गाँव में अपने बराबर विद्वान् उसे कोई नहीं दीख पड़ता। जगन डाक्टर तक मुकाबले में कम शिक्षित है। कंकना के हाई स्कूल में जगन फोर्थ क्लास तक गया था फिर पढ़ना छोड़कर पिता से चिकित्सा सीखने लगा था। देबू मैट्रिक तक पढ़ा है। पढ़ने लिखने में वह तेज भी था, कंकना के मास्टर अब तक कहते हैं कि देबू पढ़ता रहता तो अच्छे नंबरों से मैट्रिक पास कर लेता। देबू भी जानता है कि उसे पढ़ने का अवसर मिलता तो वह स्कालर शिप लेकर पास होता। इसके बाद एफ. ए.—बी. ए.—देवनाथ की कल्पना दूर तक जाती, साथ ही साथ अपने दुर्भाग्य के लिए वह लम्बी साँस भी लेता।

अकस्मात् पिता का देहांत हो गया। खेती-बारी देखने वाला दूसरा आदमी घर में न था। देबू की कल्पना यह सहन न कर सकती थी कि मेरी माँ अन्य देहाती औरतों की तरह खेत देखती फिरे और पुरुषों की तरह दूसरों के साथ लड़-झगड़ कर घर लौटे। इसीलिए उसने स्कूल छोड़ दिया और घर के काम में लग गया परन्तु संतुष्ट चित्त से नहीं, असन्तोष जागता ही रहा। कुछ वर्ष पहले जब गाँव की पाठशाला का

भार डिस्ट्रिक्ट बोर्ड से यूनियन बोर्ड ने ले लिया तब देबू किसानी छोड़कर उसमें पण्डित हो गया। वेतन बारह रुपये महीने हैं। लोगों ने उसे पण्डित नाम से सम्बोधित किया और आदर किया परन्तु देबू इतने से ही संतुष्ट नहीं है।

देबू की धारणा है कि वह गाँव का श्रेष्ठ व्यक्ति है, श्रेष्ठ व्यक्तित्व का सम्मान भी उसे मिलना चाहिए। वन में साल का छोटा पेड़ जैसे जंगली लताओं के दुर्भेद्य जाल को फाड़ कर अपना सिर सब से ऊपर रखना चाहता है, वैसे ही देबू भी उद्यत विक्रम के साथ अब तक सब से लड़ता रहा है। परन्तु वह अकेले ही अखण्ड आलोक भोग करने के लिए ऊपर नहीं उठना चाहता, अपितु नीचे की लताओं को भी अपने सहारे ऊपर उठा ले जाना चाहता है। छिरूपाल की सम्पदा और बर्बर पशुत्व से वह आन्तरिक घृणा करता है। जगन का बनावटी देश-प्रेम और बड़प्पन का अहंकार उसके निकट हास्यकर है, असह्य है। वह नहीं मानता कि वंश-परम्परा के बल पर ही हरीश मण्डल को गाँव के चौधरी बन जाने का अधिकार मिल गया है। अपेक्षाकृत आयु में बड़े भवेश और मुकुन्द को जब वह विज्ञ बनने का स्वांग करते देखता है तो जल उठता है।

देबू की यह उपेक्षा अकारण या आत्मप्राधान्य से ही उत्पन्न नहीं हुई। अपने गाँव को वह सम्पूर्ण हृदय से प्यार करता है और उस गाँव को वह निरंतर अवनति की ओर

गिरता हुआ देख रहा है। रुपये और शरीर के बल पर छिरू यथेच्छाचार कर रहा है। सिर्फ़ छिरू ही नहीं गाँव में कोई भी किसी की बात नहीं मानता, सामाजिक आचार-व्यवहार लुप्त हो रहे हैं। किसी का स्वर्गवास होता है तो उसे स्मशान तक पहुँचाना भी टेढ़ी खीर हो जाता है—सामाजिक भोज की एक ही पंक्ति में धनी और दरिद्र का भेद दीख पड़ता है। लुहार, बढ़ई और मोची ने अभी-अभी काम छोड़ दिया है; दाई और नाई सनातन विधान भंग करने के लिये उद्यत हैं। जो पाँच रुपये कमाता है वह दस रुपये खरच करके बाबू बनना चाहता है। कर्ज़ के कारण भूमि बिक रही है, बरतन भाँडे बिक रहे हैं, फिर भी लोगों की आँखें नहीं खुलतीं। कुरता चाहिए, जूता चाहिए, बारीक साड़ियाँ चाहिएँ—हर घर में एक लालटेन चाहिए—न जाने कितनी आवश्यकताएँ बढ़ा ली हैं। छोकरों के पाकेट में बीड़ी दियासलाई घुस रही है, जो कस्बे जाता है वह दो-एक पैसे की सिगरेट खरीदे बिना नहीं रहता। बमाकू और चकमक तो उठ ही गया। जो इन सब बातों का प्रतिकार करने की शक्ति नहीं रखता—वह प्रधान क्यों बनना चाहता है—किस बल पर बनना चाहता है?

देबू पंडित पाठशाला में लड़कों को पढ़ाते-पढ़ाते बहुत कुछ सोचता है। गाँव वालों से अपने आपको कुछ पृथक रखकर अपनी चिंता का जाल फैलाता है साथ ही साथ अपने व्यक्तित्व को अक्लांत और अविराम अध्यवसाय से प्रतिष्ठित करने की चेष्टा

भी करता है,सामान्य सुयोग को भी वह छोड़ना नहीं चाहता।

इसीलिए जब जगन डाक्टर ने यूनियन बोर्ड के पदाधिकारियों द्वारा होने वाले अन्याय पर रोष प्रकट किया और उसके विरुद्ध मस्तक उठाकर खड़ा हो गया तब देबू ने डाक्टर की बड़प्पनी डींगों से घृणा करते हुए भी उसका साथ देने में संकोच न किया।

देवनाथ और जगन डाक्टर ने उत्साह के साथ काम आरंभ कर दिया। दरख्वास्त भेज दी गई है। दोनों ने सलाह करके नवान्न के दिन एक उत्सव करने का भी प्रबन्ध किया। शाम को चण्डी-मण्डप में मनसा का भसान भी होगा। भसान गाने वालों को इधर बेहुला का दल कहते हैं। पासियों में एक बेहुला-दल है, वही गायेगा। चंदा इकट्ठा करके इसके लिए मद की व्यवस्था की गई है—गाने वाले इतने से ही परम आनन्दित हो गये हैं। भसान की व्यवस्था करने में एक उद्देश्य भी है। नवान्न के दिन छिरूपाल के घर में अन्नपूर्णा की पूजा होती है, गाँव के सब आदमी शाम को उसके यहाँ जमा होते हैं—तमाकू पीते हैं, गपशप करते हैं और थोड़ा बहुत कीर्तन कर लेते हैं। इस बार छिरू ने अधिक समारोह करने का आयोजन किया है। रात में भोज भी होगा और रासलीला करने वाले भी बुलाए गये हैं। श्रीहरि की माँ रोज जो गालियाँ देती हैं उनसे ये दो समाचार मिले हैं। गाँव वालों को छिरू के घर जाने से रोकने के लिए ही देबू और जगन ने यह व्यवस्था की है। गाँव को

संघबद्ध करने के लिए यह पहला आयोजन या भूमिका है।

किसानों के गाँव में नवान्न का समारोह कुछ अधिक ही होता है—उत्सव वास्तव में सार्वजनिक हो जाता है। प्रधान उपज हैमंती धान खेतों में पक चुका है, अब उसे काट कर घर लाना है। मुहूर्त के लिए कार्तिक संक्रांति को ढाई मुट्ठी धान काटकर उनसे लक्ष्मी-पूजा की गई है। आज नये धान के चावलों से कई चीज़ें बनाकर पितृलोक और देवलोक के निवासियों का भोग लगाया जायगा। घर घर धान्य लक्ष्मी की पूजा होगी। लड़के लड़कियों ने सवेरे ही नहा लिया है। अगहन का तीसरा सप्ताह है, जाड़ा बढ़ गया है परन्तु नवान्न के उत्साह में लड़कों ने तालाब का पानी मटमैला करके छोड़ा है। अब वे चण्डी मण्डप के आँगन में धूप में खड़े हैं और लंगड़े पुरोहित के कंकालसार घोड़े को छेड़ रहे हैं। बूढ़े शिव और भाँगा काली के मन्दिर में जब तक भोग न लग जायगा तब तक नवान्न आरंभ न होगा। पीठ पर भीगे बाल डाले कुमारी किशोरियाँ नये बरतन में नये धान के चावल, चीनी, संदेश, फलियाँ आदि भोग सामग्री सजाकर ला रही हैं और मन्दिर के बरामदे में रख रही हैं। जिनके घर में कुमारी लड़की नहीं हैं उनके यहाँ से प्रवीणाएँ ला रही हैं। गाँव के पुरोहित लंगड़े चक्रवर्ती सामग्री लेकर देवता के सामने रखते हैं और बीच-बीच में उन लड़कों को डाँटते हैं—'ए, ओ छोकरो! बड़े बदमाश हो तुम! उसके पास न जाना! मार देगा तो पिलही

फट जायगी !'

पुरोहित अपने घोड़े की चर्चा कर रहे हैं, कह रहे हैं, वह दुलत्ती झाड़ेगा तो प्लीहा फट जायगा ! चक्रवर्ती इसी घोड़े पर सवार होकर कई गाँवों की जजमानी सँभालते हैं। लौटते समय वे घोड़े की पीठ पर तो बैठते हैं लेकिन चावलों आदि का बोझ अपने सिर पर ही लादे रहते हैं। घोड़ा इतना सधा हुआ है कि चक्रवर्ती प्रायः लगाम तक नहीं पकड़ते और दोनों हाथों से अपने सिर का बोझ ही सँभाले रहते हैं। वैसे जब चाहें तब वे अपने पैर ज़मीन पर भी टेक सकते हैं। उनके पैर भूमि से अधिक से अधिक एक फुट ऊपर ही झूलते रहते हैं।

लड़के दूर से ढेले फेंक कर घोड़े को मार रहे थे। पुरोहित बहुत नाराज़ हो रहे थे परन्तु कोई उपाय न दीख पड़ता था। भोग-सामग्री लाने वाली एक प्रौढ़ा विधवा ने पुरोहित के लिए उपाय निकाल दिया, वह बोली—'ऐं ! तुमने घोड़ा छू लिया—अरे म्लेच्छ कहीं के ! जाओ फिर नहा कर आओ।'

पुरोहित बोले—'देखो तो, बज्जात छोकरों की करतूत देखो ! लात मार कर पिलही फाड़ देगा फिर मेरा नाम लगेगा !'

विधवा को पुरोहित की बात न जँची, 'बोली रहने भी दो, यह बकरी जितना घोड़ा—यह लात मार कर पिलही फाड़ देगा ! तुम भी अजीब हो ! लड़कों से क्या कहूँ, तुम भी तो आचार-विचार नहीं करते। पैर बाँध कर छोड़ देते हो और

यह दुनिया भर का कूड़ा-करकट गंद-मन्द खाता फिरता है। उस दिन मेरे गाँव में नये ताल के किनारे राम राम! याद से ही उल्टी आती है—नहाना पड़ता है—यह घास खा रहा था। और तुम इस पर बैठकर देवता की पूजा करने जाते हो!

पुरोहित बोले—'गंगा जल पिलाता हूँ चौधराइन बुआ, रोज शाम को घर लौटने पर इसको गंगा-जल पिलाता हूँ तब घर में बाँधता हूँ। मैं तो गंगा जल पीता ही हूँ।'

'झूठ क्यों बोलते हो?'

'भगवान् कसम, जनेऊ हाथ में है। गंगा जल न मिले तो यह घर में नहीं घुसता। बाहर खड़ा रहता है। जमीन पर पैर ठोकता है और हिनहिनाता है।'

चौधराइन बुआ कुछ कहने ही वाली थीं कि चौंक कर कुछ आगे बढ़ी और फिर घूम कर खड़ी हुईं।

'कौन है! लप्प-झप्प चला आ रहा है?' पीछे की ओर से किसी की लंबी छाया का सिरा उनके पैर पर पड़ते ही वे छू जाने के भय से खिसक गईं और पूछा—'कौन है?'

एक बहू है, दीर्घाङ्गी—मुँह घूँघट से ढका है, वह बोली नहीं, भोग-सामग्री का पात्र चुपचाप पुरोहित के सामने रख दिया।

'अः। अपनी लुहारिन है—मैं कहूँ कौन आ गया!'

डाक्टर और पण्डित ने भी इसी समय चंडी-मण्डप में प्रवेश किया। देवनाथ बोला—'पुरोहित, लुहार की पूजा आप

गाँव के साथ न करायें। हम यह न होने देंगे।'

जगन और देबू इसी सुयोग की प्रतीक्षा में खड़े थे। पद्म को चण्डी-मण्डप में प्रवेश करते देख कर वे भी आ गये।

पुरोहित कुछ देर पंडित के मुँह की ओर देखते रहे, फिर बोले—'यह कैसे होगा ? गाँव के साथ पूजा न होगी तो फिर कैसे होगी ?'

'हम नहीं जानते, कर्मकार जैसे ठीक समझेगा, कर लेगा ! वह जब गाँव का नियम नहीं मानता तब हम उसे गाँव के साथ पूजा क्यों करने दें ?'

पद्म चुपचाप घूँघट डाले खड़ी रही, चंचलता का चिह्न भी न दीख पड़ा। पुरोहित ने उसकी ओर नितांत निरुपाय दृष्टि से देखकर कहा—'फिर बेटी मैं क्या कर सकता हूँ।'

देवनाथ ने पद्म को लक्ष्य कर कहा, 'थाली तुम उठा ले जाओ। कर्मकार से कहना, गाँव के आदमियों ने पूजा नहीं करने दी।'

पद्म धीरे-धीरे चली गई परन्तु पूजा की सामग्री नहीं ले गई, थाल वहीं रखा रह गया।

पुरोहित ने परेशान होकर कहा, 'बेटी, पूजा का सामान उठा ले जाओ ! ओ बेटी, लुहारिन !'

देबू ने कहा—'रहने दो, ! कर्मकार तो अभी आवेगा। कोई फ़ैसला हो जायगा।' देबू घोष के अंतर में कर्मकार के प्रति थोड़ी सी सहानुभूति अब तक है। अनिरुद्ध उसका सह-

पाठी है, इसके अतिरिक्त यह बात भी उसे खटकती है कि अन्याय अनिरुद्ध का ही नहीं है, अनिरुद्ध ने ही पहले पहल अन्याय नहीं किया, गाँव वालों ने ही पहल की है।

पुरोहित ने बात अच्छी तरह नहीं समझी, समझने की व्यग्रता भी नहीं हैं। उसे तो यही चिंता परेशान कर रही है कि एकघर के चावल, दूध आदि सामग्री हाथ से निकली जा रही है। उसकी भौंहें टेढ़ी हो गईं। वह बोला—'हाँ जी, डांगडर, पंडित—

जगन ने बात काट कर दृढ़ आदेश की तरह कहा—'गिरीश बढ़ई और तारा नाई की पूजा भी न होगी—मैं कहे जाता हूँ। हम लोगों में एक आदमी अंत तक यहीं रहेगा—न भी रहे तो भी आप ख्याल रखें।'

इसी समय छिरूपाल ने आ कर पुकारा—'पुरोहित!' उसके बदन पर आज सिल्क की धोती और रेशमी चादर है; भाव भंगी में भी वह दूसरा छिरूपाल जान पड़ता है।

पुरोहित चक्रवर्ती ने व्यस्त होकर कहा—'बस चलता हूँ। ज्यादा से ज्यादा आध घण्टा लगेगा। ओ डाक्टर, ओ पंडित कहाँ हैं सब, आते क्यों नहीं?

जगन डाक्टर ने गंभीरता के साथ कहा—'जल्दी क्यों करते हो पुरोहित! आते हैं, धीरे-धीरे सब आ रहे हैं। एक की जजमानी के लिए दस घरों को परेशान करने से काम कैसे चलेगा।'

छिरू बोला—"कोई नहीं—कोई नहीं—इधर का सब काम निपट जाय तब आना ! मैं कहे जा रहा हूँ !" छिरू ने अपने प्रचण्ड और बेडौल मुँह को यथासाध्य कोमल और विनीत बना कर कहा—"डाक्टर जी, ज़रा आइयेगा कृपा करके और देबू चाचा आप भी—"

छिरू की बात पूरी न हो सकी, अनिरुद्ध के प्रचण्ड और क्रुद्ध चीत्कार से चण्डी-मण्डप गूँज उठा।

"कौन ? किस के धड़ पर दस सिर हैं ? कौन नवाब-बादशाह मेरी पूजा रोक रहा है ?"

अनिरुद्ध रुद्र मूर्ति हो रहा है।

चक्रवर्ती हतबुद्धि हो गये, देवनाथ तन कर खड़ा हुआ, डाक्टर विज्ञ सान्त्वना-दाता की भाँति कुछ आगे बढ़ा; छिरूपाल जैसा का तैसा खड़ा रहा।

डाक्टर बोला—"ठहर, ठहर, चिल्लाता क्यों है, अनिरुद्ध ?"

व्यङ्गपूर्ण एवं घृणाभरी दृष्टि से डाक्टर की ओर देख कर अनिरुद्ध ने पद्म की रखी सामग्री उठा ली। पात्र को दोनों हाथों से तान कर देवता को दिखाता हुआ काँपता-काँपता बोला—"हे शिवजी महाराज, हे माँ काली—लो खाओ, खाओ ! और विचार करो, इन सब का विचार करो"—और वह घूम कर चलने के लिए प्रस्तुत हो गया।

डाक्टर की आँखों से चिनगारियाँ निकलने लगीं परन्तु अनिरुद्ध को रोक कर दण्ड देने का उपाय उसे न सूझा।

अनिरुद्ध ने घूम कर देखा—देबू पंडित और जगन डाक्टर के पास छिरूपाल भी खड़ा है। वह चीखा—"बड़े आदमियों के सिर पर मैं झाड़ू मारता हूँ, विद्वान् के सिर पर लात मारता हूँ—मैं किसी साले की परवाह नहीं करता—देखूँ कौन साला मेरा क्या बिगाड़ लेता है!"

छिरू की ओर घूम कर जैसे अनिरुद्ध ने उसे द्वन्द्वयुद्ध के लिए ललकारा और छाती तान कर खड़ा हो गया।

लंगड़े पुरोहित और चौधराइन कुछ दुर्घटना की आशंका से भयभीत हुए। वे समझ गये कि—छिरूपाल अब अनिरुद्ध के ऊपर चीते की तरह टूट पड़ेगा, परन्तु आश्चर्य! छिरूपाल ने हँस कर कहा, "मुझे क्यों बेकार सानते हो, मैं इस मामले में नहीं हूँ भाई। पुरोहित को बुलाने आया था।"

अनिरुद्ध खड़ा न हुआ। भिन्नाता हुआ आया था, भिन्नाता हुआ ही लौट गया। चलते-चलते वह कह रहा था—"सब सालों को जानता हूँ। धार्मिक—रातोंरात धार्मिक बन गये हैं।

छिरू अविचलित धैर्य धारे स्थिर प्रशांत रूप में ही चण्डी-मण्डप से निकला। उसके चरित्र में यह एक विशेषता है। वह जब इष्ट का स्मरण करता है—किसी धार्मिक कर्म या पूजा-पर्व में रत होता है तब सर्वथा भिन्न मनुष्य हो जाता है। उस दिन वह किसी से झगड़ा नहीं करता, किसी का अनिष्ट नहीं सोचता, पृथ्वी और वस्तु सम्बन्धी प्रत्येक बात से अपने आप को पृथक कर लेता है और किसी दूसरे संसार का आदमी हो

जाता है। सम्पूर्ण हिन्दू समाज का जीवन इसी तरह दो भागों में बँट गया है; कर्म-जीवन और धर्म-जीवन एक दूसरे से इतना भिन्न हो गया है कि दोनों का आपस में कोई सम्बन्ध ही नहीं रह जाता। इष्ट देव का स्मरण करते समय जिन की आँखों से आँसुओं के सच्चे मोती गिरते हैं वही आँसू पोंछने के बाद विषय की गद्दी पर बैठ कर जालसाज़ी करने लगते हैं। केवल हिन्दू समाज ही क्यों? संसार के सब देशों—सब समाजों की जीवन-धारा कमवेश इसी तरह दो भागों में बँट गई है। और कहीं हो चाहे न हो, छिरू के जीवन में यह विभाजन अत्यन्त स्पष्ट है। यह एक विचित्र संघटन है कि आज का छिरू पूजा के अवसर पर व्यभिचारी और पाखण्डी छिरू के भार को ढेल कर बाहर निकल आया है। पाखंडी छिरू को अन्याय या पाप करते समय कोई भय नहीं होता, देव-सेवक छिरू भी उस पाप को धो डालने के लिए व्यग्र नहीं है। उसमें परम-लोक की प्राप्ति के लिए एक निष्ठापूर्ण तपस्या और निश्छल विश्वास ही दीख पड़ता है। दिन और रात जैसे परस्पर विरोधी इन दोनों छिरुओं का कभी आमना-सामना नहीं होता, परन्तु दोनों में कोई विरोध भी नहीं हैं। किन्तु छिरू के दिन अर्थात् जीवन का आलोकपूर्ण अंश शीत-कालीन दिनों की भाँति अल्पायु है।

छिरू ने आज जो व्यवहार किया है उसमें और भी नवीनता थी। छिरू की आज की बातें केवल मीठी ही न थी, उनमें थोड़ा सा बड़प्पन और साधुता भी थी। पिछले दिनों के देव-सेवक

छिरू से भी आज का देव-सेवक छिरू कुछ भिन्न था, कुछ नया था। उत्तेजना के कारण किसी ने इस परिवर्तन पर ध्यान नहीं दिया।

चण्डी मण्डप के सामने वाले रास्ते से पासियों, डोमों और चमारों की लड़कियाँ और लड़के गोल बाँध कर कहीं जा रहे थे। डाक्टर ने पूछा—"कहाँ जा रहे हो रे, तुम सब ?"

"जी घोष महाशय के यहाँ, अन्नपुन्ना का परसाद का लेने बुलाया है।"

'कौन ? छिरू ? छिरूपाल घोष महाशय कब से हो गया ?'

अश्लील भाषा में छिरू को गाली देकर डाक्टर ने कहा—"बड़ा साधू मातवर बन गया है।"

देबू स्तब्ध होकर सोच रहा था।

—ग्यारह—

देबू स्तब्ध होकर बहुत सी बातें सोच रहा था।...

चण्डी मण्डप में ही गाँव की पाठशाला लगती थी, पाठशाला की प्रतिष्ठा के पहले दिन से यह व्यवस्था हुई थी। उन दिनों काली और शिव की नित्य पूजा का प्रबन्ध था और पुजारी ब्राह्मण ही पाठशाला का पंडित होता था। बाद में पुजारी की देवोत्तर भूमि न जाने कैसे गुम हो गई। लोग कहते हैं—ज़मीदार के किसी गुमाश्ते ने देवोत्तर भूमि नाममात्र के लगान पर बंदोबस्त करदी थी और अपनी जोत में मिला ली थी। काम

उसने इतनी सफ़ाई से किया था कि फिर उस भूमि का उद्धार करना भी असंभव हो गया। ज़मीन को काट-कूट कर उसने ऐसा बदल दिया था कि उसे पहचानना तक मुश्किल हो गया था। इसके बाद भी बहुत दिन तक एक ब्राह्मण ग्राम-पुरोहित, देव-सेवा और पाठशाला के अवलम्ब से रहा था, दस वर्ष हुए वह भी कहीं चले जाने के लिए बाध्य हो गया है। शिक्षा-विभाग की नई नियमावली के अनुसार उसे अयोग्य ठहरा कर बरखास्त किया गया और नया प्रबन्ध हुआ। इधर तीन वर्ष से पाठशाला का भार देबू के हाथ में है।

उन दिनों देबू ने भी इसी पाठशाला में पुरोहित-पंडित से पढ़ा था। पंडित पूजा करते—'जयंती मंगला काली'—अकस्मात् मंत्र-पाठ बंद कर देते और चिल्ला कर कहते, ऐ चण्ड तेरा पंजे पिचहत्तर नहीं, पैंसठ, तेरा छके अठहत्तर। समझा—

अनिरुद्ध भी देबू के साथ पढ़ता था। पंडित अनिरुद्ध से कहते—"इस देश के लोहे से बारीक चीज़ें नहीं बनती बेटा, कर्मकार तुम विलायत जाओ। वहाँ कल-कारख़ाने हैं, लोहे से आलपिनें और सुइयाँ बनती हैं। विलायती पंडित ही तुम्हें पढ़ा सकता है—मेरे बस की बात नहीं है।"

छिरू भी देबू की ही जाति में है। सम्बन्ध में वह भतीजा होते हुए भी उमर में बहुत बड़ा है। पहले वह कई दरजे ऊपर पढ़ता था, एक-एक दरजे में दो दो तीन वर्ष विश्राम करने के बाद जब उस ने देबू को अपने सहपाठी के रूप में देखा तब

उसी समय जीवन भर के लिए पाठशाला का मोह त्याग दिया। इसके बाद उस ने विवाह किया, गृहस्थी बना और अपनी विषय-बुद्धि से पाँच गावों को विस्मित कर दिया। आज वह गण्यमान्य व्यक्ति है, गाँव का मातबर आदमी है।

अनिरुद्ध और छिरूपाल ने ही गाँव की सम्पूर्ण शृंखला भंग कर दी है। गिरीश बढ़ई और तारा नाई भी उनके साथ मिल गये हैं, देवू आश्चर्य के साथ सोच रहा था—अनिरुद्ध ने दम्भ के साथ सामाजिक नियम को उपेक्षा कर दी—चण्डी मण्डप से भोग उठा ले गया, परन्तु समाज ने इसका प्रतिकार करने की चेष्टा तक नहीं की। वह स्वयं कई बार लोगों के पास गया है, वे पंडित को प्यार भी करते हैं, कुछ श्रद्धा भी रखते हैं, परन्तु इस क्षेत्र में सब ने एक ही बात कही—"किया क्या जाय? उपाय ही क्या है? तुम से जो हो सके, करो! लेकिन कुछ होगा नहीं। तुम समाज समाज करते हो लेकिन समाज है कहाँ?"

नहीं है—देवू ने स्वयं भी समझ लिया है कि समाज नहीं है। जिन मनुष्यों ने इस समाज की रचना की थी, इस का शासन किया था वैसे मनुष्य ही अब नहीं रहे। आज के मनुष्य हो कुछ दूसरे हैं—मानव के रूप में अमानव।

जगन डाकर ने उस दिन कहा था, "लुहार को पकड़ कर खम्भे से बाँधो और कोड़े लगाओ।

देवू इस प्रस्ताव का समर्थन नहीं कर सका—छिः। मनुष्य

दण्ड देने का अधिकार भी वह मानता है, परन्तु अत्याचार का नाम दण्ड नहीं हो सकता। उसकी अपनी भी कुछ आकांक्षाएँ हैं, परन्तु उनकी पूर्ति करने के लिए वह किसी हीन कौशल या अन्याय-अत्याचार का सहारा नहीं लेना चाहता। उस के अंतर में एक आदर्श-बोध भी है। अध्यनावस्था में अपने भावी जीवन को प्रतिष्ठित करने की कामना के साथ उसने इस आदर्श-बोध का निर्माण किया है। अपने विचारों और अनुभवों को उसने महापुरुषों के उदाहरणों के साथ मिलाया है और तब इस आदर्श की रचना की है। बचपन की कुछ घटनाओं से उसकी कुछ धारणाएँ दृढ़ हो गई हैं। उसकी तटस्थ विचार-बुद्धि से शाणित युक्तियों के आघात भी उन धारणाओं को खण्डित नहीं कर सके।

देबू जमींदार और धनी महाजन से घृणा करता है। उनके प्रत्येक कार्य में अन्याय ढूँढ लेना उसका स्वाभाव बन गया है। उनके उदारतापूर्ण दान-ध्यान और पुण्य-पर्व को भी वह किसी गुप्त गो-हत्या का स्वेच्छाकृत चन्द्रायण प्रायश्चित्त समझता है, और इसकी जड़ में कुछ कारण भी हैं।

एक बार जमींदार ने बाकी लगान वसूल करने के लिए देबू के पिता को दिन भर अपनी कचहरी में बिठा रखा था। बालक देबू तीन चार बार कचहरी गया था और वहाँ खड़ा रोता रहा था। दो बार तो वह जमींदार के सिपाही की डाँट

खाकर लौट आया था, परन्तु तीसरी बार जमींदार ने उसे कैदखाने में बन्द कर देने की धमकी दी थी। कहा था अब यहाँ आया छोकरे तो हवालात मे बन्द करवा दूँगा। सिपाही ने एक अँधेरी कोठरी भी दिखा दी थी। आज देबू समझता है कि जमींदार के पास कैद रखने के लिए स्वर्ग या बैकुण्ठ जैसा कोई स्थान न था। वे छोटे से जमींदार थे और देबू को धमकाने के लिए ही उन्होंने वह बात कही थी, परन्तु तब से देबू ने जमींदार को अत्याचारी मान लिया है और उसकी इस धारणा में अणुमात्र का भी परिवर्तन नही हुआ।

जमींदार का बाकी चुकाने के लिए देबू के पिता ने कंकना के मुखर्जी बाबू से कर्ज़ लिया। वे तीन साल के अन्त में हैण्ड नोट पर दावा करके अस्थावर कुर्क करने का परवाना ले आये और गाय-बैल, लोटा-थाली तथा अन्य वस्तुएँ सड़क पर निकाल कर जमा कर दीं। देबू उस दुर्दशा को अब तक नहीं भूला। इसके बाद बाबू ने डिगरी का रुपया असल मान कर तमस्सुक लिख देने पर अस्थावर सम्पत्ति छोड़ दी थी। वह रुपया पिता की मृत्यु के बाद देबू ने चुकाया है। मुखर्जी ने कभी कोई गैर कानूनी कार्यवाही नहीं की, हिसाब से बाहर एक पैसा भी कभी नहीं लिया। लोग कहते हैं, मुखर्जी जैसा दूसरा महाजन दुनियाँ में नहीं मिल सकता। रुपया वसूल करने के लिए वे जोर-जुलुम नहीं करते, अपमान नहीं करते, ब्याज देते जाओ तो कभी दावा नहीं करते, देनदार की सम्पत्ति

पर लोभ नहीं रखते। नीलाम करवा देने पर भी रुपया दे दिया जाय तो जायदाद वापस कर देते हैं। इन बातों में अतिशयोक्ति नहीं हैं,फिर भी देबू महाजन को क्षमा नहीं कर सकता।

इन सब से बड़ा, एक और कटु अनुभव भी देबू के अन्तर में अक्षय हो रहा है। स्कूल में वह सब से अच्छे दो लड़कों में से एक था। महाग्राम के महामहोपाध्याय न्यायरत्न का पौत्र विश्वनाथ उस से तीन दरजे नीचे पढ़ता था—वह दूसरा अच्छा लड़का था। शिक्षक विश्वास करते थे कि ये दोनों लड़के स्कूल का नाम उज्वल करेंगे। परन्तु देबू को आज भी स्मरण है कि उसे शिक्षकों की स्नेह-पूर्ण करुणा मिलती थी, विश्वनाथ को स्नेह के साथ श्रद्धा और कंकना के बाबुओं का वह लड़का जिसका मेधा मध्यम कोटि में भी न आता था, स्नेहपूर्ण सम्मान ले लेता था। स्कूल के हेड पंडित तो छिरू-पाल की खुशामद करते थे और छिरू के बाप से कभी ताड़ का पेड़, कभी जामुन का पेड़ और क्रिया-कर्म में दस-पन्द्रह सेर मछली माँग लेते थे। घी, चावल, दाल, गुड़ आदि तो उन्हें नियमित उपहार में मिलता ही था।

हेड पंडित के निर्लज्ज लोभ का स्मरण करने पर देबू का शरीर आज भी घृणा से भर जाता है। बीस वर्ष की उमर में छिरू ने स्कूल के पाँचवे दरजे से विदा ली थी। पंडित ने छिरू के बाप से कहा था,—'लड़के को संस्कृत पढ़ाओ चौधरी।'

छिरू के पिता व्रजवल्लभ उद्योगी किसान थे। अपने परि-

पढ़े-लिखे न थे। उनकी इच्छा थी कि मेरा लड़का पण्डित बने। बीस वर्ष की आयु में छिरू जब पशु-स्वभावापन्न हो गया तब उनके संताप की सीमा न रही थी। हेड पंडित की बात सुनकर व्रजबल्लभ ने लड़के को उन्हीं का शिष्य बना दिया। छिरू ने भी पहले आपत्ति नहीं की। पण्डित पढ़ाने के समय कहानियाँ सुनाते थे। वयस्क और विवाहित छात्र को आदि रसाश्रित श्लोकों की व्याख्या समझा कर और ऐसी ही कहानियाँ सुना कर वे चार वर्ष तक नियमित वेतन लेते रहे। चार वर्ष बाद छिरू ने फिर विद्रोह किया। परन्तु छिरू के पिता भी मानने वाले नहीं थे। छिरू ने पण्डित से पिण्ड छुड़ाने के लिए कहा—'संस्कृत पढ़ कर क्या होगा? पढ़ना ही होगा तो अंग्रेज़ी पढ़ूँगा!'

अंग्रेज़ी पढ़ाने वाले गृहशिक्षक ने पण्डित से डबल वेतन माँगा। छिरू ने कहा, 'मैं स्कूल में पढ़ूँगा।' चौबिस वर्ष की उमर में वह फिर पाँचवें में दाखिल हुआ। देबू भी पाँचवीं में पहुँच गया था। हठात् छिरू ने देबू को देखा। देबू के पास ही अनिरुद्ध लुहार बैठा था। स्कूल में पढ़ने का विचार करते समय उसने यह न सोचा था। उसकी कल्पना और ही थी। वह समझता था कि स्कूल जाने के नाम पर वह कंकना या अपने ही गाँव के नीचों की बस्ती में दिन पार कर आवेगा। देबू और अनिरुद्ध को उसी क्लास में देख कर छिरू का सिर चकरा गया—अपना बस्ता उठाकर वह चला आया—घर नहीं

आदर्श गुरु त्रिपुरासिंह के दर्शन किए। जो जीवन का मार्ग दिखाए—वही गुरु, नाना के मालिक त्रिपुरासिंह को ही उसने अपना गुरु मान कर जीवन-यात्रा आरंभ कर दी। किन्तु चौबिस वर्ष की आयु में छिरू जिस दिन क्लास में आकर बैठा था उस दिन भी पण्डित ने कहा था—'खबरदार, छिरू को देख कर कोई हँसे नहीं।' उनके शब्दों में व्यङ्ग नहीं, खातिर थी।···देबू को वह बात आज भी याद है।

स्कूल में सब से अधिक सम्मान का पात्र कंकना के मुखर्जी का मूर्ख लड़का था। तीन-तीन गृहशिक्षकों के होते हुए भी वह किसी विषय में भी चालिस से अधिक नम्बर नहीं ले पाता था। एक बार देबू ने अपने साथियों से हँस कर कहा था—'गधे को पीट-पाट कर घोड़ा नहीं बनाया जा सकता।' बात लड़के ने भी सुन ली और इतना शोर मचाया कि शिक्षक-मण्डली तक काँपने लगी। हेड मास्टर ने देबू को दफ्तर में बुलाकर क्षमा माँगने के लिए बाध्य किया था। एक शिक्षक ने कहा था—'गधा नहीं रे, गधा नहीं,हाथी—हाथी का बच्चा है। गजेन्द्र गमन मंथर ही होता है। आज तेरी समझ में नहीं आता, एक दिन समझ लेगा।"

देबू अब अच्छी तरह समझ रहा है। दो बार फ़ेल होकर, तीसरी बार तीसरी श्रेणी में मैट्रिक पास करने वाला वही लड़का अब डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का मेम्बर है, यूनियन बोर्ड का

प्रेसीडेण्ट और आनरेरी मजिस्ट्रेट है। देबू को हर महीने पाठशाला की सहायता के लिए उसके सामने हाथ फैलाना पड़ता है। छिरूपाल भी अब यूनियन बोर्ड का मेम्बर बन गया है। कभी-कभी वह भी आता है और पूछता है—'क्यों जी, पाठशाला कैसी चल रही है?'

देबू के तन-बदन में आग लग जाती है।...

एक दिन देबू ने एक लड़के की किताब में यह पंक्ति पढ़ी कि "लड़के जो हैं लिखते पढ़ते, गाड़ी घोड़े पर हैं चढ़ते"। देबू ने मोटी कलम से वह पंक्ति काट दी और बोर्ड पर चाक से लिख दिया "लिखते-पढ़ते हैं जो लड़के, महा मान्य होते वे बड़के।"

और फिर वह ईश्वरचन्द्र विद्यासागर की कहानी सुनाने लगा।

\+ + + + + +

देबू कभी-कभी यह भी सोचता कि वह यूनियन बोर्ड का प्रेसीडेण्ट हो जाय तो कितने ही काम करके इस आसन की मर्यादा दिखा दे। वह कल्पना करता कि असंख्य पक्की सड़कें बन गई हैं। हर गाँव से लाल कंकड़ों की एक पक्की सड़क निकली है और सब यूनियन के प्रधान गाँव में एक केन्द्र पर मिल गई हैं—वहाँ से एक बड़ी सड़क जंकसन गई है। उन सड़कों पर अनाज से भरी गाड़ियाँ जा रही हैं, लोग अपनी चीजें बेच कर और रुपये लेकर लौट रहे हैं, लड़के स्कूल जा

रहे हैं। गाँवों के आस-पास के जंगल साफ़ हो गये हैं, गढ़े भर गये हैं—चारों ओर सफ़ाई की चमक है। सर्वत्र फूलों के बीज डाले गये हैं और अब वे खिल रहे हैं। उनके सौन्दर्य और गंध से गाँव प्रफुल्लित हो रहे हैं। प्रत्येक गाँव के प्रत्येक मुहल्ले में एक पक्का कुआँ बन गया है। किसी तालाब में ज़रा सा भी कूड़ा या मैल नहीं है—स्वच्छ जल चमक रहा है। आस-पास फूल खिले हैं। पंचायतों में अन्याय और अत्याचार के लिए दण्ड दिया जा रहा है, उत्पीड़न और विचार को कठोर हस्त से दबाया जा रहा है।···सुयोग मिले तो वह इन सब बातों को संभव कर सकता है, सुयोग मिले तो वह प्रमाणित कर सकता है कि स्थूलकाय और मंथर गति वाला चतुष्पद हाथी नहीं है, सोने से बँधे हुए खुरों वाला गधा है।

ईर्षा की उत्तेजना और कर्म की प्रेरणा से अधीर होकर देबू खड़ा हो जाता है। तीव्रगति से टहलता है, कभी हाथ तान कर, मुट्ठी बाँध कर और पेशी फुला कर देखता है। जैसे वह सम्पूर्ण शरीर में शक्ति का आंदोलन अनुभव कर रहा है।

देबू की पत्नी सरल तरुणी है। गौर वर्ण, सुडौल नासा और अत्यन्त कोमल मुख—आँखों की मधुरतर दृष्टि, ठिगना आकार, पीठ पर बालों का ढेर—सरल और सुन्दर मन! देबू—जैसे व्यक्तित्व-सम्पन्न पति के संस्रव में आ कर उसने अपने आप को सर्वथा विलीन कर दिया है। देबू की ऐसी मूर्ति देख कर वह विस्मय के साथ पूछती है—"पर यह क्या हो रहा है—अपने

आप क्या—!"

देबू हँसकर कहता—"सोचता हूँ यदि मैं राजा होता !"

"राजा होते !"

"हाँ। तो तुम रानी होतीं।"

"सच ?" उसके आश्चर्य की सीमा नहीं रहती।

"परन्तु तुम्हें गहने न मिलते।"

अभिभूत वधू स्तब्ध हो जाती।

देबू हँस कर कहता—"इस राजा का राज्य तो है, परन्तु खजाना नहीं मिलता। यूनियन बोर्ड का प्रेसीडेंट समझीं ?"

× × × ×

देबू ने कई बार चेष्टा करने के बाद अनुभव किया है कि अंतर की शुभ आकांक्षाएँ और कल्पनाएँ संसार में यों ही पूरी नहीं होतीं—पारिपार्श्विक अवस्था ही सबसे बड़ी शक्ति है। उसने देखा है कि शीतकाल की वर्षा से धान की फसल ही नष्ट हो जाती है। एक बार वर्षा में उसने ऊँची भूमि देख कर आलू बोए थे, परन्तु बीज अंकुरित भी न हुए। जो दो-चार पेड़ निकले उनमें लगे आलू मटर की फली के बराबर थे। इसी लिए अपनी आशाओं और आकाँक्षाओं को हृदय में रुद्ध रख कर वह चुपचाप पाठशाला का काम करता है और गाँव के उस भावी रूप को जो उसकी आँखों में है गर्भ के भ्रूण की भाँति पालता रहता है। गाँव के छोटे मोटे आँदोलनों से वह अपने आप को पृथक रखने की पूरी चेष्टा करता है, परन्तु चेष्टा

व्यर्थ हो जाती है और उसकी आकांक्षा-कल्पना किसी आंदोलन की उत्तेजना पाते ही उछल कर बाहर आ जाती है।

गाँव के झगड़े-झंझट और त्रुटियाँ तथा विशृंखलाएँ उसके नखदर्पण में हैं। गाँव के सामाजिक इतिहास को उसने आविष्कार की भाँति संग्रह किया है। देवू से अधिक कोई भी यह नहीं जानता कि गाँव के लुहार, बढ़ई, नाई, पुरोहित, दाई, चौकीदार और धोबी आदि का क्या काम है, उन्हें क्या मिलता है और उनकी चाकरान भूमि कहाँ है। गत पाँच वर्षों में गाँव की पंचायतों ने जो कुछ भी किया है वह उसे कण्ठस्थ है।

चण्डी मण्डप की पाठशाला में पढ़ाते समय देवू घोष चण्डी मण्डप की चिंता भी करता है। यह चण्डी मण्डप एक दिन गाँव का हृदय—जीवन-शक्ति का केन्द्र था। पूजा-पर्व, आनन्द-उत्सव, अन्नप्राशन, विवाह, श्राद्ध—सब यहीं होते थे। गाँव में अन्याय, अविचार, उत्पीड़न, विशृंखला, व्यभिचार और पाप आदि की झलक मिलते ही इसी मण्डप में पंचायत बैठती थी। यहीं विचार होता था और शासन द्वारा वह सब दूर किया जाता था। गाँव के ठीक मध्य में बने इस मण्डप से जो पुकार उठती थी उसकी प्रति-ध्वनि प्रत्येक घर में सुन पड़ती थी—इस ध्वनि की उपेक्षा करने का साहस किसी में भी न था। उसे आज भी याद है कि मण्डप के सामने से कोई कितनी ही बार क्यों न निकले, हर बार प्रणाम करता था। अब मनुष्य प्रणाम

भी नहीं करते। कभी-कभी उसे जान पड़ता कि देवता की—ईश्वर की उपेक्षा करने से ही यह स्थिति हो गई है। देबू नित्य नियमित तीन बार प्रणाम करता है। स्वयं आचरण करके वह दूसरों को भी कर्म का पाठ पढ़ाना चाहता है।

नास्तिकता के परिणाम की एक और घटना ने भी देबू के मन पर प्रभाव डाला है। घटना उसके जीवन में ही हुई थी परन्तु वह बहुत छोटा था, इसलिए बात सुनी-सुनाई है। देबू का बाल-बन्धु विश्वनाथ महाग्राम के महामहोपाध्याय न्यायरत्न का पौत्र है। कहानी विश्वनाथ के पिता पण्डित शशिशेखर से सम्बन्ध रखती है। शशिशेखर ने अपने पिता ऋषि-तुल्य न्याय-रत्न की असहमति से अंग्रेजी पढ़ी थी और नास्तिक हो गये थे। ब्राह्मण सभा के अधिवेशन में वही प्रधान उद्योग कर्ता थे। उन्होंने अधिवेशन के प्रारंभ में नारायण की शिला रख कर अर्चना नहीं की, न्यायरत्न ने इसका प्रतिवाद किया। नास्तिक शशिशेखर ने इस बात पर पिता के साथ नास्तिकवाद की युक्तियों के अनुसार तर्क किया। सभा भग हो गई, यही नहीं उद्भ्रांत शशिशेखर ने रेल के नीचे कटकर आत्महत्या भी कर ली। देबू को इस घटना में कर्मफल का अनिवार्य विधान दीख पड़ता है। देबू को इससे भी अधिक यह बात दुखी करती है कि पिता की परिणति जानते हुए भी न्यायरत्न का पौत्र विश्व-नाथ नास्तिक हो गया है। वह कलकत्ते में एम. ए. में पढ़ता है। जब आता है तब देबू से भेंट करता है! उमर में वह देबू

से पाँच-छः वर्ष छोटा है। स्कूल में दोनों की घनिष्ट मैत्री थी। तब विश्वनाथ देबू को देबू दादा कहता था। उमर के साथ देबू को अपने और विश्वनाथ के बीच का अंतर भी ज्ञात हुआ। उसने कहा, 'तुम मुझे दादा न कहा करो, मुझे पाप लगेगा।' विशु ने उसे देबू भाई कहना आरंभ किया। अब भी वे दोनों मित्र हैं—सच्चे मित्र। दोनों ने अपने बीच बड़प्पन के तीखे काँटे का कभी अनुभव नहीं किया। विश्वनाथ संध्या-पूजा नहीं करता, चण्डी मंडप में आकर भी देवता को प्रणाम नहीं करता।

देबू ने कुछ दिन पहले विश्वनाथ से चण्डी मण्डप की चर्चा की थी, उसने पूछा था कि इसका गत गौरव फिर कैसे स्थापित किया जाय। विश्वनाथ ने हँसकर कहा था—"वह अब नहीं लौट सकता, देबू भाई। चण्डी-मण्डप बूढ़ा हो गया है—अब यह मरेगा।"

"बूढ़ा हो गया है—मरेगा—अर्थात् ?"

"अर्थात्, उमर बढ़ते ही आदमी बूढ़ा होता है, यह मण्डप भी तो बहुत पुराना हो गया है, बूढ़ा न होगा ?"

छत और लकड़ियों की ओर देख कर देबू ने कहा था, "तुम्हारा मतलब यह है कि इसे तोड़ कर नया बनाया जाय ?"

विश्वनाथ हँसा था, बोला था—"रंगीन और छोटी फ्राक पहना देने से ही बूढ़ी बच्ची नहीं हो सकती। इस युग में चण्डी मण्डप नहीं टिक सकता—कोआपरेटिव बैंक खोल सकते हो ?

इसी मण्डप में बैंक चालू कर दो— आदमियों को भीड़ लगी रहेगी, लोग धरना देंगे—धरना।"

विश्वनाथ ने युक्तियों और तर्कों से देबू को समझाने की चेष्टा की थी कि रुपया ही सब कुछ है। पुरानी धर्म-सम्मत सामाजिक व्यवस्था की जड़ में भी सूक्ष्म कौशल के साथ धन ही बिठाया गया था। जड़ के रुपये का वह भण्डार आज खाली हो गया है, इसीलिए यह दशा है।"

देबू ने बार बार प्रतिवाद किया था—"नहीं, नहीं।"

विश्वनाथ हँसा था।

देबू ने मीठे स्वर में कहा था, "छिः छिः विशू भाई, तुम महा-महोपाध्यायजी के नाती हो, तुम्हारे मुँह से ये बातें अच्छी नहीं लगतीं। तुम्हें प्रायश्चित्त करना चाहिए।"

विश्वनाथ ने कुछ देर और हँस कर अंत में कहा था, "कुछ पुस्तकें मैं दूँगा—तुम पढ़ कर देखना!"

"नहीं, ऐसी पुस्तकें छूना भी पाप है। तुम न भेजना भाई।"

देबू अपने संस्कारों को प्राणपण से पकड़े है। उन्हीं को वह फिर प्रतिष्ठित करना चाहता है। इसीलिए नवान्न के दिन अनिरुद्ध को मण्डप में पूजा के अधिकार से वंचित करके सामाजिक दण्ड देने के लिए वह जगन डाक्टर के साथ खड़ा हुआ था। परन्तु आश्चर्य की बात यह है कि किसी ने प्रतिवाद भी नहीं किया और साथ आ कर खड़ा भी नहीं हुआ। अनिरुद्ध बिना किसी संकोच के पूजा का थाल उठा कर चला

गया। अनिरुद्ध के पिता और पितामह ऐसा न कर सकते थे

देबू मार्ग भूले पथिक की भाँति कई दिन से बराबर सोच रहा है। कभी-कभी वह समझता है कि एक दिन देवता अपनी महिमा जाग्रत कर अन्याय का ध्वंस कर देंगे, न्याय फिर प्रतिष्ठित होगा। शास्त्र-वाक्य उसे याद आते हैं, परन्तु आश्चर्य की बात यह है कि थोड़ी देर बाद वह फिर निराशा से जकड़ जाता है।

पातू चमार उसी दिन की प्रतीक्षा में जीवित है। इसी सहारे से वह दुःख और कष्ट का गुरु बोझ सहन कर रहा है। परन्तु देबू से तो उसकी तरह रहा नहीं जाता!

\+ + + +

छात्रों को छुट्टी देने के बाद भी देबू मण्डप में ही बैठा था और यही सब बातें सोच रहा था। रास्ते से किसी ने बुलाया—"पंडित जी!"

"कौन?"

"अरे बाप रे। बैठे-बैठे ऐसा क्या सोच रहे हो?" दुर्गा चमारिन दूध बेचने जा रही थी, उसी ने पूछा।

भ्रू-कुंचित कर देबू ने कहा—"तुझे क्या करना है—अपना काम देख!"

दुर्गा को देबू जरा भी पसन्द नहीं करता। वह स्वैरिणी है—भ्रष्टा है—पापिनी है, विशेषतः छिरूपाल के साथ घनिष्ट रूप में जड़ित है। वह उससे घृणा करता है।

दुर्गा हँस कर बोली—"मुझे कुछ नहीं, जो कुछ है तुम्हारी बहू को। बेचारी बिलू दीदी रास्ते पर आँखें बिछाए खड़ी है।"

"ओह!" देबू को होश आया, वह झटपट उठा। "बड़ी देर हो गई।" जल्दी जल्दी पैर बढ़ा कर घर पहुँचा। बहू बेचारी बोली—"रसोई बन गई है। नहा डालो!" देबू के जीवन में यह एक परम सम्पदा है। उसके घर में कोई द्वन्द्व नहीं है, अशांति नहीं है। शायद इसीलिए गाँव भर के झगड़े-झंझटों में उलझने से भी वह नहीं थकता।

देबू के चले जाने पर भी दुर्गा वहीं खड़ी रही, और देबू जिस रास्ते से गया था, उसकी ओर देखती रही; पंडित उसे अच्छा लगता है—बहुत अच्छा लगता है। छिरू से वह अब घृणा करती है—यह तो उसने किसी से नहीं कहा कि छिरू ने ही आग लगाई थी, परन्तु उससे अपना सम्बन्ध तोड़ लिया है। जब छिरू के साथ उसकी गहरी छनती थी—तब भी पंडित उसे अच्छा लगता था, छिरू की अपेक्षा भी अच्छा लगता था। परन्तु दोनों के बीच कोई द्वन्द्व न था। आज दुर्गा को पंडित पहले से भी अधिक अच्छा लगा।

—बारह—

अगहन की संक्रांति पर इतुलक्ष्मी पर्व आगया।

बंगाल के विशेष भागों में इतु या मित्र व्रत कार्तिक संक्रांति से आरंभ होता है और अगहन की संक्रांति पर समाप्त हो जाता है। रबी शस्य की कल्याण-कामना में सूर्यदेव की उपासना से

ही व्रत का उद्भव हुआ है ! देबू आदि के प्रदेश में महीने भर तक रवि-देव की आराधना नहीं होती। इधर रबी की खेती भी अधिक नहीं की जाती ; धान की खेती वहाँ प्रमुख रहती है। इतु-पर्व को यहाँ ईतु-लक्ष्मी कहा जाता है और हेमंती धान की मड़ाई (दांव चलाना) के शुभ प्रारंभ का उत्सव है। किसान अपने-अपने खलिहान में उनका अनुष्ठान करते हैं। खलिहान के बीच में बाँस का एक मज़बूत खूँटा गाड़ा जाता है और उसके आस-पास चौक पूर कर लक्ष्मीजी की पूजा की जाती है। मड़ाई के समय इसी खूँटे के आस-पास पुआल सहित धान बिछा दिए जाते हैं, बैल या भैंसे इसी खूँटे के इर्द गिर्द चक्कर लगाते हैं। उनके पैरों की दाब से धान पुआल से अलग हो जाते हैं।

इस पर्व के साथ चण्डी मण्डप का विशेष सम्बन्ध नहीं है ! फिर भी स्त्रियाँ प्रातःकाल स्नान करने के बाद चण्डी-मण्डप में प्रणाम किए बिना लक्ष्मी का चौक नहीं पूरतीं। पहले सम्बन्ध कुछ और घनिष्ठ था। देबू को याद है, पन्द्रह वर्ष पहले लक्ष्मी पूजा समाप्त करने के बाद स्त्रियाँ हाथ में सुपारी लेकर चण्डी-मण्डप में एकत्रित होती थीं और व्रत की कथा सुनती थीं। गाँव की कोई प्रवीणा कथा सुनाती थी ! अब यह प्रथा उठ गई है। अब दो-तीन घरों की स्त्रियाँ किसी एक घर में एकत्रित होकर कथा सुन लेती हैं। देबू के घर में भी एक महफ़िल जमती है।···पाठशाला में पढ़ाते समय देबू आज यही बातें सोच रहा है। उस दिन से देबू की क्षुब्ध और आहत प्रेरणा-

शक्ति उसे निरन्तर पीड़ित करती है। वह किसी अवसर का अवलम्बन लेकर फिर खड़ा होना चाहता है। जगत डाक्टर के साथ का सम्बन्ध स्वाभाविक नियम के कारण फिर शिथिल हो गया है। दरख्वास्त करने वे मार्ग को देवू हृदय से ग्रहण नहीं कर सका। दरख्वास्त को चर्चा से ही उसे हँसी आती है, अंतर में आग लग जाती है।

देवू साहित्य पढ़ा रहा था—

"अट्टालिका नहीं मेरे दास दासियाँ भी नहीं,
चिंता नहीं, इस सुख का प्रयासी भी नहीं,
छोटे से घर में उदार पूर्ण मन के साथ
अपने ही दुख का अन्न खाऊँ मैं सुखी हो।
दूसरे के संचित धन से धनवान बन
जीवित रह सकूँगा क्या पशु के समान मैं ?"

सहसा देवू ने देखा कि एक दीर्घांगी अवगुण्ठनवती तरुणी रास्ते से ही चण्डी-मण्डप के देवता को प्रणाम कर रही है। मण्डप में शायद वह जान बूझ कर नहीं आई, कारण कि उसकी चाल में व्यस्तता का कोई चिह्न नहीं दीख पड़ा! देवू ने उसे पहचाना, अनिरुद्ध की स्त्री है। वह समझ गया कि नवान्न की घटना के कारण ही वह मण्डप में नहीं आई। देवू उदास हो गया। अनिरुद्ध की स्त्री को चुपचाप रास्ते से ही प्रणाम करके जाते देख कर उसे ऐसा जान पड़ा कि उसकी प्रत्येक भंगिमा रुद्ध वेदना से व्यथित और उदास है। वह अकेली ही आई

और अकेली ही चली गई, जैसे कह गई—क्या केवल हमीं दोषी हैं ? ··अनिरुद्ध की स्त्री जिधर गई थी देवू उसी तरफ़ देखता रहा, उसके धीर पदक्षेप देवू को क्लांत जान पड़े। वह एक लम्बी साँस लिए बिना न रह सका। काम सचमुच बुरा हो गया है। देवू की विचार-बुद्धि ने अपनी भूल मान ली। अनिरुद्ध के अन्याय की अपेक्षा गाँव वालों ने उसके साथ अधिक अन्याय किया है ! धान न मिलने पर ही तो अनिरुद्ध ने काम बंद किया है ! पंचायत में पहले छिरू ने अपमान किया तब अनिरुद्ध उठा था। अनिरुद्ध के धान काट लेने का प्रतिकार जब कोई नहीं कर सका, तब उसे दण्ड देने का अधिकार कैसे हो सकता है ? अकस्मात् वह चौंका, उसकी विचार-धारा में बाधा पड़ी।···यह क्या ! अनिरुद्ध की स्त्री मेरे घर की ओर क्यों जा रही है ?

पाठशाला के छात्रों ने पण्डित की स्तब्धता का अवकाश पाकर खुस-फुस करना आरंभ कर दिया था। एक लड़के ने कहा—'आज इतुलद्दमी है, मास्टरजी। आज तो हाफ़ स्कूल है। नौ बज गये हैं घड़ी में।'

देवू के सामने एक टाइमपीस रहती है। घड़ी की ओर देख कर उसने फिर पढ़ाना आरम्भ किया—

"शैशव से सीखा है काम जो खेतों में,
गर्व है—गौरव मुझे, इसमें है लाज कैसी ?"

धीरे-धीरे कविता पूरी करने के बाद देवू ने कहा—"कल

इस पद्य के अर्थ लिख लाना। शब्दों के अर्थ नहीं—तुम क्या समझे हो यह लिखना।"

विद्यार्थियों को छुट्टी देकर देबू सीधा घर गया। घर के आँगन में देबू की स्त्री के सामने पद्म बैठी है और कुछ दूर पर दुर्गा; देबू की पत्नी इतुलक्ष्मी की कथा सुना रही है। देबू की पत्नी बहुत अच्छी कथा कहती है, मुहल्ले की स्त्रियाँ यहीं कथा सुनती हैं। वह बैठक शायद समाप्त हो गई है, यह दूसरी बैठक है। पद्म देबू के बच्चे को गोद में लिए है, देबू को देखकर उसने घूँघट खींच लिया। देबू की पत्नी ने भी थोड़ा सा घूंघट खींचा और मुस्कराई। दुर्गा कपड़े सँभाल कर ज़रा विन्यास के साथ बैठी। उसके मुख पर भी मृदु-मुस्कान झलकी। परन्तु देबू के मन की अवस्था इस ओर ध्यान देने योग्य न थी। उसकी स्त्री अच्छी कथा कहती है—मुहल्ले की सब स्त्रियाँ सुनने आती हैं, परन्तु आज लुहारिन का आना जितना अस्वाभाविक है उतना ही आश्चर्यजनक।

नवान्न के दिन देबू ने इसी लुहारिन से पूजा का भोग वापस ले जाने के लिए कहा था। अभी-अभी यह चण्डी-मण्डप के देवता को रास्ते से ही प्रमाण कर आई है, मण्डप में नहीं गई और देबू के घर में ही व्रत-कथा सुनने आ गई है,—बात वास्तव में विस्मयोत्पादक है। देबू ठिठक कर खड़ा हुआ। पद्म से पूछने का उपाय न था, इसलिए दुर्गा से पूछा—"क्यों री दुर्गा?"

दुर्गा की मंद मुस्कान विकसित हो गई, हँसकर बोली—"दीदी से कथा सुनने आई हूँ। ऐसी कथा कोई और नहीं कह सकता—आखिर पंडित की पत्नी हैं।"

देबू की भौंहें चढ़ गईं—'दीदी ?' उसे चोट सी लगी।

"हाँ जी, दीदी ! इनको मैंने दीदी बना लिया है, तुम मेरे जीजा हुए !"

देबू के तन-बदन में आग लग गई। कठोर स्वर में वह बोला—"यानी ? ये तेरी दीदी कैसे हो गई ?"

दोनों आँखें फैला कर दुर्गा बोली—"ए लो! तुम्हारी ससुराल में ही तो मेरे मामा रहते हैं ! मामा दीदी के बाप के यहाँ पले हैं—पुराने नौकर हैं। दीदी मामा को काका कहती हैं, ये मेरी दीदी नहीं हुईं ?"

अच्छा न लगने पर भी देबू को प्रसंग के सम्बन्ध में चुप होना पड़ा। बोला "हुँ।" फिर स्त्री से पूँछा—"ये अपने कर्मकार यानी अनिरुद्ध की स्त्री है न ?"

पद्म ने लम्बा घूँघट और भी लम्बा कर लिया। देबू की स्त्री ने धीमे स्वर में कहा—"हाँ।"

दुर्गा साथ ही साथ कहने लगी—"लुहारिन ने कथा ही न सुनी थी। मैं इनके घर गई तो देखा कि गुम-सुम बैठी हैं। उस मुहल्ले की कथा पाल के घर में—छिरूपाल के घर में होती है। लुहारिन उनके घर नहीं जाती, मैंने कहा, चलो, मेरी दीदी के घर चलो।"

देबू चुप रहा।

दुर्गा बोली—'लुहारिन डरती थी कि पंडित जी नाराज न हो जायँ—उस दिन चण्डी मण्डप में तुमने कुछ कहा था।"

देबू ने बीच में ही रोका—"अनिरुद्ध ने महा अन्याय किया है।"

अकुण्ठित स्वर में उलाहना देती हुई दुर्गा बोली—"तुम्हारे जैसे आदमी के योग्य बात नहीं हुई पंडित। अन्याय क्या सिर्फ कर्मकार ने किया है? तुम खुद सोचो!"

देबू कुछ देर चुप रहा फिर बोला—"हाँ, यह तो ठीक है! मुझ से थोड़ी सी भूल हो गई थी।" अवसर पाकर दुर्गा के निकट ही अपनी भूल मान कर देबू ने मन का भार कुछ हलका कर लिया।

देबू की स्त्री ने दबे गले से व्यस्त स्वर में कहा, "रो न बहन, लुहारिन, रो न!"

उसने देखा था कि लुहारिन घूँघट में ही बार-बार आँखें पोंछ रही है।

देबू ने व्यस्त होकर कहा—"नहीं तुम क्यों रोती हो? अनिरुद्ध मेरा बचपन का साथी है, पाठशाला में एक साथ पढ़े हैं। उससे कहना—मैं आऊँगा—मैं स्वयं आऊँगा।"

दुर्गा पद्म को लक्ष्य कर बोली—"मैंने तुम से कहा था न लुहारिन, उसी जगन डाक्टर के फेर में पड़ कर जीजा ने यह काम किया है।"

"नहीं, नहीं, बेकार किसी को दोष न दे, दुर्गा! भूल—भूल तो मुझ से ही हुई थी!" आन्तरिकतापूर्ण स्वर में उसने ऐसी स्पष्ट स्वीकारोक्ति की कि दुर्गा भी स्तब्ध हो गई।

देबू ही फिर बोला—"अरे, लुहारिन को जलपान करा कर जाने देना।"

"और मुझे?" दुर्गा झंकार के साथ बोली—"मैं ऐसी ही चली जाऊँ? अच्छे जीजा हो मेरे।"

स्वैरिणी दुर्गा के बात करने का ढंग, आत्मीयता के सुर का माधुर्य ऐसा चित्ताकर्षक है कि गुस्सा आ ही नहीं सकता। उसकी बात से देबू की बहू हँसी, पद्म हँसी, देबू भी हँसे बिना न रह सका। वह हँस कर ही बोला—"तेरी चिंता करना मेरा काम नहीं है, तेरी दीदी सोचेगी। अपने आदमी के रहते दूसरे का आदर कहीं अच्छा लगता है!"

"असल से ब्याज अधिक प्यारा होता है, दीदी की अपेक्षा दीदी के दूल्हा का आदर मीठा होगा, लेकिन मेरी किस्मत!"

देबू हँस कर ही बोला—"चल, फिजूलियात रहने दे, अब कथा सुन।" भारमुक्त हृदय लेकर वह कमरे में चला गया।

\+ + + +

'दरिद्र ब्राह्मण को पिठा* खाने की इच्छा हुई है।"

देबू की स्त्री व्रत की कथा कह रही है। ब्राह्मण सोचते-

---

* बंगाली मिठाई।

चावल के पिठा, उरद के पिठा, मूँग के पिठा, गरी के पिठा, आलू के पिठा—सोचते और उनकी जीभ में पानी आता।"

कमरे में बैठा देबू मन में ही हँसा। पानी उसकी जीभ में भी आ रहा है। शायद कथा कहने वाली पण्डिताइन और श्रोताओं की जीभ भी सजल हो आई है।

"परन्तु इच्छा से ही तो काम नहीं बनता, सामर्थ्य भी चाहिए। दरिद्र ब्राह्मण, उनके पास न ज़मीन है, न खेती, न नौकरी है, न जजमानी—आज खाते हैं तो कल की चिंता लगी रहती है। उरद, मूँग, नारियल, गुड़ और आलू कहाँ से आयें? ब्राह्मण हैं, चोरी भी नहीं कर सकते!"

देबू ब्राह्मण की साधुता पर प्रसन्न हुआ।

"किन्तु ब्राह्मण की बुद्धि! उन्होंने एक तरकीब सोची, अगहन का महीना बीत रहा था। गृहस्थों की गाड़ियाँ खेतों से धान ला रही थीं, उरद और मूँग ला रही थीं, गुड़ ला रही थीं, आलू ला रही थी। गाड़ियों के पहियों की रगड़ से रास्ते में धूल का ढेर जम गया था। ब्राह्मण ने संध्या के बाद अपने घर के सामने रास्ते में एक गड्ढा खोदा और उसे पानी से भर दिया। सबेरे जो गाड़ी आती वह कीचड़ के गड्ढे में फँस जाती। ब्राह्मण गाड़ी निकालने में सहायता करते और बदले में धान की गाड़ी से धान, उरद की गाड़ी से उरद, आलू की गाड़ी से आलू और गुड़ की गाड़ी से गुड़ लेते। इसी तरह धान, उरद, गुड़, मूँग और आलू इकट्ठा कर लिए और घर में

लाकर ब्रह्मणी से बोले, बनाओ मिठाई !"

देबू खिलखिला कर हँसा। ब्राह्मण की बुद्धि पर वह मुग्ध हो गया। देबू के अट्टहास से कथा में बाधा पड़ी। बाहर से दुर्गा ने पूछा—"पंडितजी, हँसते क्यों हैं आप ?"

देबू ने कमरे से बाहर निकल कर कहा—"ब्राह्मण की बुद्धि पर।"

देबू की स्त्री ने मुस्कराकर घूँघट ज़रा सा बढ़ाकर कहा—"कथा तो समाप्त करने दो।"

"अच्छा-अच्छा।" कहते-कहते देबू बाहर चला गया।

\+ + + + + + +

संतुष्ट और स्वस्थ मन के साथ देबू रास्ते के किनारे खड़ा हुआ। किसानों के जलपान का समय हो गया है, वे खेतों से घर लौट रहे हैं। मजूर खेतों में ही पानी पीते हैं, स्त्रियाँ उनके लिए जलपान लिए जा रही हैं। उनके सिर पर अँगौछे से बँधा बरतन है, बग़ल में टोकरी और हाथ में पानी से भरा लोटा। मरदों को जलपान देकर वे खेतों में धान की बालियाँ बिनेंगी या जंगल से सूखी लकड़ियाँ इकट्ठा करेंगी।

खेतों से दो-चार गाड़ियाँ आ रही हैं। अगहन की संक्रांति है—गाँव के कच्चे रास्ते अभी धूल से भर गये हैं। हेमन्त के इन अंतिम दिनों में धूप का रंग वृद्ध के पीले शरीर की भाँति पीताभ हो रहा है। गाड़ियों के आवागमन ने इस धूप को भी धूल से धूसर कर दिया है। षष्ठीतला वाले बूढ़े

बफुल के गहरे हरे पत्तों पर भी धूलि का परत चढ़ गया है। देबू फिर चण्डी मण्डप पहुँचा, जैसे इस स्थान के साथ उसका एक गहरा सम्बन्ध है।

"अरे, पाठशाला में छुट्टी हो गई ? गुल-गपाड़ा नहीं सुन पड़ता ?" रास्ते से जरा-जीर्ण नारी कण्ठ ने पूछा।

"आओ, आओ, दादी ! आज इतु-लक्ष्मी है न, जल्दी छुट्टी हो गई है।" देबू ने उसे कण्ठ की कुछ अस्वाभाविक ऊँचाई के साथ बुलाया।

दादी गाँव भर की दादी है; प्रवीण उसे चाची कहते हैं। बदन में तेल लगाये और हाथ में झाड़ू लिए वह चण्डी मण्डप पर चढ़ी। बूढ़ी इसी गाँव की लड़की और संतानहीना है, संतानहीना ही नहीं, उसका अपना कहा जा सकने वाला कोई भी नहीं है। आँखों से वह अच्छी तरह देख नहीं पाती, और कानों से कम सुनती है। परन्तु शरीर में काफ़ी सामर्थ्य है। सत्तर से अधिक आयु हो गई है फिर भी मज़े में चलती फिरती है। कुछ लोग इसे 'राँगा दादी' कहते हैं और यह निरर्थक भी नहीं है। इसके शरीर का वर्ण अब तक गौर है और उसमें चिकनाई भी है। लोग कहते हैं, बूढ़ी ने तेल और हलदी मल कर अपना बदन पक्का कर लिया है। दिन भर वह लगभग एक पाव तेल बदन में मलती है, कभी-कभी हल्दी भी मिला लेती है। वह कहती है—"तुम साबुन मलते हो, मैं हल्दी न मलूँ ?" स्नान करने से पहले बूढ़ी चण्डी मण्डप में झाड़ू

लगा जाती है। यह उसका नित्य कर्म है।

"इतु लक्ष्मी का हाफ स्कूल था? अच्छा किया।" बूढ़ी ने तुरंत झाड़ू लगाना आरंभ कर दिया।—"इस मण्डप में कितने जलसे देखे हैं, कितने गाने सुने हैं, नीलकण्ठ नटवर, योगीन्द सब आते थे, यात्राओं के बड़े बड़े दल आते थे, कीर्त्तन-पंचाली जाने क्या क्या होता था! तुम क्या देखोगे? वो राम भी नहीं रहे, वह अजुध्धा भी नहीं रही। चण्डी मण्डप लीपने के लिए एक आदमी नौकर रहता था—मण्डप दिन रात चमकता था।"

बूढ़ी अपनी तरंग में कहती जा रही है। उस के जीवन में समारोहों की जितनी भी सुखद स्मृतियाँ हैं, वे सब इसी स्थान से प्राप्त हुई हैं, यहाँ आते ही वे सब याद आ जाती हैं, और वह प्रति दिन यही बातें करती है।—बड़ी बड़ी पंचायतें होती थीं, गाँव के मातबर जमा होते थे, विचार किया जाता था, भले-बुरे की सलाह होती थी, लेकिन तब औरतों को घर से बाहर पैर रखने की भी जुगाड़ न रह जाती थी। बाप रे बाप चौधरी, ऐसा डाँटते थे कि क्या कहूँ?"

देबू ने एक लम्बी साँस लेकर कहा—"तुम न रहोगी दादी तो चण्डी मण्डप में झाड़ू भी न लगेगी।"

बूढ़ी के हाथ की झाड़ू कुछ देर के लिए रुक गई, वह उदास कण्ठ से बोली—"माँ काली और बाबा शिव अपने काम की खुद व्यवस्था कर लेंगे भाई!"

कुछ देर चुप रह कर बूढ़ी ने कहा—"मरने लगूँ तो तुम उठा-उठू कर यहाँ लिटा देना भाई।"

देबू बोला—"लिटा दूँगा, किंतु तुम अपने गड़े रुपयों में से कुछ मुझे दे जाना—मण्डप की मरम्मत करवा दूँगा।"

और किसी ने यह बात कही होती तो बूढ़ी कोई कसर बाकी न रखती। पहले उसे गालियाँ देती, फिर रोने बैठ जाती, परन्तु देबू जैसे गाँव के अन्य व्यक्तियों से भिन्न है। बूढ़ी ने उसे गालियाँ नहीं दीं, कहा—"हाँ बेटा, तुम भी ऐसी बात कहते हो, भाई? गोबर उठाकर, कंडे बेचकर और दूध देकर एक बार पेट ही भरा जाता है कि रुपये जमा किए जाते हैं? तुम खुद सोचो?"

बूढ़ी यथासाध्य द्रुत गति से झाड़ू देने लगी। रुपये की चर्चा वह बढ़ाना नहीं चाहती। रुपयों की चर्चा सुनकर उसे डर लगता है कि कहीं कोई रात को उस का गला न दबा दे। बूढ़ी के पास रुपये कुछ अवश्य हैं—वे उस ने मिट्टी के नीचे दो तीन जगह गाड़ रखे हैं। आठ दस बीसी और पाँच रुपये हैं।

× × × ×

गाँव के उत्तेजनाहीन जीवन की गति भी मंथर रहती है। रास्ते में अभी से मनुष्यों का आवागमन विरल हो गया है।—खेतों से धान लाने वाली दो एक गाड़ियाँ ही आ-जा रही हैं। इन्हीं का एकांगी और करुण जान पड़ने वाला स्वर

सुन पड़ रहा है। देबू भी अलस भाव से चण्डी मण्डप में बैठा है। पौष बोता खेतों से धान घर पहुँचे कि गाड़ियों का आना जाना भी बन्द हो जायगा ! देबू को याद आया कि उस बार विशू भाई ने एक बात कही थी। विश्वनाथ ने कहा था—"हमारे गाँवों की बैलगाड़ी पर चढ़ने वाली जीवन-धारा नहीं बदली, इसीलिए हम लोग इतने पीछे रह गये हैं और जीवन की गति ही शिथिल हो गई है। दूसरे देशों में खेती में मशीनी हल लगते हैं—मोटर ट्रैक्टर।"

देबू बिश्वनाथ की बात नहीं मानता, परन्तु यह भी झूठ नहीं है कि यहाँ जीवन-यात्रा बैल गाड़ी पर ही रहती है, उन पहियों के कों-कों शब्द की भाँति कराहते-कराहते ढीली-मद्धिम चाल से किसी तरह लुढ़क रही है।

भूपाल चौकीदार ने आकर प्रणाम किया और खड़ा हो गया।–'पनाम पंडित जी !' भूपाल के पीछे एक घूँघटवाली स्त्री है, उस के हाथ में एक हाँडी है।

देबू ने अन्यमनस्क की भाँति मुस्करा कर कहा—'भूपाल?'

'जी हाँ, मैंने कहा—चण्डी मण्डप लीप पोत जाऊँ। ले री, ले उधर से शुरू कर दे।'

स्त्री के हाथ वाली हाँडी में गोबर और मिट्टी के गोले थे, उसने लीपना आरंभ कर दिया। भूपाल सरकारी चौकीदार भी है और जमादार का हरकारा भी, आश्विन चैत्र और पौष की तीन किश्तों के प्रारंभ में उसे चण्डी मण्डप लीपना

पड़ता है। हरकारे के पाँच क्लर्कों में से एक यह भी है।

देबू कुछ चैतन्य होकर और हँसकर बोला—"यह हरि-ठाकुर की पूजा हो रही है भूपाल।" हरिठाकुर पाँच गाँवों में पूजा करते हैं। एक दिन एक गाँव में जाते हैं और पाँच दिन की इकट्ठी पूजा कर आते हैं। पाँच दिन बाद फिर पहुँच जाते हैं। पूस की किश्त में तो अभी बहुत देर है।

पंडित की बात से भूपाल भी हँसा, बोला—'हमारे युधिष्ठिर थानेदार चौकीदार भी यही करते हैं। रात भर में तीन बार आवाज़ देने का हुकुम है सो वे एक साथ तीन हाँके लगाकर घर आ जाते हैं और सो जाते हैं।'

देबू खिलखिला कर हँसा।

भूपाल बोला—'मैं ऐसा नहीं कर रहा हूँ, पंडितजी। गुमास्ताजी आज आ गये हैं न!'

'आ गये हैं? इतनी जल्दी?'

'जी हाँ, इस बार जल्दी ही है, सटलमेंट आ गया है न।'

'सेटेलमैंट कैम्प?'

'जी! बड़ी धूमधाम है। बीस-पचीस गाड़ियों में तो तंबू ही होंगे। सुनते हैं, ७ पूस से खानापूरी शुरू हो जायगी। आज शाम को शायद मुनादी होगी। मुझे खाते ही दौड़ना पड़ेगा।'

'सेटेलमेंट की खानापूरी?...खेतों में पके धान खड़े हैं—उन धानों पर लोहे की जंजीरें चलेंगी, बूट जूते दौड़ेंगे तब न

खानापूरी होगी ?'

भूपाल बोला—'धान तो इस बार खेतों में ही माड़ा जायगा पंडित जी।'

देबू की भौंहों पर बल पड़ गये, झट उठ कर खड़ा हो गया, 'यह तो अविचार है—अन्याय है !'

—तेरह—

"जो इतु-लक्ष्मी करती हैं, उनका भाग्य व्रत-कथा की ईशानी जैसा हो जाता है। धान, उरद, मूंग, चना, गेहूँ, जौ, सरसों, तीसी—उनके खेतों में सब चीजें भर जाती हैं, खलिहान में जगह भी नहीं रहती, एक मुट्ठी उठाने से दो मुट्ठी हो जाती हैं। उनके खेत, खलिहान और भण्डार में माँ लक्ष्मी का निवास अचल हो जाता है। संतान-संतति से घर भरता है, गायों, बैलों और बछरों को बाँधने की जगह भी नहीं रहती। पेड़ फलों से लदते हैं और तालाब मछलियों से भरते हैं। बहू बेटे सामने बैठते हैं, नाती-नातिन बगल में और वे स्वामी की गोद में सिर रख कर गंगा-जल पीती-पीती स्वर्ग जाती हैं।"

व्रत-कथा समाप्त कर देबू की स्त्री ने जय-ध्वनि की और देवी को प्रणाम किया। दुर्गा और पद्म ने भी उसका अनुसरण किया। दुर्गा का कण्ठ स्वर जितना तीक्ष्ण है, उसकी जीभ उतनी ही हल्की और चपलता से चंचल है। उसकी जय-ध्वनि से घर गूँज गया। प्रणाम करने और सुपारी देबू की स्त्री के समाने रखने के बाद उसने हँस कर कहा—बिलू दीदी ! बहिन

लुहारिन, मरने लगूँ तो कोई अपना स्वामी ज़रा उधार देना मुझे !'

देबू की पत्नी का नाम विल्ववासिनी है—बुलाते हैं बिलू कह कर। बिलू मुस्कराई। वह अपने पति को जानती है, इस लिए दुर्गा पर गुस्सा नहीं हुई। और कोई होती तो झगड़ने लगती। यह स्वरूपा स्वैरिणी जब मंद और तिरछी मुस्कान के साथ रास्ते पर चलती है तब गाँव की प्रत्येक बहू संत्रस्त हो जाती है। इसके पास न लज्जा है, न भय, पुरुष को देखते ही यह उसके साथ रसभरी दो-चार बातें करेगी और फिर अपने सर्वांग को तरंगित कर चली जायगी।

पद्म ने भी बुरा न माना। इधर कुछ दिन से दुर्गा उसके घर आने-जाने लगी है। अनिरुद्ध से वह एक खाँडा बनवा रही है। उसी का तगादा करने के लिए दिन में दो बार आती है, अनिरुद्ध से रंग-रहस्य करती है और हँसते हँसते विभोर हो जाती है। कभी-कभी पद्म के तन-बदन में आग लग जाती है परन्तु गाहक से कुछ कहा नहीं जा सकता। इसके अतिरिक्त इधर पद्म बहुत कुछ बदल भी गई है। अकस्मात् उसके जीवन को एक सकरुण उदासीनता ने ढक लिया है; उसे घर नहीं सुहाता, काम नहीं सुहाता, अनिरुद्ध के प्रति उसकी जो सर्व-ग्राही आसक्ति रही है वह भी चेतनाहीन बाहु बंधन की भाँति शिथिल हो आई है! अनिरुद्ध और दुर्गा की रहस्य-लीला अपनी आँखों से देख कर भी वह चुप रहती है। बोलने की इच्छा ही

नहीं होती। आज भी उसे गुस्सा न आया। एक लंबी साँस लेकर उसने देवू के बच्चे को अपनी गोद से बिलू की गोद में देकर कहा—'मेरी तो भाई यही पूँजी है! धन-दौलत बैल-बछरे, बेटा-बहू—सिर नहीं तो दर्द कहाँ होगा? नाती-नातिन!" वह मुस्कराई और मुस्कराकर ही बोली, "वह भी न हो तो तू ले लेना।" फिर वह उठकर बोली—'चलूँ बहिन पंडिताइन!'

बिलू ने उसका हाथ पकड़ कर कहा—'जलपान का न्यौता दे गये हैं—तुम्हारे उनके साथी। मुँह तो मीठा किए जाओ!'

बिलू की गोद में बैठे बच्चे पर झुक कर और उसको बार बार चूमकर पद्म ने कहा—'लल्ला की चुम्मी से पेट भर गया है। इससे अधिक मीठा और क्या होगा?'

'नहीं, यह नहीं हो सकता!'

'तो दो भाई, खूँट में बाँध लूँगी। इतु का प्रसाद खाये बिना तो और कुछ खाया नहीं जा सकता। पंडित को भले ही यह न मालूम हो, पंडिताइन तो जानती ही हैं!'

रास्ते में दुर्गा बोली—'बिलू दीदी बहुत अच्छी है। जैसे पंडित वैसी ही बिलू दीदी।'

पद्म बोली—'मुझे छिरूपाल के घर से आगे पहुँचा आओ भाई!'

'मुसीबत! इतना डरती क्यों है? दिन दोपहर में क्या पकड़ कर खा लेगा?' दुर्गा ने मुँह तिरछा किया और हँसी। फिर भी पद्म के साथ चली!

पद्म बोला—'इसे कहते हैं भाग्यवाली। अमीर न हो, भरा-पूरा घर है, वैसा ही स्वामी और बच्चा! अहा, जैसे कमल का फूल! जैसा कोमल है, वैसा ही शीतल! गोद में लिया तो कलेजा ठण्डा हो गया!'

'माँ सोंदर है, फिर बाप सोंदर है—लड़का सोंदर न होगा!'

पद्म ने एक लम्बी साँस ली। रास्ते में ६-७ वर्ष का एक लड़का धूल पर बैठा था, धूल से मुट्ठियाँ भर कर अपने सिर पर डालता था और परमानन्द से हँसता था। दुर्गा बोली—'ए देखो, जैसा कपाल वैसे गोपाल। जैसे दरिद्री माँ-बाप वैसा ही लड़का।'

लड़का तारणीचरण का है। तारणी उजड़ा हुआ किसान है, उसका सर्वस्व नीलाम हो चुका है। अब वह डोमों, पासियों और चमारों की तरह दूसरे की मजूरी करता है। तारिणी की स्त्री भी वैसी ही सहधर्मिणी है। दिन भर डोमिनों, पासिनों और चमारिनों की तरह लकड़ियाँ बिनती है, साग खोंटती है, तालाब के कीचड़ से मछली पकड़ती है। परन्तु ये सब उसके बाह्याडम्बर हैं, इसी बहाने वह चोरी करती है। किस के घर में और कहाँ आम, कटहर, केला, लौकी और कुम्हड़े लगे हैं, यह सब उसके नख-दर्पण में रहता है। और काठ लेने के बहाने वह चोरी करने की ताक में घूमती है। यह बच्चा इसी तरह धूल में बैठा खेलता है या रोता है। रोते-रोते थक कर अपने घर के खुले आँगन में या किसी पेड़ के नीचे सो

जाता है। कभी-कभी दूर भी निकल जाता है; माँ-बाप चिंतित नहीं होते, ढूँढ़ते भी नहीं। यह स्वयं ही लौट आता है!

'हट, अरे उधर हट! गरदा न उड़ाना, धुले कपड़े पहने हैं!' दुर्गा ने रूढ़ स्वर में तिरस्कार के साथ उसे सावधान कर दिया।

'इः!' दुष्ट हास्य के साथ लड़का मुट्ठी में धूल भर कर खड़ा हो गया।

'कान दोनों रगड़ कर लाल कर दूँगी।' दुर्गा ने कठोर स्वर में डाँटा। धुले कपड़ों पर धूल के धब्बे वह किसी तरह बरदास्त नहीं कर सकती।

'मिठाई लोगे, बेटा मिठाई?' पद्म ने उसे आदर के साथ बुलाया।

धूल से भरी मुट्ठी झुका कर वह बोला—'झूठ।'

अपने खूंट से बिलू की दी हुई मिठाई निकाल कर पद्म ने कहा—'अब धूल फेंक दो बेटा!'

'तू पहले मिठाई फेंक दे!'

'छिः मिट्टी में भर जायगी। हाथ में लो।'

हुँः! तू पकड़ कर मारेगी।

'नहीं, मारूँगी क्यों?'

'नहीं, तू फेंक दे!'

'दो जी, फेंक दो। मिट्टी! करकट से पत्ते तक निकाल कर खा जाता है—इसके लिए मिट्टी!' दुर्गा ने झंकार के साथ

कहा ।

पद्म मिठाई फेंक न सकी। सावधानी के साथ एक तरफ जगह पर रख दी और लड़के की ओर मुस्करा कर देखा। फिर चुपचाप चलने लगी।

'लुहारिन !' दुर्गा ने कौतुक के साथ पुकारा।

पद्म सदा लंबा घूंघट तान कर और ज़मीन पर दृष्टि जमा कर चलती है। मुँह ऊपर न उठा कर उसने पूछा, क्या ?

'वह देख !'

'क्या ? कहाँ ?'

'सामने !' दुर्गा खुक् खुक् कर हँसने लगी !

पद्म ने थोड़ा सा घूंघट उठा कर और चारों ओर देख कर जल्दी से फिर घूंघट खींच लिया। सामने अपने दरवाज़े पर छिरूपाल बैठा है, उसके साथ एक आदमी है—उसकी आँखें गोल और बड़ी हैं, मूछें घनी हैं। पद्म जानती है कि ज़मींदार का गुमास्ता है। दोनों इसी ओर देख रहे हैं। पद्म तेज़ी के साथ निकल गई, परन्तु दुर्गा की मंथर-गति-भंगिमा में परिवर्तन न हुआ !

गुमास्ता ने एक बार दुर्गा की ओर देखा, फिर घूम कर ओहरि की ओर। पूछा—'दुर्गा के साथ कौन है पाल ?'

'अनिरुद्ध की स्त्री।'

'हुँ। दुर्गा के साथ गाँठ बाँध कर क्यों घूमती है ?'

"क्या पता, पर-चित्त अन्धकार है !'

'दुर्गा क्या कहती है ? पीती है ?'

श्रीहरि गंभीर भाव में बोला—'मैंने वह सब छोड़ दिया है, दास जी; दुर्गा से बात तक नहीं करता।'

विस्मय से आँखें फैला कर दासजी बोले—'अरे नहीं ?'

'सचमुच !'

'अकस्मात् ? बात क्या है ?'

'नीच संसर्ग अच्छा नहीं होता दासजी, समाज घृणा करता है, नीच तक हँसते हैं। मान-मर्यादा नहीं रहती।'

दासजी हँस कर बोले—'ठीक है लेकिन लुहारिन तो नीच संसर्ग नहीं है। साले को जब ठीक ही करना है तब घर की हाँडी तक उलट दो।'

श्रीहरि चुप हो गये। यह निरुद्ध कामना उनके अंतर में रुद्ध-मुख ज्वालागिरि के अग्नि-प्रवाह की भाँति छिपी है। संकेत के आंदोलन से वह प्रछन्न अग्नि-शिखा प्रबल हो गई।

दासजी ने हँसना आरंभ किया।

श्रीहरि की दोनों उग्र आँखें जलने-सी लगी। इस उज्वल-श्यामवर्णा और दीर्घाङ्गी तरुणी के प्रति उनके अंतर में नग्न-कामना की एक प्रगाढ़ आसक्ति है। तालाब के किनारे खड़ी पद्म का घूंघटहीन मुख भी उनके सामने आ गया,—बड़ी बड़ी आँखें, छोटे से मत्थे को घेरे हुए घने और काले बाल, तिरछी सी नाक, गाल के पास एक बड़ा तिल,—उसके हाथ का चमकता हुआ खाँडा और निष्ठुर कौतुक की मंद मुस्कान

से विकसित छोटे-छोटे दाँतों की सुंदर पंक्ति तक याद आ गई।

दास ने हँसी रोक कर कहा—'भाग्यवान् पुरुष हो तुम, तुम भोग न करोगे तो क्या रामा-श्यामा भोग करेंगे ?'

इतनी देर बाद अजगर की भाँति एक लम्बी साँस लेकर श्रीहरि ने कहा—'छोड़िए दासजी ये सब बातें ! मैंने जो कुछ कहा उसके लिए आप क्या कहते है ?'

'उसमें क्या, 'पाल' काट कर 'घोष' लिखने में कितनी देर लगती है ? लेकिन तुम जानते ही हो ज़मीदारी का दस्तूर—पैसा फेंक मलाई खा—कुछ फीस लग जायगी और हमारा हक इसके सिवा कुछ खिलाओगे भी।' श्रीहरि के मुँह की ओर देख कर दास ने कहा—"और क्या तुमने मद भी छोड़ दिया है ? रंग ढंग तो ऐसे ही हो रहे हैं !" दास के मुँह पर वक्र हँसी दीख पड़ी।

श्रीहरि हँसकर बोले—'नहीं, नहीं,यह कैसे होगा ? लेकिन अब वह सब भी ढोल बजा कर न होगा। कभी-कभी घर के भीतर बैठ कर हो गया तो !'

'ठीक ! भले आदमियों की यही बात है !' दास ने बार-बार गरदन हिला कर श्रीहरि की बात स्वीकार की और कहा—'मैंने तुमको पहले भी कई बार समझाया था कि पाल ये रंग-ढंग तुम्हें शोभा नहीं देते। चलो, तुम अब सँभल गये—यही बहुत है।'

दासजी की बात श्रीहरि ने भी स्वीकार की—हाँ, मैंने

सोचकर देखा दासजी कि इस तरह मान-सम्मान नहीं मिल सकता। वह ज़माना अब लद गया है।'

दासजी ज़मींदार के बहुदर्शी और विचक्षण कर्मचारी हैं, हँस कर बोले—'किसी ज़माने में भी इस तरह मान नहीं मिलता। तुम त्रिपुरासिंह की बात करते हो—लोग उसे आज भी डकैत कहते हैं। यही मान-सम्मान है? कंकना के मुखर्जी बाबू को ही देखो, मालदार हो गये लेकिन लोग बाबू न कहते थे। फिर स्कूल खोला, अस्पताल बनवाया, मंदिर की प्रतिष्ठा करवा दी और लोग धन्य-धन्य करने लगे। बाबू तो बाबू एकदम बड़े बाबू, बड़े घर के बड़े बाबू बन गये!"

"चण्डी मण्डप को मैं अब पक्का करवा दूँगा दासजी, और मण्डप के पास एक कुँआ बनवाऊँगा।"

"बस, बस, पक्का करवा कर लिख दो कुएँ पर और चण्डी मण्डप के फ़र्श पर—सेवक श्री श्रीहरि घोष प्रतिष्ठित, फिर तुम्हारी घोष उपाधि भी पक्की हो जायगी।"

"आप परन्तु वह कर दीजिए, सेटेलमेंट के परचे पर भी मैं घोष लिखवाऊँगा।"

"कल, कल, कल ही करवा लो तुम।"

श्रीहरि के वंश की प्रचलित उपाधि पाल है। श्रीहरि इसे बदल देना चाहता है। स्वयं यह अपने आप को बहुत दिन से घोष लिख रहा है, किन्तु अदालत में पाल ही लिखा जाता है। इसीलिए जमींदारी के कागजों में पाल कटवाकर घोष लिखाना

चाहता है, उधर गवर्नमेंट की ओर से भी नई सर्वे हो रही है; रेकार्ड और राइटस् के दफ़्तर में भी उसकी घोष उपाधि पक्की हो जायगी। पाल उपाधि असम्मानजनक है, जो अपने हाथ से खेती करते हैं उनको अर्थात् खेतिहरों की उपाधि है पाल!

दासजी फिर बोले—'और उसके लिए क्या कर रहे हो?'

'किसके लिए? लुहारिन—?'

अट्टहास के साथ दासजी ने कहा—'वह तो हो ही जायगी, ऐसी बात भी कहीं पूछी जाती है? मैं पूछ रहा था गुमास्ते की गद्दी कब सँभालोगे?'

श्रीहरि लज्जित हो गया था, अप्रस्तुत की भाँति बोला—'अच्छा, सोचकर देखूँगा!'

ठीक इसी समय छुरहरि बगल में दबाए ताराचरण परमाणिक हाजिर हुआ। गंभीर भक्ति के साथ नमस्कार करके मुलायम हँसी के साथ उसने संभाषण किया—'पनाम सरकार!'

कपाल तक भौंहें तानकर और ताराचरण को देखकर दास जी ने कहा—'आओ, बच्चा आओ, सुनाओ क्या हाल है?'

सिर खुजाते-खुजाते ताराचरण बोला—"कंकना गया था। घर आते ही सुना, अम्माँ ने बताया—गुमास्ताजी आए हैं, सुनते ही लपकता-लपकता आया हूँ।" वह अकारण ही हँसने लगा।

ताराचरण की यह हँसी उसके व्यवसाय की अभिज्ञता और बुद्धि से उत्पन्न हुई है। जिसके बुलावे पर वह पहले नहीं जाता

वही नाराज़ हो जाता है। ताराचरण उसे प्रसन्न करने के लिए ही ऐसी मीठी हँसी दिखाता है, तिरस्कार पाने पर भी वह इसी तरह हँसता रहता है। ताराचरण ने एक और भी सत्य जाना है, और उससे भी वह काम लेता है। वह जानता है कि पड़ोसी की गुप्त बातें जानने के लिए प्रत्येक व्यक्ति उत्सुक रहता है। वह सबेरे से दोपहर तक कई गाँवों में घूमता है। राम के घर की बातें वह श्याम से कहता है, श्याम का संवाद राधे को बता देता है और राधे की चर्चा मधु से निवेदन करके वह उसे प्रसन्न कर लेता है। इसी अवसर पर वह उनके घर की भी दो-चार बातें जान लेता है!

लोटे से कटोरी में पानी डालते-डालते उसने आरंभ किया—'कंकना में तूफ़ान आ गया है। समझे कि नहीं! आठ-दस तम्बू गड़े हैं—गाड़ियों कागज़ के ढेर हैं।'

'हुँ. सेटेलमेंट कैंप लग रहा है।'

कौशली ताराचरण ने समझ लिया कि इस समाचार से गुमाश्ताजी का मन सरस न होगा। चकित दृष्टि से श्रीहरि के मुँह की ओर देखा तो वह भी गंभीर था। उसने तुरंत प्रसंग बदल दिया—'अब दुर्गा—दुर्गा के पौ-बारह हो गये। दोनों हाथ से रुपये लूटेगी। चुटैया-कटे अमीनों की जो भीड़ देखी है, समझे पाल जी!

गुमाश्ते ने धमकाया—'पाल क्या रे—पाल क्यों कहता है?'

'जी?'

'घोष महाशय कह घोष। पाल वे हैं जो अपने हाथ से खेती करते हैं, ये हैं गाँव के मुकट श्रीहरि!'

ताराचरण ने चुपचाप सुनना आरंभ किया। बहुत सी बातें सुनीं उसने और यह अनुमान भी लगा लिया कि इस गाँव के गुमाश्ते की गद्दी श्रीहरि सँभाल रहे हैं। वह तुरंत बोला—'हज़ार बात की बात यह है कि घोष महाशय जैसा व्यक्ति इन गाँवों में कोई नहीं है।' दास जी के गाल पर छुरा चलाते-चलाते वह धीमे स्वर में बोला—'ये चाहें तो दुर्गा जैसी बीस बाँदियाँ रख सकते हैं।'

हाथ से छुरा रोकने का इशारा करके दास जी ने पूछा—'क्यों रे, अनिरुद्ध लुहार की बहू दुर्गा के साथ क्यों घूमती है? मामला क्या है?'

'अच्छा, आज ही पता लगाता हूँ। लेकिन लुहार के साथ आज कल दुर्गा का' ताराचरण हँसा।

'सच?'

'हाँ जी।'

श्रीहरि चुप बैठे रहे। पद्म के सम्बन्ध में ऐसी चर्चा उन्हें अच्छी न लगी। उस दीर्घांगी तरुणी के प्रति उनकी प्रचण्ड आसक्ति—प्रगाढ़ कामना है, वे उसे सर्वथा अपनी—पूर्णतया निज की बनाकर प्राप्त करना चाहते हैं, और चाहते हैं, सर्वथा एकांत स्थानों में, वे उसे चोर की सम्पदा की भाँति भोग करना चाहते हैं, अँधेरी गुफा में सर्प जैसे सर्पिणी को अपने शरीर

के फेरों से जकड़ लेता है वैसे ही वे भी उसे नागपाश में बाँध लेना चाहते हैं।

× × × ×

पद्म के घर पहुँच कर दुर्गा ने देखा कि लुहारिन फिर स्नान करने जा रही है। पद्म के तेज़ी से चले आने के बाद दुर्गा कुछ देर एक गली की आड़ में खड़ी रही थी। गुमास्ते को वह अच्छी तरह जानती है और श्रीहरि के बाल-बाल से परिचित है। उनकी बात सुनने के लिए ही वह रुक गई थी। गुमास्ते की बातें सुन कर वह हँसी थी और श्रीहरि के रंग-ढंग देख कर विस्मित हुई थी। जब ताराचरण आया तब वह चली आई। पद्म कन्धे पर अँगोछा डाले घर से निकल रही थी। दुर्गा ने पूछा—'यह क्या? फिर नहाने चली?'

'हाँ।'

'रास्ते में कुछ छू गया। पाँच हाथ का तो घूँघट है तुम्हारा, छू गया हो तो आश्चर्य क्या!'

अप्रस्तुत की भाँति हँसकर पद्म ने कहा—'नहीं नहीं।'

'फिर?'

'लड़के ने टट्टी कर दी है कपड़े पर।'

'यह भी तुम्हारी एक सनक है। बच्चा देखते ही गोद में उठा लोगी। जब अपना नहीं है तब दूसरों के लेकर झंझट क्यों करती हो? और इतनी देर में तुम्हें लड़का किस का मिल गया?'

पद्म ने और भी अधिक अप्रस्तुत की भाँति हँसकर कहा—'छिरूपाल का लड़का था।'

दुर्गा आवाक् हो गई।

पद्म बोली—'छिरू की बहू गली में खड़ी रो रही थी, गोदी में छोटा लड़का सिसक रहा था। बड़ा गोद में चढ़ने के लिए उसकी धोती खींच कर फाड़े दे रहा था और चीख रहा था, घर के भीतर से सास गालियाँ दे रही थी—मुँहजली सब खा गई है, ये दो क्यों रह जायँ, इन्हें भी खा ले और मर जा, हमारा पीछा छूटे।" मैंने छोटे को गोद में ले लिया—माँ ने बड़े को लेकर उसे शांत किया।" कुछ देर चुप रह कर फिर बोली—"पाल की बहू बड़ी भली औरत है—बहुत अच्छी!" पद्म को उस दिन की बात आ गई।

श्रीहरि की स्त्री के विरुद्ध दुर्गा का भी कोई अभियोग नहीं है। अपितु वह अपने आप को उसके निकट कुछ अपराधी ही समझती है। वह जानती है कि गाँव भर की बहुएँ उसे गाली देती हैं—कोसती हैं, केवल दो बहुएँ ऐसी हैं जो उसे शाप नहीं देतीं—एक बिलू दीदी—पण्डित की स्त्री और दूसरी श्रीहरि की पत्नी। पंडित की स्त्री को तो देना भी न चाहिये—अपने पति के सम्बन्ध में उसे कोई आशंका नहीं है, वे साधु आदमी हैं परन्तु श्रीहरि की पत्नी ने अपने पति के साथ दुर्गा की खुली घनिष्ठता जान कर भी कभी उसे शाप नहीं दिया, कड़ी बात नहीं कही। पाल की स्त्री के साथ आँखें मिलाने में

दुर्गा को सचमुच संकोच होता है।

कुछ देर चुपचाप चलने के बाद दुर्गा ने शायद श्रीहरि की स्त्री के प्रसंग से छुटकारा पाने के लिए ही दूसरी चर्चा छेड़ दी,—बोली—"न जाने क्यों कच्चोंबच्चों को तो देख कर ही मेरी तबियत घिनघिनाने लगती है! राम राम!"

पद्म ने अत्यन्त रूढ़ दृष्टि से उसकी ओर देखा।

दुर्गा ने पद्म की दृष्टि नहीं देखी, देखती भी तो परवाह न करती, उपेक्षा की वक्र मुस्कान के तीक्ष्ण शर से उसे टुकड़े-टुकड़े कर देती। उपेक्षा की उसी भंगिमा से उसने कहा—"अब मेरी भाभी को इस बुढ़ापे में बच्चा होगा। मैं अभी से सोचती हूँ कि वह चें चें करेगा और चिड़िया के बच्चे की तरह कपड़े गंदे करता रहेगा—छिः छिः!"

पद्म का रूप क्षण भर में ही पलट गया। उसने पूछा—"तुम्हारी भाभी ने किस देवता के पैर पकड़े थे?"

"देवता? देवता तो कितने ही दया कर चुके हैं।" फिर पद्म से हँस का बोली—"अंत में वह घोषाल—"

"घोषाल कवच देते हैं क्या?"

"मूरख कहीं की! अरी, हरेन घोषाल के साथ अब भाभी की आसनाई हुई है। वह तो बाँझ नहीं है—बच्चा होगा ही।"

पद्म ने स्थिर दृष्टि से दुर्गा की ओर देखा।

दुर्गा बोली—"औरतें ही तो बाँझ नहीं होतीं—पुरुषों में भी दोष होता है। तू इतना भी नहीं जानती?" उसने दृष्टांत देने

प्रारंभ किए; आस-पास के कितने ही दृष्टांत वह जानती है। इस जीवन के—इस पथ के प्रत्येक पथिक का प्रत्येक संवाद उसे प्राप्त हुआ है, प्रत्येक व्यक्ति को वह पहचानती है। वे शायद चुपचाप अँधेरे में ही छिप कर निकल जाना चाहते हैं परन्तु उसने तो इसी पथ को अपना घर बना लिया है और खुले मुँह तथा पैनी दृष्टि से सदा इसी को देखती रहती है।

× × × ×

जाड़े के दिन हैं—पानी की ठण्डक बदन में सुई की तरह चुभती है। सवेरे ही दो बार नहाने से पद्म की तबियत खराब हो गई और दिन भर न सँभली। रसोई में आँच के सामने बैठने पर भी उसे आराम न मिला। रसोई बनाने के बाद भी उसने स्वयं कुछ न खाया, सब कुछ अनिरुद्ध के लिए ढक कर रख दिया। अनिरुद्ध सवेरे ही दोपहर का भोजन लेकर नदी पार के कस्बे में अपनी नई दूकान पर काम करने गया है।

शाम को अनिरुद्ध लौटा। पद्म दीवार के सहारे बैठी थी, उसके सम्पूर्ण शरीर से अस्वस्थ उदासीनता झलक रही थी। अनिरुद्ध थका हुआ भी था और रास्ते में दुर्गा के घर से ज़रा सी शराब भी पी आया था। पद्म के रंग-ढंग देख कर उसका सर्वांग जलने लगा। अत्यन्त क्रुद्ध दृष्टि से कुछ देर तक पद्म की ओर देखने के बाद उसने चीख कर पूछा—"तुझे हुआ क्या है?"

पद्म ने इतनी देर बाद अनिरुद्ध की ओर देखा।

अनिरुद्ध फिर चिल्लाया—"हुआ क्या है तुझे ?"

शांत स्वर में पद्म ने उत्तर दिया—"होगा क्या ? कुछ नहीं हुआ।" अनिरुद्ध से शारीरिक अस्वस्थता की चर्चा भी वह न कर सकी—इच्छा ही न हुई। पत्थर को दुःख क्या सुनाया जाय ? अरण्य-रोदन का परिणाम ही क्या ? उसके मुँह पर एक उदास और फीकी हँसी दीख पड़ी।

दाँत पीस कर अनिरुद्ध बोला—"फिर ? फिर उदासिन गोपी की तरह बैठी धन्नियाँ क्यों गिन रही है ?

क्षण भर में पद्म आग की तरह भड़क उठी। उसके शिथिल शरीर के सब अंगों में एक अधीर चांचल्य दौड़ गया, बड़ी और क्रोध से रक्ताभ आखें फैल कर उग्रता व्यक्त करने लगीं। अनिरुद्ध को ऐसा जान पड़ा कि भट्ठी में पड़े लोहे के दो टुकड़े अंगारों से भी अधिक लाल हो कर गलने का उपक्रम कर रहे हैं। पद्म का शरीर भी जलते हुए अंगारों जैसा उत्ताप फैलाने लगा। पद्म की यह सर्वथा नई मूर्ति देख कर अनिरुद्ध डर गया। वह इसी आशंका से अधीर हो गया कि अब पद्म क्या कहेगी—क्या करेगी। परन्तु पद्म ने कुछ न कहा। उसका क्रोध पात्र में भरी ज्वलन्त धातु की भाँति उसकी दृष्टि और देह की भंगिमा में ही सीमित रह गया—वह एक गहरी लंबी साँस लेकर खड़ी हो गई। अनिरुद्ध ने देखा कि पद्म काँप-सी रही है। शंकित हो कर उसने हाथ पकड़ लिया—"क्या हुआ पद्म ? पद्म !"

अपने संपूर्ण शरीर को सिकोड़ कर पद्म ने शायद अनिरुद्ध

के निकट से हट जाने की चेष्टा की परन्तु सफल न हो सकी; काँपते-काँपते वह दीवार के सहारे बैठ गई और फिर भूमि पर लेट गई।

× × × ×

अनिरुद्ध जगन डाक्टर के पास दौड़ा जा रहा था।

रास्ते में चण्डी-मण्डप में डाक्टर की ऊँची आवाज़ सुनकर वह मण्डप पर ही चढ़ गया। वहाँ गाँव के प्रायः सभी व्यक्ति जमा हैं और डाक्टर उबल रहे हैं—"दरख्वास्त दूँगा, कमिश्नर को टेलीग्राम भेजूंगा।"

वर्दी वाले एक सरकारी चपरासी ने चण्डी-मण्डप की दीवार पर एक नोटिस टाँगा है। नोटिस में लिखा है—"आगामी ७ पौष से इस गाँव में सर्वे सेटेलमेंट की खानापूरी आरंभ होगी। प्रत्येक व्यक्ति अपनी-अपनी भूमि के निकट उपस्थित रहे और उसकी सरहदी दिखा दे। जो इस आज्ञा का पालन न करेगा उसके ऊपर कानूनी कार्यवाही की जायगी।"

चिंतित ग्रामवासी कानाफूसी कर रहे हैं।

श्रीहरि और गुमास्ता सेटेलमेंट अफ़सर के पेशकार से एक बड़ी मछली की चर्चा चला रहे हैं।

देबू एक ओर चुपचाप खड़ा था। अनिरुद्ध उसी के पास गया। कस्बे से लौटते समय वह दुर्गा से सबेरे की बातें सुन चुका है। देबू को वह सदा प्यार करता रहा है—श्रद्धा करता रहा है। उस दिन भी वह देबू पर क्रुद्ध न हुआ था—अभिमान हो

आया था। आज दुर्गा से सारी बात सुन कर वह अभिमान दूर हो गया है, उसका स्थान प्रगाढ़ अनुराग ने ले लिया है।

आवेग कंपित-कंठ से वह बोला—"देबू भाई !"

"क्यों, अनि भाई, क्या हुआ ?"

अनिरुद्ध रोने लगा।

× × × ×

देबू ने ही जगन डाक्टर को बुलाया—"जल्दी चलो, अनिरुद्ध की स्त्री मूर्छित हो गई है।"

जगन ने एक बार क्रुद्ध दृष्टि से अनिरुद्ध की ओर देखा फिर स्वयं आगे बढ़ कर पुकारा—"चलो, चलते क्यों नहीं ?"

सटेलमेंट संबंधी वक्तृता फिलहाल स्थगित हो गई, चलते चलते डाक्टर ने ग्रामवासियों की अकृतज्ञता पर भाषण आरंभ कर दिया। "फिर भी मैं अपना कर्तव्य करता रहूँगा। जब चिकित्सक हूँ तब बुलाने पर मुझे जाना ही पड़ेगा, जाऊँगा। तीन पुश्त से गाँव में किसी ने फ़ीस नहीं दी, मैं भी न लूँगा। फ़ीस !" डाक्टर हँसा—"दवा के दाम तो कोई देता नहीं, फ़ीस।"

देबू ने जेब से बीड़ी निकाली—"बीड़ी पिओगे डाक्टर ?"

लाओ। बीड़ी दाँत से दबा कर डाक्टर बोला—"तुम्हें रजिस्टर दिखाऊँगा पंडित—दस हज़ार रुपये ! मेरे दस हज़ार रुपये डूब गये हैं और लोग खातिर करते हैं सूदखोर महाजनों की—कंकना के बाबुओं की—शिरू पाल की !"

दवाखाने के सामने पहुँच कर सब रुके। जगन ने एक

शीशी लेकर कहा—चलो। एक मिनिट—"एक मिनिट में होश आ जाएगा—डरो नहीं।"

—चौदह—

उषा का प्रकाश अभी आकाश पर अच्छी तरह नहीं फैला परन्तु देबू उठ कर बैठ गया है। बचपन से वह इतने सबेरे ही उठने का अभ्यस्त है। देबू ही क्यों गाँवों में प्रायः सभी व्यक्ति दिन प्रारंभ होने से पहले ही अपना दैनिक जीवन आरंभ कर देते हैं। औरतें उठ कर घर-द्वार साफ़ करती हैं, लीपती-पोतती हैं, पुरुष पशुओं को चारा-पानी देते हैं। जिन के यहाँ धान कूटने का काम होता है, वे तो रात के अन्तिम पहर में ही उठते हैं। रात के निस्तब्ध अन्तिम पहर में ही ढेंकी का निर्दिष्ट ताल पर बँधा स्वर सुन पड़ता है—दुम, दुम, दुम—बातचीत की धीमी ध्वनि आती है और मिट्टी के तेल के दिए झलकने लगते हैं। आजकल गाँव के अधिकांश घरों से ढेंकी की आवाज़ सुन पड़ती है, परन्तु आज सन्नाटा है। आज इतुलदमी है, अनाज पर ढेंकी की चोट नहीं मारी जाती। आज संचय का दिन है।

देबू ने बिलू से कहा—"आज बाहर का चौतरा भी लीपना होगा। गुमास्ता आया है, कुछ दिन पाठशाला यहीं लगेगी।"

गुमास्ता आया है, चण्डी मंडप में गुमास्ता की कचहरी लगेगी। गाँव की देवोत्तर संपत्ति के सेवक के रूप में ज़मींदार

चण्डीमण्डप के मालिक हैं परन्तु सर्व साधारण को उसे अपने उपभोग में लाने का अधिकार है। इसी अधिकार से गाँव वाले मण्डप का व्यवहार करते हैं, इसी उत्तरदायित्व से उसकी देख भाल रखते हैं, चंदा लगा कर उसे छाते हैं और टूट-फूट की मरम्मत करवाते हैं, यहाँ तक कि चण्डी-मण्डप ही उन्होंने अपने चंदे से बनवाया है। यह बहुत पुरानी बात है, तब जमींदार ने मालिक के रूप में अपनी सम्मति दी थी।...

चण्डी-मण्डप में प्रणाम करने के बाद देबू मैदान की ओर चला; गाँव के प्रवीण तब तक बाबा शिव और माँ काली पर जल चढ़ा कर प्रणाम कर रहे थे। पानी से मंदिर की चौखट के नीचे की लकड़ी बिल्कुल गल गई है, किवाड़ों के नीचे का भाग भी गल गया है। मरम्मत न हुई तो पूजा की भोग सामग्री के लोभ से बिल्ली तो घुस ही जायगी, कुत्ता भी चला जाय तो कोई आश्चर्य नहीं।

लंगड़े पुरोहित कहते हैं—"इतना पानी न डालो, जरा कम ही रखो। तुम्हारे ही परलोक की राह में कीचड़ होगा—फिसलन होगी, इसलिए कहता हूँ। अंत में रथ का पहिया फँस जायगा।"

चौधराइन चाची कस कर जवाब देती हैं—"रथ का घोड़ा तुम्हारा यह तीन टाँग का टट्टू तो नहीं है, तुम उसकी फिकर न करो पंडित!"

पुरोहित हँस कर कहते हैं—"मेरा घोड़ा उसी रथ के घोड़े का बच्चा है चौधराइन चाची। मेरे घोड़े के दो तीन टाँगे हैं,

इसके माँ-बाप दो ही टाँग के थे, तुमने सुना नहीं—

पाँव दाहना लटर-पटर है, बाँया पाँव है खोंडा
ऐसा बाबा वैद्यनाथ का घोड़ा !"

जगन डाक्टर और भी कठोर एवं कर्कश बात कहता है, वह कहता है, "कोई चोर है, कोई उठाईगीर, कोई छिनार, हिंसक-बदमाश, चुगलीखोर तो सभी हैं—आते हैं पुण्य बटोरने! नियम बना दो कि जो देवता पर पानी चढ़ायेगा उसे रोज एक पैसा भी देना पड़ेगा, फिर कोई भी पानी न डालेगा। तालाब से घड़ों पानी भरते हैं और यहाँ उलट देते हैं।"

देवू कुछ नहीं कहता। जगन की बातों में सचाई है परन्तु देवू जब नित्य प्रातःकाल इन लोगों को देखता है तब जगन के अपवादों का एक भी चिह्न इनके मुँह, आँख या भाव-भंगी में नहीं दीख पड़ता। तब ये लोग सर्वथा भिन्न व्यक्ति होते हैं, ऐसा जान पड़ता है कि सब के सब किसी कल्पना-लोक के यात्री हैं। यदि ये सदा सर्वदा ऐसे ही रहते! परन्तु चण्डी-मण्डप से निकल कर घर पहुँचते ही ये फिर अपना रूप धारण कर लेते हैं। कोई दुःख कष्ट के लिए भगवान् को सैकड़ों गालियाँ देते हैं, कोई घाट से दूसरे के बरतन उठाये ले रहा है; कोई रास्ते में खड़ा होकर पशुओं के दलाल की प्रतीक्षा करता है—बूढ़ी गाय बेंचने के लिए; सब जानते हैं कि बूढ़ी गाय ले कर दलाल क्या करेगा, परन्तु कुछ रुपयों का लोभ संवरण करना साध्यातीत हो जाता है।···एक लंबी साँस लेकर देवू

चण्डी-मण्डप से रास्ते पर उतरा।

लोग, पासी और चमार आदि मजूर-किसान खेतों की ओर जा रहे हैं। आधी धोती को हो चादर की तरह लपेटे, हुक्का पीते हुए वे चल रहे हैं—उनके एक हाथ में हँसिया है। फसल काटने के दिन हैं। गाँव के किसान गृहस्थ भी मजूरों के साथ काम करते हैं, वे भी हँसिए लेकर निकल पड़े हैं। इन लोगों का विश्वास है कि किसानी में जब स्वयं भी परिश्रम करे और मजूर से भी मेहनत करवाये तभी दूनी फसल होती है। गाँव में दो-चार आदमी ऐसे हैं जो खेती में स्वयं काम नहीं करते। हरेन्द्र घोषाल ब्राह्मण है, जगन घोष कायस्थ है फिर डाक्टरी करता है, देबू घोष पाठशाला में पण्डित हो गया है, श्रीहरि अब कुलीन किसान और मालदार बना है—यही लोग खेती में स्वयं हाथ नहीं लगाते।

सतीश पासी अपनी बिरादरी में मातबर आदमी है। उसके पास अपने हल-बैल हैं। जमीन अवश्य अपनी नहीं है—बटाई जोतता है। बात विज्ञ ढङ्ग से करता है। देबू को देखकर उसने झुक कर प्रणाम किया—"पनाम पंडित जी!" साथ ही साथ सब ने प्रणाम किया।

देबू ने प्रति नमस्कार करके कहा—"खेत जा रहे हो!"

"जी हाँ।" सतीश ने अपने साथियों से कहा—"पण्डित जी जैसा आदमी मैंने नहीं देखा। बहुत से बाबू तो पनाम करने पर चूं तक नहीं करते, लेकिन पण्डित जी मत्थे तक हाथ जरूर

ले जायेंगे। इनके मुँह से कभी तू-तुकार नहीं सुनी।"

देबू ने चुपचाप आगे बढ़ जाने की चेष्टा की परन्तु सतीश ने पूछ लिया—"हाँ जी पण्डित जी, अब क्या होगा ?"

"क्यों ? क्या हुआ तुम लोगों को ?"

"जी, सिरफ हमारी नहीं, सारे गाँव की बात है। वह सटलमंट हो रहा है न। कहते हैं, सात दिन बाद शुरू हो जायगा। दिन रात हाज़िर रहना होगा, लोहे की जंजीर से नाप होगी, फिर धान कैसे काटे जायँगे और न काटे जायँगे तो जंजीर की रगड़ से कैसे बचेंगे ?"

"गुमास्ता क्या कहते हैं ? पाल ने क्या कहा ?"

"जी घोष महाशय कहिए।"

"घोष महाशय ?"

"जी हाँ, वे अब छिहरि घोष हो गये हैं। हुकुम मिला है कि इन को घोष कहा करो। ज़मीदार के कागद-पत्तर में—अदालत में—पाल कटवा कर घोष लिखवाया गया है।"

"अच्छा ! वे क्या कहते हैं ? कल तो तुम सब गये थे उन के पास ?"

"जी, बुलाया था, गये थे। उन्होंने कहा रात दिन लग कर सात दिन में सब धान काट डालो। लेकिन यह कैसे हो सकता है—आप ही बताएँ पण्डित जी ?"

देबू ने कोई उत्तर न दिया। कल रात भर वह इसी चिंता में रहा है परन्तु कोई उपाय नहीं सूझा।

सतीश बोला—"वहाँ से लौटा तो देखा कि डाक्टर जी मुहल्ले में आये हैं, कहते थे, निशान लगाओ, दरख्वास्त भेजेंगे। लेकिन दरखास्त से क्या होगा ? अभी घर जले थे तब दरख्वास्त भेजी थी—क्या हुआ ? फिर दरखास्त से सटलमंट का हाकिम बिगड़ जाय तो।"

× × × ×

अंग्रेजी सन् १७९३ में बङ्गाल में स्थायी बंदोबस्त हुआ था, लेकिन जरीबबंदी न हुई थी जिस से भूमि की सरहद्दी के झगड़े बहुत बढ़ गये थे। १८४० ईस्वी में, ३५ वर्ष तक नाप-जोख करने के बाद सरकार केवल गाँवों की सरहद्दियाँ निश्चित कर पाई। १८७५ में जरीब कानून पास हुआ और भूमि की नाप के लिए एक नई योजना बनी। निश्चय किया गया कि जरीब से जमीन का प्रत्येक टुकड़ा नापा जाए और उसका स्वत्व स्वामित्व निर्धारित किया जाय। १९२९ में यह योजना इस गाँव पर लागू हुई और गाँव वाले इस विभीषिका से त्रस्त हो गये।

जरीब के समय जरा सी त्रुटि-पर ही हाकिम बेंत लगवाता है और हथकड़ी डाल कर जेल भेज देता है।

जरीब के बाद प्रजा को जरीब के खर्चे का हिस्सा देना पड़ेगा। जो न देगा, उसकी अस्थावर कुर्क हो जाएगी। जायदाद जब्त हो जाएगी।

फिर जमींदार लगान बढ़ाने की माँग करेगा, रुपये पर

चार आने, आठ आने यहाँ तक कि रुपये की भी वृद्धि हो सकती है, हाईकोर्ट की नज़ीर भी हो गई है। लाखराज ज़ब्त हो जाएगी। रहेगी भी तो उस पर कर लगेगा और वह कर लगान के बराबर ही हो जाएगा—ऐसी कितनी ही बातें फैल गईं।

लौटते समय देबू ने देखा कि गाँव के कुछ मातबर लोग अभी से चण्डी मण्डप में जमा हो गये हैं और उसी की प्रतीक्षा कर रहे हैं। देबू मण्डप में ही रुक गया। हरीश ने पूछा—"लिख गई ?"

रात में देबू को एक दरख्वास्त लिखने के लिए दी गई परन्तु देबू नहीं लिख सका। दरख्वास्त पर उसकी आस्था नहीं है। दरख्वास्त की चर्चा उठते ही उस के अंतर में कटु घटनाओं की स्मृतियाँ जागृत होती हैं। उसने स्वयं ही कई बार दरख्वास्तें भेजी थीं, उनका फल याद आ जाता है।

पिता की मृत्यु के बाद देबू ने स्कूल छोड़ कर अपने हाथ से खेती करना आरम्भ ही किया था। उस दिन खेत जोत रहा था। खाकी बरदी पहने और सिर पर टोपी लगाये पुलिस के असिस्टेंट सब इंस्पेक्टर उधर से जा रहे थे। उन्होंने देबू को बुलाया—"ए, सुन !"

देबू ने इस अभद्र सम्बोधन से असंतुष्ट हो कर उत्तर भी न दिया।

"ए, उल्लू !"

देबू फिर भी चुप रह गया और पुलिस के साहब को दरख्वास्त दी। यही उस की पहली दरख्वास्त थी। दो महीने तक जाँच हुई—इंस्पेक्टर साहब जाँच करने आये।

देबू का अभियोग सुन कर उन्होंने मीठे शब्दों में मामला समाप्त कर दिया। बोले, "देखो बेटा, जमादार बाबू तुम्हारे पिता की उमर के हैं, उन्होंने 'तू' कह दिया तो तुम्हें गुस्सा न होना चाहिए। उल्लू कहना अवश्य अन्याय है, यदि—उन्होंने कहा हो।"

देबू बोला—"उन्होंने कहा था।"

"समझा, लेकिन गवाही भी तो चाहिए।"

गवाह कोई न था। इंस्पेक्टर ने कहा—"चलो, जाने दो तुम घर जाओ, कुछ ख्याल न करना, अच्छा!

देबू का क्षोभ शान्त नहीं हुआ।

दूसरी दरख्वास्त का अनुभव और भी विचित्र है। जमींदार ने बैसाख के महीने में खास तालाब से मछलियाँ पकड़ने की व्यवस्था की थी। सारा गाँव उसी एक तालाब का पानी पीता था। तालाब में पानी भी थोड़ा ही था लेकिन उतने पानी से भी कुछ और बाहर निकाल कर मछली पकड़ने का प्रबन्ध सोचा गया। गाँव वाले सिहर गये, बोले—"तालाब से पानी निकाल दिया जायगा तो बचेगा क्या? फिर मछलियाँ पकड़ने से तो वह भी कीचड़ हो जायगा। हम पियेंगे क्या?"

गुमास्ते ने कहा—"जमींदार के यहाँ काम है, वह मछली

कहाँ से लावे ?"

प्रजा स्वयं जमींदार के पास गई; वे बोले—"तुम मछलियाँ दे दो या उनके दाम दे दो।"

तरुण देबू ने मजिस्ट्रेट साहब को एक दरख्वास्त दी, परंतु व्यर्थ। जमींदार के चपरासी जुलूस बनाकर आये और मछलियाँ पकड़ कर तथा तालाब को पंक-पल्वल बनाकर चले गये। देबू के क्षोभ की सीमा न रही। हठात् सात दिन बाद दारोगा, कांस्टेबल और चौकीदार के आगमन से गाँव हिल गया, उनके साथ साहब की पोशाक में एक नौजवान भी था। दारोगा ने देबू को बुलाकर कहा—"तुम्हें मजिस्ट्रेट साहब बहादुर याद करते हैं।"

देबू हैरान हो गया। मजिस्ट्रेट साहब स्वयं आये हैं ? परन्तु अब आने से क्या लाभ होगा ? साहब को उसने नमस्कार किया। साहब ने भी प्रति नमस्कार में उत्तर दिया। साहब की बातें सुनकर देबू और भी चकित हो गया।

"आप ही देवदास घोष हैं ?"

"जी हाँ।"

दारोगा बोला—'जी हाँ हुजूर कहो।'

साहब हँस कर बोले—'रहने भी दो।' फिर उन्होंने सारी कहानी सुनी, स्वयं तालाब देखा। तालाब के किनारे खड़े होकर और जल की अवस्था देख कर वे स्तम्भित हो गये। देबू को अच्छी तरह याद है कि भले आदमी की आँखों में आँसू तक

झलक आये थे। रूमाल से आँखें पोंछ कर साहब ने कहा—"आना तो व्यर्थ ही हुआ, देबू बाबू, मैं कुछ भी न कर सका।"

देबू ने कहा—"हुजूर दरख्वास्त तो मैंने पाँच दिन पहले भेजी थी।"

"डाक में एक दिन लगा है और नियमानुसार दरख्वास्त पेश होने में भी किसी कारण से देर हुई है—मैं उस कारण की जाँच करूंगा।" फिर—कुछ देर चुप रह कर वे बोले—"देवदास बाबू, ऐसे मामलों में दरख्वास्त बेकार होती है। स्वयं मिलिए—सीधे मेरे पास चले आइये। दरख्वास्त!" वे हँसे थे।

साहब ने गाँव के लिए एक कुआँ भी मंजूर किया था लेकिन उन की बदली हो गई और यूनियन बोर्ड के सदस्य कंकना के बाबुओं ने कुआँ दूसरे गाँव में बनवा दिया।

दरख्वास्त! देबू को एक किस्सा याद आता है। किसी राजा के महल में आग लग गई, राजा दारजलिंग गये थे। आग बुझाने के लिए बरतनों और बालटियों की जरूरत थी और उनके खरीदने की मंजूरी न थी। राजा के पास तार गया। हुक्म भी तार से आया, फिर भी चौबीस घण्टे लग गये। दरख्वास्त की चर्चा के साथ देबू जब इस कहानी को याद करता है तब उस के मुँह पर कड़ुवी हँसी दीख पड़ती है। साथ ही साथ उसे साहब—मि० ए० के० हाजरा आई० सी० एस० का उपदेश भी याद आ जाता है। देबू उन्हें श्रद्धा

करता है।

देबू ने उत्तर दिया—"हरीश काका दरख्वास्त तो नहीं लिख सका।"

उत्तर सुन कर हरीश और भवेश आदि प्रवीण असंतुष्ट हुए। हरीश ने कहा—"तुमने कहा था, लिख रखूँगा, भार लिया था! थोड़ी देर बाद सारा गाँव जमा होगा, दस्तखत किस पर होंगे! यह कैसी बात है। तुम न लिख सकते थे तो कह देते, डाक्टर ही लिख डालते!"

भवेश बोला—"यही तो—साफ़ बात सदा सुख-दायक होती है। कह देते तो दूसरा प्रबन्ध हो जाता।"

देबू हँसा, बोला, "दरख्वास्त न होगी तो मैं अभी लिख दूँगा भवेश दादा, लेकिन यह तो बताओ कि कोरी दरख्वास्त से हो क्या जायगा?"

सब चुप हो गये। कुछ देर बाद हरीश बोला—"फिर करें क्या? कुछ न कुछ तो करना ही पड़ेगा, ऐसे—मान लो—अपने मन को ही कैसे समझायेंगे?"

"एक काम करेंगे?"

"बताओ।"

"पाँचों गाँवों के आदमी बुलाइये, फिर चलिए सब मिल कर सदर—मजिष्ट्रेट साहब के पास।"

"इससे कुछ फायदा होगा?"

"दरख्वास्त से अधिक लाभ तो निश्चित है।"

सब आपस में ही गुंजन करने लगे।

पाठशाला के छात्र चण्डी-मण्डप में ही आ गये, देवू ने उनसे कहा, "यहीं आ गये हो तुम सब? अच्छा, आज यहीं पढ़ लो। कल पद्य का अर्थ लिखने के लिए कहा था, लिखा है? कापियाँ यहाँ रख दो।"

हरीश ने पुकारा—"देवू!"

"कहिए!"

"फिर यही करो, चलो। क्या कहते हो तुम सब?" हरीश ने जिज्ञासु दृष्टि से सब की ओर देखा।

भवेश ने उत्साहित होकर कहा—"भगवान का नाम लेकर चल पड़ो। साहब खा तो न जायगा! मैं तयार हूँ। तुम सब अपनी-अपनी बात करो।"

मन में सब ने एक उत्तेजना के उच्छ्वास का अनुभव किया; हरेन घोषाल सब से अधिक उत्तेजित हुआ था, वह बोला—"आइ एम रेडी। इस पार या उस पार चाहे जो हो।'

"बस, चलो, कल सवेरे ही चलो।"

"हाँ! हाँ! हाँ!" सब ने सम्मिलित स्वर में सम्मति दी।

किन्तु भवेश को एक बात याद आ गई। "किन्तु क्या···?"

हरीश बोला—"अब किन्तु कैसा?"

"पत्रा तो देख लो? दिन-महूरत कैसा है!"

"हाँ, यह तो ठीक बात है।"

सब ने समर्थन किया।

देबू तिक्त स्वर में बोला—"आप पत्रा मानते हैं, किन्तु राजा का काम तो पत्रा नहीं देखता। दस दिन तक यदि अच्छा महूरत न मिला तो ?"

घोषाल उत्तेजित स्वर में बोला—"डैम योर पत्रा ! बोगस !"

देबू बोला—"मुकद्दमा हो तो माघके दिन भी जाना पड़ता है।"

हरीश ने कुछ सोच कर कहा—"यह तो ठीक है। राज-द्वार के लिए पोथी-पत्रा नहीं देखा जाता।"

देबू बोला—"सबेरे ही चल पड़ें तो दस बजे तक कचहरी के वक्त पर पहुँच जायँगे। अपने-अपने लिए खाना साथ ले लेना। चिउड़ा, गुड़, लाई—जो हो सके। एक ही दिन की तो बात है।"

इसी समय गुमाश्ता दास जी और श्रीहरि घोष चण्डी मण्डप में आये। उनके साथ भूपाल चौकीदार तथा कुछ और आदमी भी थे, उनमें एक वैरागी राज-मिस्त्री भी है।

दास जी ने हँस कर पूछा—"देबू मास्टर की पाठशाला में सब ने फिर से नाम लिखा लिया है क्या ? मामला क्या है ?"

पता नहीं कौन क्या उत्तर देता परन्तु हरेन घोषाल ने सब को छुट्टी देकर तुरन्त कहा—"वी आर गोइंग टु दि डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट—कल हम सब मजिस्ट्रेट साहब के पास जा रहे हैं, जब तक धान न कट जाँय तब तक खानापूरी स्टापड्—बंद रखनी होगी।"

दास जी ने भौंहे नचा कर पूछा—"घोषाल महाशय के

हाथ कितने हैं—दो या चार ?" बात कुछ ऐसे ढंग से कही गई कि हरेन क्षण भर के लिए स्तम्भित हो गया फिर चीख कर बोला—"तुम ब्राह्मण का अपमान करते हो ?"

दास जी ने श्रीहरि के हाथ से एक समाचार पत्र लेकर कहा—"यह देखो, उछलो नहीं। जितेन्द्र लाल बंधोपाध्याय गिरफ़्तार। सेटेलमेंट के कार्य में बाधा डालने के अपराध में श्री जितेन्द्र लाल बंदोपाध्याय पकड़े गये। लो, खुद पढ़ लो।" समाचार पत्र उसने सब के सामने डाल दिया।

घोषाल ने पत्र उठा कर उसके शीर्षक देखे और बोला—"माई गाड !" उसका मुँह पीला हो गया, पत्र उसने देबू को दे दिया। देबू पढ़ने लगा।

श्रीहरि बोला—"हमें तो आप अलग रख कर ही फैसले करते हैं, करें, परन्तु मुझे तो आप की भी चिंता करनी पड़ती है। इस झगड़े में न पड़ें। खोपड़ी पत्थर से कड़ी नहीं है। इस की अपेक्षा शाम को चलिए सेटेलमेंट हाकिम से मिल आवें। दास जी जायँगे, मैं जाऊँगा, आप भी कुछ मातबर लोग चलिए। एक अच्छी डाली भी ले चलेंगे। तालाब में मछली भी एक अच्छी मिल गई है, समझे हरीश चाचा, पक्के बारह सेर होगी।" श्रीहरि को कुछ याद आ गया। दास जी से बोले—"हाँ जी, वह, ए—यानी मुरगी के लिए आदमी भेजा है न ?···सब मिल कर कुछ न कुछ इंतजाम कर लेंगे। और दरख्वास्त भेजना या मजिस्ट्रेट के पास जाना ठीक नहीं है।

यह तो एक तरह से सरकार के हुकुम का विरोध करना है। इससे हमारी मुसीबत और बढ़ जायगी।"

देबू ने समाचार पत्र घोष को दे दिया और लड़कों को पढ़ाना आरंभ किया। बोर्ड पर चाक से लिखा—एक मन दूध के दाम पाँच रुपये दस आने हों तो—

उधर मजलिस में परामर्श की गुंजन ध्वनि फिर उठने लगी। हरेन घोषाल का दबा हुआ स्वर ही पहले सुन पड़ा—"वेरी नाइस होगा। वेरी गुड सलाह है।"

दास जी ने वैरागी मिस्त्री से कहा, "ले, रस्सी तो पकड़, भूपाल तू उधर से थाम।"

वैरागी मिस्त्री रस्सी लेकर आगे बढ़ा। सब से पहले उस ने भूमिष्ठ होकर देव-देवी को प्रणाम किया, फिर हाथ जोड़ कर बोला—"आरंभ करूं?"

दासजी बोले—"दुर्गा का नाम ले। सुनते हो हरीश चौधरी, भवेश पाल! चण्डी मण्डप का फर्श पक्का हो रहा है। आप भी अनुमति दे दीजिये।"

"पक्का हो रहा है फर्श?" सब अवाक् हो गये।

"हां, षष्ठीतला में एक कुआँ भी बनेगा। घोष महाशय—अर्थात् श्रीहरि घोष गाँव के उपकार के लिए यह परोपकार कर रहे हैं।

श्रीहरि ने हाथ जोड़ कर सविनय कहा—"आप सब अनुमति दें।"

हरीश बोले—"चिरंजीव रहो बेटा! यही तो चाहिये। लेकिन षष्ठी को ही फिर धूल-मिट्टी में क्यों रखते हो? षष्ठी तला भी पक्का करवा दो।"

श्रीहरि बोला—"बहुत अच्छा। मुझे ख्याल ही न रहा था।"

हरीश ने सब की ओर देखकर कहा—"तो श्रीहरिदासजी जो कहते हैं वही ठीक रहा। समझ गये सब?" श्रीहरि की इतनी बड़ी वदान्यता ने सब को उसके सामने झुका दिया।

श्रीहरि के चाचा भवेश भतीजे के गौरव से इतने प्रभावित हुए कि रोने लगे। उन्होंने उठकर श्रीहरि के सिर पर हाथ रखा, आशीर्वाद दिया और बोले—"मंगल हो, बेटा, तुम्हारा मंगल हो।" श्रीहरि ने चाचा को प्रणाम किया।

घोषाल ने धीरे से कहा—"ही विल डाइ—छिरू अब अवश्य मरेगा। अकस्मात् इतना बड़ा साधु हो गया। यह तो अच्छा लक्षण नहीं है। मति-भ्रम—दिस इज़ मति-भ्रम।"

महफ़िल भंग हो गई। मजूरों को पानी पीने की छुट्टी मिली। देबू ने लड़कों को भी छुट्टी दे दी और कहा—"कल से मेरे घर आना, वहीं पाठशाला लगेगी।"

"फर्श बन जायगा, तब फिर यहीं पाठशाला लगेगी न?"

"लगेगी कभी नहीं! जाओ आज छुट्टी।"

देबू भी उठा, उठते ही उसने देखा कि वृद्ध द्वारका चौधरी लाठी ठोंकते हुए चण्डीमण्डप पर चढ़ रहे हैं। देबू ने संभाषण के बाद कहा—"चौधरी जी, इस वक्त?"

"हां,ज़रा देर हो गई। सबेरे नहीं आ पाया। दरख्वास्त पर दस्तखत करने के लिए बुलाया गया था।"

देबू हँस कर बोला—"कष्ट ही हुआ आपको,दरख्वास्त तो नहीं दी गई।"

चौधरी ने हँस कर कहा—"रास्ते में सुन लिया है। यह भी सुना है कि सदर चलने की सलाह हुई थी। और नया हुकुम भी सुन लिया है कि शाम को आना पड़ेगा। देखें,क्या होता है!"

"मैं न जाऊँगा, चौधरी जी!"

वृद्ध ने देबू के मुँह की ओर देखकर कहा—"पाँच आदमी जो ठीक समझें, करें। तुम अपना मन न ख़राब करो पंडित।"

देबू ने हँसने का प्रयत्न किया।

"चलो पंडित, तुम्हारे यहाँ ज़रा पानी पियूँगा।"

"आइये, आइये।" देबू व्यस्त होकर बढ़ा।

रास्ते में चौधरी ने कहा—"कुछ होगा नहीं पंडित, कभी हमारे भी अच्छे दिन थे. तब डाली देना तो मामूली बात थी, आजकल बल्कि कुछ कम हो गई है। मैंने देखा है, कुछ होता नहीं। इसके बदले सब मिल कर चले जाते तो।" वृद्ध विश्वास के साथ नहीं कह सका कि कुछ हो ही जाता।

देबू ने लंबी साँस लेकर कहा, "इतना भी साहस नहीं, मति स्थिर नहीं, ये मनुष्य नहीं हैं, चौधरी जी!" वह अब आत्म-संवरण न कर सका, आँखों में आँसू आ ही गये। आँसू पोंछ कर और हँस कर बोला—"पाँच गाँवों के आदमी मिल

कर सदर जाते तो काम अवश्य हो जाता चौधरी जी साहब हमारी बात अवश्य सुनते।"

चौधरी मुस्कराये—"तुम व्यर्थ दुखी होते हो पंडित !"

"दुःख तो कुछ होता ही है।"

"चलो, तुम्हें एक कहानी सुनाऊँगा।"

जलपान करने के बाद चौधरी ने तम्बाकू पी और कहानी आरंभ की। "बहुत दिन पहले महाग्राम के ठाकुर महाशय के साथ प्रयाग गया था, कुंभ स्नान करने। वहाँ तरह-तरह के सन्यासी देख कर चकित हो गया। नागा साधू देखे—नंगे बैठे थे। कोई छाती तक बालू में गड़ा था, कोई बाँह ऊपर उठाये था, कोई लोहे के काँटों पर बैठा था, किसी ने अपने चारों ओर आग ही जला रखी थी। साधुओं को देखकर मैंने कहा, स्वर्ग तो इनकी मुट्ठी में है ! ठाकुर महाशय ने सुना तो बोले, चौधरी तुम्हें एक कहानी सुनाऊँ।···

सतयुग का प्रारंभ था, मनुष्य की सृष्टि हुई ही थी। सभी तब साधु थे—बन में कुटी बना कर रहते थे—फल-फूल से जीवन धारण करते थे, भगवान् का नाम लेते थे, परमानन्द में दिन व्यतीत करते थे। लक्ष्मी माता तब बैकुण्ठ में थी और अन्नपूर्णा कैलाश में—चाँदी-सोना दूर रहा संसार में अन्न का भी प्रचलन न हुआ था। इसी तरह एक पीढ़ी बीती। तब अकाल मृत्यु न होती थी, इसीलिए हजार वर्ष बाद एक ही साथ एक पीढ़ी की मृत्यु का समय आ गया। मनुष्यों ने निश्चय किया

कि हम तो सशरीर स्वर्ग चलेंगे।

बद्रिकाश्रम पार करके हिमालय के पथ पर चीटियों की तरह मनुष्यों की पंक्तियाँ चलने लगीं। स्वर्ग-द्वार पर जो द्वार-पाल था, उसने देखा कि करोड़ों व्यक्ति कलरव करते हुए इसी ओर चले आ रहे हैं। भय से विह्वल होकर वह इन्द्र के पास पहुँचा—"देवराज, महा विपत्ति आ रही है।"

"कैसी विपत्ति ?"

"न जाने कौन करोड़ों की संख्या में चींटियों की पाँत की तरह स्वर्ग की ओर आ रहे हैं। दैत्य-सेना जान पड़ती है।"

"दैत्य-सेना ? तुम ठीक कहते हो ?"

युद्ध का प्रबंध होने लगा। इसी समय देवर्षि नारद आये। उन्होंने कहा—"दैत्य नहीं देवराज वे मनुष्य हैं।"

"मनुष्य ?"

"हाँ, मनुष्य। तुम्हारे अस्त्र उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकते, पाप तो उनके शरीर में ही नहीं है, फलतः देवास्त्र भी व्यर्थ हैं। दिव्यास्त्र फूलों की माला बन कर उनके कण्ठ में शोभित होंगे।"

"फिर उपाय ? इतने मनुष्य यहाँ सशरीर आ गये तो ?" इन्द्र बात भी पूरी न कर सके। सभी शायद उनके सिंहासन की माँग करेंगे !

"चलो, नारायण से पूछें।"

नारायण सुनकर मुस्कराये। बोले अच्छा, देखता हूँ।

नारायण ने सबसे पहले माता अन्नपूर्णा को भेजा।

अन्नपूर्णा ने मार्ग में एक पुरी बना दी। छप्पन व्यंजनों से भण्डार भर दिए। मनुष्यों का दल जब वहाँ पहुँचा तब वह बोली—"तुम सब पथ के श्रम से क्लांत हो रहे हो, आज मेरा आतिथ्य ग्रहण करो।"

मनुष्यों ने एक दूसरे का मुँह देखा, भोजन की सुगन्ध ने सब को मोहित कर लिया था। कुछ ने मोह को जीत कर कहा—"स्वर्ग के मार्ग में विश्राम नहीं किया जाता।" वे चले गये। जो रह गये उन्होंने पेट भर कर खाया और वहीं सो गये। उन्होंने यह भी पूछ लिया कि माँ हम यहीं रह जाँय तो नित्य हमें ऐसा ही भोजन मिलेगा?

माँ बोली—"अवश्य···!" वे सब वहीं रह गये।

जो नहीं रुके वे आगे बढ़े। नारायण ने तब लक्ष्मी को भेज दिया। लक्ष्मी की पुरी—सोने की पुरी! सोने के मार्ग, सोने के पलंग, सोने की धूलि! मनुष्य देख कर चौंधिया गये।

माँ बोली—"यह सब तुम्हारे लिए है बेटा। आओ, आओ—पुरी में प्रवेश करो।"

कुछ रुक गये।

मार्ग में एक और पुरी बन गई। फूलों के उद्यान, कोकिल का कूजन, मोहक गीतों की ध्वनि—एक अपूर्व सुगन्धि का उन्माद! पुरी के द्वार पर अप्सराओं का दल खड़ा हुआ, उन के एक हाथ में अपूर्व सुमनों की माला थी और दूसरे में

सोने का पान-पात्र। वे बोलीं—"आइये, विश्राम कीजिए, हम आप की दासियाँ हैं—सेवा के लिए खड़ी हैं। आप प्यासे हैं—यह पानी ग्रहण करें।"

वह पानी स्वर्गीय सुरा थी। मनुष्यों के समूह लुढ़क गये।

नारायण ने पूछा—"देखो तो इन्द्र, कोई आ रहा है कि नहीं ?"

इन्द्र ने खाँस लेकर कहा—"नहीं!"

अच्छी तरह देखो!

एक कुछ हिलता-डुलता है, शायद एक मनुष्य है।

नारायण बोले—"स्वर्ग का द्वार खोल दो, तुम स्वयं पारिजात की माला लेकर खड़े हो, उसे मेरे जैसे सम्मान के साथ ले आओ। उसके पैरों की धूलि से स्वर्ग पवित्र होगा!"

हँस कर चौधरी बोले—समझे पंडित, कहानी समाप्त करने के बाद ठाकुर महाशय ने कहा था, चौधरी इनमें से कोई भक्तों के रसाल खाद्य द्रव्यों में भूलेगा, कोई महन्त बन कर सोने-चाँदी में उलझेगा और कोई सेवादासियों के रूप में स्त्रियों में आसक्त होगा। स्वर्ग तो करोड़ों में से एक जायगा। तुम दुखी न हो पंडित, मनुष्य भूलता तो पग-पग पर है। तुम इस लिए दुखी हो रहे हो इसमें मनुष्यत्व नहीं है परन्तु मनुष्य होना क्या आसान बात है ?···अच्छा, अब मैं चला। वो जगन डाक्टर आ रहे हैं, आगये तो और रुकना पड़ेगा।"

वृद्ध चौधरी झटपट रास्ते में उतर गये।

कहानी देबू को बहुत अच्छी लगी। उसने सोचा बिलू को सुनाऊंगा। बिलू में भी विलक्षण क्षमता है, एक बार कहानी सुनकर वह याद कर लेती है।

डाक्टर ने आकर बिना किसी भूमिका के ही कहा—"मैंने सब सुन लिया है।"

देबू मुस्करा कर बोला—"तुम सवेरे से थे कहाँ?"

"अनिरुद्ध के यहाँ। लुहारिन आज फिर बेहोश हो गई थी।"

"फिर?"

"भयंकर मूर्छा थी। घर में दूसरी औरत नहीं, बच्चा नहीं, यह भी एक विपत्ति है। गनीमत हो गई कि दुर्गा चमारिन थी, उसने कुछ सहायता की। उसे मृगी रोग हो गया है। अनिरुद्ध और ही कुछ कहता है। उसको समझ से किसी ने टोना किया है।"

"टोना?"

"हाँ, वह छिरू पाल का नाम लेता है। चलो! इधर जो हो गया है वही ठीक है, नहीं तो सारा बोझ हमारे-तुम्हारे सिर पड़ता। जी० एल० बनर्जी के एरेस्ट की खबर सुनी है न?—शायद हमें भी पकड़ लेते। और सब साले अपने-अपने घर में घुस जाते। अच्छा, चलता हूँ, सवेरे से रोगी बैठे हैं, दवा देनी है।"

डाक्टर व्यस्त होकर चला गया। देबू मुस्कराया। डाक्टर

की इस व्यस्तता का आधा भाग ही वास्तविक है, शेष बनावटी है। रोगियों के लिए जगन की चिंता अकृत्रिम है; चिकित्सक का कर्तव्य पालन करने में भी वह सजग रहता है। शत्रु हो या मित्र, समय हो असमय—बुलाते ही जाता है और यत्न के साथ चिकित्सा करता है। परन्तु आज की व्यस्तता कुछ अधिक है, कुछ अस्वाभाविक है। जे० एल० बनर्जी की गिरफ्तारी के समाचार ने डाक्टर को कुछ डरा दिया है, वह इस प्रसंग को ही टाल जाना चाहता है!

"पंडित जी महाराज!" घर के भीतर से किसी ने पुकारा।

पंडित ने घूम कर देखा, बिलू खड़ी हँस रही है; उसी ने पुकारा है।

गुस्से का स्वांग भर कर देबू ने कहा, "दुष्ट बालिके, हँसती क्यों है? पाठ पूरा हो गया?"

बिलू खिलखिला कर हँसी। देबू उसके पास गया और बोला—"आज एक सुन्दर कहानी सुनी है; तुम्हें सुनाऊँगा, एक बार सुनकर ही याद करनी पड़ेगी।

बिलू बोली—"तुम जरा मुन्ना के पास बैठो, मैं लुहारिन को देख आऊं।"

—पन्द्रह—

पद्म की मूर्छा क्रमशः नियमित मूर्छा व्याधि में परिणत हो गई है।

बन्ध्या पद्म का सबल परिपुष्ट शरीर इतने दिन में ही दुर्बल हो गया है। वह कुछ दीर्घांगी है, शीर्णता के कारण और भी लम्बी जान पड़ती है और दुर्बलता भी कुछ अधिक प्रतीत होती है। चलते-फिरते समय दुर्बलता के कारण जब वह किसी वस्तु का सहारा लेकर खड़ी होती है और अपने आप को सँभालती है तब ऐसा जान पड़ता है कि दीर्घांगी पद्म थर थर काँप रही है। बालिष्ठ क्षिप्र चारिणी पद्म के प्रत्येक पदक्षेप से अब क्लांति प्रकट होती है, और मंद गति से चलने में भी उसके पैर डगमगाते हैं। परन्तु उसकी दृष्टि अस्वाभाविक रूप से प्रखर हो गई है। दुर्बल और पीले मुख पर पद्म की दो बड़ी आँखें अनिरुद्ध के प्यार से बनाये खाँडे पर लगी पीतल की दो आँखों की तरह झलमलाती हैं। स्त्री की आँखें देखकर अनिरुद्ध सिहर उठता है।

पैसे की कमी, उस पर यह दारुण दुश्चिंता, अनिरुद्ध बावला-सा हो गया है। जगन की सलाह से वह एक दिन कंकना के अस्पताल से डाक्टर बुला लाया था।

जगन ने कहा था मृगी रोग है।

डाक्टर ने बताया—"यह एक तरह का मूर्छा रोग है—हिस्टीरिया। बन्ध्या स्त्रियों को—जिन के लड़के बच्चे नहीं होते, उन्हें यह अधिक होता है।"

पड़ोसी इसे देव रोग बताते हैं। वे कहते हैं, बाबा शिव और मां काली की उपेक्षा करके कोई कभी सुखी नहीं रहा।

देवमन्दिर से नवान्न का भोग उठा लाना साधारण अपराध नहीं है। अनिरुद्ध इन सब बातों को स्वीकार नहीं करता, उसका मत सब से अलग है। उस की धारणा है कि पद्म पर टोना किया गया है। जादू टोने की विद्या जानने वाले देश से उठ नहीं गये और छिरू का मित्र चन्द्र गडांची तो इस विद्या का उस्ताद है। वह बाण मार कर मनुष्य को पत्थर की तरह पंगु बना सकता है। पद्म की एक बात उस के मन में सदा जागती रहती है !

पहले दिन जब पद्म मूर्छित हुई और जगन डाक्टर ने मूर्छा भंग की तब रातके अन्तिम पहर में पद्म एक चीख मार कर फिर बेहोश हो गई थी। अनिरुद्ध इतनी रात में डाक्टर के पास नहीं जा सका, मूर्छित पद्म को अकेली छोड़ जाना भी उसने ठीक नहीं समझा। बड़े कष्ट के बाद जब पद्म में चेतना का संचार हुआ तब वह नितांत असहाय की भाँति अनिरुद्ध से लिपट गई थी और बोली थी—"मुझे बहुत डर लगता है !"

"डर ? डर कैसा ? किस का डर ?"

मैंने स्वप्न देखा—

"क्या ? क्या स्वप्न देखा ? तू चीखी क्यों ?"

स्वप्न देखा कि एक बड़ा काला साँप मुझ से लिपटा है।—

"साँप ?"

"हाँ, साँप ! और—"

"और ?"

"साँप छोड़ा है उस मुंह जले—"

"किस ने ? कौन मुँहजला ?"

"वही ससुर छिरे चौधरी ? साँप छोड़ कर वह हमारे दरवाज़े के बाहर खड़ा हँस रहा है।"

पद्म फिर काँप कर अनिरुद्ध से लिपट गई थी।

अनिरुद्ध पद्म का यह स्वप्न भूल नहीं सका। पद्म को मूर्छित होते ही उसे यह बात भी याद आ जाती है। डाक्टर जब चिकित्सा कर रहे थे तब उसने जान-बूझ कर इस बात को महत्व नहीं दिया परन्तु धीरे-धीरे उसकी धारणा दृढ़ हो गई है। अब वह किसी अच्छे ओझा या देवस्थान की चिंता में रहता है।

अनिरुद्ध की इस धारणा का ज्ञान विशेष किसी को नहीं है, पद्म से भी उसने नहीं कहा। कहा है केवल अपने साथी गिरीश बढ़ई से। कस्बे की दूकान के रास्ते में दोनों अपने सुख-दुःख की कितनी ही बातें करते हैं। और भी कितनी ही बातें वे सोचते हैं। सारा गाँव इन दिनों एक तरफ़ है और इन लोगों को तङ्ग करने के लिए संगठित एवं निरन्तर चेष्टा होती है। इनके साथ केवल पातू मोची है ? छिरूपाल को श्री हरि घोष के नाम से गाँव का प्रधान बनाकर परदे के पीछे से दास जी बटन दबाता है। गाँव के गठजोड़ में देबू पंडित, जगन डाक्टर और तारा नाई शामिल नहीं हैं। देबू तटस्थ है, उसकी प्रीति और स्नेह पर अनिरुद्ध को विश्वास भी है, परन्तु इन सब

बातों से उसे सदा विरक्त करने में अनिरुद्ध को संकोच होता है। जगन डाक्टर दिन-रात झिरू को गाली देता है लेकिन उस की दौड़ वहीं तक है, उससे और किसी बात की आशा करना व्यर्थ है। ताराचरण पर विश्वास करना कठिन है। ताराचरण के साथ गाँव वालों का झगड़ा भी निपट गया है। गाँव वाले ही निपटाने के लिए बाध्य हुए हैं, कारण सामाजिक कामों में नाई की आवश्यकता बहुत होती है। जाति धर्म से लगाकर श्राद्ध तक में नाई चाहिए। ताराचरण अब नगद पैसे लेकर काम करता है, रेट अवश्य उसने बाज़ार से आधा रखा है;—हजामत का एक पैसा, बाल काटने के दो पैसे—दोनों साथ हों तीन पैसे।

दूसरी ओर सामाजिक क्रियाकलापों में उस का नेग भी कम हो गया है। नगर विदा के सिवा उसे चावल और कपड़ा आदि भी मिलता था, वह नाई ने छोड़ दिया है। ताराचरण नाई किसी पक्ष में सम्मिलित नहीं है, उसे तटस्थ भी कहा जा सकता है। अनिरुद्ध और गिरीश पूछते हैं तो वह गाँव वालों के परामर्शों की बातें चुपचाप बता जाता है। उधर गाँव वाले अनिरुद्ध और गिरीश के सम्बन्ध में पूछते हैं तो उनसे भी कुछ कह देता है। फिर भी ताराचरण का झुकाव अनिरुद्ध और गिरीश की ओर अधिक है। पातू के साथ उसका कोई सम्बन्ध नहीं। इन को वह दो-चार बातें अधिक ही बताता है परन्तु देबू से वह बिना पूछे ही सब कुछ कह जाता है। देबू

को वह प्यार करता है। जगन डाक्टर से भी वह कुछ बातें कह देता है, जगन चिल्ला कर गालियाँ देता है, इससे ताराचरण प्रसन्न होता है—दाँत निकाल कर हँसता है। परन्तु काइयाँ ताराचरण अनिरुद्ध और गिरीश के साथ प्रकट रूप में अपनी मित्रता कभी नहीं दिखाता। वार्तालाप तक कस्बे की दूकान पर करता है। उसने भी अब कस्बे में एक पेड़ के नीचे अपना साज-सामान ले कर बैठना आरंभ किया है। पाँच गाँवों में उस की जजमानी है, उनमें से तीन गाँवों का काम उस ने छोड़ ही दिया है। दो गाँव जो रह गये हैं उन में एक उसका अपना गाँव है—दूसरा महुग्राम। महुग्राम के ठाकुर महाशय उसे महाग्राम कहते हैं. ये ठाकुर महाशय शिवशेखर न्यायरत्न जब तक जीवित हैं तब तक उस गाँव का काम छोड़ना भी असंभव है। दोनों गाँवों के लिए दो दिन छोड़ कर सप्ताह के शेष पाँच दिन वह भी अनिरुद्ध और गरीश की भाँति सवेरे उटकर ही कस्बे चला जाता है और बाज़ार में अनिरुद्ध की दूकान के पास पेड़ की छाया में ईंटें बिछाकर बैठता है—यही उसका कटिंग सैलून है। पूरे सैलून की कल्पना भी उसने कर रखी है। अनिरुद्ध के साथ यही बार्तालाप होता है।

अनिरुद्ध ने पद्म की बीमारी के विषय में अपनी धारणा गिरीश को बताई परन्तु ताराचरण से प्रकट नहीं की। ताराचरण पर वह पूरा विश्वास नहीं करता।

किंतु ताराचरण की जानकारी बहुत है। अच्छे ओझा,

विश्वस्त देवस्थान और प्रेत-बाधा दूर करने वाली जगहें—तारा सब से अधिक बता सकता है। अनिरुद्ध सोचता है कि ताराचरण से बात की जाय या नहीं।

उस दिन आवेग में आकर अनिरुद्ध ने ताराचरण के स्थान पर जगन डाक्टर से कह दिया। दोपहर को कम्बे की दूकान से लौट कर उस ने देखा कि पद्म बेहोश पड़ी है। पता नहीं मूर्छा कब आई थी, पानी के छींटे मारने पर भी होश न आया। दूकान की भट्टी के सामने काम करने और वहाँ से इतनी दूर चलकर आने के कारण अनिरुद्ध का मिजाज पहले ही बिगड़ रहा था। विरक्ति और क्रोध ने उसे विक्षिप्त कर दिया, पानी का लोटा फेंक कर और पद्म की चोटी पकड़ कर उस ने घसीटा। परन्तु पद्म जड़ हो रही थी। बाल छोड़ कर उस ने पद्म के मुँह की ओर देखा और अंतर में उठे हुए रुदन के आवेग से वह काँपने लगा। वह पागल की भाँति दौड़ कर गया और जगन डाक्टर को बुला लाया। जगन की तीव्र औषध की झाँझ से पद्म ने अचेतनावस्था में ही दो-एक बार मुँह हटाया, और अंत में लम्बी साँस ले कर आँखें खोल दीं।

डाक्टर बोला—"होश तो आ गया। तू रोता क्यों है?"

अनिरुद्ध की आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। वह बोला—"मेरा भाग्य तो देखो डाक्टर।" आग के सामने जल-भुन कर और डेढ़-दो कोस चल कर यहाँ आया तो यह

झमेला खड़ा है।"

डाक्टर बोला—"किया क्या जाय ? रोग पर तो किसी का वश नहीं है। यह मनुष्य की करतूत तो है नहीं।"

अनिरुद्ध अब आत्म-संवरण न कर सका, वह बोल पड़ा—"यह मनुष्य की ही करतूत है डाक्टर; मुझे इसमें रंच-भर भी संदेह नहीं है। रोग होता तो इतनी चिकित्सा हुई जरा भी न दबता ? यह मनुष्य की करनी है।"

जगन डाक्टर होते हुए भी पुराने संस्कारों को सर्वथा नहीं भूल सका; रोगी को मकरध्वज देकर और इंजेक्शन लगा कर भी वह देवता के पादोदक पर भरोसा रखता है। अनिरुद्ध के मुँह की ओर देख कर वह बोला—"ऐसा भी हो सकता है। जादू-टोना अब भी कुछ न कुछ रह ही गया है। किन्तु हमारी डाक्टरी तो इन बातों पर विश्वास नहीं करती। वह कहती है..."

अनिरुद्ध ने टोक कर कहा—"कहे, यह करतूत उसी हरामजादे छिरू की है।" अनिरुद्ध क्रोध से जल गया।

विस्मय के साथ जगन ने पूछा—"छिरू की ?"

"हाँ, छिरू की" क्रुद्ध आवेग में अनिरुद्ध ने पद्म का स्वप्न सुना दिया। अंत में बोला—"वह चंदर गड़ाची छिरू साले का गहरा दोस्त है न—वह साला यह विद्या जानता है। योगी गड़ाची की लड़की को वशीकरण करके कैसे निकाला था—देखा नहीं ! उसी से छिरू ने यह काम करवाया है।"

जगन गहरी चिंता में डूब गया, कुछ देर बाद दो-तीन बार गरदन हिला कर उसने कहा—"हूँ"।

क्रोध से अनिरुद्ध के ओंठ काँप रहे थे। पद्म वार्तालाप के बीच में ही उठकर बैठ गई थी और दीवार के सहारे बैठी हाँफ रही थी। अनिरुद्ध की धारणा सुन कर वह अवाक् हो गई।

जगन बोला—"फिर तू देख अनिरुद्ध—कोई नाबीज़-वाबीज़ बन जाय तो अच्छा हो। लेकिन मैं एक बात बताऊँ और तू देख लेना यह पूरी होगी। वह अपने बाण से स्वयं मरेगा।"

अनिरुद्ध ने विस्मय के साथ जगन की ओर देखा। डाक्टर बोला—"स्वप्न में साँप देखने से जानता है क्या होता है?"

"क्या होता है?"

"वंश बढ़ता है, बच्चा होता है। तेरे भाग्य में लड़का नहीं है लेकिन छिरे ने जब खुद साँप छोड़ा है तब उसका लड़का मर कर तेरे घर में जन्म लेगा। तेरे नहीं है, उसने दे दिया।"

जगन की यह विचित्र व्याख्या सुन कर अनिरुद्ध विस्मय से स्तंभित हो गया। उसकी आँखें फैल गईं और वह स्थिर दृष्टि से जगन की ओर देखता रह गया।

पद्म का घूँघट कुछ खिसक गया, वह भी स्थिर दृष्टि से सामने की ओर देखने लगी। उसे छिरू की दुबली-पतली गौर वर्ण स्त्री याद आई। उसकी आकृति और आँखों में भरी बिनती याद आई और यह भी याद आया कि उसने कहा

था—'मेरे दोनों बच्चों को न कोसना, बहन ! तुम्हारे पैर छूती हूँ !'

जगन और अनिरुद्ध बातें करते-करते बाहर चले गये। जगन बोला—"चिकित्सा इसकी कोई विशेष नहीं है। ऐसा होना चाहिए कि इसका दिमाग ठण्डा रहे। और न हो तो तू साव-आम के शिवनाथ-तला तक चला जा। शिवनाथ-तला का नाम तो खूब फैल रहा है।"

शिवनाथ-तला का व्यापार भौतिक है। कहते हैं, एक पुत्र हीना और शोकार्ता माँ के अविराम रुदन से प्रभावित होकर उसके मृत पुत्र की प्रेतात्मा प्रति दिन सायंकाल में अपनी माँ के पास आती है। माँ एक अँधेरे कमरे में आसन बिछा देती है और भोजन रख देती है; प्रेतात्मा वहीं बैठती है और माँ से वार्तालाप करती है। विभिन्न स्थानों से आये हुए और भी कितने ही व्यक्ति इस अवसर पर प्रेतात्मा से अपने रोग, दुःख, अभाव, अभियोग निवेदन करते हैं और वह उन्हें दूर करने के उपाय बता देती है।

अनिरुद्ध बोला—"अच्छा सोचूँगा।"

"सोचता क्या है, तू चला ही जा। देख तो वह क्या कहता है।"

अनिरुद्ध ने एक लंबी साँस ली, उसके मुँह पर फीकी मुस्कान आई। वह बोला—"इधर पीठ तो दीवार से लगी है, जाऊँ कैसे ?"

डाक्टर ने अनिरुद्ध की ओर देखा, अनिरुद्ध बोला—"पूँजी

तो खतम हो चुकी है डाक्टर साहब । वर्षा में तो भात भी न नसीब होगा । खेत के धान तो जड़ से ही उड़ गये हैं, गाँव वालों ने भी नहीं दिए, मैं भी माँगने नहीं गया । उस पर यह रोग—खरच जो हो रहा है वह आप जानते ही हैं ! शिवनाथ का पेट तो सुनता हूँ बड़ा है ।"

प्रेत-देवता शिवनाथ रोग-शोक का प्रतिकार बताते हैं, इसके बदले में उनकी माँ को रुपये देने पड़ते हैं, और वे पहले ही ले लिए जाते हैं ।

जगन बोला—"पाँच-सात रुपये की बात हो तो मैं ही किसी तरह चेष्टा करूँ अनिरुद्ध, अधिक तो—"

अनिरुद्ध उच्छ्वसित हो गया । डाक्टर की बात समाप्त होने के पहले ही बोला—"काम चल जायगा, डाक्टर", इतने में ही काम चल जायगा, कुछ मैं और उधार-उधूर ले लूँगा । कुछ देबू से, कुछ आप से और कुछ दुर्गा से यदि—

डाक्टर ने तिरछी भौंहों के साथ पूछा—"दुर्गा ?"

अनिरुद्ध फिक-से हँसा, फिर सिर खुजा कर कुछ लज्जित भाव से बोला—"पातो मोची की बहन दुर्गा ।"

डाक्टर ने दोनों आँखें फैलाईं, मुस्कराया—"ओह !" फिर पूछा—"छोकरी के पास रुपये, रुपये हैं कुछ ?"

"हैं क्यों नहीं ? साले छिरू से ही उसने बहुत से रुपये ऐंठ लिए हैं । कंकना के बाबुओं से भी उसे काफ़ी मिलता है । पाँच रुपये से कम में तो घर से ही नहीं चलती ?"

"छिरू के साथ तो सुना अब उसकी अनबन होगई है ?"

आँखें फैला कर अनिरुद्ध ने कहा—"मुझ से एक खाँडा बनवाया है; कहती है पागल कुत्ते का भरोसा नहीं ! रात में बिछौने पर रख कर सोती है।"

"सच ?"

"बिल्कुल !"

"लेकिन तेरे साथ इतना मेल-जोल क्यों है ? आसनाई है?"

अनिरुद्ध ने सिर खुजाते हुए उत्तर दिया—"नहीं, वह नहीं लेकिन—दुर्गा औरत भली है, आता-जाता हूँ, गप-शप लड़ती है।"

"शराब-बराब तो चलती है ?"

"वह—एक आध दिन बीच-सीच में—"

अनिरुद्ध लज्जित होकर मुस्कराया।

\+ + + +

दुर्गा के साथ अनिरुद्ध की घनिष्ठता गहरी हो रही है

आज कल दुर्गा दूध देने रोज कस्बे जाती है। लौटती हुई अनिरुद्ध की दूकान पर बैठ कर एक बीड़ी पीती है और सरस हास-परिहास से थकावट उतारती है। अनिरुद्ध भी सवेरे शाम दुर्गा के घर के सामने से ही कस्बे आता-जाता है, दुर्गा भी उसे एक बीड़ी देती है, अनिरुद्ध खड़े-खड़े बीड़ी पीता है और चार बातें भी कर लेता है। खाँडे के उपलक्ष में घनिष्ठता थोड़े दिनों में ही गहरी हो गई है। एक दिन अनिरुद्ध अपनी दूकान में उदास और चिंतित बैठा था, लोहा खरीदने के लिए

दाम चाहिए थे और अनिरुद्ध की जेब खाली थी। दुर्गा ने उसे उदास देखा तो पूछा—"आज गुम-सुम क्यों बैठे हो?"

दुर्गा को एक बीड़ी देकर और स्वयं भी एक सुलगा कर अनिरुद्ध ने अपनी चिंता का कारण बता दिया। दुर्गा ने उसी समय धोती के खूँट से दो रुपये निकाल कर दे दिए थे और कहा था—"चार दिन में वापस देने होंगे भाई!"

अनिरुद्ध ने चार दिन बाद रुपये लौटा दिए थे। दुर्गा ने हँस कर कहा था—"व्यवहार मेरा तो हीरे का टुकड़ा है।"

अनिरुद्ध भी दुर्गा को बहुत अच्छा लगता है। तेज़ आदमी है, किसी की परवाह नहीं करता लेकिन स्वभाव कितना मधुर है! अनिरुद्ध की आकृति उसे और भी भली जान पड़ती है! शरीर भी जैसे पत्थर काटकर गढ़ा गया है! भारी हथौड़ा लेकर जब वह लोहे पर अनायास चोटें मारता है तब दुर्गा का सर्वांग भय से सिहर जाता है; फिर भी वह मुग्ध दृष्टि से देखती रहती है, एक भी चोट निशाने से बाहर नहीं पड़ती।

\+ + + +

अनिरुद्ध ने घर लौट कर देखा कि पद्म चुपचाप बैठी है—रसोई वैसी ही सूनी पड़ी है। पद्म से कुछ न कह कर उसने कुछ चैलियाँ उठाईं और चूल्हे में डालकर आग जलाने लगा। भोजन बनाना होगा, फिर कस्बे की तरफ़ दौड़ना पड़ेगा—जहाँ दुनिया भर का काम पड़ा है!

पद्म ने किसी को डाँटा—"चल!"

अनिरुद्ध ने घूम कर देखा, कहीं कोई नहीं। कौव्वा, कुत्ता या बिल्ली भी नहीं दीख पड़ती। उसने विरक्ति के साथ पूछा—"कौन है ?"

पद्म ने उत्तर में प्रश्न किया—"कहाँ ?"

अनिरुद्ध बिगड़ गया, बोला—"पागल हो गई है ? कहीं कोई नहीं है, तू डाँटती किसे है ?"

पद्म लज्जित हुई, लज्जित ही नहीं हुई, कुछ अधिक चैतन्य भी हो गई, धीरे से उठकर चूल्हे के पास पहुँची और बोली—"खिसको। मैं कर लूँगी। तुम जाओ।"

अनिरुद्ध कुछ देर तक उसकी ओर देखता रहा फिर खड़ा हो गया। उसकी सहन-शक्ति भी जवाब दे चुकी है। किन्तु मेरी अनुपस्थिति में पद्म फिर मूर्छित हो जाय तो ! उसने सोचा और दुविधा में कुछ देर खड़ा रहा। फिर निर्णय किया हो जाय, मुझ से अब नहीं होता ! वह बाहर निकल गया।

पद्म ने रसोई आरंभ की। हाँडी में चावलों के साथ कुछ आलू और एक कपड़े में बाँध कर थोड़ी सी मसूर की दाल डाल दी। और फिर चुपचाप बैठ गई।

अनिरुद्ध बाहर गया है। घर में और कोई नहीं। सूने घर में अकेली बैठी पद्म को वह स्वप्न ही बार-बार याद आता है और उससे भी अधिक याद आती है डाक्टर की व्याख्या—छिरूपाल का बड़ा लड़का अपनी माँ को कितना प्यार करता है।

वही—वही आवेगा ?

पद्म का हृदय तीव्र गति से स्पन्दित होने लगा।

ऐसा जान पड़ा कि लड़के की वह शीर्ण गौरांगी माँ खिड़की के पास आधे अँधेरे और आधे उजाले में खड़ी है, उस की आँखों में विनती भरी है। पद्म ने एक कातर और लंबी साँस ली। बार बार अपने मन में ही कहने लगी—नहीं, नहीं, तुम्हारी गोद का लाल मैं नहीं छीनना चाहती।

चूल्हे में लकड़ियाँ जलने लगी हैं, हाँडी सामने रखी है, वह चूल्हे पर चढ़ा देनी चाहिए परन्तु पद्म को उसका ख्याल तक नहीं आया, वह चुपचाप बैठी है। उस के अंतर में कोई अधोर अतृप्त रह रह कर बिजली की कौंध की तरह निष्ठुर भाव से कहने लगता है—मरे मरे, ''मनश्चक्षु के सामने पाल का लड़का आता है। भय और चांचल्य से सिहर कर पद्म कहती है—नहीं, नहीं !

पाल की बहू के आठ संतानें हुई थीं। उन में से दो रह गई हैं, कहते हैं वह फिर संतान-संभवा है। उसका चला जायगा तो फिर मिल जायगा ''जाय, उसका एक और चला जाय ! हर्ज क्या है !

चूल्हे की आँच काफी तेज हो गई थी, फिर भी उसने लकड़ियों को अकारण ही भीतर ठेल दिया और अकारण ही स्फुट स्वर में बोली—'आ, छिः छिः छिः।'

फिर उसने अपनी पाली हुई बिल्ली को बुलाया-'मेनी'

मेनी, आ आ, पूसी आ !'

बच्चा न हो तो स्त्री का जीवन क्या ! बच्चा न हो तो घर-गिरस्ती क्या ? बच्चा दुनिया भर का जंजाल लाकर फैलावेगा—पत्ते, कागज, लाठी, मिट्टी, गोड़े, पत्थर—जाने कितनी चीजें ! वह डाँटेगी और जगह साफ करेगी; कड़ी डाँट से बच्चा रोने लगेगा, पद्म उसको छाती से चिपका कर प्यार करेगी। उस को चिढ़ाने के लिए अपनी मुट्ठी में धूल लेगी, मुँह के पास ले जायगी और खाने का अभिनय करेगी—हाय-हाय-हाय ! बच्चा रोयेगा, हँसेगा, अनर्गल बकेगा, जिद करेगा, साथ-साथ पद्म भी प्रलाप करेगा और जब थक जायगी तब उसके एक चाँटा मार देगी। वह रोता-रोता गोद में आवेगा और सो जायगा। उसके शरीर पर हाथ फेर कर और दोनों गालों के दो चुम्मे लेकर बिछौने पर सावधानी से सुला देगी।

कल्पना करते-करते पद्म की आँखों से आँसू बहने लगे।

उसके बच्चा नहीं हुआ, कोई एक बच्चा पालने के लिए ही दे दे ! एक मातृहीन शिशु ही मिल जाय ! बच्चे की कोई माँ मरती क्यों नहीं ? पाल की बहू ही क्यों नहीं मर जाती ? पंडित की स्त्री ही क्यों नहीं मरती ? नहीं तो वह स्वयं क्यों नहीं मर जाती—फिर तो सारी ज्वाला शान्त हो जाय ?

बाहर से अनिरुद्ध की आवाज आई—चण्डी-मण्डप के साथ मेरा कोई सम्बन्ध नहीं। मैं वहाँ नहीं जाता। पूस की विदा मैं अपने दरवाजे पर करूँगा।

पद्म के अंतर में सहसा दुरन्त क्रोध जाग्रत हुआ। इच्छा हुई कि चूल्हे से जलती हुई लकड़ी निकाल कर घर में आग लगा दे। सब खाक हो जाय, अनिरुद्ध भी जल मरे। दूसरे क्षण में ही उसने हाँडी उठाकर चूल्हे पर रख दी. उसमें पानी डाल दिया और चावल धोने लगी।

कल फिर लक्ष्मी-पूजा है, पौष-संक्रांति की—पौष लक्ष्मी की पूजा।

लक्ष्मी! यह घर और लक्ष्मी! किस के लिए लक्ष्मी! किस की लक्ष्मी!

—सोलह—

पौष संक्रांति के दिन पौष-लक्ष्मी या पौष-पार्वण मनाया जाता है। नवान्न से लम्बे दो महीने के बाद ग्रामीण जीवन में यह सार्वजनिक उत्सव आता है। जहाँ सूर्योदय से लगाकर सूर्यास्त तक के बारह घण्टों में से अधिकांश हल खींचने वाले कुबड़े बैलों की अति मंथर गति के पीछे चलने में बीतते हैं अथवा घर की दीवार के बराबर ऊंचे धानों से भरी गाड़ी के पहिए ठेलते या धान के गट्ठे सिर पर लादकर श्वास के रोगी की तरह दुःसह कष्ट से साँस लेते गुज़रते हैं, वहाँ दो महीने का समय लम्बा ही समझा जाता है। बीच में इतु लक्ष्मी आतीं है परन्तु उसमें नियम है और उसका पालन है—वह पर्व नहीं है—समारोह नहीं होता। पौष-पार्वण में प्रत्येक

घर समारोह से मुखरित हो जाता है। अगहन की संक्रांति में धान के गोदाम में लक्ष्मी का आसन बिछाकर चिवड़ा, लैया, लैया के लड्डू और तली हुई दाल आदि से पूजा की जाती है। पौष-संक्रांति में लक्ष्मी का आसन घर में बिछेगा, कौड़ियाँ सजाई जायँगी, सिंहासन के दोनों ओर लकड़ी के दो उल्लू रखे जायँगे और तब विविध व्यंजनों से पूजा होगी, लक्ष्मी के साथ-साथ कितने ही देवताओं को भोग दिया जायगा। ढेकियों में ढेरों चावल कूटे गये हैं—तरह-तरह के 'पिठा' बनेंगे। रस तैयार हो चुका है। गुड़-नारियल और गुड़-तिल की मिठाइयाँ बनी हैं। दूध और रबड़ी प्रस्तुत है—लोग आकण्ठ प्रसाद ग्रहण करेंगे।

अनिरुद्ध के यहाँ इनमें से कोई भी आयोजन नहीं हुआ। पहले तो पद्म बीमार है, दूसरे हाथ खाली है। पूस भर अनिरुद्ध की दूकान एक तरह से बन्द ही रही है। इन दिनों में लोहे का काम अधिक नहीं होता फिर भी धान काटने के लिए हँसिये तेज़ करवाए जाते हैं और गाड़ी के पहियों में लगा लोहे का हाल ठीक करवाना पड़ता है। समय के अभाव में अनिरुद्ध यह भी नहीं कर सका। खेत में उसके जो धान थे वे तो कोई काट ले गया, शेष भूमि पर जो फ़सल है उसके लिए वह बटाईदार के साथ मजूर की भाँति परिश्रम कर रहा है, धान के गट्ठर सिर पर लाद कर घर लाता है। वे हैं ही कितने! लेकिन इतने थोड़े धान भी अभी तक घर नहीं आये।

इधर सरकारी सेटेलमेंट आगया है। हुकुम मिला कि—"अपनी-अपनी ज़मीन के स्वत्व-स्वामित्व आदि के प्रमाणादि लेकर उपस्थित रहो नहीं तो कानूनी कार्रवाही की जायगी।" एक टुकड़ा ज़मीन की नाप करवाने में ही सवेरे से दोपहर हो जाती है। पके धानों के ऊपर से जंजीर खींचकर लाने से उस टुकड़े तक पहुँचने में भी चार-पांच दिन लग जाते हैं। एक टुकड़े से निपटे तो दो-तीन या चार-पाँच दिन की छुट्टी मिली उसके बाद फिर एक टुकड़ा आ गया। अनिरुद्ध ही नहीं, सब गाँव वाले इसी तरह परेशान हो रहे हैं। पौष-संक्राति आ गई है, घर में लक्ष्मी-पूजा का आयोजन हो रहा है लेकिन लक्ष्मी अब तक खेतों में ही है। गाँव भर में किसी भी गृहस्थ के यहाँ अभी तक 'मगुन' नहीं आया। मगुन जब सब धान कट जायँगे तब आयेगा। अनिरुद्ध को स्वयं धान का अन्तिम गुच्छा काटना होगा, उसकी जड़ में पानी डालना होगा और गुच्छे को सिर पर रखकर घर लाना होगा। बटाईदार को खार बनाकर खिलानी पड़ेगी। हर साल लक्ष्मी के साथ यह पर्व भी निपट जाता है, इस बार सेटेलमेंट के कारण रह गया है।

× × × ×

भात की हाँडी उतार कर पद्म ने बीच निकाल दिया फिर लत्ते का कोना ढूंढ़ कर एक छोटी सी पोटली निकाली। पोटली में थोड़ी सी मसूर की दाल, चार अदद आलू और कुम्हड़े का एक

टुकड़ा है। इनको मसल कर और भरता बनाकर मछली खानी होगी, मछली के बिना अनिरुद्ध भात ही नहीं खाता। इसी लिए खिड़की के बाहर जो तलैया है उसके किनारे पद्म ने कुछ गढ्ढे खोद रखे हैं। कीचड़ में रहने वाली मछलियाँ उनमें आ जाती है, उनमें सतर्क होकर हाथ डाला जाय तो मछलियाँ मिल जाती हैं। पद्म ने विरक्त होकर दरवाजे की ओर देखा। इतना काम तो वे कर सकते थे? नवाब गये कहाँ? एक बार बाहर आवाज सुन पड़ी थी, चण्डी-मण्डप न जाने की डींग मार रहे थे फिर न जाने कहाँ गायब हो गये। चण्डी-मण्डप न जायंगे। इसीलिए तो काली मैया के नाम पर बैंगन के जो पेड़ लगाये थे उनमें पानी भर गया है और वे सड़ गये है! ऐसी गति न होती तो यह दुर्गति क्यों हो जाती?...

"—कर्मकार है? कर्मकार! ओ कर्मकार! कर्मकार हो!!"

"कौन है? जवाब नहीं मिलता फिर भी चिल्ला रहा है!"

"—ओ कर्मकार! अभी तुम्हारी दुग्गा ने कहा कि कर्मकार घर गया है और तुम बोलते ही नहीं! ओ कर्मकार!"

अनिरुद्ध दुर्गा के घर गया था। उसके पास रूप है तो क्या चमारिन के घर जाना चाहिए! छिः छिः छिः!...लक्ष्मी? ऐसे आदमी के यहाँ लक्ष्मी रहेगी? या ऐसे आदमी का वंश चलेगा? पद्म पागल-सी हो गई—उसने चूल्हे से एक जलती हुई लकड़ी निकाल कर बाहर की। उसने सोचा—आग लगा दूँ, इस घर में आग लगा दूँ—सब

खाक हो जाय। परन्तु इसी समय भूपाल चौकीदार भीतर "आगया। अरे कर्मकार, तुम कैसे आदमी हो? चिल्लाते-चिल्लाते मेरा गला फट गया? कहाँ, कर्मकार कहाँ है?"

अनिरुद्ध को घर में न देखकर भूपाल कुछ दब गया, सँभल कर बोला—"तुम कर्मकार से कहना कि मैं आया था, मेरी तो जान जा रही है। बुलाने से लोग आते नहीं, और गुमास्ता कहेगा—साले, बैठे बैठे खाने के लिए महीना मिलता है?"

"कौन है? क्या काम है कर्मकार से?" अनिरुद्ध दरवाजे से ही पूछता हुआ आया।

ये आगया कमकार। भूपाल ने आराम की साँस ली। "तुम भाई ज़रा चलो, गुमास्ते ने तो मेरी खोपड़ी खा ली है।"

अनिरुद्ध ने लपक कर भूपाल की कलाई पकड़ ली और बोला—"ए, तू घर में क्यों घुसा?"

भूपाल ने उसकी ओर देख कर रुष्ट स्वर में कहा—"हाथ छोड़ दे कर्मकार।"

"तू घर में घुसा? तगादा है तो बाहर से कर। ज़मीदार का प्यादा— भेड़िए का गुलाम, गीदड़ कहीं का।"

झटके से हाथ छुड़ाकर भूपाल भी तड़पा। "मुँह सम्हाल कर्मकार मुँह सँभाल कर बात कर, दो साल की बाकी पड़ी है तूने दी क्यों नहीं? हज़ार बार घर में घुसूंगा। यूनियन बोर्ड का टैक्स···आज तक दिया नहीं।" भूपाल भी अहीर का बेटा है, अकड़ कर खड़ा हो गया।

यूनियन बोर्ड का टैक्स ! अनिरुद्ध अस्थिर हो गया। परन्तु और आगे बढ़ने का साहस भी वह न कर सका। भूपाल की बात उड़ा कर उसने अपनी ही लात ऊपर रखी—"मैं होता तो तू घर में आता। जब मर्द नहीं है तब तू घर में क्यों घुसा ?"

भूपाल बोला—"चलो, गुमास्ता बुलाते हैं।"

"जा, जा, कह दे मैं किसी के बुलाने से नहीं आता।"

"और टैक्स ?"

"कह दे, मैं नहीं देता।"

"अच्छा !" भूपाल चला गया। साफ़ जवाब देकर अनिरुद्ध निश्चिन्त हो गया और आस्फालन करने लगा—अदालत है, वकील हैं—कानून है—नालिश करो ! घर में कैसे घुसेगा, घर में ! हिम्मत तो देखो !

अकस्मात वह रुआसे स्वर में बोला—"मैं ग़रीब हूँ तो क्या मेरी इज्जत नहीं है ! हमें कोई आदमी ही नहीं समझता !"

पद्म अब तक चुप थी, उबली हुई चीज़ों में लोन-तेल मिला रही थी, अब बोली—"मछली न ले आओगे ?"

"मछली ? मछली न चाहिए। मैं कुछ न खाऊँगा। मेरा पेट भर गया है।"

पद्म ने चुपचाप भात परोसना आरंभ किया।

अनिरुद्ध चीख कर बोला—"तूने घर बरबाद किया है—लक्ष्मी भगा दी है !"

"मैंने ?"

"हाँ, तूने । दिन-रात पड़ी रहती है, घर में संध्या नहीं होती, धूप नहीं जलती। ऐसे घर में लक्ष्मी रहती है ? कल लक्ष्मी-पूजा है ? भटकटैया से पूजा होगी ?" क्रोध और क्षोभ से अधीर होकर अनिरुद्ध बाहर चला गया।

पद्म चुपचाप बैठी रही। उसके अंतर में जो क्षोभ उठा था उसकी उन्मत्तता इतनी देर में प्रशांत उदासीनता में बदल गई है। कौन जाने कि अनिरुद्ध के अपमान और क्षोभ से उसे तृप्ति मिली है या नहीं, परन्तु उसके क्षोभ की वह उन्मत्तता शांत हो गई है जिससे वह घर में आग लगा देने के लिए तयार हो गई थी। आँचल बिछा कर वह वहीं लेट गई।

× × × ×

पद्म चुपचाप रो रही थी, आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी और उसकी गरदन भिगो कर भूमि पर गिर रही थी ! रोने से उसके अंतर का यंत्रणादायक आवेग कम हो जाता है। रुदन के बाद उसे तृप्ति होती है, आनन्द आता है।

"कहाँ ? लुहारिन कहाँ हैं ?"

कौन बुलाता है ? पद्म ने आँसू पोंछ डाले, परन्तु उत्तर न दिया। उत्तर देने की इच्छा न हुई।

"लुहारिन ! अरे, इस वक्त चूल्हे के सामने क्यों पड़ी हो ?"

पद्म के बदन में आग लग गई। उसने पहचाना, दुर्गा बुला रही है। चमारिन की हिम्मत देखो ! पुकारने का ढंग देखो !

अत्यन्त अप्रसन्न स्वर में वह बोली—"क्यों ? क्या काम है ?"

दुर्गा हँस कर बोली—"एक काम है तुमसे।"

"मुझ से ? क्या काम है ? कैसा काम है ?"

"बताती हूँ, उठ कर तो बैठो।"

"मेरी तबियत अच्छी नहीं है।"

दुर्गा ने शंकित स्वर में कहा—"अच्छी नहीं है ? फिर मैं वहाँ आऊँ ?"

पद्म को जैसे बिजली ने छू लिया, झटपट उठ कर बैठ गई, बोली—"नहीं।"

दुर्गा ने उसके मुँह की ओर देखा और हँस कर कहा—"अरे, तुम तो रो रही थीं। क्या हुआ ? कर्मकार के साथ झगड़ा हो गया ? उसने हि हि करके हँसना आरंभ किया।"

"तुम्हें क्या करना है ? तुम अपना काम बताओ। पूछती कैसे हैं जैसे मेरी सगी हों।"

"तुम्हारी सगी ही तो हूँ। नहीं हूं—तुम्हीं बताओ।"

"तू मेरी सगी है ?" गुस्से से भरी पद्म ने अब 'तू' कहा।

दुर्गा यह सम्बोधन सुन कर भी बिगड़ी नहीं, हँसी। हँस कर ही बोली—"हाँ जी, हाँ ! मैं तो तुम्हारी सौत हूँ ! तुम्हारे मालिक मुझे चाहते हैं।"

पद्म ने बौखला कर हाथ में झाड़ उठा ली।

दुर्गा ने मुस्करा कर कहा—"मुझे छुओगी तो इस कुबेला में फिर नहाना पड़ेगा ! पहले मेरी बात तो सुन लो फिर न हो तो

मार ही लेना, लेकिन झाड़ फेंक कर मारना !"

पद्म आवाक् होगई।

दुर्गा बोली—"ठहरो, पहले दरवाज़ा बन्द कर दूँ, न जाने कौन आ जाय !"

पद्म अब तक शांत नहीं हुई, तीखे स्वर में बोली—"आयेगा कौन ? मेरे तो दरजनों नागर नहीं हैं।"

दुर्गा फिर हँसी—"मेरे तो है बहन, वे सूँघते सूँघते आ जाँय तो !"

झाड़ मार कर नशा उतार दूँगी।

दुर्गा ने इतनी देर में दरवाज़ा बन्द कर दिया। लौट कर और स्पर्श बचा कर दूर से ही बोली—"दूसरों का नशा तो उतार दोगी लेकिन अपने मालिक से क्या कहोगी ? वे भी तो मेरे—तुमने जो कहा—वही हैं !···चलो, ठट्ठा छोड़ो—ये भीतर रख लो।" उसने कांख से छोटी सी टोकरी निकाली और एक लोटा दूध, एक भेली गुड़, दो गरी के गोले, सेर सवा सेर तिल, एक बरतन में आधा सेर तेल और कुछ मसाला आदि-निकाल कर बाहर रखा। बोली—"जाओ, लक्ष्मी-पूजा की तयारी करो। अरवा चावल तो मेरे पास है नहीं और हमारे चावलों से तुम्हारा काम भी न चलेगा—तुम्हारे मालिक ने बताया है।"

पद्म फिर भड़की, जी चाहा कि लात मार कर सामान फैला दे, किन्तु इसी समय किसी ने दरवाज़े पर धक्का मारा।

ायद अनिरुद्ध है, अच्छा हुआ, वह आ जाय, उसके सामने
ो लात मार कर सब कुछ फैला देगी ।

पद्म ने लपक कर दरवाज़ा खोला, किन्तु अनिरुद्ध नहीं
ूढ़ी दादी है, उसने शांत स्वर में संभाषण किया—"दादी !"

'हाँ। तो हाँ री नत बहू !"—कहते कहते बूढ़ी की दृष्टि
ुर्गा पर पड़ी ।—"अरे, वह कौन बैठा है, कौन है ?"

"मैं !" दुर्गा ने ऊँचे स्वर में कहा—"दादी, मैं हूँ दुग्गा,
बमारनों की दुग्गा !"

"दुग्गा ! तेरा मन एक जगह नहीं टिकता ? अभी यहाँ
अभी वहाँ, फिर एकदम उस मुलुक में, कंकना जंकसन—
कहाँ नहीं जाती । तो यहाँ क्या कर रही है ? वह क्या है ?"

"ये लुहारिन बहन ने रुपये दिए थे, कस्बे से सामान लाने
के लिए, वही लाई हूँ दादी ।"

"तो मुझ से नहीं कहा ? गाँव में ही चार आने का सौदा
लिया है, एक रुपये के चावल बेचे हैं। जंकसन में चार आने
में एक पैसा फिर भी बच जाता—रुपये के चावलों में भी दो
पैसे ज्यादा मिलते। मेरे तो छैल छबीला स्वामी नहीं है,
मेरा काम क्यों करने लगी ।"

दुर्गा हँस कर बोली—"अब बताना, कर दूँगी ।"

"कर देना, तू लड़की अच्छी है, लेकिन बड़ी शैतान है।
तो, जो तेरा जी आवे कर, मर मुझे क्या ?"

दुर्गा खिलखिला कर हँसी, "बोली हाँ दादी के तो बूढ़ा भी

मार ही लेना, लेकिन झाड़ फूंक कर मारना !"

पद्म आवाक् होगई।

दुर्गा बोली—"ठहरो, पहले दरवाज़ा बन्द कर दूँ, न जाने कौन आ जाय !"

पद्म अब तक शांत नहीं हुई, तीखे स्वर में बोली—"आयेगा कौन ? मेरे तो दरजनों नागर नहीं हैं।"

दुर्गा फिर हँसी—"मेरे तो है बहन, वे सूँघते सूँघते आ जाँय तो !"

झाड़ मार कर नशा उतार दूँगी।

दुर्गा ने इतनी देर में दरवाज़ा बन्द कर दिया। लौट कर और स्पर्श बचा कर दूर से ही बोली—"दूसरों का नशा तो उतार दोगी लेकिन अपने मालिक से क्या कहोगी ? वे भी तो मेरे—तुमने जो कहा—वही हैं !···चलो, ठट्ठा छोड़ो—ये भीतर रख लो।" उसने कांख से छोटी सी टोकरी निकाली और एक लोटा दूध, एक भेली गुड़, दो गरी के गोले, सेर सवा सेर तिल, एक बरतन में आधा सेर तेल और कुछ मसाला आदि-निकाल कर बाहर रखा। बोली—"जाओ, लक्ष्मी-पूजा की तयारी करो। अरवा चावल तो मेरे पास है नहीं और हमारे चावलों से तुम्हारा काम भी न चलेगा—तुम्हारे मालिक ने बताया है।"

पद्म फिर भड़की, जी चाहा कि लात मार कर सामान फैला दे, किन्तु इसी समय किसी ने दरवाज़े पर धक्का मारा।

शायद अनिरुद्ध है, अच्छा हुआ, वह आ जाय, उसके सामने ही लात मार कर सब कुछ फैला देगी ।

पद्म ने लपक कर दरवाज़ा खोला, किन्तु अनिरुद्ध नहीं बूढ़ी दादी है, उसने शांत स्वर में संभाषण किया—"दादी !"

'हाँ। तो हाँ री नत बहू !"—कहते कहते बूढ़ी की दृष्टि दुर्गा पर पड़ी ।—"अरे, वह कौन बैठा है, कौन है ?"

"मैं !" दुर्गा ने ऊँचे स्वर में कहा—"दादी, मैं हूँ दुग्गा, चमारनों की दुग्गा !"

"दुग्गा ! तेरा मन एक जगह नहीं टिकता ? अभी यहाँ अभी वहाँ, फिर एकदम उस मुलुक में, कंकना जंकसन—कहाँ नहीं जाती । तो यहाँ क्या कर रही है ? वह क्या है ?"

"ये लुहारिन बहन ने रुपये दिए थे, कस्बे से सामान लाने के लिए, वही लाई हूँ दादी ।"

"तो मुझ से नहीं कहा ? गाँव में ही चार आने का सौदा लिया है, एक रुपये के चावल बेचे हैं। जंकसन में चार आने में एक पैसा फिर भी बच जाता—रुपये के चावलों में भी दो पैसे ज्यादा मिलते। मेरे तो छैल छबीला स्वामी नहीं है, मेरा काम क्यों करने लगी ।"

दुर्गा हँस कर बोली—"अब बताना, कर दूँगी ।"

"कर देना, तू लड़की अच्छी है, लेकिन बड़ी शैतान है। तो, जो तेरा जी आवे कर, मर मुझे क्या ?"

दुर्गा खिलखिला कर हँसी, "बोली हाँ दादी के तो बूढ़ा भी

नहीं है, फिर किस बात की फिकर। तुम देना, मैं सौदा ला दूँगी।"

वृद्धा बोली—"मर! तू हँसती क्यों है?"

"अब न हँसूँगी। अब क्या कहती हो, कहो।"

"मर! तुझ से क्या कहना। कहने आई हूँ नतबहू से। हाँ री नतबहू, इस बार तू मेरे घर चावल कूटने नहीं आई?"

दादी के घर मेंढकी है, पिठा बनाने के लिए पद्म वहीं से चावल कूट लाती है। इस बार नहीं गई, इसीलिए बूढ़ी आई है।—दादी—"तुझ से मैं ने कुछ कहा है? बता, कहा हो तो" बूढ़ी को याद नहीं रहता कि वह कब क्या कह देती है।

म्लान मुस्कान के साथ पद्म ने कहा—"यह बात नहीं है दादी, इस बार चावल ही नहीं कूटे।"

"चावल नहीं कूटे? कहती क्या है?"

"नहीं।"

"मर! तो कब कूटेगी? रात बीतते ही तो—"

पद्म चुप रही. दुर्गा बीच में ही बोली—"लुहारिन की तबियत खराब है न, दादी। बीमारी में क्या करती?"

"फिर? पूजा कैसे होगी? तेरा वह मूसल जैसा मर्द कहाँ गया? वह अनिरुद्ध? वह तो कर सकता था।"

दुर्गा ही बोली—"किसी तरह हो जायगा। कर्मकार आवें—बाजार से ले आवेंगे।"

"बाजार से! राम राम! मशीनी चावलों से कहीं पूजा

होती है। 'ओ नतबहू, एक काम करो, मेरे घर से थोड़ा-सा चूरा ले आओ। लेकिन दो ढाई सेर ही दूँगी। अच्छा मै ही दे जाऊँगी। अरे यह भी कहने की बात है! मैं अभी दिए जाती हूँ।"

जाते जाते दरवाज़े के पास खड़ी होकर वृद्धा बोली "इक्कू सेख की बात तो सुन दुग्गा—बूढ़ी गाय के दाम चार रुपये बताता था। आखिर में कहने लगा, पाँच रुपये। तो तेरे उधर कोई और लेने वाला आवे तो भेजना ज़रा।

दुर्गा भी टोकरी उठाकर बोली—"लुटिया-उटिया कल ले जाऊँगी। अब जाती हूँ।"

"कल यहीं खाना।"

"अच्छा!"दुर्गा हँसती हुई चली गई।

अकस्मात् क्या से क्या हो गया। दादी के साथ बातें करते-करते पद्म के अंतर का क्रोध न जाने कैसे ठण्डा हो गया। अब उसे सब कुछ अच्छा लगने लगा है। दुर्गा की लाई हुई चीज़ें उसने लौटाई नहीं, लात मार कर बिखेरी भी नहीं। दुर्गा की यह झूठी बात उसे बहुत भली लगी है कि लुहारिन ने कस्बे से सामान लाने के लिए रुपये दिए थे।

पद्म चावलों के चूरे की प्रतीक्षा करने लगी। घर में अरवा चावल नहीं हैं, चावल पीस कर चौक पूरने के लिए गोला बनाना पड़ेगा। दरवाज़े से लगाकर भीतर तक चौक पूरना है। चण्डी मण्डप में भी पूस की विदाई का चौक भरना है।

याद आया कि आँठ-गाँठ भी करना है। कार्तिक संक्रांति के धानों को बटकर रस्सी बनानी है और उससे भण्डार के सब आधार बाँधने हैं, बक्सों, पिटारों आदि में भी लक्ष्मी माता की गाँठ लगानी हैं।

× × × × ×

पुराकाल में चरवाहे का एक लड़का था। बन के किनारे लंबे-चोड़े मैदान में वह अपने पशु चराता था। ग्रीष्म की धूप, वर्षा की वृष्टि और जाड़े की शीतल वायु उसके सिर पर लगती थी, जब बहुत कष्ट होता तब वह रोता और आकाश की ओर देख कर कहता—भगवान् अब मुझ से नहीं सहा जाता, मेरा दुख दूर करो, मेरी रक्षा करो।

लक्ष्मी-नारायण एक दिन आकाश पर विचरण कर रहे थे। ग्वाल-बालक के कातर क्रन्दन का स्वर उनके कान तक पहुँचा। लक्ष्मी माता का कोमल हृदय द्रवित हो गया। वे बोलीं—"दूर करो, भगवान् इसका दुख दूर करो।"

नारायण मुस्कराये। बोले—"यह दुख दूर करने की शक्ति मुझ में नहीं है। तुम दूर कर सकती हो।"

लक्ष्मी बोलीं—"तुम अनुमति दो।"

नारायण से अनुमति लेकर लक्ष्मी मर्त्यलोक में उतरीं। सोने की वर्ण छटा और देवी के दिव्याङ्ग का अपूर्व सौरभ चारों ओर भर गया। चरवाहा आवाक् हो गया। देवी उसके पास गईं और बोलीं—"तुम्हारा दुख दूर होगा, जो मैं कहती हूँ वही

करो। ये धान के बीज लो, वर्षा में इन्हें खेत में डाल देना, इनसे पेड़ होंगे। पेड़ों का वर्ण जब मेरे शरीर के वर्ण जैसा हो जाय और उनसे वैसी ही गंध निकलने लगे जैसी मेरे शरीर से निकल रही है तब इन्हें काट कर घर में भर लेना।"

चरवाहे ने लक्ष्मी को प्रणाम किया। जब वर्षा आई तब उसने मैदान में बीज फैला दिए; देखते ही देखते सम्पूर्ण मैदान धान के हरे वृक्षों से भर गया। धीरे-धीरे वर्षा गई—हरे धानों की चोटी पर बाली निकली। चरवाहे ने हिला-डुला कर देखा लेकिन अभी उनका रंग देवी के रंग से न मिला था, सुगंध भी वैसी न आती थी। चरवाहा प्रतीक्षा करता रहा। हेमन्त के अंत में अगहन आया। चरवाहे ने एक रात में अपने घर में बैठे ही बैठे उसी सुगंध का अनुभव किया। सवेरा होते ही वह दौड़ा, मैदान देख कर आवाक् हो गया। सोने के रंग से सारा मैदान झलमला रहा है, दिव्यगंध से नभ मण्डल तक प्रमुदित है! सोने के वर्ण और दिव्यगंध से आकर्षित कीट,पतंग और पक्षी आकाश में उड़ रहे हैं और कितने ही पशु चारों ओर जमा हो गये हैं। जैसे उसके दुख से विगलित देवी ही अपनी देह फैला कर मैदान भर में बैठ गई हैं। चरवाहे ने धान काटे और घर में ढेर किए।

देश के राजा ने सुना तो आये और सोना देकर धान ले गये। राजा के भण्डार का सोना समाप्त हो गया परन्तु चरवाहे के धान न घटे। राजा के आश्चर्य की सीमा न रही। तब राजा

ने अपनी कन्या चरवाहे को दे दो। इधर पूस की संक्रांति भी आ गई। संक्रांति में चरवाहे ने पूजा की। उसने धान को ही सिंहासन पर स्थापित किया, सिंदूर और काजल से उसे सजाया, सामने जलपूर्ण घट रखा, घट के ऊपर रखा नारियल और उस पर आम के पल्लव। राज-कन्या ने धान कूट कर कर चावल निकाले, चावल से विविध व्यंजन बने, पंच पुष्प और धूप, दीप, चंदन, गंध से देवी की पूजा हुई, चरवाहे और राज कन्या ने देवी को भोग लगा कर प्रसाद प्राप्त किया।

लक्ष्मी माता ने मूर्तिमान होकर दर्शन दिए, अपना परिचय दिया और वर दिया कि पौष-संक्रांति में तुम्हारी भाँति जो मेरी पूजा करेगा उसके घर में मेरा अचल निवास होगा। संसार में उसे कोई अभाव, कोई दुख न होगा। परलोक में उसे वैकुण्ठ वास मिलेगा।

\+ + + +

व्रत की कथा याद करने के साथ-साथ पद्म ने आशा आकांक्षा से उत्साहित और परितुष्ट मन लेकर आयोजन आरंभ किया। घर-द्वार, धान की गुदाम से गोशाला तक चौक पूर कर चित्रित कर दिया। दरवाजे से आँगन तक चरण-चिह्न बनाए, लक्ष्मी माता इन्हीं चिह्नों पर पैर रख कर आवेंगी। घर के बीच में सिंहासन के सामने एक बड़ा कमल बनाया, माँ यहाँ विश्राम करेंगी। शंख धो डाला, धूप निकाली, प्रदीप साफ किया, सिंदूर रखा, काजल रखा। इधर का आयोजन समाप्त

करने के बाद गुड़-नारियल और गुड़ तिल की मिठाई बनावेगी, दूध गरम करेगी, रबड़ी होगी, बहुत काम हैं! काम का तो कोई अंत ही नहीं। आज घर में एक छोटी-सी लड़की भी होती तो सामान ही उठा-उठा कर दे देती। सहसा उसे याद आया कि चौक पूरने में एक भूल हो गई है। चण्डी-मण्डप में पूस विदा की चौक तो भरी ही नहीं गई।

क्षण भर तक वह सोचती रही, उस दिन अनिरुद्ध ने कहा था, वह चण्डी-मण्डप न जावेगा, पूस की विदा अपने दरवाज़े पर ही करेगा।

नहीं, यह नहीं हो सकता। पद्म यह न करेगी, न करने देगी। माता और बाबा शिव के चरण चण्डी-मण्डप छोड़ कर—नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। चौक पूरने का गोला और कटोरी लेकर वह घर से निकली।

पद्म के विस्मय की सीमा ही न रही। यही वह चण्डी-मण्डप है? किसी जादूगर के माया दण्ड ने इसे छुआ है और यह आमूल परिवर्तित होकर अपूर्व शोभा से विहँस रहा है! रास्ते से मण्डप में चढ़ने के लिए पक्की सीढ़ी है, सीढ़ियों के दोनों ओर हाथी की दो सूँड़ें हैं जैसे वे सीढ़ियाँ सँभाले हैं। षष्ठी तला में बकुल वृक्ष के इर्द गिर्द पक्का गोल चबूतरा बन गया है! मण्डप का फर्श पक्का हो गया है, सीमेंट की चिकनी पालिश चमक रही है। मिट्टी के खंभों पर मिट्टी का नया पलस्तर चढ़ा है। उधर एक कुआँ बन रहा है। पद्म को याद

आया—यह श्रीहरि घोष की कीर्ति है! एक लंबी साँस लेकर वह चौक पूरने बैठी। पौष मास के लिए एक घर अंकित करना है। 'पौष यहीं बैठो, हमें छोड़कर न जाओ।" पद्म ने सोचा, पौष मास तो श्रीहरि का है, हमारा पौष कहाँ।

"कौन है? लंबी-चौड़ी चौक न पूरना बेटी। एक आदमी ने थैलियाँ खोल कर बनवाया है और तुम अपने कल्याण के फेर में इसे चावलों से रङ्ग जाओगी, फिर धो कर साफ कौन करेगा?"

पद्म ने मुँह घुमा कर देखा, श्री हरि की माँ रास्ते से ही चीख रही है। पद्म जवाब न दे सकी, श्री हरि की माँ को ऐसी बात करने का अधिकार है। किसी तरह चौक पूर कर वह उठी।

अपने घर के दरवाज़े पर पैर रखते ही पद्म ने देखा कि भीतर से देबू निकल रहा है। घूंघट निकाल कर वह एक किनारे खड़ी हो गई। देबू के पीछे अनिरुद्ध था। देबू ने हस कर पद्म से कहा, "कल पण्डिताइन से कथा सुनने आना मिताइन! उसने बुलाया है।"

देबू चला गया।

अनिरुद्ध बोला—"पण्डित आये थे, किसी से सुना है कि हमारे यहाँ पूजा का उद्योग नहीं हुआ। दो रुपये दे गये हैं। ऐसा भला आदमी नहीं देखा!" कुछ देर चुप रह कर फिर एक लंबी साँस लेकर कहा—"परन्तु दुनिया में बढ़ती-बड़ाई

ऐसों की नहीं, छिरू जैसों की होगी।"

पद्म चुप रही परन्तु एक लंबी साँस उस ने भी ली।

अनिरुद्ध ने पूछा—"और कुछ तो नहीं लाना ?"

"नहीं।"

"फिर ले, काम चला ले। पहले मुझे एक चिल तँबाकू दे दे।"

अनिरुद्ध को चिलम देकर पद्म ने चूल्हे पर कड़ाही चढ़ाई और गुड़ का पाक बनाना आरंभ किया। उस के अन्तर में फिर दुःख का—क्षोभ का आवेग उमड़ने लगा। देबू पंडित की बात छोड़ ही दो, वह तो देवता जैसे आदमी हैं परन्तु वह दुर्गा—वह भी दया धर्म करती है, प्यार करती है, दादी जैसी कंजूसन भी पुण्य कमाती है। और श्रीहरि घोष की कीर्ति उसका महत्व देख कर तो वह अवाक् ही हो गई है।···आहा हमारी ज़िन्दगी में क्या हुआ ?

पद्म को दुःख हुआ परन्तु आज वह किसी से ईर्षा नहीं कर सकी। सब के प्रति श्रद्धा निवेदन की। और बार-बार प्रार्थना की, माता मेरे भी दुःख दूर करो। संतान-संकट से मेरा घर भर दो, मैं तुम्हारी षोडशोपचार पूजा करूँगी, उङ्गली चीर कर बत्ती बनाऊँगी, बालों का चंबर बाँधूँगी और उस से तुम्हें हवा करूँगी, छाती चीर कर खून निकालूँगी और उस से तुम्हारे पैर में महावर लगा दूँगी। तुम्हारी पूजा में पाँच बाजे बजेंगे, यह वस्त्र का चँदोवा तनेगा, चाँदी

के सिंहासन पर सोने का छत्र लगेगा और उस के नीचे तुम विराजोगी, आत्मीय स्वजनों, अड़ोसियों-पड़ोसियों, दीन-दुखियों और पशु-पक्षियों को तुम्हारा प्रसाद दूँगी—सुन्दर स्वादिष्ट पकवान !

बाहर से अनिरुद्ध का व्यस्त व्यग्र कण्ठस्वर सुन पड़ा—"पद्म ! ओ पद्म ! पद्म चौंकी । क्या बात है ? अब क्या होगया ?"

\+ + + +

अनिरुद्ध ने भीतर आकर कहा—"कड़ाही उतार कर मेरे साथ तो आवो !"

"क्यों ?"

"पण्डित को पकड़ ले गये, उनके घर चलें ।"

"पकड़ ले गये ? क्यों ?"

"सटलमंट के हाकिम ने हुकुम दिया है, थाने वाले पकड़ ले गये !"

"सटलमंट ! सटलमंट ! कहाँ से आकर इसने गाँव भर की चोटी पकड़ कर अंग-प्रत्यंग झकझोर दिया है और स्नायु-तंत्री-मन तक अस्थिर सबका कर दिया है । नित नये नोटिस, नये हुक्म ! तकमे वाले चपड़ासियों की दौड़ धूप खतम ही नहीं होती । राह-घाट में साइकल पर साइकल दौड़ती है ! लेकिन हाय ! हाय ! यह क्या हुआ ! देवू जैसे आदमी को भी पकड़ ले गये !

—सत्रह—

देबू घोष के विरुद्ध एक ही अभियोग नहीं है । जरीब के सरकारी काम में बाधा डालने और सर्वे डिपार्टमेंट के कर्मचारी अमीन को प्रहार करने के अपराध में वह अभियुक्त हुआ है । स्थानीय सेटेलमेंट आफिसर के निर्देशानुसार स्थानीय थाने के सब-इंस्पेक्टर एक कांस्टेबल लेकर आये हैं । गाँव के चौकीदार भूगाल को भी बुलाया गया है । देबू को हथकड़ी पहना कर ले जाया जायगा । रात भर उसे हवालात में रखा जायगा, और कल सवेरे सेटेलमेंट-आफिसर के सामने हाजिर किया जायगा । वे चाहेंगे तो जमानत पर छोड़ देंगे या विचाराधीन अभियुक्त के रूप में सदर की जेल में भिजवा देंगे, जी चाहेगा तो विचार का दिन निश्चित करके स्वयं निर्णय कर देंगे । छोटे दारोगा चण्डीमण्डप में बैठे हैं । देबू को भी वहीं बुलाया गया है ।

देबू चबूतरे पर चुपचाप सिर झुकाये बैठा है । उसका मस्तिष्क शून्य जैसा हो रहा है । यह सोचने की शक्ति नहीं है कि यह काण्ड कैसे हो गया है । वह इतना ही समझने में समर्थ हो रहा है कि मैंने जो किया है ठीक किया है अब जो होना हो, हो जाय ।

गाँव के प्रायः सभी निवासी मण्डप में जमा हो गये हैं । श्री हरि और दासजी गुमास्ता छोटे दरोगा के पास ही बैठे हैं । कभी कभी धीमे स्वर में तीनों बातें भी कर लेते हैं । हरीश

आगया है, हरेन घोषाल, मुकुन्द घोष, श्रीनिवास मण्डल, नटवर पाल, दूकानदार वृन्दावन, राम-नारायण घोष, यहाँ तक कि शीतकाल की संध्या में वृद्ध द्वारका चौधरी भी आये हैं। जगन डाक्टर देबू के पास ही बैठा है। मुखर जगन भी आज स्तब्ध और उदास है, आकस्मिक और अभावनीय परिणति ने उसे स्तम्भित कर दिया है! एक ओर गाँव के हरिजन खड़े हैं। सतीश, पातू—सभी आये हैं। दुर्गा षष्ठीतला के एक कोने में बैठी है—अकेली, मौन, जैसे मिट्टी की पुतली हो!

बूढ़ी रंगा दादी चुप नहीं है, वह चिल्ला रही है। मण्डप में उस ओर गाँव की प्रवीणाएँ भी आकर खड़ी हुई हैं। दादी उनके आगे है और कह रही है—"यह तो हाथ से ही सिर उतारने की बात है! दरोगा! दरोगा है तो उसने साँप के पाँच पाँव देखे हैं। हाँ जो दरोगा, चोरी न जुआँचोरी, न डकैती, क्या किया है बच्चे ने जो आज शाम को—रात बीतते ही लद्दमी है—तुम बच्चे को हथकड़ी पहनाने आये हो?"

हरीश बोला—"ओ चाची, तुम चुप रहो।"

"क्यों? चुप क्यों रहूँ? मैं भी तो देखूँ दरोगा कितना बड़ा मनसवा है!"

श्री हरि ने धमकी के साथ कहा—"तुम चुप रहो दादी, जो करना होगा हम करेंगे। तुम औरत—"

"औरत। साढ़े तीन बीसी उमर हुई मेरी—मैं अभी औरत

ही हूँ ? सौ बार कहूँगी, हज़ार बार कहूँगी—मेरा क्या कर लेगा ? बांधेगा, बांधे ! आह ! पण्डित जैसा आदमी—देबू जैसा लड़का"—बूढ़ी अकस्मात रोने लगी।

देबू स्वयं उठ कर गया, बोला—"तुम ज़रा चुप रहो दादी, मैं हाथ जोड़ता हूँ।"

वृद्धा ने स्नेह के साथ उस के सिर पर हाथ फेर कर कहा—"साहब तुझे देखते ही छोड़ देगा, कुर्सी पर बिठा कर कहेगा—तुम पंडित आदमी, तुमको मैं भला जेल भेज सकता हूँ!'

देबू मुस्कराया।

उधर मामले को दबा कर देबू को कौशल के साथ छुड़ा लेने की चर्चा हो रही थी। श्री हरि ने चर्चा चलाई है, दास जी सहायता कर रहे हैं। छोटे दारोगा श्रीहरि के मित्र हैं, श्रीहरि ने उन्हीं को पकड़ा है। प्रत्यक्ष रूप से न सही, परोक्ष रूप से देबू श्रीहरि के विरोधी पक्ष में है, श्रीहरि जानता है कि मन में देबू मुझ से घृणा करता है। परन्तु गांव के प्रधान व्यक्ति के रूप में श्रीहरि को देबू का पक्ष लेना ही पड़ा है। उस के रहते हुए किसी गांव वाले को—विशेषतः उस की अपनी ही जाति के एक व्यक्ति को पुलिस रस्सी से बांध कर ले जाय तो लोग क्या कहेंगे ? वह छोटे दारोगा को प्रसन्न करने का उपाय ढूंढ़ने की चेष्टा कर रहा है।

छोटे दारोगा बोले—"पेशकार से मिलो, कह-सुन कर काम किसी तरह बन जाएगा। जिस अमीन-कानूनगो के साथ

झगड़ा हुआ है, उसे खुश कर लो, देबू घोष विनय के साथ माफी माँग ले, बस—टंटा खतम। ऐसा अक्सर होता है !"

श्रीहरि बोला—"चाचा मेरे का दिमाग बहुत गरम है। मैंने जब सुना था तब कहलवाया था कि चाचा, कानूनगो बाबू से मिलकर झगड़ा निबटा लो। राज कर्मचारी है—'तू-ता' कर गया तो क्या हो गया ?"

भवेश यों ही बोल पड़ा—"बदन में छाले तो नहीं पड़ गये।"

श्रीहरि ने कहा—"बात जब हुई थी, तभी मुझे मालूम हो जाती तो तुरंत निपटा देता—मुझे तो बहुत देर में पता चला।"

इस घटना का सूत्रपात भी 'तू-तड़ाक' से ही हुआ है।

देबू अपने चबूतरे पर बैठा था—दोपहर के बारह बजे होंगे। सामने रास्ते से एक कानूनगो साइकिल पर जा रहा था। शायद वह बहुत दूर से आ रहा था, जाड़े की ऋतु में भी भलामानस पसीने और धूल से लथपथ हो रहा था और बुरी तरह थक गया था। देबू को देखकर वह साइकिल से उतरा और बोला— 'ए ! ओरे ! ए ! सुन !"

ऐसा सम्बोधन सुनकर देबू विक्षिप्त जैसा हो जाता है, अतीत की कटु स्मृति जाग्रत होती है। परन्तु साइकिल सवार की हैट, सफेद कमीज और खाकी नेकर देख कर उसने सोचा कि कोई सरकारी आदमी है और चुप हो गया।

"ए इडीयट ! सुनता नहीं ?"

देबू ने बंकिम भौंहों के साथ उस की ओर देखा—इच्छा

थी कि उसे उत्तर दिए बिना ही वह घर के भीतर चला जायगा परन्तु एक बार देखे बिना न रह सका।

आँखें मिलते ही कानूनगो बोला—"एक ग्लास पानी ले आ, खूब ठण्डा पानी। साफ़ ग्लास में समझा ?"

देबू धर्म संकट में पड़ गया। पानी माँगने के इस अभद्र आवेदन को भी वह अस्वीकार न कर सका। मुँह से कोई उत्तर न देकर वह भीतर गया और एक मोढ़ा तथा दफ्ती का एक पंखा ला कर चबूतरे पर रख दिये। इन्हीं के द्वारा मौन निमंत्रण देकर वह फिर भीतर गया और थोड़ी देर बाद एक कटोरी में मिठाई तथा लोटे और गिलास में घड़े का ठण्डा पानी ले आया। साफ़-सुथरा अंगोछा लाना भी नहीं भूला।

कानूनगो ने मुँह-हाथ धोया, देबू ने अंगोछा बढ़ाया तो उसने बाएं हाथ से हटा दिया, मुँह अपने रूमाल से पोंछा फिर मिठाई का एक टुकड़ा तोड़ कर चखा, शायद देखा कि अच्छी है या नहीं। ताजी मिठाई अच्छी तो होनी ही थी! अच्छी लगी भी, सारी मिठाई खाकर उसने पानी पिया और तृप्ति की साँस लेकर कहा—आः!

देबू फिर भीतर चला गया था। वह पान सुपारी लाना भूल गया था। बिलू से बोला—"जल्दी से दो पान और लौंग सुपारी तो दे दो।"

पान लगे रखे थे। बिलू ने केले के स्वच्छ पत्ते पर दो पान और लौंग सुपारी रख कर दे दिया।

ठीक उसी समय बाहर से फिर पुकार हुई—"ए, ओ रे छोकरे!"

देबू अब सहन न कर सका। पान का पत्ता वहीं फेंक कर बाहर निकला और बोला—"क्या है रे? क्या कहता है?"

कानूनगो इस अतर्कित और रूढ़ उत्तर के लिए प्रस्तुत न था। पहले तो वह विस्मय से अवाक् हो गया फिर बोला—"व्हाट! तू मुझ से तू-तड़ाक करता है? जानता—"

देबू ने निर्भय उत्तर दिया—"वह तो तूने ही पहले किया है।"

"क्या, क्या नाम है तेरा? तुझे समझ लूँगा!"

देबू ने उस की ओर देखा फिर निर्भीक स्वर में कहा—"मेरा नाम है श्री देवनाथ घोष।"

कानूनगो चुपचाप चला गया।.....

उधर श्रीहरि ने जरीप स्थगित रखने के लिए दरबार तक जो दौड़-धूप की थी उसका कोई विशेष परिणाम नहीं हुआ। धान काटने के लिए एक सप्ताह की मुहलत और मिली थी परन्तु पौष के चौदह दिनों में विस्तीर्ण मैदान के धान काट कर उन्हें उठा लेना असंभव कार्य था। असंभव संभव नहीं हो सका। सभव हो सका है श्रीहरि तथा हरीश दुकानदार, वृन्दावन दत्त और कृपण महाजन हेलाराम चटर्जी जैसे दो तीन और व्यक्तियों के लिए। उनके पास पैसा है, नगद पैसों पर बहुत से मजूर लगा कर उन्हों ने अपना काम कर लिया

९। शेष व्यक्तियों के पके धानों पर से ही जरीप चलने लगी। सरकार की ओर से यह आज्ञा अवश्य दे दी गई, जहाँ तक हो सके सावधानी से काम किया जाय और धान बचाकर मेड़ों पर जरीप चलाई जाय।

देबू ने पहले दिन ही मैदान में देखा कि सर्वे की मेज़ के पास वही कानूनगो खड़ा है। कानूनगो की निगाह भी देबू पर पड़ी। दोनों के ही अंतर तिक्त हो गये। कानूनगो आदमी डिस्टर्पेप्टिक है, उसका मिजाज बेहद रूखा हो गया है और लोगों के साथ रूखा व्यवहार करना स्वभाव बन गया है। देबू सावधानी के साथ उस से बचकर चलता रहा। परन्तु कुछ दिनों के भीतर ही कई छोटी-छोटी बातों को लेकर कानूनगो ने उसे कैम्प में हाजिर होने की नोटिस दे दी।

देबू को क्रोध आ गया। उसने निश्चय कर लिया कि चाहे जो हो जाय वह कानूनगो के सामने हरगिज़ रो कर, और हाथ जोड़ कर खड़ा न होगा।

कानूनगो को अवसर मिल गया, उसने देबू की अनुपस्थिति पर सेटेलमेंट के डिप्टी से रिपोर्ट कर दी। डिप्टी साहब नोटिस देखकर कुछ विस्मित हुए। इतने साधारण कारणों पर नोटिस दी गई है? इस कानूनगो के स्वभाव से भी वे परिचित थे परन्तु नियमानुसार उन्हें देबू को नोटिस देनी पड़ी। देबू ने वह नोटिस भी अमान्य कर दी। इसके बाद

कानून के अनुसार वारंट निकलना चाहिए। इधर इसी समय एक और घटना हो गई।

देबू की एक ज़मीन की नाप के सम्बन्ध में कानूनगो के साथ उसका विवाद हो रहा था। देबू ज़मीन की रसीद न ले गया था, विवाद का कारण यही था। कानूनगो की बात का उत्तर देते देते देबू ने देखा, जरीप की ज़ंजीर ज़मीन के ठीक बीच में और पके धानों के ऊपर से खींची जा रही है, उसने समझा, इस में भी कानूनगो का संकेत है। वस्तुतः कानूनगो ने ऐसा संकेत नहीं किया था, देबू की ज़मीन इतनी असमान थी कि बीच की चौड़ाई नापे बिना काम न चलता। गुस्से में भरे देबू ने इस बात पर ध्यान न दिया और ज़ंजीर खींच कर अलग फेंक दी। कानूनगो ने ज़ंजीर के साथ अपना टेबिल भी उठवा लिया और सीधे डिप्टी के कैंप में जाकर रिपोर्ट कर दी।

डिप्टी इसी देश के रहने वाले और भले आदमी हैं, बङ्गाल के निरीह किसानों की प्रकृति का उन्हें ज्ञान है, वे विस्मित हुए। परन्तु कानूनगो का मित्र पेशकार धुरंधर व्यक्ति है, उसने साहब को अच्छी तरह समझा दिया कि यह आदमी उसी जे० एन० बनर्जी का शिष्य है।

फिर डिप्टी साहब उपेक्षा न कर सके।

फिर सीधा वारंट आफ अरेस्ट निकल गया।

श्री हरि ने सच कहा था—उसने कई बार अनुरोध किया,

"चाचा मेरे साथ चलो, कानूनगो को मैंने बहुत नरम कर लिया है, एक बार तुम्हारे जाने की देर है।"

देबू ने उत्तर दिया था—"नहीं।"

जगन बोला—"पण्डित, तुम एक दरख्वास्त दो, सी. ओ. को सारी बात समझा दो. डी० एस० आर० को भी लिखो।"

देबू ने कहा था—"नहीं, रहने दो।"

बिलू ने शंकित उद्विग्न स्वर में पूछा था—"हाँ जी, अब क्या होगा?"

देबू ने हँस कर कहा था—"जो होगा, देखा जायगा।" जो होना था सो हो गया।

× × × × ×

श्री हरि ने देबू के पास बैठकर कहा—'छोटे दारोगा को राजी किया है, पहले कानूनगो के कैम्प में चलें, वहां मामला निपटा कर और कानूनगो से चिट्ठी लेकर सर्किल डिप्टी के पास पहुंच जायें, केस खारिज हो जायगा, हम घर लौट आवेंगे।"

देबू ने कहा—"नहीं।"

"नहीं क्या?"

"मैं न जाऊँगा, छिरू।"

"परिणाम भी सोचा है?"

"देखा जायगा।" देबू फिर मुस्कराया।

श्री हरि गहरे दुःख के साथ लंबी सांस लेकर भी अपनी

विरक्ति न छिपा सका, बोला—"काम तुम ठीक नहीं कर रहे हो, चाचा "

दास जी बोले—"फिर भला हम क्या कर सकते हैं ?"

सब ने उनका समर्थन किया—"हम और क्या कर सकते हैं ?"

जगन, अनिरुद्ध और हरेन घोषाल ने सब का साथ न दिया। हरेन सबसे पहले बोलने का अभ्यासी है परन्तु आज चुपचाप उठकर चला गया।

जगन बोला—"चिंता न करो देबू भाई ! कल केस न हो और तुम को हवालाती बना कर जेल भेज दिया जाय तो सदर से मुख्तार लाकर मुकदमा लड़ूँगा। कल ही फैसला हो जायगा तो सदर में अपील करूँगा—जमानत तुरंत हो जायगी।"

देबू ने कहा—"सौ-एक रुपये मेरे डाकखाने में हैं। बिलू को फार्म भर कर दे दिया है। जरूरत पड़े तो रुपये ले लेना। मुकदमा लड़ने का परिणाम कुछ न होगा, लेकिन मैं जिरह में भाँडा फोड़ना चाहता हूँ।"

अनिरुद्ध ने अत्यन्त कातर स्वर में कहा—"देबू भाई, झगड़ा निबटा न डालो !"

देबू हँस कर बोला—"तुम जरा सावधान रहो अनि भाई। डाक्टर. घर का ख्याल रखना।"

छोटे दारोगा बोले—'शाम हो गई है। आप ने क्या निर्णय किया ?"

देबू खड़ा हो गया—"चलिए, मैं तैयार हूँ।"

छोटे दारोगा ने पुकारा—"भूपाल ! राम किशन !"

"ज़रा ठहरिएगा, दारोगा बाबू !"···दुर्गा कहीं से आकर खड़ी हुई। देबू से बोली—"बिलू दीदी से ज़रा भेंट कर लो पंडित।"

दारोगा बोला—"जाइए, मिल आइए।"

मुखरा दुर्गा आज मौन है और देबू के आगे-आगे चल रही है।

देबू बोला—"दुर्गा, तू ज़रा इसे देखना, इसकी खोज-खबर लेती रहना।"

अग्रगामिनी ने चुपचाप गरदन हिला कर स्वीकार किया।

बिलू रो रही थी। देबू ने आँसू पोंछ दिए। फिर कुछ आवश्यक बातें कीं। डाकखाने से रुपये निकाल कर अपने पास रखना। डाक्टर मुकदमे के लिए जो माँगें, दे देना। सावधान रहना। धान-वान हिसाब से लेना; हिसाब तो तुम्हें आता है। मन गिरने न देना। मुन्ने का भार तुम्हारे ऊपर है—घर द्वार सब। तुम घर की लक्ष्मी हो, तुम्हारे चंचल होने से काम न चलेगा; तुम्हें अचला होना चाहिए।

बिलू एक शब्द भी न बोल सकी।

अंत में देबू ने हँस कर उसे छाती से लगा लिया और प्रगाढ़ आवेग से एक चुंबन लेकर बाहर आ गया।

बाहर पद्म और दुर्गा थी। देबू बोला—"मिनेनी, तुम हो, दुर्गा है, बिलू को देखना।"···"चण्डी-मण्डप में पहुँच कर उसने

कहा—"चलिए।"

"वेट!" हरेन घोषाल ने नाटकीय ढंग से मण्डप में प्रवेश किया, उसके हाथ में गेंदे के फूलों की एक सुंदर माला थी। माला देबू के गले में डालकर उसने उत्तेजित आवेश में नारा लगाया—"जय, देबू घोष की जय!"

परिस्थिति क्षण भर में पलट गई।

दारोगा चलने के लिए व्यस्त हो गये। माला और जय-ध्वनि ने देबू के सम्पूर्ण शरीर में एक सिहरन उत्पन्न कर दी। हृदय में दुर्बलता का जो भीषणतम आवेग स्पन्दित हो रहा था, वह लुप्त हो गया। इसके विरुद्ध भाटे की नदी में ज्वार के विपरीतमुखी उच्छ्वसित आवेग ने आकर देबू को स्फीत और प्रशस्त कर दिया। दृढ़ और दीर्घ पदक्षेप से वह अग्रसर हुआ।

× × × × ×

बिलू के हाथ लक्ष्मी पूजा का आयोजन करने के लिए न उठते थे। इस वेदना को लेकर वह विविध पकवानों से लक्ष्मी की पूजा कैसे करे? किस के लिए लक्ष्मी सजावे? पुरुष के आश्रय में लक्ष्मी का निवास होता है। देबू जब आज उपस्थित नहीं है तब—! उसकी आँखों में बार-बार आँसू आ जाते थे।

परन्तु दादी ने आकर कहा—"तू चिंता न कर बेटी, पंडित आज ही लौट आवेगा। और मेरी तरफ देख, तीन कुल में कोई नहीं फिर भी पूजा करती हूँ। तेरी गोद में तो यह हीरे का टुकड़ा है और मेरा देबू भी लौटता होगा—तू कैसे पूजा

न करेगी ? चल, मैं ही लक्ष्मी का सिंहासन सजा देती हूँ। सब कहीं शंख बज रहे हैं—लक्ष्मी प्रतिष्ठित की जा चुकी हैं।"

दादी ने बड़े निपुण कौशल से लक्ष्मी सजाई। लाल रेशमी कपड़े से धान और कौड़ियाँ ऐसे ढक दी जैसे सिंहासन पर एक नन्ही सी बहू बैठी है।

पद्म दो-तीन बार आई थी। दुर्गा तो बैठी ही है, श्रीहरि की माँ और बहू भी आई थी।

माँ मौखिक सहानुभूति प्रकट कर गई, बहू केले का एक गुच्छा और कुछ और फल-फूल लाई थी। श्रीहरि के नये ताल पर यह सब हुआ है। थोड़ी सी मटर की फलियाँ और एक गोभी भी थी। ये श्रीहरि ने पूजा के उपलक्ष में कस्बे से मँगवाई हैं। बहू कह गई—"फिकर न करो, तुम्हारे भतीजे सवेरे से ही गये हैं, हाकिम से मिलेंगे, चाचा को साथ लेकर आते ही होंगे।"

प्रायः सभी घरों की स्त्रियाँ बिलू से हाल-चाल पूछ गई हैं।

जगन की स्त्री पांच बार आई थी। सतीश आदि सभी हरिजन थोड़ा-थोड़ा दूध दे गये हैं। उनसे कहा गया कि दूध की आवश्यकता नहीं है लेकिन वे माने ही नहीं; उदास होकर बोले थे—'हमने क्या अपराध किया है ?"

दुर्गा बोली—"बिलू दीदी, रबड़ी बना लो।"

बिलू बोली—"क्या करूँगी, खराब ही तो हो जायगी।"

"खराब क्यों होगा. जीजा अभी आते होंगे।"

कई घरों की कुमारी लड़कियाँ आईं—"घड़ा दो भाभी,

पानी भर लावें।

ये सब बिलू की ननंद लगती हैं। बिलू ने मधुर मुस्कान के साथ कहा—"पानी तो भर लाई हूँ, बहन।"

बिलू बोली—"बैठो, कुछ खा लो।"

"नहीं। हम तो काम करने आई हैं।"

बिलू को सब की यह निश्छल आत्मीयता बहुत भली जान पड़ी। अपने इतने आदमी हैं!? मनुष्य इतना भला है!?

चण्डी-मण्डप में जब तिलकुट का भोग लगने लगा लड़कियां तब गईं। तिलकुट का भोग पहले मंदिर में लगता है फिर घर-घर में लक्ष्मी जी का भोग होता है। हरिजन बच्चे तिलकुट का प्रसाद लेने के लिए मंदिर में जमा हैं, इस के बाद वे घर-घर पिठा माँगने जावेंगे।

पुरुष में से अधिकांश देबू के लिए सेटलमेंट कैंप गये थे। लगभग एक बजे लौटे, सब की आकृति गंभीर और चिंतान्वित थी। फैसला अभी नहीं हुआ। लेकिन लक्षण प्रकट हो गए हैं! श्रीहरि सब से अधिक गंभीर है। अमीन ने श्रीहरि को बुलाकर साफ कह दिया है—"देबू की तरफ से जो गवाही देगा, उस को समझ लिया जायगा।"

मातवरों-मुरुब्बियों ने सलाह की कि किसी तरफ से भी गवाही न दी जाय।

जगन डाक्टर, अनिरुद्ध, हरेन घोषाल, द्वारका चौधरी और तारा नाई आदि अब तक नहीं लौटे। संध्या होते होते वे

उदास मुख और मंथर गति से आये, दुर्गा रास्ते में ही खड़ी थी, उस ने पूछा—"क्या हुआ डाक्टर; चौधरी जी ?"

जगन बोला—"दिन भर बिठा रखा, शाम को चालान सदर में कर दिया ! बदमाशी है और क्या ?"

"चालान कर दिया ?"

"हाँ, कल सदर जाऊँगा, पंडित को जमानत पर छुड़ा लाऊँगा।"

बात झूठी है। देबू को एक साल और तीन महीने की सजा हो गई है। जगन कल अपील करने सदर जायगा। देबू ने मना किया है। गवाहियों की दशा देख कर उस ने अपील के फल का भी अनुमान कर लिया है।

जगन गाँव वालों को गालियाँ देने लगा था। द्वारका चौधरी तक आत्म संवरण न कर सके थे। पोपले मुह और कंपित अधरों से बोले थे—"भगवान् इसका दण्ड देंगे।"

देबू ने हँस कर कहा था—"आपने उस दिन जो कहानी सुनाई थी, वह भूल गये चौधरी जी। मनुष्य पग-पग पर भूलता है। और फिर उन्होंने मेरी गवाही नहीं दी तो विपक्ष में भी नहीं गये।"

अनिरुद्ध ने चीख कर कहा था—"जाते तो सिर पर वज्र गिरता !....."

देबू की सजा का समाचार इन लोगों वे दबा दिया, बिलू की दशा सोच कर ही दबा दिया।

पानी भर लावें।

ये सब बिलू की ननंद लगती हैं। बिलू ने मधुर मुस्कान के साथ कहा—"पानी तो भर लाई हूँ, बहन।"

बिलू बोली—"बैठो, कुछ खा लो।"

"नहीं। हम तो काम करने आई हैं।"

बिलू को सब की यह निश्छल आत्मीयता बहुत भली जान पड़ी। अपने इतने आदमी हैं!? मनुष्य इतना भला है!?

चण्डी-मण्डप में जब तिलकुट का भोग लगने लगा लड़कियां तब गईं। तिलकुट का भोग पहले मंदिर में लगता है फिर घर-घर में लक्ष्मी जी का भोग होता है। हरिजन बच्चे तिलकुट का प्रसाद लेने के लिए मंदिर में जमा हैं, इस के बाद वे घर-घर पिठा माँगने जावेंगे।

पुरुष में से अधिकांश देबू के लिए सेटलमेंट कैंप गये थे। लगभग एक बजे लौटे, सब की आकृति गंभीर और चिंतान्वित थी। फैसला अभी नहीं हुआ। लेकिन लक्षण प्रकट हो गए हैं! श्रीहरि सब से अधिक गंभीर है। अमीन ने श्रीहरि को बुलाकर साफ कह दिया है—"देबू की तरफ से जो गवाही देगा, उस को समझ लिया जायगा।"

मातबरों-मुरब्बियों ने सलाह की कि किसी तरफ से भी गवाही न दी जाय।

जगन डाक्टर, अनिरुद्ध, हरेन घोषाल, द्वारका चौधरी और तारा नाई आदि अब तक नहीं लौटे। संध्या होते होते वे

उदास मुख और मंथर गति से आये, दुर्गा रास्ते में ही खड़ी थी, उस ने पूछा—"क्या हुआ डाक्टर; चौधरी जी ?"

जगन बोला—"दिन भर बिठा रखा, शाम को चालान सदर में कर दिया ! बदमाशी है और क्या ?"

"चालान कर दिया ?"

"हाँ, कल सदर जाऊँगा, पंडित को जमानत पर छुड़ा लाऊँगा।"

बात झूठी है। देबू को एक साल और तीन महीने की सजा हो गई है। जगन कल अपील करने सदर जायगा। देबू ने मना किया है। गवाहियों की दशा देख कर उस ने अपील के फल का भी अनुमान कर लिया है।

जगन गाँव वालों को गालियाँ देने लगा था। द्वारका चौधरी तक आत्म संवरण न कर सके थे। पोपले मुंह और कंपित अधरों से बोले थे—"भगवान् इसका दण्ड देंगे।"

देबू ने हँस कर कहा था—"आपने उस दिन जो कहानी सुनाई थी, वह भूल गये चौधरी जी। मनुष्य पग-पग पर भूलता है। और फिर उन्होंने मेरी गवाही नहीं दी तो विपक्ष में भी नहीं गये।"

अनिरुद्ध ने चीख कर कहा था—"जाते तो सिर पर वज्र गिरता !....."

देबू की सजा का समाचार इन लोगों वे दबा दिया, बिलू की दशा सोच कर ही दबा दिया।

दुर्गा ने बिलू को समाचार सुनाया और कहा—"तुम्हारे साथ मेरी माँ सोवेगी, बिलू दीदी !"

बिलू बोली—"तू रह न दुर्गा, दोनों मजे में बातें करती रहेंगी। मैं कमरे में लेट जाऊँगी, तू बरामदे में दरवाजे पर रह जाना।"

दुर्गा बोली—"नहीं, बिलू दीदी।"

"क्यों ?"

"मुझे भाई अपना बिछौना न हो तो नींद नहीं आती।"

बिलू ने अनुरोध न किया। बात समझ गई परन्तु हँसी, "बुरा न मानना। मनुष्य का स्वभाव शायद मरने पर भी नहीं जाता।"

दिन चढ़ गया है परन्तु संध्या से समय पहाड़ हो गया है। बिलू चुप बैठी थी। वे जेल में हैं। संध्या होते ही शंख बजने लगे तब वह चौंकी। घर में लक्ष्मी माता है, धूप-दीप करना है। मां के शीतल भोग का आयोजन भी नहीं हुआ। जाने से पहले दुर्गा घर के चरवाहे को बुला कर बिठा गई थी। लड़के ने भर पेट पिठा खाया है, कोने में पड़ा सो रहा है। बिचारे का पेट फूल कर छाती से भी ऊपर हो गया है—साल लेने में हाँफ रहा है। शंख ध्वनि सुन कर वह भी जागा, उठकर बैठा और बोला—"जान पड़ता है सांझ हो गई। मालकिन, संध्या जलाओ, शख बजाओ, धूप-दीप करो।"

बिलू लंबी साँस लेकर उठी। छोकरा अपने आप ही कह

रहा था—सब मालिक की ही, अर्थात् देबू की ही बातें थीं!

"मालिक बैठे-बैठे हमारी ही बातें सोचते होंगे, नहीं मालिकन ?"

बिलू ने आँसू पोंछे।

"अच्छा मालिकन, जेहल में क्या लोहे की जंजीर से बांधते हैं ? फिर मालिक सोते कैसे होंगे ?"

बिलू ने आर्त स्वर में कहा—"तू चुप भी रह !"

लड़का अप्रस्तुत होकर चुप हो गया।

सांध्य-दीप, धूप और शीतल भोग सजा कर बिलू ने कहा, "मेरे साथ चल बेटा, गुदाम और गोशाले तक चलना है।···" फिर उसे ख्याल आया···मुन्ना अकेले सो रहा है, उसके पास कौन रहेगा ? वैसे देबू रहता था। बिलू अकेले ही गुदाम और गोशाले आदि में दीपक जला आती थी। आज वह नहीं है इसलिए उसे अकारण ही डर लगता है। अपनी आकस्मिक करुण असहायावस्था का विचार उसे बार-बार अभिभूत कर देता है।

लड़का उठकर बोला—"चलो।"

"लेकिन मुन्ना के पास कौन रहेगा ?"

"मैं बैठता हूँ" वह फिर लेट गया और बोला—"तुम डरती क्यों हो मालकिन ? गुदाम में मजूर तो हैं !"

"हैं ?"

"नहीं ? मैं तो यहाँ था, उन्हीं ने जानवर बांधे हैं। रात में

एक यहीं रहेगा। ओसरी बांध कर रोज एक आदमी रहेगा। मालिक नहीं हैं, रहेंगे नहीं ? मैं भी रहूँगा मालकिन, लेकिन एक कहानी रोज सुनानी पड़ेगी।....."

बिलू संध्या जलाकर लौटी, साथ में दो किसान भी आये।

लक्ष्मी जी के सामने धूप-दीप और शीतल भोजन रख कर उसने प्रार्थना की—"उनको सम्मान के साथ छुड़ा दो माँ, उनका मंगल करो। घर में अचला होकर विराजो।"

लड़का बोला—"वो दूध के पिठे और हैं ?"

बिलू मुस्करा कर बोली—"हैं।"

"फिर दो-चार दे दो, रात में और कुछ न खाऊँगा।"

"हाँ भाई तुम ?"..."बिलू ने मजूरों से पूछा।"

"दे दो थोड़े से।"

दोपहर में हर एक ने भीम की तरह भोजन किया है। बिलू को उन्हें खिलाना अच्छा लगता है। पहले देबू उन्हें स्वयं खिलाता था। बिलू देती थी, देबू परोसता था।

अभी संदूकों आदि में लक्ष्मी की गाँठ लगानी है। कार्तिक की सक्रांति को इसी उद्देश्य से लक्ष्मी माता का ध्यान करके जो धान बोए गये थे उनकी रस्सी बट कर सब सामान में गांठें लगानी हैं। अर्थात् आज का धन रहे कल और आवे, नये और पुराने से सचय बढ़े। लक्ष्मी के प्रसाद से पुराने अन्न और नये बरस से जीवन निश्चिन्त रूप में व्यतीत हो। माँ सदा अचला रहें।

रात के अंत में एक और पर्व थी। पौष संक्रांति की रात के अंत में पौष-बंधन होती है। अंधकार के आवरण में जब पौष मास पश्चिम दिगन्त की ओर पग बढ़ाता है और पूर्व दिगन्त में आलोकाभास के पीछे मकर राशिस्थ सूर्य के रथ के साथ माघ का पहला दिन झाँकता है तब कृषक वनिताएं पौष की वंदना कर उससे प्रार्थना करती हैं—पौष, तुम न जाओ, यहीं रहो—सदा यहीं रहो।

चण्डी-मण्डप में पौष से यह प्रार्थना की जाती है।

कुछ रात रहते ही लोग जागे हैं, गाँव में हलचल हो रही है, घर-घर शंख बज रहे हैं।

बिलू भी उठी। मुन्ना भी जग गया था, उसे कपड़े से लपेट कर चरवाहे की गोद में दे दिया और स्वयं पूजा का प्रबंध करने लगी।

"ओ भाई, पंडिताइन, चलो न!"

पद्म बुला रही है।

बिलू ने द्वार खोल दिया, "बस चलती हूँ। धूप के लिए आग हो जाय।"

चूल्हे में लकड़ी जल रही थी। पद्म खड़ी हो गई। धूपदानी में आग लेकर बिलू बोली—"चलो।"

चरवाहे ने लालटेन ले ली। घर में मजूर रहे और सोती हुई दुर्गा की माँ। घर से बाहर निकलते ही चरवाहा चौंका, बोला—"कौन है?"

"कौन ?" पद्म ने पूछा।

छोकरे ने लालटेन ऊँची करके कहा—"दुर्गा दीदी हैं !"

लालटेन का प्रकाश दुर्गा पर अच्छी तरह पड़ा। उसके शरीर पर सुन्दर साड़ी है, बाल भी बड़े ढंग से संवारे हैं, माथे पर बिन्दी लगी है परन्तु सभी अस्तव्यस्त विशृंखल है। वह हांफ रही थी—उसकी आंखों में उद्भ्रांत दृष्टि थी।

वह बोली—"झूठ है, बिलू दीदी झूठ है। पंडित जी को पन्द्रह महीने की सजा हो गई है।"

बिलू पत्थर की भांति खड़ी रह गई।

दुर्गा कंकना से सेटेलमेंट कैंप में नैश-अभिसार करने गई थी। अमीन, चपरासी यहां तक कि दो-एक कानूनगो भी दुर्गा जैसी स्थानीय स्त्रियों पर गुप्त अनुग्रह रखते हैं। पेशकार इस मामले में सबका सिरमौर है। दुर्गा के पास कई दिन से अनुग्रह पूर्ण आह्वान भेज रहा था। दुर्गा गई नहीं। आज स्वयं गई थी और पेशकार से बोली थी—"हाकिम से कह-सुन कर पंडित को छुड़ाना पड़ेगा।"

पेशकार ने कहा था—"अच्छा सबेरा होने दो।"

सबेरे जब दुर्गा चलने लगी तब उसके एक और अनुग्रह प्रार्थी ने जो पेशकार से ईर्षा भी करता था, भांडा फोड़ दिया और बता दिया कि पण्डित को सजा हो गई है।

दुर्गा चुपचाप चली आई और रास्ते भर अपनी सगोत्राओं में से एक वाह्य श्रीमती परन्तु व्याधियुक्ता सखी का चुनाव

करती रही।

उधर चण्डीमण्डप में स्त्रियों ने समवेत स्वर से पौष-वंदना प्रारम्भ कर दी है—

पौष, पौष, सोने के पौष।
रुको यहां ना जाओ पौष,
जनम जनम तक छाओ पौष!
हमें न छोड़ो, हमें न छोड़ो—
पौष, पौष, सोने के पौष!

पद्म ने बिलू के कंधे पर हाथ रखकर कहा—"चलो, बहन!"

बिलू ने स्वप्नोत्थित की भांति उत्तर दिया—"चलो।"

वह क्या करे? उपाय ही क्या है? चलते समय वे कह गये हैं, मुन्ना का भार तुम्हारे ऊपर है—घर-द्वार-गाय-बैल, जोत-जमा—सब कुछ तुम्हें संभालना है। तुम घर की लक्ष्मी हो, चंचल न होना, प्रत्येक स्थिति में अचला रहना।...वह करेगी, ऐसा ही करेगी। उसके घर से सोने का पौष जा रहा है, उसकी पूजा करना और उसे बांधना पड़ेगा। पन्द्रह महीने बाद तो वे लौटेंगे तब उन्हें यह सब कुछ ऐसा ही वापस करना होगा!

—अठारह—

एक वर्ष बीत गया है। दूसरी पौष संक्रांति तक वर्ष हुआ है और माघ-फागुन के दो महीने अधिक हो गये हैं।

चैत की पंचमी के दिन देबूघोष जंकशन स्टेशन पर गाड़ी से उतरा और चैत की क्षीण मयूराक्षी पार कर शिव-कालीपुर के घाट पर खड़ा हुआ। लम्बे पन्द्रह महीनों की सजा भुगत कर वह आज घर लौट रहा है। पन्द्रह महीनों में उसे कुछ दिनों की छूट मिली है। इतने दिन बाद अपने गांव की सीमा पर पैर रख कर उसने मुक्ति के पूर्ण आस्वाद का अनुभव किया।

वह देबू का अपना गांव शिव-कालीपुर है। उसके पश्चिम में शेखों का गांव कुसुमपुर दीख पड़ता है और उसके पश्चिम में पक्के मकानों वाला कंकना। दक्षिण में मयूराक्षी के उस पार जंकशन है। कुसुमपुर की मसजिद के ऊंचे और सफेद मीनार पेड़ों की हरी डालों के ऊपर चमक रहे हैं। शिव-कालीपुर के पूर्व में न्यायरत्न महाशय का महाग्राम है और उसके पूर्व में देखुड़िया। देखुड़िया से पूर्व में मयूराक्षी का एक मोड़ है। मोड़ के पास गहरे हरे रंग के पेड़ों का झुरमुट दीख पड़ता है। उसी जगह घोषों का महिषडहर गांव था, बाढ़ ने गांव के चिह्न तक मिटा दिए हैं।

घाट से देबू मयूराक्षी के बाढ़ रोकने वाले बांध पर चढ़ा। दस बजे हैं परन्तु धूप काफी कड़ी हो गई है। विस्तीर्ण खेत प्रायः खाली पड़े हैं। गेहूं, दाल, जौ और सरसों आदि रबी की फसल कट चुकी है। खेतों में थोड़े से तिल, थोड़े से आलू और तरी की कुछ फसल रह गई है। तिल इस समय की

सब से बड़ी उपज है, उस के गहरे हरे और सतेज पेड़ पूर्ण रूप से बढ़ चुके हैं, अब उन में फूल निकलेंगे। देबू को चैत्र-लक्ष्मी की कहानी याद आई—उन्होंने इसी तिल का एक फूल तोड़ कर अपने कान में धारण कर लिया था इसीलिए उन्हें किसान के घर जाकर उस का ऋण उतारना पड़ा था। बैंगनी रंग के तिल-पुष्प की गठन भी अपूर्व होती है। कवियों ने तो सुन्दर नाक के लिए तिल के फूल की उपमा तक दे दी है।

देबू एक वर्ष से अधिक जेल में रहा है। वहां इसे थोड़े दिन के लिए कुछ राजबंदियों का साहचर्य मिल गया था फलतः बंदीजीवन परम सुख के साथ नहीं तो प्रचुर आनन्द के साथ बीता है। देबू का शरीर क्षीण हो गया है, वजन सात सेर घट गया है परन्तु मन पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। जेल से छूट कर और अपने गांव की सीमा पर पहुंच कर भी वह साधारण व्यक्ति की भांति अधीर आनन्द से लपक कर नहीं चलता। सीमा पर पहुंच कर वह जम कर खड़ा हुआ और चारों ओर अच्छी तरह देखने लगा। शिव-काशीपुर स्पष्ट दीख पड़ता है। आम, कटहल, जामुन और तेंतुल आदि वृक्षों की ऊँची चोटियां आकाश के पट पर चित्र की भांति अंकित जान पड़ती हैं। बांस के पेड़ धीरे धीरे हिल रहे हैं, इन्हीं के पीछे गांव के घर हैं और वे दीख भी पड़ते हैं।

इधर पासियों और चमारों का मुहल्ला है, वह बड़ा पेड़

धर्मराज तला का बकुल वृक्ष है। छोटे-छोटे और कच्चे घरों के बीच में वह बड़ा और पक्का मकान दुर्गा ने बनवाया है। दुर्गा! अहा दुर्गा बड़ी भली लड़की है। पहले देबू उससे घृणा करता था, उसका गले पड़ने जैसा ढङ्ग देख कर चिढ़ता था और कई बार उसे फटकार भी बैठा है परन्तु उसकी विपत्ति में दुर्गा ने एक नया रूप दिखाया है। जिस दिन वह जेल के लिए चला था उस दिन दुर्गा के उस रूप का आभास ही मिला था। फिर बिलू के पत्रों से बहुत कुछ मालूम हुआ है। उदय से अस्त तक दुर्गा बिलू के पास रहती है। दासी की भांति सेवा करती है, यथासाध्य बिलू को कोई काम नहीं करने देती, मुन्ना को सदा छाती से चिपकाए रहती है। स्वैरिणी विलासिनी में यह रूप कहां था—कैसे छिपा था?

वह जो बड़े मकान की चोटी दीख पड़ती है वह हरीश दादा का घर है, उसके बाद भवेश दादा का घर है, वह दीख नहीं पड़ता। उधर श्रीहरि के घर पर पड़ी टीन धूप में चिलमिला रही है। उसके बाद सर्वस्वहीन तारिणी का टूटा घर है। फिर रास्ते के इस ओर और गांव के बीच में चण्डी-मण्डप है। इसके बाद हरेनघोषाल का घर है, घर नहीं उसे 'घोषाल हाउस' कहते हैं। घोषाल का परिचय भी विलक्षण है। घर के बैठके पर उसने लिख रखा है—'पर्लर' एक कमरे के दरवाजे पर लिखा है 'स्टडी', देबू घोषाल की वह माला कभी नहीं भूल सकता। घोषाल से वह अच्छी तरह परिचित है, जानता

है कि मैट्रिक पास कर लेने के बाद भी वह मूर्ख के सिवा और कुछ नहीं है, वह भीरु है, कापुरुष है; ब्राह्मण होकर पातू चमार की स्त्री पर आसक्त है। परन्तु उस दिन घोषाल सतयुग का ब्राह्मण जान पड़ा था। उसकी माला ने पवित्र आशीर्वाद ही दिया था, उसी आशीर्वाद में देबू को चलते समय एक अद्भुत बल दे दिया। जेल में भी शायद उसी आशीर्वाद के बल से उसे राजबन्दी मित्र मिल गये थे।

मित्र कौन नहीं है? बिलू के पत्रों से जान पड़ा है कि गांव का प्रत्येक व्यक्ति देबता है। इसीलिए तो कहावत बन गई है कि गांव और मां एक ही बात है। हां, मां—गांव ही उसकी मां है! देबू ने झुक कर रास्ते से एक चुटकी धूल उठाई और अपने माथे पर लगा ली।

कुछ और आगे बढ़ने पर दीख पड़ा कि पलास में लाल चमकीले फूल आ गये हैं। एक घर की छत पर सहजन की असंख्य फलियां लटक रही हैं। गांव के उत्तर की ओर तालाब के ऊपर पत्रहीन शिमूल में भी लाल रंग का समारोह हो रहा है। उसके पास ताड़ के ऊंचे पेड़ पर एक कौव्वा बैठा है। अब जगन डाक्टर के घर की खिड़की भी साफ दीख पड़ने लगी है। खिड़की के पास एक झुके हुए बांस पर हरिपाल पक्षियों की एक पंक्ति बैठी है, हरे और पीले रङ्ग के मिश्रण ने उनका रङ्ग अपूर्व कर दिया है, उनकी ध्वनि भी वैसी ही मधुर है जैसे जल तरङ्ग बज रही हो। वायु में आम के मुकुलों

की गंध मिली है। चैत में आमों में फल आ जाता है परन्तु चौधरी के पुराने पेड़ों में बौर आते हैं, यह गंध उन्हीं बौरों की है।

"पण्डित जी!"

किशोर कण्ठ की विस्मित आनन्दध्वनि सुन कर देबू घूमा—खेत की एक मेड़ से कालीपुर का सुधीर—द्वारिका चौधरी का नाती आ रहा है। पाठशाला में वह देबू का छात्र था।

देबू ने सस्नेह हंस कर पूछा—"सुधीर? अच्छे हो?"

सुधीर दौड़ कर उसके पास आगया और प्रणाम किया।

"आप अच्छे रहे सर? अभी आ रहे हैं?"

"हां, अभी आ ही रहा हूं, तुम स्कूल जा रहे हो, कंकना?"

"हां, आपके घर में सब ठीक है पंडित जी, मुन्ना अब खूब बातें करता है। हम शाम को जाते हैं न मुन्ना के साथ खेलने।"

गंभीर आनन्द से देबू अभिभूत हो गया। लड़के उसे इतना मानते हैं?

"पाठशाले का नया मकान बना है सर।"

"अच्छा!"

"हां, अच्छा मकान है, तीन कमरे हैं! नई पालिस वाली कुर्सी-टेबल आई है।".....फिर उसने कुछ कुंठित स्वर में पूछा—"अब तो आप स्कूल में न पढ़ावेंगे।"

देबू ने एक लम्बी सांस लेकर कहा—"नहीं सुधीर, अब मैं

न पढ़ाऊंगा। नये मास्टर कौन आये हैं ?"

"कंकना के बाबू हैं न, उनके नायब का लड़का। मैट्रिक पास हैं, शुरू ट्रेनिंग भी पास की है। किन्तु आप क्यों—?"

सुधीर बात पूरी न कर पाया था कि उधर से एक अल्प-वयसी व्यक्ति ने उसे बुलाया—"सुधीर, स्कूल जा रहे हो ? देखूं, ज़रा अपनी कापी पेनसिल देना !"

सुधीर ने कापी पेनसिल दे दी। यह लड़का—हां, भद्र पुरुष की अपेक्षा इसे लड़का कहना ही उचित जान पड़ता है—कौन है ? इसकी उम्र लगभग १८-१६ होगी। आंखों पर चश्मा है और बदन पर साफ कुरता। यहां का रहने वाला तो नहीं है। सुन्दर नुकीली आकृति है। सुधीर अवश्य इसे जानता है परन्तु देबू उसके सामने ही परिचय न पूछ सका। उसने दूसरा प्रसंग उठाया—"चौधरी जी—तुम्हारे बाबा अच्छे हैं ?"

"हां। वे आपको बहुत याद करते हैं।"

देबू मुसकराया। चौधरी पर वह श्रद्धा रखता है। वे उसे याद करते हैं ? देबू आनन्दित हुआ। उसने फिर पूछा—"घर में और सब—?"

"सब अच्छे हैं। सिर्फ मेरी एक छोटी बहन नहीं रही।"

"नहीं रही ?"

"हां, बड़ी नहीं एक महीने की थी।"

नवागन्तुक ने कापी-पेनसिल सुधीर को दे दी और हंस

कर पूछा—"यह संख्या तो बताओ कितनी है ?"

सुधीर संख्या देख कर चक्कर में पड़ गया । देबू ने भी देखा, लंबी-चौड़ी संख्या है । कई लाख या हज़ार करोड़ होगी।

नवागंतुक ने ही हँस कर सुधीर से कहा—"नहीं समझे ? बाइस हज़ार आठ सौ छियान्नवे करोड़, चौंसठ लाख, उनचास हज़ार !"

विस्मित सुधीर ने पूछा—"क्या ?"

"रुपये ।"

"रुपये !"

"हाँ, यूनाइटेड स्टेट आफ़ अमेरिका की खानों और कारखानोंसे वर्ष भर में इतने मूल्य का माल निकलता है ।"

सुधीर आवाक् हो गया, विमूढ़ की भाँति उसके मुँह की ओर देखता रहा । देबू भी विस्मित हुआ—यह अद्भुत् लड़का कौन है ?

नवागन्तुक ने सुधीर की पीठ थपथपा कर कहा—"अच्छा अब स्कूल जाओ, देर हो रही है !···फिर देबू की ओर देख कर बोला—आप शायद इनके घर जायंगे—चौधरी जी के घर ?"

देबू और भी विस्मित हुआ, यह चौधरी जी को भी जानता है; बोला, "नहीं । मैं शिवपुर जाऊँगा ।"

"किसके यहाँ ?"

"आप क्या सब को जानते हैं ? देबू घोष को जानते हैं ?"

तरुण ने संभ्रम के साथ कहा—"उनका घर जानता हूँ, उनके छोटे मुन्ना को जानता हूँ, उन्हें नहीं देखा ! वे मेरे आने से पहले ही जेल गये थे ! अब आने ही वाले हैं।"

सुधीर बोला—"यही हमारे पंडित जी हैं।"

"आप !"···तरुण की दोनों आँखें आनंद की उत्तेजना से दीप्त हो गईं; दोनों हाथ फैला कर देबू से लिपट कर उसने कहा—"ओह, आप देबू बाबू हैं ! चलिए, चलिए, घर चलिए।"

देबू ने पूछा—"आप ? आपका परिचय तो ?"

आँखें फैला कर सुधीर ने संभ्रम के साथ कहा—'ये यहाँ नज़रबंदी हैं सर !"

"यहाँ रखा है मुझे। अनिरुद्ध जी के बैठके में रहता हूँ। सुधीर तुम दौड़ तो जाओ। इनके घर में खबर दो, गाँव में खबर दो। वन-टू-थ्री। पूं—भसभस झिक्-झिक् ! मेल ट्रेन, लो। तूफ़ान मेल पर जाओ !"

सुधीर तीर की तरह दौड़ा।

तरुण ने हँस कर कहा—"समझ ही गये होंगे. यहाँ मुझे डेटिन्यू बना कर रखा गया है।"

गाँव में प्रवेश करते ही एक छोटे-से जन समूह से भेंट हुई। उसमें जगन, हरेन, अनिरुद्ध, तारिणी और गणेश के अति-

रिक्त और भी कितने ही व्यक्ति थे। श्रीहरि, हरीश, भवेश आदि प्रमुख प्रवीण चण्डी-मण्डप में थे। सब ने देबू का सादर सस्नेह स्वागत किया। आओ, भाई, आओ!···देबू ने चण्डी-मण्डप में प्रणाम करने के बाद गुरुजनों को प्रणाम किया। श्रीहरि ने भी आज उसकी खातिर की। सम्बन्ध में देबू चाचा होता है परन्तु श्रीहरि आयु में बहुत बड़ा है। वैसे भी वह किसी को प्रणाम करने की परवाह अधिक नहीं करता। आज उसने भी देबू को प्रणाम किया!

चण्डी मण्डप के आगे देबू का घर है। दरवाजे पर वह शिवली फूल का पेड़ लगा है। दरवाजे पर वे सब कौन खड़े हैं?···

देबू के दरवाजे पर गांव की स्त्रियां खड़ी थीं। दो कुमारी कन्याओं की कांख में दो पूर्ण घट थे। देबू अभिभूत हुआ। उसका स्वागत करने के लिए गांव वालों ने कितने आंतरिक आग्रह और परमादर के साथ आयोजन किया है। सहसा शंख ध्वनि से आकृष्ट होकर उसने देखा; एक दीर्घाङ्गी तरुणी शंख बजा रही है, उसने पहचाना, वह पद्म है।

घर में पैर रखते ही दुर्गा ने मुन्ना को देबू के पैरों पर लिटा कर उसे चट से प्रणाम किया।

छाती तक घूंघट डाले बिलू दरवाजे की बगल में खड़ी थी। मुन्ना को गोद में लेकर देबू ने बिलू की ओर देखा। बूढ़ी दादी ने उसका हाथ पकड़ कर खींचा और कहा—"छोकरे को

अक्किल भी न आई। पण्डित नहीं अपना सिर है। पहले इधर आ बदरसिक कहीं का।

"छोड़ो दादी, तुम्हें प्रणाम तो करूं।"

"रहने दे अपना प्रणाम"—वृद्धा उसे कमरे के भीतर घसीट कर ले गई फिर बिलू को घसीट लाई और बोली—"यह ले।"

फिर एकत्रित स्त्रियों की ओर देख कर बोली—"चलो, सब अपने अपने घर चलो! चलो, नहीं तो अब गालियां दूंगी।"

सब हंसते-हंसते चली गईं। देबू ने बिलू का हाथ पकड़ कर सस्नेह बुलाया—"बिलू।"

बिलू के चेहरे पर आंसुओं के चिह्न हैं, आंखें भारी हैं।

"मालिक!" आकर्ण विस्तृत हंसी के साथ चरवाहा आया और खड़ा हो गया। छोकरा हांफ रहा था—खेत में सुना। भागा आ रहा है।···भूमि पर झुक कर उसने प्रणाम किया।

"पण्डित दादा कहां हैं"—अब सतीश और उसके मुहल्ले वाले आये।

"पण्डित जी।"···आवाज सुनकर देबू व्यस्त हुआ। वृद्ध द्वारिका चौधरी बुला रहे हैं।

देबू को अपने जीवन में यह दिन अभूतपूर्व जान पड़ा। उसने सोचा दुःख और दारिद्र्य से जीर्ण तथा नीचता की दीनता से भरे गाँव के कंकाल में यह मधुर और उदार ममता कहाँ छिपी थी! वह बिलू से बोला—"जरा बाहर हो आऊँ, चौधरी जी आये है। सुख में मनुष्य की पहचान नहीं होती, वह

तो दुःख में ही अच्छी तरह समझा जाता है। पहले ऐसा जान पड़ता था कि ऐसा स्वार्थी और नीच गाँव कहीं न होगा!"

बिलू ने हँस कर कहा—"तुम आदमी भी तो बहुत बड़े हो—लोग प्यार क्यों न करें? तुम्हारे जेल जाने के बाद जरीब के अमीन, कानूनगो और हाकिम ने किसी से कड़ी बात भी नहीं की, आप. आप कहते रहे। पाँच गाँव के आदमियों ने तुमको सराहा—तुम्हें आशीर्वाद दिया।"

× × × ×

गाँव का प्रत्येक व्यक्ति कुछ घण्टों में ही बता गया कि साल भर में बहुत कुछ हो गया है। जगन ने खबर दी, घोषाल ने समर्थन किया और कहीं-कहीं संशोधन भी कर दिया।

गाँव में प्रजा समिति बनी है और कांग्रेस कमेटी भी स्थापित हुई है। जगन प्रेसीडेंट और हरेन सेक्रेटरी है।

हरेन बोला—"निर्णय यह हुआ था कि जब तुम आओगे तो दोनों में एक के सभापति होगे; मेरी समझ से तुम कांग्रेस कमेटी ले लो। डेटिन्यू यतीन बाबू की राय है कि तुम प्रजा-समिति के सभापति बनो।"

छिरू पाल अब गण्यमान्य व्यक्ति है। उसने एक लम्बी नली वाला हुक्का खरीदा है। चण्डी-मण्डप में दरी बिछा कर और मोटा तकिया लगा कर बैठता है। ससुरा अब गाँव का गुमास्ता भी बन गया है। करेला फिर नीम चढ़ा—गाँव का सत्यानाश कर दिया है!

जमींदार की हालत अच्छी नहीं है, श्रीहरि के पास धन है; जमींदार ने इसी शर्त पर उसे गुमास्ता बनाया है कि लगान वसूल हो चाहे न हो, श्रीहरि माल गुजारी चुका देगा। श्रीहरि एक ढेले से दो शिकार करता है। वह बाकी लगान के नाम पर नालिश करता है, लोगों की जमीन नीलाम करवा लेता है और अपना कर्जा-ब्याज सहित घाते में ही वसूल कर लेता है।

गणेश पाल के जोत की जमीन नीलाम हो गई है, स्वयं श्रीहरि ने खरीद ली है। सर्वस्वहीन तारिणी का घर भी श्रीहरि ने ले लिया है, और अपने गोशाले में मिला लिया है। तारिणी की स्त्री सेटेलमेंट के एक चपरासी के साथ चली गई है। तारिणी मजूरी करता है, लड़का जंकशन में रहता है और भीख माँगता है।

पातू मोची की देवोत्तर चाकरान जमीन उड़ गई है, पातू ने उसके लिए नालिश भी नहीं की, उसने खुद कह दिया कि अब मैं मंदिर में डफला न बजाऊँगा। जमींदार ने जमीन अपने खतियान में मिला ली है।

अनिरुद्ध की जमीन नीलाम पर चढ़ी है। अनिरुद्ध शराब पीकर आवारा की तरह घूमता रहता है—कभी-कभी दुर्गा के घर भी जाता है। उसकी स्त्री भी पागल जैसी हो गई है। अब कुछ अच्छी है। दुर्गा के जोड़-तोड़ से ही दारोगा ने अनिरुद्ध का घर डेटिन्यू रखने के लिए किराये पर लिया है।

देवू बोला—"लुहारिन को आज देखा था, शंख बजा

रही थी।"

जगन बोला—"हाँ, अब कुछ अच्छी है न, कुछ क्यों, जब से यतीन बाबू आये हैं तब से बहुत अच्छी है।"···ओंठ तिरछे करके वह मुस्कराया।

हरेन ने दबे हुए स्वर में कहा—"मेनी मेन से—समझे—यतीन बाबू एवं लुहारिन—"

देबू विश्वास न कर सका, तिरस्कार के साथ बोला—"छः हरेन! क्या ऊटपटांग बकते हो।"

"एस, मैं भी यही कहता हूँ, ऐसा हो ही नहीं सकता। यतीन लुहारिन को 'मां' कहते हैं।" कुछ रुक कर वह फिर बोला—"लेकिन यतीन बाबू बड़े मुँह चप्पू आदमी हैं। उनसे बम बनाने का फार्मूला किसी तरह नहीं जान सका।"

हरीश और भवेश आ गये, तब उनका वार्तालाप बंद हुआ, थोड़ी देर बाद वे चले गये।

हरीश बोला—"देबू शाम को चण्डी मण्डप तक आना। वहीं हम सब बैठते हैं। श्रीहरि के कारण पाँच आदमी जमा हो जाते हैं। रोशनी, पान, तमाकू सब व्यवस्था रहती है। श्रीहरि तो बिल्कुल बदल ही गया है, समझे!"

भवेश बोला—"हाँ, हमारे श्रीहरि ने दोनों वक्त चाय तक का इंतजाम कर दिया है।"

देबू ने और भी कई खबरें सुनीं।···

गाँव के पाँच आदमियों के साथ बैठने-उठने की सुविधा

के लिए ही श्रीहरि ने पाठशाला के लिए अलग मकान बनवा दिया है। ज़मींदार की तरफ से उसी ने ज़मीन का प्रबन्ध किया है, यूनियन बोर्ड के मेंबर की हैसियत से दीवालें बनाने का खर्च मंजूर कराया है, स्वयं भी नगद पचीस रुपये दिए हैं। इसके अतिरिक्त छत के लिए लकड़ी और फूस तथा खिड़कियों और दरवाज़ों के लिए तख्ते भी श्रीहरि से ही मिले हैं।

चण्डी-मण्डप में दोनों वक्त महफिल जमती देख कर श्रीहरि के विरोधियों की छाती फटी जाती है। वे इधर-उधर निंदा करते फिरते हैं लेकिन श्रीहरि का इससे कुछ नहीं बिगड़ता। श्रीहरि गुमास्ता हो गया है, उसके काम में अड़ंगा लगाने के ही लिए इन लोगों ने प्रजा समिति बनाई है, कांग्रेस कमेटी खड़ी की है। देबू इन सब झमेलों में न फसे!

तारा नाई ने और भी गूढ़ संवाद सुनाये।...ज़मींदार इस गाँव की ज़मींदारी बेंचने के फेर में है, श्रीहरि मुँह फैलाए बैठा है। ज़मींदारी मिल गई तो वह शिव मंदिर पक्का बनवा देगा। चण्डी-मण्डप की छत भी पक्की हो जायगी। श्रीहरि के घर में इस समय एक रसोई बनाने वाली और एक लड़के पालने वाली है!

अंत में ताराचरण ने कहा—"वो हरिहर की दो लड़कियाँ जो कलकत्ते चली गई थीं नौकरी-चाकरी करने—वही। समझे! अमीरी ठाठ है, दोनों को श्रीहरि ने रख लिया है! छोटी लड़की जब आई थी तब बरसों की मरीज जान पड़ती थी—खून के

फूल जैसा रंग हो गया था। धीरे-धीरे पता चला—कलकत्ते में—समझे ?"

अर्थात् लड़की ने मातृत्व की सम्भावना को नष्ट कर दिया था इसी लिए ग्राम-समाज ने उसे पतित कर दिया। किन्तु श्रीहरि ने दया की और आश्रय दे दिया। उन्हीं के अनुरोध से समाज ने लड़की को क्षमा कर दिया है। तारा बोला—"दो लड़कियों का खर्चा—कपड़े-लत्ते, शौक की चीजें—मामूली बात नहीं है !···"

वृद्ध चौधरी ने अपने परिवार की ही बातें कीं और देबू से जेल के दुख सुख पूछे। अंत में आशीर्वाद दिया—"पंडित, तुम चिरंजीव रहो। हो सके तो श्रीहरि के साथ डाक्टर विशेषत: लुहार का झगड़ा निपटवा दो। अनिरुद्ध तो मिट्टी में मिल गया है !"

राम नारायण ने आकर पूछा—"देबू भाई, अच्छे रहे ? मेरी माँ मर गई हैं !"

वृन्दावन दूकानदार ने कहा—"चावल के व्यापार में बहुत घाटा हुआ है। जंकशन के रामलाल भगत ने तो लाल बत्ती जला दी है।"

वृद्ध मुकुन्द एक बच्चे को गोद में लेकर आये थे; बोले, "हरेन्द्र का लड़का है।"···मुकुन्द का लड़का गोविन्द, गोविन्द का लड़का हरेन्द्र, हरेन्द्र का लड़का उनका प्रपौत्र हुआ।

संध्या के समय स्वयं श्रीहरि आया। श्रीहरि अब सभ्रांत

व्यक्ति है ! तगड़ी पेशियों और लम्बे चौड़े शरीर वाला जो जवान किसान हाथ में फावड़ा लिए नंगा घूमता था—अपने बल का घमण्ड दिखाता था, मामूली सी बात में ही मार-पीट पर उतारू हो जाता था, जबरदस्ती दूसरे की भूमि दबा लेता था और कर्कश कण्ठ से घोषणा करता था कि मैं ही इस गाँव का मुखिया हूँ—सब से बड़ा हूँ—उस छिरू पाल के साथ इस श्रीहरि का कोई सादृश्य नहीं है। श्रीहरि सर्वथा स्वतंत्र व्यक्ति है ! इसके पैरों में बढ़िया स्लीपर हैं बदन पर बंडी और उस पर चादर है, आकृति में संयत गंभीरता की छाया है, यह गाँव का गुमास्ता और महाजन है—एक तरह से यही गाँव का अधिपति है !

"देबू चाचा हैं क्या ?" श्रीहरि मुस्कराता हुआ आया।

देबू ने स्नेह के साथ श्रीहरि का स्वागत किया। वह बाहर जाने के लिए तैयार हो रहा था। अनिरुद्ध के घर जाने की इच्छा थी। यतीन बाबू उसे चण्डी-मण्डप तक पहुँचा कर चले गये थे. देबू उनसे मिलने के लिए व्यस्त हो रहा था। अनिरुद्ध भी उसी समय चला गया था। कहते हैं, वह अब शराबी हो गया है, दुर्गा के घर में रात बिताता है, उसके यहाँ रोटी खाने में भी नहीं झिझकता, जमीन नीलाम होने जा रही है। अनिरुद्ध की स्थिति का ध्यान आने से देबू को दुःख हुआ। क्या हो गया है उसे ! देबू को याद आया, एक दिन चौधरी ने कहा था, 'पण्डित, लक्ष्मी का ही नाम श्री है। लक्ष्मी जिसके घर में है,

श्री भी उसी के पास है; जिस के मन में बल है, शरीर में बल है, प्रकृति में बल है, वही श्रीमान है।' श्रीहरि में परिवर्तन क्यों न होता। और अभाव ने ही अनिरुद्ध की यह दशा की है। साथ ही साथ लुहारिन की बीमारी ने भी उसे बिगाड़ा है।

"चाचा, चण्डी-मण्डप चलें, वहीं आज कल बैठते हैं। चाय भी बन गई है। उठो!"

"देबू इनकार न कर सका। चण्डी-मण्डप में बैठ कर श्रीहरि कितनी ही बातें कह गया।...यहाँ बैठने का ठिकाना करने के लिए ही स्कूल का अलग घर बनवाया है। अब स्कूल की फर्श और बरामदा पक्का करवाने का विचार है, एक डाक्टर से भी बात-चीत हो रही है, उसे गाँव में बसायेंगे। मैं ही उसे रहने के लिए मकान और भोजन दूंगा। जगन से काम नहीं चलता। उसकी दवाएँ नहीं—पानी होती हैं।

देबू चुपचाप सुनता रहा।

"सेटेलमेंट की खानापूरी आदि समाप्त हो गई है। अब कोई झगड़ा नहीं रह गया।" उसने यह भी स्वीकार किया कि यह सब देबू की वजह से आसानी के साथ हुआ है। बोला—"समझे चाचा, फिर अमीन और कानूनगो 'आप' सिवा बात न करते थे। हम सब तुम्हारा नाम लेते थे। अब तीसरी धारा और फिर पाँचवी धारा लागू होगी।"

श्रीहरि ने यह भी बताया कि देबू की सब ज़मीन उसने बिल्कुल ठीक रिकार्ड करवा दी है। यहाँ तक कि कंकना वाले

बाबुओं के कर्मचारी ने जो टुकड़ा हजम कर लिया था—वह भी ले लिया है।

"ले लिया है ?"···देबू विस्मित हुआ।

"लेंगे नहीं ! ज़मींदारी के सब काग़ज़-पत्तर मेरे हाथ में हैं, उस पर दास जी की घुटी खोपड़ी। मैंने कहा, देबू चाचा ने तो सब का उपकार किया है, शेर के दाँत तोड़ गये हैं; हम इतना भी उपकार न करेंगे ! इसके अतिरिक्त—

"इसके अतिरिक्त"—श्रीहरि ने आकाश की ओर देख कर हाथ जोड़ते हुए कहा—"भगवान ने जब मनुष्य जन्म दिया है तब उपकार के सिवा किसी का अपकार न करूंगा, चाचा।

"यही देखो, हरिहर की दोनों लड़कियों ने कैसी मिट्टी पलीत की थी। कलकत्ते में खाते में नाम लिखा कर बैठ गई थीं। अन्त में न जाने क्या क्या करके गांव लौटीं। गांव वालों ने उन्हें पतित कर दिया। मैंने समझा बुझा कर उनको अपने ही घर में रख लिया है। लोग कितनी ही बातें कहते हैं। मैं भी झूठ न बोलूंगा, तुम चाचा ही नहीं मेरे मित्र भी हो, सहपाठी रहे हो ! जो बाज़ार के खाते में नाम लिखा चुकी थीं उनको मैंने यदि इसीलिए घर में रख लिया है तो क्या बुरा किया है ?"

हुक्के की सटक देबू के हाथ में देकर श्रीहरि बोला—"पियो चाचा।"

"नहीं, जेल में बीड़ी-तमाकू पीना छोड़ दिया है।"

"अच्छा किया।"

श्रीहरि की बातें खतम ही न होना चाहती थीं अब उसने यह इतिहास आरम्भ किया कि किस की विपत्ति में उसने कितना रुपया उधार दिया है और अब वह देने का नाम ही नहीं लेता।

श्रीहरि को दोष नहीं दिया जासकता। रुपया रखना पाप नहीं है, ग़ैर कानूनी भी नहीं है। विपत्ति के समय रुपया उधार लेने वाला उपकृत ही होता है परन्तु जब असल और सूद मिला कर चुकाना पड़ता है तब उसका जो कदर्य्य रूप प्रकट होता है उसे श्रीहरि कैसे दूर कर सकता है? ब्याज पर ही वह इनकम टैक्स देता है, हक प्राप्ति के लिए अदालत में कोर्ट फीस लगती है, युनियन का चौकीदारी टैक्स देना पड़ता है। ब्याज वह छोड़ कैसे दे।

देबू ने एक लम्बी सांस ली। श्रीहरि की बातों से उसे अपना बचपन याद आगया। अपना ऋण वसूल करने के लिए कंकना के बाबुओं ने उसके घर की चल सम्पति कुर्क करवाई थी। वह सिहर उठा।

"अब सेटलमेंट की तीसरी धारा आ रही है फिर पांचवीं धारा। इधर डाक्टर ने प्रजासमिति खड़ी की है और कहता है कि इस गांव की सब जमीन मुकररी जमीन है। इस मौजे में लगान कभी नहीं बढ़ा। मैं तुम्हें कागज दिखाऊँगा पिचहत्तर साल पहले लगान बढ़ा था और सारी जमीन पर

बढ़ा था, एक टुकड़ा तक मुकररी नहीं है। ज़मीदार लगान बढ़ावेगा। वे लोग शायद झगड़ा करें। मुकदमा चलेगा। कानून ने ज़मींदार को हक दिया है, वह उसे अवश्य मिलेगा। कानून जब कहता है तब उसका क्या अपराध ? पचास साल में अनाज के दाम तिगुने नहीं हो गये—फिर ज़मीदार क्यों न ले ?"

देबू कोई उत्तर न दे सका। अनाज के दाम तो सचमुच बढ़े हैं परन्तु प्रजा की सम्पत्ति नहीं बढ़ी, सुख-सुविधा में भी वृद्धि नहीं हुई। लगान में वृद्धि वे कैसे सहेंगे !

"सुनो चाचा ! भाग्य के फेर से तुमने बहुत कष्ट सहे। अब तुम ऐसे झमेलों में न पड़ना। खाओ-पिओ, काम-काज देखो, लोगों का उपकार करो—तुम्हारे ऊपर सब की आशा लगी है। दारोगा जी भी आज कहते थे कि पंडित को समझा देना, अब ऐसे झगड़ों में न पड़ें। ''एक बांड लिख दो—वे सब ठीक कर देंगे ! स्कूल की नौकरी—वह तो तुम्हारी है ही, बांड लिखते ही तुम्हें मिल जायगी। और उस नजरबंदी छोकरे से मेल-जोल न रखो। समझे ?"

देबू मुस्कराया—"सब समझ गया।"

"तो फिर कल मेरे साथ चलो।"

"नहीं, यह नहीं हो सकता छिरू। मैंने कोई अन्याय तो किया नहीं।"

"काम तुम ठीक नहीं कर रहे हो चाचा, अच्छा दो दिन

सोच लो।"

"अच्छा।"···देबू हँस कर उठ आया। चण्डी-मण्डप से रास्ते पर उतरते ही दो आदमियों ने झुक कर उसे प्रणाम किया और खड़े हो गये।

"कौन सतीश ?"

"जी हाँ।"

"क्या बात है ?"

"जी, हमारे यहाँ एक बार पदार्पण करना होगा आपको।"

"क्यों ? क्या हुआ ?"

"जी, हम लोगों का 'घेंटू-गान' सुनने—"

"घेंटू-गान ? आज नहीं, फिर किसी दिन आऊंगा।"

'जी, आपको सुनाने के लिए ही तो हमने महफिल लगाई है।···फिर फुसफुसा कर बोला—नजरबन्दी बाबू भी आये हैं, बैठे हैं। डाक्टर बाबू भी हैं।"

"नजरबंदी बाबू हैं ?"

"जी हां।"

"अच्छा, चलो।"·····

× × × ×

पत्री के अनुसार चैत माह में घण्टाकर्ण की पूजा होती है परन्तु सतीश के 'घेंटू' पत्री के घंटाकर्ण से भिन्न हैं। पत्री में वसन्त रोग का निवारण करने वाले महाबली घंटाकर्ण की पूजा का उल्लेख होता है, दूसरे घंटाकर्ण या घेंटू पिशाच

थे, वे विष्णु के विरोधी और शिव के भक्त थे। साधना करने के बाद उन्होंने रुद्र और विष्णु दोनों देवताओं से वरदान प्राप्त किया था! भक्त विशाच घंटाकर्ण की पूजा नीच जाति के लोग करते हैं। महीने भर तक वे घेंटू के गीत गाते फिरते हैं और आटा, दाल चावल माँग कर गाजन* के दिनों में उत्सव करते हैं।

चैत की संध्या है। धर्मराज तला में बकुल वृक्ष के नीचे महफिल लगी है। बकुल फूल की सुगंध से वातावरण महक रहा है। एक ओर स्त्रियाँ बैठी हैं, दूसरी ओर पुरुष। दोनों के बीच में नज़रबंदी बाबू, देबू पंडित, जगन डाक्टर और हरेन घोषाल को बिठाया गया है; चार मोढ़े भी वे कहीं से ले आये हैं। ऐसा जान पड़ता है कि वासन्ती संध्या की ज्योत्स्ना ने आकाश से लगा कर पृथ्वी के वक्षतक स्वप्न कुहेलिकामय प्रकाश का जाल बिछा दिया है।

देबू को याद आया कि बचपन में वह यहाँ घेंटू के गीत सुनने आता था। ज्योत्स्ना के ऐसे ही प्रकाश में महफिल जमती थी। चलते समय वह ढेर के ढेर बकुल-फूल ले जाता था। तब सतीश की चढ़ती जवानी थी, वही गाता था और उसके हमजोली साथ देते थे, नाचते थे। उन दिनों की महफिल लेकिन खूब भरी होती थी, उसकी तुलना में आज की महफिल बहुत हल्की है। विशेषतः पुरुषों की संख्या ही कम है। देबू बोला—"उन दिनों जैसी महफिल नहीं है सतीश।"

* गाजन चैत्र मास में कृषकों का एक उत्सव है। कृषक शिव-मन्दिर में दल बना कर धान की महिमा का गीत गाते हैं। गाजन गीतों का उत्सव है।

सतीश ने उत्तर दिया—"मुहल्ले के चौथाई मर्द भी तो नहीं आये पंडित जी।"

"क्यों ? कहां हैं ?"

"पेट की फिकर में। गांव में तो काम मिलता नहीं, गिरस्त सब फरार हो गये हैं, नौकर चाकर कौन रखे। इन लोगों के परिवार भी बढ़ गये हैं, अब दूसरे गांवों में नौकरी करते हैं! पहर रात गये घर लौटते हैं, घेंटू के गीत कब गायें—कब सुनें ?"

जगन बोला—"तुम्हारे पेट में भी तो आग लगी है, वह तो भरता ही नहीं।"

सतीश ने हाथ जोड़ कर कहा—"यह भी आप ठीक कहते हैं डाक्टर जी, पेट में आग तो लगी ही है, औरतें तक दिहाड़ी कमाने जाती हैं ? किया क्या जाय! पंचायत करके मना किया, कोई मानता ही नहीं, तंगी भी तो बहुत।"

यतीन ने बाधा दी, बोला—"शुरू भी करो।"

गायकों और बादकों का दल तयार ही था, गीत आरंभ हो गया।

ढोलक की गमक और मंजीरों की खनक के साथ गायकों ने आरंभ किया—

शिव शिव राम राम!

छोटे छोटे लड़कों ने नाचते नाचते ताली बजाते बजाते टेक उठाई।

शिव-शिव-राम-राम!

गायकों ने गीत बढ़ाया—

एक घेंटू तार सात बेटा।
सात बेटा तार सातान्त;
एक बेटा तार, महान्त।
महान्त भाई रे,
फूल तूलि ते जाई रे,
जत फूल पाई रे,
आमार घेंटू के साजाई रे!

प्रत्येक पंक्ति के बाद लड़कों ने ताली बजाकर टेक जोड़ी—शिव-शिव राम-राम!

यह गीत समाप्त हुआ तो वे गीत आरंभ हुए जो इनके कवियों ने स्थानीय एवं विशेष घटनाओं पर लिखे हैं। मयूराक्षी की बाढ़ पर एक गीत हुआ। बहुत दिन पहले जब रेलवे लाइन शुरू हुई थी, तब एक गीत लिखा गया था, वह आज तक गाया जाता है, वह भी सुनाया गया। फिर अकाल के साल की कहानी उठी और फिर जरीब पर लिखा गया नया गीत आरंभ हुआ—

गीत में कहा गया था—देश में जरीब आई है और सब के कलेजे कांप रहे हैं। सब सोचते हैं कि प्राण तो दिए जा सकते हैं परन्तु यहां तो मान बचाना कठिन है। चपरासी, अमीन और कानूनगो आये हैं, बाबा शिव के दरबार में उगाई देनी पड़ेगी। घोड़े पर चढ़ कर हाकिम आया है और उसके साथ पेशकार है—अब देश के आत्माराम को पिंजरा छोड़ना

ही पड़ेगी। तंबू आये हैं, कुरसियां आई हैं, गाड़ियों कागज आये हैं और लोहे की चालिस मन भारी जंजीर आई है। खेतों में धान तो अब न बचेंगे!

तीन पैर के टेबल पर दूरबीन लग गई है, यहां, वहां. इधर उधर खूंटियां गाड़ते-गाड़ते कुली मरे जा रहे हैं। तातारों जैसे काले चेहरे और लाल आंखों वाला आदमी दांत पीस कर सब को उल्लू कहता है। हाय, कलियुग में जमीन भी नहीं फटती!

पण्डित जी देबू बाबू तेजस्वी विद्वान हैं, जान से ज्यादा मान को प्यार करते हैं, उनसे न सहा गया; कानूनगो के 'तू' का उन्होंने मुंह तोड़ जवाब दिया! अमीन ने चालिस मन की जंजीर उठवाई और देबू घोष के पके खेत में घुमवा दी! उसे समझाया गया लेकिन वह न माना!

देबू हंसा। बोला—"यह किसने लिखा है सतीश?"

यतीन मुग्ध होकर सुन रहा था। गायकों ने इसके बाद की घटना का भी पूरा वर्णन किया। अन्त में गाया—

पुलिस का दारोगा आया, उसने देबू घोष को पकड़ लिया और कहा हाथ जोड़कर कानूनगो से माफी मांगो। देबू ने हँस कर कहा नहीं—कभी नहीं! सोने के रंग वाली स्त्री पीछे रह गई, मक्खन का पुतला जैसा बच्चा धूल में लोटने लगा लेकिन देबू घोष अटल रहे!

आंसू पोंछती हुई दुर्गा बोली—तुम सचमुच पत्थर हो जोजा! हाय, वह भी कैसा दिन था। दुर्गा ही नहीं, सभी

स्त्रियों ने आंसू पोंछे, उस दिन की बात उन्हें याद है।

फूलों की माला पहन कर देबू बाबू जेल चले गये! अधम सतीश उनके पैरों पर लोटता है। देवता के सिवा ऐसा और कौन कर सकता है।

गीत समाप्त हुआ। सतीश ने देबू को प्रणाम किया। देबू का हृदय भी आवेग से भर गया था। वह मुंह से कुछ न कह सका। स्नेह के साथ सतीश का हाथ थाम लिया।

जगन बोला—"तुम्हें मैं एक मेडेल दूंगा सतीश।"

हरेन बोला—"बट, सतीश यह बात तो छोड़ ही गया कि माला मैंने दी थी।"

यतीन मोहाछन्न की भांति उठकर खड़ा हुआ। उसे संपूर्ण अनुष्ठान अद्भुत् जान पड़ा है। सतीश को उसने अन्तर में प्रणाम किया, बोला—अपना गीत मुझे लिखा दोगे सतीश?

"जी"···सतीश अप्रस्तुत की भांति हँसने लगा—"आप लिखेंगे?"

"हां।"

"सच कहते हैं?"

"हां, हां।"

सतीश का चेहरा खिल गया। वह कृतार्थ हो गया।

देबू बोला—"आज तो आप के साथ आलाप नहीं हो सका, कल.....!"

यतीन बोला—"आलाप तो हो गया है, आलोचना बाकी है। कल मैं ही आप के घर आऊँगा।"

—उन्नीस—

शिवकालीपुर का यह अद्भुत रूप एक ही दिन दीख पड़ा और वह भी केवल देबू ने ही देखा। रूप ही नहीं, देबू के निकट उसका स्पर्श और स्वाद भी मधुमय हो गया था। दूसरे दिन शिव-कालीपुर फिर अपने पहिले रूप में बदल गया। वही दीनता-हीनता-हिंसा से जर्जर मनुष्य और वही दारिद्र्य-दुःख-रोग प्रपीड़ित गांव। कल देबू ने गांव के पेड़ पत्ते और लता-गुल्म और फल-फूल में जो अभिनव माधुर्य देखा था, आम के बौर की गंध में जो तृप्ति पाई थी, आज उसकी गंध तक नहीं मिली।

देबू अपने चौतरे पर बैठा था और बिखरी हुई चिन्ता में उलझा था। ···गांव में कितनी धूल है। बगल में भवेश दादा के एक ताल का पानी समाप्त होने वाला है। गाँव में पानी का अभाव अभी से प्रकट होने लगा है। बैसाख-जेठ में तो गायों, बैलों और पेड़ों को पानी भी न मिलेगा। घर में कई पेड़ लगे हैं उनको पानी देना पड़ेगा।···लेकिन पेड़ लगाने से ही क्या लाभ होगा? घर में कद्दू की जो लता लगी है और दीवार से बाहर तक लटक गई है, उस में तीन कद्दू कल कोई तोड़ ले गया है। लता घर में चरवाहे ने लगाई थी—

वह अज्ञातनामा चोर को चिल्ला चिल्ला कर गालियां दे रहा है।···चरवाहा वेतन और कपड़े के लिए व्यस्त हो गया है। बिलू के कपड़े भी फट गये हैं, अपने लिए भी चाहिए।··· डाकखाने में जो रुपये जमा थे वे भी अब नहीं रहे।

उधर कहीं कोई उच्च कर्कश कण्ठ से गाली-गुफ्ता कर रहा है। न जाने किसके साथ झगड़ा हुआ है। संभवतः एक आवाज दादी की है। बुढ़िया किससे बिगड़ गई है? उसने बिलू से पूछा—"दादी किससे बिगड़ गई है?"

बिलू ने हंस कर उत्तर दिया—'किसी से नहीं? बूढ़ी अपने बाप और भगवान् को कोस रही है। आज कल रोज सवेरे उठकर यही करती है। बूढ़ी हो गई है, काम-काज करने में तकलीफ होती है, इसीलिए सवेरे उठते ही गालियां देती है। बाप को गाली देती है—राक्षस, जमा-जमीन सब अपने पेट में भर कर ले गया है। भगवान् को शाप देती है - तुम्हारी आंखें फूटें—अंधे हो जाओ।"

देबू मुस्कराया फिर बोला—'और भी कोई बोल रहा है—कांसे के घंटे जैसी आवाज है।"

"वह पद्म है, लुहारिन।"

"अनिरुद्ध की बहू?"

"हाँ, वह शायद श्रीहरि घोष को गालियाँ देती है। कभी-कभी इसी तरह कोसती है। बीच में तो बिचारी पागल ही हो गई थी, अब कुछ अच्छी है। लुहार ने तो काम-काज

छोड़ ही दिया है। शराब बहुत पीता है। लोहे का एक डण्डा लिए घूमता है, कहता है, खून करूंगा। इसके उसके घर में खाता है।"

"यानी दुर्गा के घर में ?"

"हां।"

"छि, छि, छि, दुर्गा का यह दोष न गया। इसी एक दोष से उसके सब गुण नष्ट तो हो गये हैं।"

बिलू बोली—"शराब पी कर और मतवाला होकर लुहार ही खाने के लिए जबरदस्ती करे तो दुर्गा क्या कहे ? पहले कर्मकार रात को दुर्गा के ही घर में सोता भी था। अब दुर्गा उसे रात को घर में नहीं सोने देती फिर भी वह नहीं मानता, कभी उसके चौतरे पर, कभी बगीचे में और कभी रास्ते में सो जाता है।"

"हां, आज कल अनिरुद्ध के पास पैसा-कौड़ी तो है नहीं फिर दुर्गा.....।"

"नहीं-नहीं, ऐसा न कहो, दुर्गा ने कर्मकार से कभी पैसा नहीं लिया, बल्कि कभी-कभी वही दो चार रुपये देती रहती है। मुझे ही देकर कहती रहती है, बिलू दीदी तुम लुहारिन को दे देना, मुझ से तो वह लेगी नहीं।"

"छिः ! तुम इस जघन्य व्यापार में क्यों पड़ी ?"

बिलू ने सिर झुका कर कहा—"क्या करती, लुहारिन तो पागल जैसी हो गई थी, उस पर खाने को भी न मिलता था,

मेरे पास भी कुछ नहीं था जो उसे देती, एक दिन दुर्गा ने बहुत हाथ पैर जोड़े तो लेकर दे दिए।"

'हू'''देबू को कुछ याद आ गया!—"नजरबन्दी के लिए अनिरुद्ध को घर भी तो दुर्गा ने ही दारोगा से कहकर किराए पर दिलवाया है।"

"हां, नजरबंदी बहुत अच्छा लड़का है। लुहारिन को मां कहता है। गांव के लड़के भी उस के पास जमा रहते हैं।"

"अच्छा मैं जरा यतीन बाबू से मिल आऊं।"

रास्ते में चण्डी मण्डप से श्रीहरि ने बुलाया, वहां और कितने ही लोग बैठे थे। देबू ने अनुमान से समझा कि लगान वसूल हो रहा है। चैत्र की बारहवीं तेरहवीं और अंग्रेजी की अट्ठाइस मार्च मालगुजारी देने की आखिर तिथि है। किस्त की आखिरी है।

देबू बोला—"शाम को आऊंगा।"

श्रीहरि ने कहा—'पांच मिनट। गांव की हालत देख लो अराजक हो रहा है।"

देबू ऊपर गया देखा बैरागियों का 'नेलो' अर्थात नलिनी हाथ जोड़े खड़ा है, एक तरफ उसकी मां रो रही है।

श्रीहरि बोला—'छोकरे की करतूत तो देखो," उंगली से उस ने मण्डप का चूने से पुता हुआ एक खंभा दिखाया। उस पर कोयले से एक तसवीर बनाई गई है—तसवीर माता काली की है।

देबू ने नेलो से पूछा—"यह तू ने बनाई है ?"

नेलो ने सिर हिला कर स्वीकार किया "हां !"

"अच्छा खासा खंभा बरबाद कर दिया है।"···नेलो की ओर देख कर कहा—"पुताई का खरचा देदे और अपने घर जा !"

देबू तसवीर ही देख रहा था—"बनी तो अच्छी है," नेलो से पूछा—"किस से सीखा है तूने ?"

नेलो ने रुद्धस्वर में ही किसी तरह उत्तर दिया—'अपने आप।"

"अपने आप ही बनाने लगा है ?"

उत्तर श्रीहरि ने दिया—"हां, हां, छोकरे का यही काम हो गया है ! लोगों की दीवारों पर, सीमेंट के चौतरों पर, यहां तक कि बड़े बड़े पेड़ों पर कोयले से तसवीर बनाता रहता है। उस नजरबंदी छोकरे ने इस का सिर फिरा दिया है ! अनिरुद्ध के घर में वह रहता है, उस की दीवार देखो, ऐसी ही तस्वीरों से भरी है। अब चण्डीमण्डप पर जुटा है। कल दोपहर में यह करतूत कर गया है।"

देबू हंस कर बोला—"काम तो इसने ठीक नहीं किया लेकिन तसवीर अच्छी बनाई है।"

"नमस्कार घोष महाशय !"···सीढ़ियों पर नजरबंदी यतीन दीख पड़ा। देबू को देखकर वह बोला, "आप भी यहीं हैं। मैं आप के घर ही जा रहा था।"

"मै भी आपके ही घर जा रहा था।"

"अच्छा यह काम निपटा लूं। घोष महाशय, उस खंभे में चूना पुताने में क्या खर्च होगा?"

श्रीहरि बोला—"खर्च तो कुछ होगा ही, बड़ी बात तो नेलो को ठीक करना है।"

यतीन मुस्कराया, बोला—"मैंने दो-एक आदमियों से पूछा है, वे कहते थे, चार आने का चूना, चार आने मिस्त्री की आधे दिन की मजूरी और दो आने मजूर की मजूरी—कुल दस आने लगेंगे।"

"हां, कूंची के लिए सन भी लेना पड़ेगा।"

"दो आने वह भी जोड़ लीजिए। यह लीजिए बारह आने" यतीन ने एक रुपया श्रीहरि के सामने रखा।—"बाकी भेज दीजिएगा।"

वह उठकर खड़ा हो गया। देबू भी उठा, यतीन हंस कर बोला—"मेरे ही यहां चलिए देबू बाबू, नलिन की बनाई बहुत सी तसवीरें है, देखिएगा। आ नलिन, चलें!"

श्रीहरि ने बुलाया—"चाचा एक बात थी।" देबू घूम कर खड़ा हुआ—"कहो।"

"जरा इधर आ जाओ, सब बातें सब के सामने नहीं कही जाती।"

श्रीहरि हँसा। देबू को एकांत में ले जाकर बोला—"पिछली किश्त से ही तुम्हारा लगान बाकी है चाचा, अब साल का

आखिर है। किश्त से पहले ही कोई प्रबन्ध कर डालो।"

देबू को बुरा मालूम हुआ। कल की बात याद आई, ऐसा जान पड़ा कि श्रीहरि उसे धमका रहा है। फिर भी वह संयत स्वर में बोला—"अच्छी बात है, किश्त के पहले ही हो जायगा।..."

× × × × × ×

१६२४ ईस्वी में विशेष क्षमता के बल से एक कानून बनाया गया अर्थात् राजनैतिक संदिग्धों को कितनी ही पाबन्दियों से जकड़ कर इधर उधर नजरबंद करने की व्यवस्था की गई। बंगाल सरकार ने उसी कानून के अनुसार यतीन को नजरबन्द किया है। यतीन की उमर अधिक नहीं है, सत्रह-अठारह वर्ष का किशोर है और यौवन ने अभी पदार्पण किया है। उसका रंग उज्ज्वल-श्याम है, बाल बड़े बड़े और रूखे हैं, शरीर लंबा और दुबला है, सर्वांग में एक कमनीय लावण्य दीख पड़ता है। उसकी आंखें चमकती हैं, चश्मे के आवरण में और भी चमत्कार पूर्ण दीख पड़ती हैं।

अनिरुद्ध के बरामदे में एक तख्त बिछा है, यतीन वहीं बैठता है। गांव के लड़कों की मण्डली तो वहां लगी ही रहती है। तारा नाई, गिरीश बढ़ई, गजेड़ी और गदाई पाल और वृद्ध द्वारिका चौधरी आदि वयस्क भी आते हैं। दुकान बन्द करके वृन्दाबन दत्त भी पहुँचता है, मजूरी करने के बाद तारिणी भी आता है और चुपचाप एक कोने में बैठा रहता है। कभी-कभी श्रीहरि भी इधर से निकलते हैं और थोड़ी देर

बैठ जाते हैं। हरिजन बस्ती के आदमी भी जमा होते हैं। गांव की बहुएं दूर से ही यतीन को देखती हैं। बूढ़ी रांगा दादी यतीन से वार्तालाप करते है और कभी लड्डू, कभी केला, कभी कुछ और दे जाती है। यतीन को देख कर वह कभी-कभी अपने आप ही गुनगुनाती है—

"अक्रूर पाषाण हिया, सोनार गोपालेर नेया,
शून्य करिल यशोदार कोल।....."*

यतीन भी कभी-कभी रवीन्द्रनाथ की एक कविता गुनगुनाता है, दो पंक्तियां तो उसके नजरबंद जीवन में सदा ही गूंजती रहती हैं—

'घर मेरे सर्वत्र बन गये,
घर घर परमात्मीय हुए।.....'

यतीन के लिए इस गान की छोटी सी सीमा में ही संपूर्ण बंगाल उतर आया है। यहां आते ही सारा गांव क्षण भर में ही उसका अपना ही घर बन गया है। यहां का प्रत्येक व्यक्ति उसका घनिष्टतम प्रियजन, परमात्मीय हो गया है। उसे तो यह सब एक आश्चर्यपूर्ण काण्ड जान पड़ता है, वह शहर का लड़का है, कलकत्ते में उसका घर है। जीवन में उसने पहले गांव कभी न देखा था, नजरबंदी के आरंभ में वह कुछ दिन जेल में रहा, फिर विभिन्न जिलों के सदर अथवा तहसील

* पाषाण हृदय अक्रूर सोने के गोपाल को ले जा कर यशोदा की गोद सूनी कर गये।

शहरों में रखा गया। वे शहर भी अद्भुत् थे। उनमें ग्राम जीवन का आभास भी था, थोड़े बहुत खेत भी थे, परन्तु खेती जीविका का मुख्य नहीं गौण अंश हो गया था, साथ ही साथ छोटे छोटे समाज भी बन गये थे—समाज नहीं उन्हें दल कहना चाहिए. समाज बिखर गया था और शिक्षा, सम्मान एवं अर्थ बल के अंतर से छोटे-छोटे संकीर्ण, अपने आप में केंद्रित और ईर्षापरायण दल बन गये थे। गांव का आभास वहां उतना ही रह गया था जितना तैलचित्र में रंग से ढके कपड़े का आभास रह जाता है—जिसमें कपड़े की अस्पष्ट इंगिति होती है, उसका प्रभाव या प्रकाश नहीं रह जाता।

इसीलिए यतीन को जब ठेठ देहात में नजरबंद करने का आदेश मिला था तब वह एक अज्ञात आशंका से विचलित हुआ था। परन्तु प्रत्यक्ष परिचय मिलने पर वह आश्वस्त हुआ, परमाश्चर्य के साथ उसने सर्वत्र स्नेह के स्पर्श का अनुभव किया। यहां की दीनता हीनता और कदर्यता भी उसने देखी है। अशिक्षा तो प्रत्यक्ष प्रकट है। फिर भी उसे यहां अच्छा लगा है। यहां का मनुष्य अशिक्षित है परन्तु शिक्षा के प्रभाव से शून्य अमानव नहीं है, अशिक्षा के दैन्य से ये संकुचित है परन्तु कुशिक्षा या अशिक्षा के दंभ से दांभिक नहीं हैं। शिक्षा यहां के मनुष्यों को नहीं मिली परन्तु इनके पास एक प्राचीन और जीर्ण संस्कृति आज भी है—भले ही वह मुमूष की भांति किसी तरह सांस ही ले रही है ।

यतीन शहर को प्यार करता है, श्रद्धा करता है, मनुष्य की विजय यात्रा तो वहीं हो रही है। परन्तु ये वह छोटे-छोटे शहर नहीं हैं जहां वकील, मुख्तार, अदालत के कर्मचारी और कुछ पान बीड़ी तथा मनिहारी के दुकानदार एवं चावलों वाले, तमाकू की आढ़त वाले और कपड़े वाले ही सब कुछ हैं। उन शहरों के आकाश में सैकड़ों कारखानों की चिमनियां तपस्वी की ऊर्ध्वबाहु की भांति उठी हुई हैं, उन में अविश्वास्य और अपरिमेय शक्ति है और वे बंदी दानव जैसी यंत्र शक्ति से विपुल सम्पत्ति को उत्पादित कर रही है। फिर भी उसे यह मरणोन्मुख गांव अच्छा लगता है। गतयुग के इस मुमूर्ष प्राचीन और नवयुग के नवीन में बहुत बड़ा अंतर है, परन्तु इस प्राचीन का करुणविद्ध-संभाषण नवीन को अभिभूत करता है, इस मरणोन्मुख संस्कृति का दुलार उसे मर्मान्तक भी जान पड़ता है, और मधुर भी।

यतीन ने देबू को तख्त पर बिठाया—"बैठिए। आप के साथ आलाप करने के लिए उत्कण्ठित हो रहा हूं।"

देबू हँसकर बोला—"कल तो आप कह रहे थे—आलाप हो गया है।"

"हाँ! अब आलोचना होगी। ठहरिए, पहले चाय के लिए कह दूं।" वह अनिरुद्ध के भीतरी दरवाजे पर खड़ा होकर पुकारने लगा—"माँ जी।"

माँ उसकी पद्म है और यह उसके लिए विषामृत के संमि-

श्रण से बनी एक अपूर्व सम्पदा है। इसके विष की ज्वाला—अमृत का माधुर्य इतना तीव्र है कि यतीन के लिए उसका संभालना भी दुस्तर हो जाता है। पद्म के साथ यतीन की उमर का अंतर अधिक नहीं है। अधिक से अधिक पांच-सात वर्ष होगा, फिर भी वह उसकी मां जी है। यतीन को अपना बचपन याद आता है। खेल के मैदान में उसकी दीदी मां बनती थी और वह लड़का। अब उसी खेल की पुनरावृत्ति हो रही है। जब यतीन आया था, तब पद्म अर्धोन्माद की अवस्था में थी। कभी-कभी मूर्छा रोग के कारण बेहोश हो जाती थी। और असंवृत अवस्था में आँगन में जमीन पर पड़ी रहती थी। अनिरुद्ध इसके पहले से ही आवारा हो रहा था—घर में रहता ही न था, अधिकांश में यतीन ही पद्म को सभालता था। तभी से उसने पद्म को मां जी बना लिया है। मां के सिवा कोई और सम्बोधन उसे मिला ही नहीं। इसी संबोधन से पद्म एक दिन प्रकृतिस्थ हुई और यतीन को बच्चा कहने लगी! तभी से यह खेल आरंभ हुआ है। पद्म अब बहुत कुछ स्वस्थ है और सदा इस बच्चे को लेकर ही व्यस्त रहती है। अनिरुद्ध की चिंता भी वह करती है। वह कभी-कभी आता है परन्तु पद्म से पहले जैसी सेवा नहीं पाता।

घर के भीतर उस समय कलरव हो रहा था। लड़कों की एक मण्डली इधर-उधर दौड़-भाग रही थी। पद्म एक लड़के की आँखें अंगोछे से ढक कर पूछ रही थी—"भात क्या कहता है?"

"टग-बग !"···लड़के ने उत्तर दिया।

"मछली क्या कहती है ?"

"छयांक-छोंक।"

"बाज़ार में क्या बिकता है ?"

"आदा।"

"तो पकड़ अपना गोरा-गोरा दादा।"

आँख मिचौनी का खेल हो रहा है। ये लड़के यतीन के पास आते हैं—वह नहीं होता तो पद्म को पकड़ते हैं; पद्म भी यतीन की अनुपस्थिति में लड़कों के खेल में चौधरी बनकर बैठती है।

यतीन ने फिर पुकारा—"माँ जी !"

पद्म उठी—"क्यों ? मेरे राजा बेटे का क्या हुकुम है ?"

"गरम चाय—और एक बार !"

"नहीं। आदमी कितनी चाय पीता है ?"

"देबू बाबू आए हैं—उनको चाय न पिलाओगी ?"

"पंडित ?"

"हाँ।"

पद्म ने एक हाथ से घूँघट खींच कर धीमे स्वर में कहा—"अच्छा, बनाती हूँ।"

यतीन हँस कर बोला—"पंडित तो बाहर हैं—तुम परदा किससे करती हो ?"

"ये देखो, यही तो !"···घूँघट हटा कर पद्म अप्रस्तुत की भाँति हँसी।

यतीन बाहर आकर बोला—"आप के नाम पर एक वी० पी० मंगवाऊंगा !"

देबू चिंतित हुआ—मेरे नाम पर वी० पी० क्या होगा उसमें ! बोला—"वी० पी० ?"

"हां। कुछ तसवीरों की किताबें होंगी और एक कैंचियों का बक्स ! अपने नलिन के लिए। पुलिस की मारफत मंगाने में बहुत झंझट है। नलिन तसवीरें बनाना सीखेगा, इस का हाथ अच्छा है।"

"अच्छी बात है, लेकिन नलिन तू कुम्हारों से क्यों नहीं सीखता ? उन से मूर्तियां बनाना सीख, रंग भरना सीख !"

नलिन बहुत शर्मीला लड़का है। दो चार संक्षिप्त बातें करना ही जानता है। भूमि की ओर देखता हुआ बोला—"कुम्हार सिखाते नहीं, पैसा मांगते हैं।"

"पैसे मैं दूंगा, तू सीख।"

"दो रुपये महीने फीस लगेगी।"

देबू बोला—"अच्छा, मैं द्विजपद कुम्हार से कह दूंगा। परसों महाग्राम जाऊंगा। मेरे साथ चलेगा ?"

नलिन ने सिर हिलाकर कहा—"अच्छा !" कुछ रुक कर बोला—"पैसे देने के लिए कहा था।"

यतीन ने एक चवन्नी देकर कहा—"फिर पंडित जी के साथ जाना, अच्छा !"

नलिन ने फिर गरदन हिलाई और चुपचाप उठ कर

चला गया।

यतीन बोला—"अब आप के साथ आलोचना करूंगा। कई आदमियों से पूछा है किसी ने उत्तर नहीं दिया। जो उत्तर मिला उसमें मुझे सन्तोष नहीं हुआ।"

'क्या पूछा है?"

"वही चण्डीमण्डप। वह किसका है?"

"जनता का!"

"फिर यह क्यों कहते हैं कि उसका मालिक ज़मींदार है?"

"मालिक नहीं। ज़मींदार देवोत्तर का सेवक है, इसीलिए चंडीमण्डप की भी देखरेख करता है।"

"देख-रेख भी, जहां तक मैंने सुना है, गांव के आदमी ही करते हैं।"

"करते तो हैं, लेकिन कायदा यही है। फिर भी ज़मींदार का सम्मान है, और क्या? इसके अतिरिक्त शूद्रों का गांव है, ब्राह्मण ज़मींदार ही देवोत्तर के सेवक बनाए गए हैं। फिर गांव में झगड़ा हो जाय, दलबंदी हो जाय, इस लिए भी ज़मींदार को ही देवोत्तर का मालिक माना गया है। किन्तु अधिकार गांव वालों का ही है।"

"फिर ज़मींदार ने उसमें प्रजा समिति की मीटिंग क्यों नहीं करने दी?"

"उन्होंने रोका था?"

"हां, मीटिंग नहीं करने दी।"

देबू कुछ देर सोचता रहा, फिर बोला—"प्रजा समिति जमींदार के विरुद्ध है इसीलिए न करने दी होगी। फिर वह धर्म-कर्म भी तो नहीं है।"

"प्रजा समिति प्रजा की भलाई के लिए बनी है। प्रजा की भलाई का अर्थ जमींदार के साथ विरोध नहीं है। किसी बात में विरोध हो भी सकता है परन्तु अधिकांश क्षेत्रों में नहीं, फिर चंडीमण्डप तो प्रजा ने ही बनाया है, जमींदार ने नहीं बनाया। जगह सिर्फ जमींदार ने दी है। तो रास्ते की जगह भी जमींदार की है। फिर क्या उस रास्ते से प्रजा समिति का जुलूस नहीं निकल सकता और धर्म-कर्म के सिवा अधिकार न हो तो वहां बैठकर जमींदार का लगान क्यों वसूल किया जाता है? दारोगा या हाकिम आते हैं तो वहीं क्यों इकट्ठे होते हैं?"

देबू को आश्चर्य हुआ। लड़के ने इतनी देर में ही इतनी बातें जान ली हैं! साथ ही साथ उसके मन में एक संशय भी उठा। चण्डीमण्डप का सत्वाधिकार वास्तव में एक समस्या है। कुछ देर चुप रहकर वह बोला—"आज आपके प्रश्न का उत्तर न दे पाया।"

घर के भीतर से कुंडी खड़कने की आवाज आई। यतीन ने समझ लिया, मां जी बुलाती हैं, वह बोला—"मुझ से उठा नहीं जाता, तुम्हीं दे जाओ, मां जी।"

पद्म विरक्त हुई।···"कैसा लड़का है!"

देबू ने हंस कर कहा—"मुझ से शरमाती हो, मितेनी?"

पद्म को बाहर आना ही पड़ा। लंबा घूंघट डाल कर वह आई और चाय के दो प्याले रख कर चली गई।

यतीन बोला—"इसके अतिरिक्त वहां जो लोग जाते हैं उन को बार-बार चेतावनी दी जाती है—यह न करना वह न करना! दुर्बल और निरीह आदमी कुछ समझते तो हैं नहीं, मान जाते हैं। श्रीहरि घोष ने रुपये लगा कर फर्श बनवा दिया हैं तो जनता का अधिकार नहीं खरीद लिया!"

देबू कुछ देर चुप रह कर बोला—"फिर किया क्या जाय? श्रीहरि धनी है, इस समय गांव का शासनकर्ता बना बैठा है। जमींदार ने भी उसे गुमाश्ता बना दिया है—एक तरह से जमींदारी ही दे दी है। आप क्या करेंगे?"

यतीन ने हंस कर कहा—"मैं कुछ न करूंगा, मेरे करने का सवाल भी नहीं उठता। करना पड़ेगा आप को, नहीं तो बेचैन होकर आप की प्रतीक्षा क्यों करता?"

देबू स्थिर दृष्टि से यतीन की ओर देखता रहा।

यतीन भी सामने की ओर देखने लगा।

सहसा किसी ने पुकारा—"बाबू!"

"कौन?" यतीन और देबू दोनों ने घूम कर देखा भीतर के दरवाजे पर दुर्गा खड़ी है।

देबू ने हंस कर कहा—"दुर्गा!"

"हां"

"क्या है?"

"लुहारिन ने पूछा है चूल्हा जलाऊं, रसोंई-वसोंई ?"

यतीन बोला—"हां, चूल्हा जले।"

"क्या बनाएंगे ?"

"कह दो, जो हो सके, बना लें।"

दुर्गा ने विस्मय के साथ पूछा—"बनाने के लिए किससे कहूं ?"

"मां जी से कहो। न हो तो तुम्ही बना डालो।"

दुर्गा मुंह में कपड़ा लगाकर खूब हंसी। "आप थोड़े से बावले जरूर हैं बाबू।"

"क्यों, इस में क्या दोष है ? जाति चाहे जो हो, आदमी साफ सुथरा होना चाहिए. फिर उसके हाथ का बना खाने में कोई हर्ज नही, पंडित जी से पूछ लो।"

"क्यों, पंडित जी ?"

देबू हंस कर बोला—"जेल में जो हमारी रसोंई बनाता था वह डोम था।" यतीन की ओर देख कर कहा—"नाम भी उस का विचित्र था—गांधारी डोम।"

यतीन बोला—"द्रौपदी होता तो और भी अच्छा था। चलिए, नदी से नहा आवें। कुरता उतार कर उसने अंगौछा उठा लिया।"

× × × × ×

देबू ने दुनियां भर के झगड़ों में न पड़ने का निश्चय कर लिया था, जेल से यही संकल्प ले कर आया था। परन्तु

यतीन उसका संकल्प उलट देने के लिए तुला बैठा है।

घर से तेल लगाकर और अंगौछा लेकर वह चुपचाप चलने लगा। चण्डीमण्डप के निकट पहुंचते ही वृद्ध द्वारिका चौधरी से भेंट हो गई। वे लाठी टेकते हुए मण्डप से उतर रहे थे। वृद्ध ने यतीन की ओर देख कर पूछा—"नहाने जा रहें हैं ?"

यतीन ने हंस कर उत्तर दिया—"हां।"

"सुना है, आप तेल नहीं लगाते ?"

"जी नहीं।"

"फिर प्रणाम"···वृद्ध ने कुछ झुक कर नमस्कार किया।

यतीन चौंक कर कहा—"नहीं, नहीं, यह क्या ? आप से कितनी ही बार मना किया है। उमर में आप मुझ से·····"

चौधरी ने मंद मुस्कान के साथ बीच में ही रोका—"शालिग्राम शिला छोटी बड़ी नहीं देखी जाती, आप ब्राह्मण हैं।"

"नहीं, नहीं, यह सब आप के युग में होता था, वह युग अब नहीं रहा।"

मुस्कान चौधरी के होंठों पर खेलती ही रहती है। वे मुस्करा कर बोले—"यह युग नया ही है, पुराने युग की कोई बात बाकी नहीं रह गई। लेकिन मुसीबत यह है कि इस काल में हम कुछ उस काल के आदमी अकाल की तरह पड़े हैं।"

वृद्ध की बातें यतीन को अच्छी लगी, बोला—"अपने युग की कहानी सुनाइये।"

"कहानी ? हां, उस युग की बातें इस युग के लिए कहानी ही है, और जब पार जाऊंगा और पुरखों से भेंट होगी तब इस काल की बातें उन्हें भी कहानी ही जान पड़ेंगी। उस युग में हम लोग गायें पाल कर दूध बांटते थे, क्रिया कर्म में बरतन देते थे, रास्ते के किनारे आम और कटहल के बगीचे लगाते थे, सरोवर और ताल खुदवाते थे, मूर्ति प्रतिष्ठा कराते थे, महापुरुष ईश्वरदर्शन करते थे—वे सब आप के लिए कहानियां हैं, और आज के हवाई जहाज, पानी में डूबने वाले जहाज, बेतार की खबरें, रुपये के दो सेर चावल, नई-नई बीमारियां और देव कीर्ति का लोप—ये सब उस युग वालों के लिए कहानियां हैं।"

"आपने भी ताल खुदवाया है, चौधरी जी ?"

"मेरा तो भाग्य फूटा है। हाँ, मेरे सामने बाबा ने खुदवाया था, तब मैं छोटा था। एक टोकरी मिट्टी निकालने पर दस गण्डा कौड़ी दी जाती थी। एक आदमी कौड़ी लेकर बैठता था और टोकरी गिन कर कौड़ी देता था। शाम को कौड़ियाँ लेकर पैसे दे देता था।"

"धेला टोकरी कहिए।"

"हाँ।" चौधरी ने हँसकर कहा—"हमारी बातें तो आप लोग फिर भी समझ लेते हैं, हम तो, आपकी बातें समझ ही नहीं पाते ! अच्छा, तुमने स्वदेशी के इतने टटे किए हैं—बम-फिस्तौल खेले हैं—यह सब क्यों करते हैं ? अंग्रेज के राज को

तो राम-राज कहते आये हैं।"

यतीन की आँखें टार्च के प्रकाश की तरह चमकने लगीं, दूसरे क्षण में ही वह चमक बुझ गई। वह हँस कर बोला—"बम-पिस्तौल तो मैंने देखे नहीं, लेकिन स्वदेशी के टंटे-झमेले इसलिए होते हैं कि वे लोग आपके पुराने युग को नष्ट कर रहे हैं।"

वृद्ध कुछ देर चुप रह कर बोले—'ठीक समझा नहीं। अच्छा पंडित, तुम इतने गुम-सुम क्यों हो?"

चिंताकुल देबू ने वैसे ही हँसकर कहा—"यों ही।"

वृद्ध ने फिर कुछ देर चुप रह कर देबू से कहा—"शाम को मैं आपके पास आऊँगा।"

"मेरे पास?"

"हाँ। एक काम है। आपके सिवा और किससे कहूँ?"

"असुविधा न हो तो अभी कहिए। फिर क्यों कष्ट करेंगे?" देबू ने उत्कण्ठित होकर कहा।

यतीन बोला—"मैं आगे चला जाता हूँ।"

"नहीं, नहीं।" वृद्ध बोले—"देर हो गई है इसी लिए कह रहा था। बुढ़ापे में मेरे पास ऐसी गुप्त बात क्या होगी?···" चौधरी हँसे—"आप ने सुना भी होगा पंडित।"

"क्या?"

"मेले का झगड़ा।"

"नहीं, मैंने तो नहीं सुना।"

"मेले के भक्त कहते हैं, इस बार वे शिव की पूजा ही न

करेंगे।"

"पूजा ही न करेंगे ? क्यों ?"

"ओह, पिछली बार तो आप थे नहीं, तभी तो झगड़ा उठा था। सेटलमेंट की खानापूरी में शिव की भूमि खो गई है।"

"खो गई है ?"

"ज़मींदार उसे ढूँढ़ ही नहीं सका। ढूँढ़ता कैसे, पुरोहित की ज़मीन उसने खुद ही अपनी जोत में मिला ली है। शिव की पूजा का खरच मुकुन्द मण्डल देते थे, शिवोत्तर ज़मीन भी वही भोग करते थे। मुकुन्द के बाबा ने वह भूमि अपनी जोत में मिलाकर बेच दी है। ज़मींदार ने भी लगान वसूल करने के लिए मान ली है। मुकुन्द को इन बातों का पता ही न था, वह पूजा का खरच देता आ रहा था। जरीब के वक्त जब शिवोत्तर भूमि न मिली तब उसने कहा, भूमि ही नहीं है तो मैं खर्च कहाँ से दूंगा! पिछली बार किसी तरह चंदा करके पूजा हुई थी। इस बार भक्त कहते हैं, माँगी-जांची पूजा में हम सम्मिलित नहीं होते। इसी लिए श्रीहरि से पूछने आया था कि पूजा कैसे होगी। अभी तो मैं ज़िन्दा हूँ—क्या मेरे सामने ही पूजा बंद हो जायगी!"

"श्रीहरि ने क्या कहा ?"

"ज़मींदार की चिट्ठी दिखादी और कहा कि ज़मींदार खरचा न देगा, पूजा हो चाहे न हो।"

"हुँ।"

चौधरी बोले—"पिछली बार पातू ने ढोल नहीं बजाया, उसने ज़मीन भी छोड़ दी है। अनिरुद्ध ने बलि नहीं की। कहने लगा, एक बकरे की टांग के लिए मैं नहीं कर सकता, नहीं करूँगा। अंत में लंगड़े पुरोहित ने बलि की। अब वह कहता है, बलि कराओगे तो दक्षिणा भी देनी पड़ेगी। इसी तरह के कितने ही झगड़े हैं। रास्ते में तो इनका फैसला नहीं हो सकता, इसी लिए कह रहा था कि शाम को आऊँगा।"

देबू दबा जा रहा था, बोला—"लेकिन मैं क्या करूँगा, चौधरी जी ?"

"यह बात तो आप के उपयुक्त नहीं है पंडित, आप जैसे आदमी न करेंगे तो फिर कौन करेगा ?"

देबू स्तब्ध हो गया।

चौधरी ने कालीपुर का रास्ता लिया। देबू और यतीन मैदान पार करके मयूराक्षी में उतरे। देबू ने चुपचाप स्नान किया और गाँव की ओर लौटा। यतीन ने एक-दो बातें कीं परन्तु जब उत्तर न मिला तब वह अपने आप गुनगुनाने लगा।

× × × ×

घर लौट कर यतीन ने देखा कि पद्म चौतरे पर मूर्छित पड़ी है. उसके सिरहाने दुर्गा बैठी है और पंखा झल रही है। पद्म के बदन में कीचड़ लगा है और दुर्गा के बदन पर भी। दूसरी दालान के चौतरे पर अनिरुद्ध बैठा है। उसका सिर छाती पर झुका है और वह अपने आप ही बड़बड़ा रहा है।

रसोंई-वसोंई का कोई चिह्न तक नही है।

दुर्गा बोली—"आपके जाते ही लुहारिन मेरे ऊपर बिगड़ी और कहने लगी, निकल, निकल, तू मेरे घर से निकल जा। मैंने धीरे से कुछ कहा तो और भी गरम हो गई। मैं घर जाने के लिए घूमी ही थी कि थे धड़ाम से गिर पड़ी। मैंने घूम कर देखा। तब से पानी डाल रही हूँ, पंखा झल रही हूँ, होश ही नही आता। थोड़ी देर बाद कर्मकार आये और हल्ला-गुल्ला करके उधर बैठ गये हैं—देखो न, कैसे बैठे हैं—मुँह लटकने ही वाला है।"

देबू ने अनिरुद्ध को धक्का दिया—"अनिरुद्ध !"

अनिरुद्ध ने गर्ज कर आंखें खोली—"एह !"...परन्तु देबू को पहचान कर विनय के साथ बोला—"ओह पंडित !"

"हां, सुनते हो ?"

"अलबत, सौ बार सुनूंगा, हजार बार सुनूंगा !"...फिर वह फफक कर रोने लगा—"मेरा भाग्य देखो पंडित; तुम मित्र हो, भले हो, गाँव के सिरमौर हो, प्रातःस्मरणीय हो—तुम्हें देखो। मैं तो राह का फकीर हो गया। और पद्म की यह दशा है।"

"जगन को बुला लाओ, डाक्टर को !"

अनिरुद्ध का स्वर कड़ा हो गया—"डाक्टर क्या करेगा भाई, यह उसी छिरे—साले छिरे की करतूत है ! मेरी गुप्ती कहां है ? मेरी गुप्ती ? साले का खून करूँगा। और इस दुर्गा को मारूंगा—इस पद्म को। दुर्गा मुझे घर में नही घुसने देती—

अच्छी तरह बात नहीं करती।"

इसके बाद उसने अश्लील गालियों की बौछार आरंभ की। दुर्गा ने सिर झुका लिया, बोली तक नहीं!

देबू बोला—"यतीन बाबू, आइये, मेरे यहाँ खा लीजिएगा। हम उधर से डाक्टर को भी भेज देंगे।"

देबू और यतीन के जाते ही अनिरुद्ध ने फिर आरंभ किया—"और उस नज़रबंदी छोकरे को काटूंगा। पहले उसी को काटूंगा। उसी ने मेरे घर में—"

दुर्गा अब फुफकार कर बोली—"ए देखो, कर्मकार, कहे देती हूँ अच्छा न होगा। भले घर के लड़के पर तोहमत लगाया तो ठीक न होगा!"

अनिरुद्ध ने चौखट पर सिर पटकना आरंभ किया—"ले, यह ले, यह ले।"

दुर्गा ने रोका भी नहीं।

—बीस—

'फागुन आठ, चैत के आठ
तिल छितराय, दांव से काट।'

फागुन के दूसरे सप्ताह से लगा कर चैत के पहले सप्ताह तक तिल के बीज छिटकने लगें तो फसल बहुत अच्छी होती है; फिर उसे काटने के लिए दांव की ज़रूरत पड़ती है, हंसिए से काम नहीं चलता। इस बार तिलों में अभी फूल ही निकले

हैं, वैसाख के पहले सप्ताह तक पकने की नौबत आवेगी, फलतः फसल अच्छी न होगी।

देबू सबेरे खेतों से घूम फिर कर लौट रहा था। इस वर्ष माघ के महीने से पानी नहीं बरसा। पानी के अभाव में अब तक कोई ऊंख नहीं लगा पाया। मयूराक्षी के जल की धारा भी पतली हो गई है और उस पार जंकसन के नीचे ही बह रही है। बांध बांधा जाय और पानी इस किनारे लाया जाय तो सिंचाई का काम चल सकता है परन्तु बांध बांधना आसान काम नहीं है। चार-पांच गांवों के आदमी जमा हों तब नदी के इस किनारे से उस किनारे तक कम से कम चार-पांच हाथ ऊँचा बांध बांधा जा सकता है। इन दिनों ऊंख लग जाती तो उसके नष्ट होने का डर न रहता। बरसात तक वह दो नहीं तो डेढ़ हाथ ऊंची अवश्य हो जाती। श्रीहरि ने यह सब कर लिया है। अपनी जमीन में उसने दो-तीन कच्चे कुए खुदाए हैं और ढकुली से पानी निकाल कर सींच लिया है। श्रीहरि के कुंओं से भवेश और हरीश ने भी पानी ले लिया है।

देबू एक कुंआ खुदवाने की चिंता में था। थोड़ी-बहुत ऊंख तो लगानी ही पड़ेगी। घर में गुड़ भी न होगा तो काम कैसे चलेगा? मयूराक्षी के किनारे थोड़ा खोदने से ही पानी निकल आता है, आठ-दस हाथ का गड्ढा ही बहुत हो जायगा। पंद्रह रुपये खर्च होंगे। परन्तु बिलू के पास जो रुपये थे, वे खर्च हो चुके हैं। ऊपर से कुछ उधार भी हो

गया है। श्रीहरि की स्त्री ने छिपा कर रुपये दिए हैं। दुर्गा की मारफत दुकान से भी कुछ सौदा उधार आया है। धान इस बार अच्छे हुए नहीं। जो पहल के जमा हैं, उनको बेचने की हिम्मत नहीं होती। वर्षा सामने है—खेती का खर्च—कितने ही झगड़े हैं। गेहूँ और जौ भी अच्छे नहीं हुए। गेहूँ डेढ़ मन और जौ कुल तीस सेर मिले हैं। दाल जो हुई है, वह घर में ही खप जायगी। स्कूल की नौकरी भी नहीं है—महीने-महीने बंधे रुपये आने का ठिकाना भी जाता रहा है। अब वह करे तो क्या ? और इधर सारा गांव उसे सैकड़ों समस्याओं में घसीट रहा है, यतीन की बात याद आई, द्वारिका चौधरी की बात याद आई।

गांव में घुसते ही भूपाल दीख पड़ा। चौकीदारी की चपरास कंधे पर रख कर वह सवेरे ही निकल पड़ा है। भूपाल ने प्रणाम किया—"पेनाम।"

उत्तर देकर देबू आगे बढ़ रहा था कि भूपाल ने विनय के साथ कहा—"पंडित जी !"

"मुझ से कुछ कहते हो ?"

"जो हां, घर गया था—"

"क्यों ?"

"जी, लगान और यूनियन का टैक्स।"

"अच्छा दूंगा।"

भूपाल प्रसन्न होगया, बोला—"यही तो भले आदमियों की

बात है। उधर डाक्टर बाबू मारने दौड़े, घोषाल ने कह दिया, जाओ नहीं दूंगा। और सब घर में छिप जाते हैं, बच्चों को सिखा देते हैं, कह दो नहीं हैं। गालियां मैं खाता हूं।"

देबू ने हंस कर कहा—"आदमी के पास जब पैसा नहीं होता, तभी उसे चोर बनना पड़ता है।"

"यह आप ठीक कहते हैं"···भूपाल ने लंबी सांस लेकर कहा—"है किस के पास ? मैदान भर के धान तो घोष बाबू के घर पहुँच गये हैं। बरसात के धान चुकाने में ही दिवाला निकल गया है, आदमी दे कहां से ? लेकिन मैं भी क्या करूं ? मेरी तो नौकरी ही मौत होगई है ·"

घर पहुँच कर देबू ने देखा कि बिलू उस के लिए चाय लिए बैठी है। वह हैरान हुआ।

बिलू लज्जित स्वर में बोली—"देखो ठीक बनी है। लुहारिन से पूछ आई हूँ, वह नजरबंदी के लिए चाय बनाती है।"

"पूछ तो आई, लेकिन तुम से कहा किसने था ?"

"तुम्हीं ने तो कहा था कि जेल में रोज चाय पीते थे।"

"पीता तो था, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं हुआ कि अब भी पियूंगा। नहीं, खर्च न बढ़ाओ, बिलू।"

"अच्छा, एक डब्बा मंगवाया है, यह चुक जाय तो फिर न पीना।"

"एक डब्बा मंगाया है ?"

"दुर्गा ने कल शाम को ला दिया है।"

देबू की इच्छा हुई कि चाय की कटोरी उलट दे परन्तु इस विचार से रुक गया कि बिलू को व्यथा होगी, बोला—"आज बना ली है, कल से न बनाना। डब्बा रहने दो, कोई आयेगा या बादल बूंदी में सर्दी होगी तो पियेंगे।"

"नहीं।"

देबू ने विस्मित होकर पूछा—"क्यों ?"

"तुम्हें कष्ट होगा।"

"नहीं, कष्ट न होगा।"

"होगा, मैं जानती हूँ।"

"वाह!···"देबू ने विरक्ति और विस्मय के साथ कहा—"मुझे कष्ट होगा, इस का पता मुझे न चलेगा, तुम जान लोगी ?"

"अच्छा, न बनाऊँगी चाय···"बिलू की आंखें छलछला आईं और वह मुंह घुमा कर चली गई।

देबू ने एक लंबी सांस ली। उस के दाम्पत्य जीवन में शायद यह पहला द्वन्द है। बिलू को आघात पहुँचाने के दुःख से हृदय में गहरी चोट लगी···।

"मालिक!" देबू के किसान ने बुलाया।

"क्यों ?"

"जी, अब तो एक फावड़ा लेना ही पड़ेगा।"

"नया चाहिए या पिटाने से काम चल जायगा ?"

"नया ही लेना पड़ेगा। पिछली बार ही लेना पड़ता, आप थे नहीं, किसी तरह काम चल गया। अब तो घिस कर जरा

सा रह गया है। खाद तक नहीं उठती।"

"खाद उलट रहे हो ? पानी भी डालते हो ? चलो देखूं।"

खाद बनाने वाले गड्ढे में जो कूड़ा जमा किया जाता है चैत मास में उसे उलट-पुलट कर ठीक करते हैं, ऊपर का कूड़ा फावड़े से हटा कर अलग कर देते हैं और नीचे का कूड़ा जो खाद बन गया है, बाहर निकालते हैं फिर ऊपर वाला कूड़ा नीचे डाल देते हैं और नीचे वाला ऊपर रख देते हैं, ऊपर से पानी डालते है। देबू के घर की खाद इसी तरह से पलटी गई है, किसान ने फावड़ा दिखाया। सचमुच वह घिस कर इतना छोटा हो गया है कि खेती में काम ही न देगा। खेती के लिए अच्छा और बड़ा फावड़ा चाहिए। पहले बलवान किसान जो फावड़ा चलाते थे उस का वजन पांच सेर से कम न होता था। सात-आठ सेर का फावड़ा उठाने वाले किसान भी कितने ही थे।

देबू बोला—"अच्छा फावड़ा एक—क्या करोगे, बनाओगे या बना बनाया लोगे ?"

"बना बनाया अच्छा न होगा, सस्ता मिल जायगा।"

"किन्तु लुहार कहां है ? अनिरुद्ध तो काम ही नहीं करता। और किसी को दोगे तो कल देने का वादा करेगा और दो महीने लगा देगा।"

"फिर खरीद ही दीजिए। थोड़ा सा सन भी चाहिए, चरवाहा कहता था, पशुओं के-पगहे गिरांव टूट गये हैं।"

देबू एक काम पाकर प्रसन्न हुआ। सन बट कर रस्सी बनाने का काम गांवों में बेकारों का बूढ़ों का काम गिना जाता है। वह रस्सी बटने बैठ गया और भविष्य की चिंता करने लगा।

किसान थोड़ी देर में फिर लौट आया—"और एक बात थी मालिक!"

"बोलो!"

"मुहाल के आदमी आपके पास आवेंगे! मुझ से कहा कि तू पंडित जी से कह देना।"

"क्यों? बात क्या है?"

"जी, चण्डीमण्डप का छप्पर हम बेगार में छाते रहे हैं। अब डाक्टर और घोषाल बाबू ने कमेटी की है और कहते हैं कि तुम पैसे लेना। बेगार क्यों करोगे? चण्डीमण्डप ज़मींदार का है, ज़मींदार खर्च करे।"

देबू ने कोई उत्तर न दिया। रस्सी बटते बटते वह भविष्य की चिन्ता कर रहा था। सोच रहा था—एक दुकान खोलूंगा। नहीं तो गुज़ारा कैसे होगा।

किसान फिर बोला—"हम भी यही सोचते हैं। डाक्टर बाबू बात तो ठीक कहते हैं—चण्डीमण्डप में ज़मींदार की कचहरी लगती है, भले आदमी महफिल जोड़ते हैं, तुम्हारे साथ मण्डप का क्या सम्बन्ध है? बिना पैसा लिए क्यों मेहनत करो? उधर घोष बाबू रोज़ आदमी भेजते हैं और पूछते हैं,

बेगार कब करोगे ? घोष बाबू गांव के सिरमौर हैं, गुमाश्ता हैं, उनकी बात भी कैसे टाली जाय। फिर ग्राम-देवता भी तो हैं। इसी लिए सब कहते थे कि पंडित जी से पूछेंगे, वे जो कहेंगे वही करेंगे।

देबू कल की तरह आज भी एक मुसीबत में पड़ गया। कुछ देर बाद किसान ने पुकारा—"मालिक !"

"अभी मैं कुछ नहीं कह सकता, नोटन।"

"आप जो कहेंगे, हम लोग वही करेंगे—यह हमने फैसला कर लिया है।"···वह चला गया। देबू के हाथ का सन निश्चल हो गया था— वह सामने की ओर देखता ही रह गया।

चण्डीमण्डप से लोगों की आवाज़ आ रही है। वहां लगान वसूल किया जा रहा है। साथ ही साथ खातकों के साथ श्री हरि के कर्ज का हिसाब भी हो रहा है। वर्ष का अन्त भी है और आखिरी दिन भी। जिनकी तमादी हो गई है, उन पर दावा होगा। श्रीहरि के कर्ज का हिसाब करने और चुकाने के बाद जो बच जायगा, वह अगले साल के हिसाब में जोड़ दिया जायेगा; जो न चुकाएंगे उनका मूल और ब्याज एक में मिला कर अगले साल में मूल गिना जाएगा।

श्रीहरि की गोशाला छाई जा रही है। किसानों के घरों में यह काम प्रायः हो गया है। सब ने अपने ही किसान और चरवाहे लगा कर काम निपटा लिया है। देबू भी छप्पर-वप्पर छाना जानता है परन्तु पाठशाला में पढ़ाने के कारण उसने

कर्म किया नहीं। अब करना पड़ेगा। उसने एक लम्बी सांस ली।

'सलाम, पंडित जी!" इछू सेख और उसके दो-तीन साथी रास्ते से जा रहे थे। देबू को देख कर खड़े हो गये। सेख के साथियों ने भी सलाम किया।

"सलाम! अच्छे हो इछू भाई? तुम सब अच्छे हो?"

"हां, आप तो मरीफ रहे?"

"हां।"

"आप को तो हम हजार बार सलाम करते रहे हैं। हां मर्द ऐसे ही होते हैं। मसजिद में हमेशा आपकी बातें होती हैं। मिनू मियां, खालेक साहब और गुलाम मिर्जा आप से मुलाकात करने आवेंगे।"

देबू ने प्रसंग बदल कर कहा—"कहां आये थे?"

"यहीं तक। किश्त के दिन हैं न, बकरी, गाय, बैल बिकेंगे—यह तो हमारा अपना गांव है—इसीलिए रुपये-पैसे लेकर आया था। अब खरीदता तो कोई है नहीं, खरीदने वाले ही नहीं रहे। हां, आपका भी तो एक बैल बूढ़ा हो गया है, आप एक बैल क्यों नहीं लेते।"

"अभी नहीं, इछू भाई।"

"आप ले भी लें, बूढ़ा बैल मुझे दे दें—बाकी जो रह जाय फिर दे दीजिएगा। न हो तो थोड़े धान निकाल दीजिए। धानों के सौदागर हैं मेरे साथ।"

देबू मुस्कराया—"नहीं भाई, अभी रहने दो।"

"अच्छा, फिर सही।"

इबू का गोल सलाम करके चला गया। पक्का व्यापारी है इबू, मनुष्य को जब रुपये की जरूरत होगी तब वह रुपये ले कर आ ही जायगा। किस के घर में कौन सा पशु मूल्यवान् है, यह भी उसके नखदर्पण में है, परन्तु मनू मियां, खालेक साहब और गुलाम मिर्जा मुझ से मुलाकात करने क्यों आवेंगे? देबू ने अपने मन में अस्वस्ति अनुभव की। ये सब तो संभ्रांत लोग हैं, बड़े किसान और बड़े व्यापारी हैं।

चरवाहे ने देबू के लड़के को लाकर गोद से उतारा और बोला—"मालिक, इसे थोड़ी देर आप लीजिए। मुझे छोड़ता ही नहीं। मेरे साथ बैल चराने जायगा।".....वह हि हि हंस कर बच्चे से बोला—"बाबू के पास बैठकर पढ़ो-लिखो बैल चराने नहीं जाते। छि!"

देबू ने बच्चे को आग्रह के साथ गोद में ले लिया।

लड़का भी खूब है, बिलू ने उसे तालीम भी अच्छी दी है। उसने गंभीर होकर आरम्भ किया—"क से कबूतर!"

× × × ×

"क्या हो रहा है पंडित!"...अनिरुद्ध आकर बैठा। इस समय वह प्रकृतिस्थ है। मुंह से शराब की हल्की गंध आ रही है परन्तु वह मतवाला नहीं है। हाथ में लोहे का एक डंडा है।

देबू ने हंस कर कहा—"होश आ गया है, अनिभाई?"

अनिरुद्ध लजाया नहीं, हँस कर बोला—'कल कुछ ज्यादा

हो गई थी।"

देबू बोला—"छि, अनिभाई ! छि !"

अनिरुद्ध कुछ देर चुप रहा, फिर अकस्मात् हँस कर बोला—"तुम नहीं जानते, देबू भाई। रस तो तुम ने कभी लिया नहीं, तुम क्या समझोगे।"

देबू ने तिरस्कार के साथ कहा—"तुम्हारी जमीन नीलाम होने वाली है, या हो गई है, स्त्री बीमार है और तुम शराब पीते फिरते हो—पैसा बरबाद करते हो ?"

"पैसे ज्यादा खरच नहीं करता. अब 'पचाई' पीता हूं। जमीन की बात करके ही आया हूँ और औरत की बीमारी में कहां तक भुगतूंगा ?"

"तुम तो ऐसे न थे, अनिभाई ?"

"कौन जाने ! शराब तो थोड़ी-बहुत मैं पहले भी पीता ही था। इस में कोई बुराई तो मुझे दीख नहीं पड़ी।"

"देखते ही नहीं ! पुरखों का काम तुम ने छोड़ दिया है। नीचों की तरह 'पचाई' पीते हो। इधर-उधर खाते हो—सोते हो !"

"क्या करूं ? अनि लुहार के दांव, छुरे और गुप्ती अब कौन लेगा ? फावड़े कुदाल और फार भी बाजार में मिलते हैं और सस्ते पड़ते हैं। गांव में काम करूं तो साले धान भी नहीं देते। फिर क्या करूं ? और 'पचाई' ? पैसा ही नहीं है, नहीं तो अच्छी पीता।"

"क्या करोगे ? तुम्हारी बोध शक्ति भी लुप्त हो गई है,

अनिभाई ?

"कौन जाने !"

"दुर्गा के घर में खाते हो ? उसी के यहां सोते हो ?"

दुर्गा का नाम न लो पंडित। नमकहराम, पाजी, शैतान की बच्चा ! मुझे घर में भी नहीं घुसने देती।"

अनिरुद्ध की इस निर्लज्ज स्वीकारोक्ति से देबू चुप हो गया।

अनिरुद्ध ही बोलता रहा—"समझे पंडित, दुर्गा के लिए मैं जान भी दे सकता था—अब भी दे सकता हूँ। दुर्गा ने ही मुझे बुलाया था, तब मेरी औरत पागल थी। झूठ न बोलूंगा, तब दुर्गा ने उस की सेवा तक की थी, रुपये भी दिए थे। दारोगा से पहले उस की आशनाई थी—दरोगा से कह कर उस ने नज़रबन्दी को घर दिला दिया। दस रुपये महीने किराया। लेकिन यह सब आंखों का नशा है, जब जो जँच जाए। अब उसी नज़रबन्दी पर उस की आंख लगी है।"

"छि, अनिरुद्ध, छि !"

"यतीन बाबू को मैं दोष नहीं लगाता। वह अच्छा है, भले घर का लड़का है। पद्म को मां कहता है। मैंने परख लिया है ! मरे दुर्गा, भाड़ में जाय। अब मैं जो करने आया हूँ वह सुनो। ज़मीन मेरी नीलाम पर चढ़ी है। मैं उसे रखना भी नहीं चाहता। बेच डालूंगा, तुम देख-भाल कर बेच दो।"

"बेच डालोगे ?"

"हां ! लगान चुकाकर कुछ तो बच ही जायगा।"

"फिर ?"

"फिर जो होगा देखा जायगा। छिरे गुमास्ता को मैं लगान न दूंगा।"

"पागलपन न करो अनिरुद्ध !"

"पागलपन ? फिर ज़मीन कौड़ी के मोल नीलाम हो जायगी।"

"बाकी लगान की जुगाड़ करो। न हो तो, लगान भर के लिए ज़मीन बेच दो, उधार मिल जाए तो वह भी अच्छा है।"

अनिरुद्ध कुछ देर सोचता रहा फिर बोला—देबू भाई, बाप-दादे की ज़मीन बेचने का विचार करते छाती फटती है। तुम नहीं जानते, चार बीघे का मेरा खेत परबाबा के वक्त में सात टुकड़ों में बंटा था, उन्होंने काट-कूट कर तीन टुकड़े बनाए। बाबा ने तीन को काट कर दो किये, मैंने दो का एक बनाया है। . उसकी आंखों से बड़े बड़े आंसू टपकने लगे।

'रो नहीं, अनिभाई। तुम समर्थ पुरुष हो, मन लगा कर काम करो तो फिर किसी बात की कमी न रहेगी ?"

अनिरुद्ध हँस कर बोला—हजार मन लगा कर काम करूं लेकिन लुहारी से तो गुज़र होता नहीं। कारखाने में नौकरी कर लूं तो काम चल सकता है। यही करूंगा। दुर्गा ने एक बार कहा भी था, मैंने ही परवाह नहीं की। केशव लुहार का लड़का और हितू लुहार का नाती मैं कारखाने में मजूरी करूं ?—उन जात-कुजात वाले मिस्त्रियों की गुलामी करूं ? जानते हो पण्डित, मैं ऐसा खांडा बना सकता हूं कि

उसकी एक ही चोट से बबर शेर का गला भी कट सकता है।

अनिरुद्ध को शांत करने के लिए देबू ने परिहास किया, "यही तो तुम्हारी भूल है, अनिभाई। उस खांडे को लेकर लोग क्या करेंगे? शेर मारने कौन जायगा?"

अनिरुद्ध भी हंसा।

देबू बोला—"रुपये का जुगाड़ करो अनिभाई, जमीन तो रखनी ही पड़ेगी। फिर मन लगा कर काम-काज करो। कारखाने में काम करना पड़े तो वही कर लो। हर्ज क्या है?"

थोड़ी देर चुप रह कर अनिरुद्ध बोला—"अच्छा, देखता हूँ।"

अनिरुद्ध अपने घर न गया, घर उसे अच्छा नहीं लगता। पद्म उस का आदर नहीं करती. वह भी पद्म को नहीं चाहता। कांटे की तोल से वह कभी चरित्रवान् नहीं रहा परन्तु पद्म के प्रति प्यार का अभाव भी उसने कभी नहीं दिखाया। चरित्रहीनता का व्यभिचार मौज पूरी करने का अंग और उन्मत्त विलास लालसा की निवृत्ति का साधन भर रहा है परन्तु दुर्गा ने सब कुछ उलट दिया। मुसीबत के उन दिनों में दुर्गा मोहिनी रूप में आई थी और उसने बेहद प्यार भी किया था। सेवा, यत्न ही नहीं अपनी पार्थिव सम्पदा भी अनिरुद्ध को देने के लिए तत्पर हो गई थी, कुछ दी भी थी।

दुर्गा ने अपने सहवास से उसे जो तृप्ति दी है, वह पद्म अपने स्वस्थ, सबल और यौवन परिपूर्ण शरीर से भी नहीं

दे पाई। उसकी छाती पर लदे तावीज़ों के बोझ ने अनिरुद्ध को सदा पीड़ित किया है। आचार विचार और व्रत-अनुष्ठानादि पालन के आग्रह तथा शुचिता की उग्रता में पद्म ने उसे अछूत की तरह अपने से दूर रखा है। उसकी प्रेम पूर्ण सेवा के आधिक्य और ममता के आतिथ्य ने अनिरुद्ध को व्यथित किया है। दुर्गा की भांति वह किसी दिन भी संकोचशून्य अधीरता के साथ उसकी छाती से नहीं लिपटी। दिन भर आग के सामने जलने भुनने के बाद अनिरुद्ध घर लौट कर जरा सी शराब पीता था परन्तु पीने के बाद पद्म के सामने जाते ही उसका नशा ठण्डा हो जाता था।

दुर्गा में आग भी है और पानी भी, वह जलाती भी है और शीतल भी करती है। उसके यौवन में आवेगमयी मानवी का ईषदुष्ण स्वाद है!—उसीने अनिरुद्ध को उन्मत्त किया था। जब दुकान बन्द हो गई और बेकार अनिरुद्ध ने विश्वग्रासी अवसाद से बचने के लिए सस्ती शराब पीनी शुरू की तभी दुर्गा ने उसका हाथ पकड़ कर खींचा था। उसने दुर्गा के निकट पूर्णतया आत्मसमर्पण करके अपने आपको उसी में खो दिया था, परन्तु दुर्गा ने उसे एक दिन सहसा छोड़ दिया और अलग हो गई—उसके सिर पर नवीन का मोह सवार हो गया है। दुर्गा तुषानल है, मरीचिका है, वह पाषाणी है, विश्वास-घातिनी है, मायाविनी है!···

अनिरुद्ध ने देखा कि वह चमारों के ही मुहल्ले में पहुंच

गया है, सामने ही दुर्गा का घर है, और वह अपने चौतरे पर बैठी दूध नाप रही है।

अनिरुद्ध ने चाल तेज की और मुहल्ला पार करके मैदान में निकल आया। दुर्गा ने जब उसे छोड़ दिया है तब वही दुर्गा के पीछे क्यों फिरे, वह भी उसे परित्याग करेगा। देबू ने ठीक कहा है, अब वह भी समझ रहा है कि उसमें कितना परिवर्तन हो गया है। छि-छि! केशव लुहार का लड़का और हितू लुहार का नाती वह, अनुग्रह की एक बूंद प्राप्त करने के लिए चमारिन के घर पड़ा रहा है, छि! वह तो समर्थ पुरुष है—लोहे का एक नामी कारीगर है!

अनिरुद्ध मुस्कराया। लोहे के कारीगर का अब मान नहीं रहा, नाम नहीं रहा। चार आने के विलायती चाकू ने नाम का सिर काट दिया है। उसने एक लंबी सांस ली। जाय, नाम जाय, मान जाय, चावल की मशीन पर या तेल की मशीन पर नट-बोल्ट कस कर और हथौड़ी ठोंक कर वह मिस्त्री तो हो सकता है! जमीन बचानी ही पड़ेगी। बाबा—परबाबा ने इसी जमीन के लिए खून पानी एक किया है। उस ने स्वयं उसे बनाया-सवारा है, सोना उगलने वाली यह जमीन तो साक्षात् अन्नपूर्णा है!

अनिरुद्ध की दृष्टि पहले अनाज से भरे मैदान पर फैली फिर अपनी चौबिगही पर सीमित होगई। उसने चलना आरंभ किया और अपने खेत की मेड़ पर पहुँच कर बैठ गया!

मेड़ पर कैथे का एक पेड़ लगा है, यह उसके बाबा ने लगाया था। जब वह छोटा था और उसके पिता किसानी करते थे तब वह पिता और किसान के लिए रोटी लेकर आता था और इसी पेड़ के नीचे बैठता था! बुखार उतरने के बाद कितनी ही बार नमक मिर्च के साथ कैथा खाया है। लक्ष्मी पूजा और पर्वों में इसी खेत के धानों से पकवान बने हैं और कैथे के साथ गुड़ और नमक मिलाकर चटनी बांटी गई है!·····

अनिरुद्ध संकल्प लेकर उठा—ज़मीन तो वह बचावेगा ही!

अनिरुद्ध 'आकुलिया' गांव के काबुली चौधरी की ओर चला। फेलाराम चौधरी कंकणा के स्कूल में मास्टर हैं और ब्याज पर रुपये देते हैं! भारी ब्याज के कड़े तगादे को देख कर लोगों ने उनका नाम काबुली रख दिया है। कुछ लोग अजगर भी कहते हैं—जो उनका ग्रास बन जाता है वह फिर नहीं बचता। कुछ 'खूनी' कहते हैं—एक बार चौधरी ने एक चोर पकड़ा था और उसे मार डाला था। जायदाद अच्छी हो तो चौधरी अपनी थैली खोलने में संकोच नहीं करते।···वह आकुलिया की ओर ही चला।

चौधरी पढ़े लिखे आदमी हैं. बी० ए० पास किया है, संस्कृत की भी कोई परीक्षा दी है, स्कूल में हेड पंडित हैं। परन्तु वास्तव में वे प्रथम श्रेणी के गणितज्ञ हैं। ब्याज जोड़ने के लिए उन्हें कागज-कलम की ज़रूरत नहीं पड़ती, वे चक्रवृद्धि के अनुसार दस बीस साल का ब्याज मुंह जबानी जोड़ देते हैं!

हां, ब्याज को मूल में बदल कर उसे वसूल करते समय संस्कृत के दो-चार श्लोक सुनाकर उन अंकों को रसीले अथवा परमार्थिक तत्व से भी मंडित कर देते हैं।

अनिरुद्ध बोला—"रुपये मैं साल के भीतर ही लौटा दूंगा चौधरी जी, मैं धोखा नहीं देता और इधर उधर छिपता भी न फिरूंगा।"

चौधरी मुस्कराये—"धोखा देने की तो कोई राह नहीं है और भाग कर कहां जायगा ?" एक श्लोक भी सुना दिया—"गिरौ कपायी गगने च मेघो, लक्षान्तरेऽर्क सलिले चपद्मम् !" समझे अनिरुद्ध, मेघ आकाश में होते हैं और मोर पहाड़ पर रहता है, दोनों के बीच में कितना अंतर है परन्तु मेघों के आते ही मोर को पंख फैला कर नाचना ही पड़ता है। सूर्य रहता है गगन में और कमल नीचे जल में परन्तु सूर्योदय पर कमल को अपने बाप का नाम लेकर खिलना ही होगा। खातक और महाजन का सम्बन्ध हो जायगा तो चाहे जहां रहे—हाजिर होना ही पड़ेगा—जायगा कहां ?"

अनिरुद्ध ने बात पूरी तरह नहीं समझी, दांत दिखा कर हंस भर दिया।

चौधरी ने मुंह जबानी हिसाब जोड़ा—"बीघा पीछे चालिस रुपये दूं दो तीन साल में चालिस साठ हो जायंगे। खेत के ऊपर नालिश का खर्च लगा तो महाजन के पल्ले क्या पड़ेगा ? और खातक कहीं लगान बाकी कर दे तो मुझे राजा रघु की तरह

हंडिया में पानी पीना पड़ेगा।"

अनिरुद्ध ने उसके पैर पकड़ कर कहा—"मैं आपके पैर छू कर कहता हूँ—साल भर में सब रुपये चुका दूंगा।"

पैर खींच कर चौधरी ने कहा—"पैर न पकड़ अनिरुद्ध, बेवाइयों से तेरे हाथ कट जायेंगे। छोड़···।" चौधरी ने झूठ नहीं कहा। उसके काले कर्कश चमड़े में किसी व्याधि के कारण से हो चाहे शरीर में किसी उपादान की कमी के कारण से हो, बारों महीने बेवाई फटती हैं। जाड़े में सफेद बेवाइयां रक्ताभ हो जाती हैं। बेवाइयों से पैरों के नीचे का फटा हुआ चमड़ा चाकू की धार जैसा तेज हो गया है? फिर सांत्वना देकर बोला—"साल भर में ही जब चुका देगा तब छः बीघे की जगह दस बीघे क्यों नहीं रख देता? कागज में लिखा ही तो रहेगा।"

अनिरुद्ध चुप हो गया, वह शारीरिक स्थिति और दैवी गति पर विचार करने लगा—कहीं बाढ़ आ जाय, सूखा पड़ जाय।

"डरता क्यों है?···" चौधरी ने उसकी चिंता का कारण समझ कर कहा—"एक साल में चुका, चाहे पांच साल में, तुझे मरने न दूंगा। ब्याज मैं बाकी रखता नहीं—रखूंगा भी नहीं। बाकी मूल ही रहेगा! उसमें भी बेईमानी करेगा तो ब्राह्मण का शाप लगेगा।"···चौधरी हंसने लगे।

अनिरुद्ध बोला—"ब्याज आपको महीने-महीने मिलेगा।"

"सच?"

"कसम खा कर कहता हूँ, आपके पैर छू कर।"

"फिर तीन दिन बाद आना ! मैं पता-वता लगा लूं।"

"पता लगायेंगे ? क्या पता लगायेंगे ?"

"और कहीं बंधक-वधंक तो नहीं रखी।"

"आप के चरण छूकर कहता हूं।"

चौधरी बोले—"अब अपने पैरों को मुझे छींके में उठाकर रखना पड़ेगा और इससे तेरा नुकसान होगा। रजिस्ट्री आफिस तक जाना न हो सकेगा और तुझे रुपये न मिल सकेंगे। पता लगाये बिना मैं रुपये किसी को देता नहीं—तुझे भी न दूंगा।"

अनिरुद्ध फिर भी उठा नहीं। श्रांत-क्लांत परदेसी उदासीन के मन में जैसे अकस्मात् प्रियजन की स्मृति जागती है और वह घर लौटने को व्याकुल होता है वैसे ही अनिरुद्ध के अंतर में भी आज अपने पुराने संयत, और सच्छल पारिवारिक जीवन में लौटने का व्याकुल आग्रह जाग्रत हुआ है। लौटने के लिए पाथेय की आवश्यकता है। पचीस रुपये दस आने साल के हिसाब से चार साल के लगान एक सौ ढाई रुपये, चार आने रुपये व्याज के हिसाब से पचीस रुपये दस आने—कुल एक सौ अट्ठाइस रुपये दो आने खरच-वरच मिला कर एक सौ चालिस या पैंतालिस—डेढ़ सौ ही समझो। इसके अतिरिक्त सौ रुपये और चाहिए। एक जोड़ी बैल भी लेना है। जमीन बटाई पर न देकर वह अपने पुरखों की तरह स्वय खेती करेगा, एक किसान नौकर रख लेगा। उसकी अपनी ही जमीन तेरह बीघा है, पाँच बीघे किसी से ले लेगा। वह जंकशन के किसी कार-

खाने में नौकरी कर लेगा। रात रहते ही उठेगा, बैलों को अपने हाथ से चारा देगा। किसान हल लेकर जायगा, साथ ही साथ वह भी दिन भर के लिए तैयार होकर निकल पड़ेगा। खेत देखता-भालता उधर ही से कस्बे चला जायगा। लौटते हुए भी एक बार देख आयेगा। शराब पीनी होगी—बिना पिये तो वह बचेगा नहीं—तो बोतल खरीद कर घर में रख लेगा, पद्म अपने हाथ से नाप कर देगी—बस! कारखाने में आठ आने रोज मिलेंगे, चार रविवार काट कर महीने में तेरह रुपये और साल में एक सौ छप्पन रुपये होंगे। खेती में धान, दाल, गेहूँ, सरसों, जौ, तीसी और गुड़ अलग हो जायगा। नज़रबंदी से दस रुपये महीना किराया मिलेगा, अवश्य यह आमदनी स्थायी नहीं है। लेकिन वह घर में लुहार की दुकान भी खोलेगा। रात में जितना काम हो सकेगा, कर लेगा। रोज दो आने मिल गये तो उनसे भी घर के नोन-तेल का खर्च निकल जायगा। कर्ज़ उतारने में कितनी देर लगती है? कर्ज़ उतार कर वह संचय करना आरंभ करेगा, फिर ब्याज पर रुपये उधार देगा। खत और तमस्सुक पर रुपये न देगा, माल गिरो रखेगा। नुकसान का डर नहीं और साल भर में रुपये दूने! चौबिगही और गहरी खोद ले और खाद तथा तालाब का कीचड़ डाल दे तो वहां भी फसल दूनी होने लगेगी।...

चौधरी बोले—"बैठे रहने से तो रुपये न मिलेंगे, अनिरुद्ध। मैं पता-वता लगा लूं फिर दूंगा। इधर दस भी बजने वाले हैं,

मुझे भी स्कूल जाना है।"

अनिरुद्ध बोला—"आज ही पता लगा लीजिए।"

चौधरी हँसे—"आज ही ? तेरा घोड़ा तो पक्षीराज से भी तेज है, रुकना ही नहीं चाहता। अच्छा तू बैठ। मैं नहा कर कुछ मुँह में डाल लूं फिर मेरे साथ चलना। इंटरवेल में पता करेंगे।"

इंटरवेल में भी पता न लग सका। चौधरी बोले—"अब वही आखिरी घण्टे में, तीन बज कर दस मिनट के बाद मुझे मौका मिलेगा। तू तब तक बैठ।"

आखिरी घण्टे में हेड पंडित चौधरी धर्म-शिक्षा की क्लास लेते हैं। उस घण्टे में चौधरी जी प्रायः लड़कों को स्वाधीन रूप से धर्म चर्चा करने का अवसर देकर रजिस्ट्री के दफ्तर में जो काम होते हैं, वे निपटा लेते हैं। दलील दस्तावेज आदि देखते हैं और पता लगाते हैं कि कहां किसने, कौन सी जमीन बेची है या गिरो रखी है।

अनिरुद्ध प्रतीक्षा करने लगा। सबेरे से उसने कुछ खाया नहीं। थोड़े से बतासे लेने के लिए वह प्राण हलवाई की दुकान पर गया और उसकी खुशामद करने लगा। बतासे तो न मिले परन्तु उसकी भूख-प्यास जाती रही। प्राण की विधवा बहन दुकान पर बैठती है, उसके साथ वार्तालाप जम गया। एक से लगा कर तीन तक के दो घण्टे उसके मुंह से निकली हँसी की हिलोर में हवा हो गये।

चौधरी आये और बोले—"मैंने देख लिया, समझे अनिरुद्ध ?"

"देख लिया ?"

"हां। तुझे नहीं बुलाया। देखा खूब बातें हो रही हैं। रस-भंग करना पाप है, शास्त्र में निषेध किया गया है।···" चौधरी हँसे।

अनिरुद्ध कुछ लज्जित हुआ।

"रुपये मैं दूंगा।"

"देंगे ?···" उत्साह में अनिरुद्ध उठकर खड़ा हो गया।

"हां, लेकिन तूने तो आज कुछ खाया ही नहीं।"

"वह—अभी घर पहुँच कर—कोस भर तो ज़मीन है—तो कब ?···" आनंद के आवेग में अनिरुद्ध कोई भी बात पूरी न कर सका।

"परसों आना। फिर जल्दी जा। बादल उठ रहे हैं। जान पड़ता है—आंधी पानी आयेगा।···" चौधरी चले गये।

प्राण की बहन बोली—"तुमने अब तक कुछ खाया नहीं ?"

"उह ? अब घर पहुँचा। झपटता हुआ जाऊँगा।"

"ये बतासे खा कर पानी पी लो। खाया नहीं—कहना तो था !"

बतासे खा कर और पानी पीकर अनिरुद्ध और भी चैतन्य हो गया ! डंडा उठा कर वह रास्ते में उतरा और लपक कर चलने लगा। कंकना के किनारे पहुँचते ही आंधी आगई। पूस के अंत से वर्षा नहीं हुई। पेड़-पत्ते तक रूखे हो रहे हैं, चैत के

मध्य में ही बैसाख के दर्शन हो रहे हैं। बैसाखी आंधी भी अकाल में ही आई है। देखते ही देखते चारों ओर अंधेरा छा गया; प्रबल आंधी के कारण पृथ्वी से आकाश तक पिंगल—धूल धूसरित हो गया। उसके ऊपर मेघों के दल-बादल जमा हो गये। दोनों ने मिल कर एक विचित्र पिंगलाभ अंधेरा फैला दिया। हा हा करती हुई आंधी का उत्पात भी बढ़ गया।

अनिरुद्ध ने एक पेड़ के नीचे आश्रय लिया। ओले भी गिर सकते हैं और वज्रपात भी हो सकता है। परन्तु किया भी क्या जाय, ऐसी आंधी पानी में गांव तक कौन जा सकता है।

आंधी से छप्परों का फूस उड़ रहा है, पेड़ों की डालें टूट रही हैं। एक विकट ध्वनि के साथ किसी के घर की टीन उड़ गई। थोड़ी देर बाद झमाझम वर्षा होने लगी, और उसने दिशाएं ढक लीं। आह, पृथ्वी में प्राण आ गये! ठण्डी और प्रबल वायु में भीगी मिट्टी की सोंधी गंध मिल रही है। परन्तु बैसाख से पहले यह अकाल बैसाखी अच्छी नहीं आई। यही अच्छा हुआ कि जमीन जोती जा सकेगी। इस समय की एक जोत पांच गाड़ी खाद डालने के बराबर होगी। जोत से कटे हुए धान की जड़ें उखड़ जायंगी और मिट्टी में मिलकर गल जायंगी। धूप और वायु में मिट्टी भुरभुरी और नरम हो जायगी। हाथ में उठाने से लाडिली लड़की की तरह खिल जायगी।

× × × ×

आंधी-पानी रुकते रुकते शाम हो गई। अंधेरी रात और कोस भर का लंबा रास्ता। मैदान में कीचड़ हो गया है, गड्ढों में पानी भर गया है; पानी की धार में घास-फूस और दुनिया भर का करकट बह कर आया है और जगह-जगह ढेर हो गया है। पानी के स्पर्श और स्वाद से मेंढक मुखर हो गये हैं, बीच-बीच में विषैले जंतुओं की आवाज़ भी आती है—लम्बा शरीर ले कर वे सर-सर निकल जाते हैं, किन्तु अनिरुद्ध लापरवाह हो कर चल रहा है। डण्डा हाथ में संभाल लिया है और गाना आरंभ कर दिया है। सांप! सांप को क्या अपने प्राणों का भय नहीं है? अपना आनंद अभिव्यक्त करने के लिए ही वह ऊँचे स्वर से नहीं गाता, सांपों को हट जाने का नोटिस भी दे रहा है। इस नोटिस के बाद भी किसी की मौत आई हो और वह सिर उठा कर उसे काटने ही लगे तो उसके हाथ में डण्डा है। सांप! ··· अनिरुद्ध मुस्कराया चौबिगही के दो टुकड़ों को जब उसने एक में मिलाया था तब पुरानी मेड़ तोड़ते समय उसने बारह काले सांप मारे थे, उन में पांच तो चार हाथ लम्बे थे। अनिरुद्ध सांप या ऐसे ही किसी जानवर से नहीं डरता—डरता है मनुष्य से! चौधरी भयानक जीव है। छिरू को पहले वह किसी गिनती में न लेता था, किन्तु अब श्रीहरि असली काला सांप है!···

आंधी ने गांव तहस नहस कर दिया है।

पेड़ों की डालें टूट गई हैं, पत्तों और फूस से रास्ते भर गये हैं, चण्डीमण्डप के बकुल वृक्ष की बड़ी डाल टूट गई है, फूंस सब के छप्परों से उड़ गया है। हरेन्द्रघोषाल ने एक कमरा ताड़ के पेड़ जैसा ऊँचा और गुम्बज जैसा गोल बनाया है, उसका छप्पर तक उड़ कर हरीश चौधरी के ताल में गिर पड़ा है। हरिजन बस्ती की दुर्दशा का अंत ही नहीं रहा। पत्तों और फूस से छाये हुए घरों पर आच्छादन नाम की कोई वस्तु रह ही नहीं गई, इसके ऊपर पानी बरसा है जिस से दीवालें भीग गई हैं और जमीन पर कीचड़ ही कीचड़ फैला है।

चलो, देबू भाई का घर ठीक है। अहा, कितने अच्छे आदमी हैं देबू भाई! जगन के दवा रखने वाले बरामदे का आधा छप्पर उलट गया है, आश्चर्य, श्रीहरि ससुरे का कोई नुकसान नहीं हुआ! टीन की चादरों को बेटा ने लोहे की जंजीरों से बांधा है!···बूढ़ी दादी रात में ही अपना घर साफ कर रही है और भगवान् को शाप दे रही है। अपने घर के सामने आकर अनिरुद्ध खड़ा हो गया।

चौपाल में बैठा यतीन किताब पढ़ रहा था उसने पूछा—"कौन?"

"जी, मैं, अनिरुद्ध!"

"दिन भर कहां थे?"

"काम से गया था!···अनिरुद्ध ने अंधेरे में भी तीक्ष्ण दृष्टि

से छप्पर की ओर देखा। यतीन को आश्चर्य हुआ, अनिरुद्ध आज ठीक ठाक है। उस के लिए तो यह अवस्था अस्वाभाविक हो गई है। उसने फिर पूछा—"तबियत तो ठीक है? क्या देख रहे हैं?"

"छप्पर देख रहा हूँ, नहीं, उड़ा नहीं···"ऊपर वाले कमरे के छप्पर का फूस डरी हुई स्याही के कांटों की तरह खड़ा हो गया है।

"चलता हूं बहुत काम है!···" वह घर के भीतर चला गया। पेट में भी कुछ डालना है, उसमें तो भट्टी जल रही है।

पद्म ने इतनी देर में ही घर साफ कर लिया है!···उधर उस तरफ * चौनरे पर बैठी है। उसके पास कौन बैठा है? एक लड़का! कौन है यह? ओह, अवारा तारिणी का लड़का है। जकशन में भीख मांगता था, यहां कैसे आ गया? पद्म के निकट जा कर पूछा—"यह कहां से आया?"

अनिरुद्ध को स्वस्थ देख कर पद्म भी आवाक हुई। अनिरुद्ध ने इस बार लड़के से ही पूछा—"कहां से आया छोकरे?"

पद्म ने हँस कर जवाब दिया—"नज़रबन्दी ले आया है, बाबू की नौकरी करेगा।"

"हुं, दुनियां भर के मुर्दे नानामऊ का घाट! दे, खाना दे?"

पद्म तुरंत उठी। जाते-जाते बोली—"जंकशन में किसी का न जाने क्या चुराया था, लोग पकड़ कर मार रहे थे—नजरबंदी लड़का छुड़ा लाया है।"

अनिरुद्ध खीझ उठा। किसी दिन मेरे घर से या नजरबंदी बाबू का ही कुछ लेकर न भाग जाय। वह रूढ़ स्वर में बोला—"ए छोकरे, कहां चोरी की थी तूने ? क्या चुराया था ?"

लड़का डरे और क्रुद्ध जानवर की भांति तिरछी दृष्टि से उसकी ओर देखता रहा, कोई उत्तर न दे सका।

पद्म बोली—"तुम भी कैसे आदमी हो ? कोई और ले आया है, तुम्हारे घर में तो आया नहीं। तुम क्यों बिगड़ते हो ? लड़का है, अनाथ है, उस का क्या दोष ? जा रे तू अपने मालिक के पास जा।"

लड़का उसी तरह और उसी जगह बैठा रहा, हिला भी नहीं।

—इक्कीस—

ग्राम जीवन के समस्त आयोजन और सम्पूर्ण साधनाएं दो ही स्थानों में होती हैं—खेत और घर, आसाढ़ से भादों तक के तीन महीने खेत में कृषि का लालन-पालन करने में बीतते हैं आश्विन से पौष तक फसल काट कर घर लाई जाती है और रबी की फसल बोई जाती है। इन दिनों का अधिकांश भाग खेतों में ही बीतता है; इसके बाद माघ से चैत्र तक

घरेलू जीवन चलता है। इन दिनों में फसल से अनाज निकाला जाता है, लेन-देन चुका कर शेष संचित किया जाता है, अगली फसल का उद्योग होता है, घर की सफाई और मरम्मत होती है, आवश्यकतानुसार नये घर बनाये जाते हैं, खाद तैयार की जाती है, सन की रस्सियां बटी जाती हैं, नाच-गान होता है और आराम के साथ तमाकू फूंकी जाती है। वर्षा के लिए तमाकू काट कर, उसमें गुड़ मिला कर और हांडी में बन्द कर पानी में डाली जाती है। किसान परिवारों के विवाह भी इन्हीं दिनों में—माघ और फागुन में होते हैं, बहुत हुआ तो वैसाख में कर लिये जाते हैं—हरिजनों के लिए चैत्र में भी कोई बाधा नहीं है, वे पूस से लगाकर चैत्र तक विवाहादि कर डालते हैं।

असमय में—चैत्र के बीच में—आंधी पानी ने आकर इस निश्चित कार्यक्रम में धक्का लगाया है। सन की रस्सियां बटना छोड़ कर पुरुष सवेरे सवेरे ही खेतों पर पहुँच गये हैं। प्रवीणों के हाथ में हुक्के हैं, तरुणों की लांग अथवा जेब में बीड़ी और दियासलाई रखी है, कान पर अध-जली बीड़ी खुसी है, सब अपने-अपने खेतों की मेड़ पर घूम रहे हैं। जिन खेतों की जमीन ऊँची है, उनमें से दो-चार में हल भी चलने लगा है। जिनकी जमीन नीची है उनमें अभी पानी भरा है, दो-चार दिन में पानी सूखेगा तब जुताई होगी। मयूराक्षी के किनारे साग-सब्जी के बिरवे मातृ-स्तन्य वंचित शिशु की तरह अब तक किसी तरह जीवित थे—अब महिरावण के पुत्रों की

तरह दस दिनों में दस-मूनि बन कर बढ़ेंगे। तिलों में अभी फूल ही निकल रहे थे, पानी से उन्हें कुछ लाभ होगा; साथ ही साथ कुछ हानि भी होगई है, जो फूल अभी निकले थे, उन का मधु वर्षा से धुल गया है, अब उनमें फल न लगेगा। ऊख अब लग सकेगी। पानी से लाभ बहुत हो गया है, घर-बार का जो नुकसान हो गया है, उसके लिए क्या किया जाय ?

गांव की औरतें आंधी पानी से बिगड़े घर साफ करने में जुट गई हैं। कमर में आंचल खोंस कर वे घास-फूस इकट्ठा कर रही हैं—यह खाद में डाला जायगा, लड़कों की मण्डली ने कच्चे आमिया बीनने के लिए तड़के से ही बगीचों पर धावा बोला है, हरिजन स्त्रियां टाकरी ले कर निकली हैं और राह, घाट तथा बगीचों आदि से पत्ते, फूस, सूखी लकड़ियां, और सूखे पत्ते आदि लाकर घर में जमा कर रही हैं। अपने घर द्वार उन्होंने अब तक साफ नहीं किए। पुरुष अपने-अपने काम पर गये हैं। कोई किसानों-गृहस्थों के यहाँ नौकर है, कोई जंकशन में कारखाने में काम करता है और कोई दूसरे गाँव में मजदूरी।

दुर्गा अपने घर में बैठी है! वह सूखे पत्ते और लकड़ियां बीनने कभी नहीं जाती। जलाने की लकड़ी वह खरीदती है। सवेरे दूध दुहा कर वह नजरबन्दी बाबू को दे आई है, रास्ते में बिलू दीदी को भी दिया है, वहीं थोड़ी सी चाय पी है और घर लौट आई है। कुछ दिन पहले वह लुहारिन के यहां चाय

पीती थी, लुहारिन नजरबन्दी बाबू के लिए चाय बनाती थी, नजरबन्दी को देकर जो बचती थी वह पद्म और दुर्गा पी लेती थी। किन्तु उस दिन पद्म से झगड़ा हो गया है, तब से दुर्गा उसके घर के भीतर नहीं गई। बाहर ही बाहर नजरबन्दी बाबू को दूध दे कर और उसके दो एक काम करके चली आती है। नजरबन्दी ने भी आज कई दिनसे उस से कोई बात नहीं की! वह बैठी-बैठी सोच रही थी कि कल से दूध देने न जाऊँगी, अम्मां के हाथ भिजवा दूँगी।

दुर्गा की मां चौतरा साफ कर रही थी, बहू लकड़ी और पत्ते आदि बीनने गई है। पातू चौतरे पर बैठा है और अपने लड़के को खिला रहा। लोग कहते हैं कि लड़के की शक्ल हरेन घोषाल से हूबहू मिलती है। फिर भी पातू उसे बहुत प्यार करता है। एक साल में ही पातू बहुत बदल गया है—अवस्था में भी और प्रकृति में भी। पहले पातू वजनिहा मातबर आदमी था। आचार व्यवहार में गुरुता दिखाता था। लोग उस की हालत देखकर ईर्षा करते थे। मरे हुए पशुओं के चमड़े से उसे अच्छी आमदनी होती थी। कुछ चमड़ा वह बेंच देता था और कुछ साफ करने स्वयं रख लेता था; उससे ढोल तबला और डफ आदि मढ़ देता था। पातू के मढ़े हुए ढोल और तबले से कांसे की सी मीठी आवाज निकलती थी। उसकी आमदनी के बारह आने इसी तरह आते थे। बाकी चार आने चाकरान जमीन की खेती और इधर उधर ढोल बजाने

से मिलते थे। चमड़े का सिलसिला अब बन्द हो गया है, जमींदार ने रुपये लेकर उसका पट्टा लिख दिया है। पट्टा अलीपुर के रहमत शेख और कंकना के रमेन्द्र चटर्जी ने लिया है। चाकरान जमीन भी पातू के हाथ से चली गई है और जमींदार की खास खेती में मिल गई है। जमीन पातू ने स्वयं छोड़ दी है—छोड़नी पड़ी है। तीन बीघे जमीन के बदले में साल भर तक पर्वों और उत्सवों पर ढोल कौन बजाता? जिस दिन बजाने का काम पड़ जाय, वह दिन ही मिट्टी में मिल जाता है। इससे तो यही अच्छा है कि वह नगद पैसे लेकर बजा आयेगा। कहीं ढोल बजाने का बयाना होता है तो वह साफ कुरता पहन कर, चद्दर डाल कर, ढोल ले कर निकलता है और एक दो रुपये लेकर लौटता है, दो-एक पुराने कपड़े भी मिल जाते हैं, लेकिन लगभग बारहों महीने वह बेकार रहता है। मजदूरी वह कर नहीं सकता। वह बाधकर है और उसकी एक मर्यादा है, मजदूरी कैसे कर सकता है? बैठे-बैठे पशुओं के चमड़े का पट्टा लेने की बातें सोचता रहता है। उसी की जाति का नीलू चमार अब नीलूदास बन गया है, चमड़े के रोजगार ने ही उसे लखपती कर दिया है। अब वह कलकत्ते में रहता है और भारी कारबार करता है। एम० ए० बी० ए० पास एक सरकारी हाकिम ने नौकरी छोड़ कर उसके यहाँ मैनेजरी कर ली है। लम्बी चौड़ी कोठी है, मन्दिर है, हवा गाड़ी है। अपने गांव में उसने कंकना के बाबुओं की तरह

स्कूल और अस्पताल बनाया है। उसका लड़का लाट साहब का मेम्बर है। पातू पट्टे की कल्पना के साथ ऐसे ही ऐश्वर्य के स्वप्न भी देखता है।

जीवन धारण करने की व्यवस्था पातू की स्त्री और दुर्गा करती है। जिस पातू ने एक दिन दुर्गा को इसलिए अपमानित किया था कि वह श्रीहरि से सम्बन्ध रखती है वही पातू हरेन घोषाल के साथ सादृश्य होते हुए भी लड़के को प्यार करता है—दिन रात खिलाता रहता है। कभी-कभी घोषाल के पास भी जाता है और मनुहार के साथ कहता है—आज चार आने पैसे देने होंगे घोषाल बाबू!

दुर्गा नैश अभिसार में कंकना जाती है, जंकशन जाती है—प्रतीक्षा करने वाला पूछता है—"वह साथ में कौन है?" अंधकार की अस्पष्ट मूर्ति खिसक जाती है, दुर्गा कहती है—"मेरे साथ आया है।"

"कौन?"

"मेरा दादा!"

अस्पष्ट मूर्ति झुक कर सलाम करती है।

दुर्गा कहती है, एक सिगरेट दो, यह तब तक पिये।

बाबू की बाग-कोठी के किसी पेड़ के नीचे या बरामदे में सिगरेट की चमक में पातू का मुँह दीख पड़ता है। लौटते समय उसे चार आने या आठ आने मजूरी मिलती है। दुर्गा दिला देती है।

पातू ने बार-बार दुर्गा से कहा—"पचीस रुपये ही तो हैं, दे दे। चमड़े के लिए पट्टा लिखा लूं।"

दुर्गा बोली—"यह तो फिर देखा जायगा। पहले ताड़ के पत्ते काट लाओ, घर तो ढाकना ही पड़ेगा।"

इन्हें सदा यही करना पड़ता है। आग लगे या आंधी आवे, घर के लिए ये बहुत चिंता नहीं करते। आग लगने से बांस-बांस के लिए थोड़ी चिंता करनी भी पड़ती है परन्तु आंधी से छप्पर उड़ जाने पर ये जरा भी परेशान नहीं होते। खेतों के आस-पास तालाब के किनारे और नदी के बांध पर ताड़ के कितने ही पेड़ हैं, उनसे पत्ते काट लाते हैं और घर छा लेते हैं। केवल पुरुषों के लौटने की प्रतीक्षा है—काम से लौट कर वे पेड़ों पर चढ़ कर पत्ते काटेंगे और स्त्रियां उन्हें उठा कर घर ले आवेंगी। दो-चार औरतें भी पेड़ों पर चढ़ कर पत्ते काटती हैं। दुर्गा भी पहले ताड़ के पेड़ पर चढ़ लेती थी, अब नहीं चढ़ती। आवश्यकता भी नहीं है, उसके पके घर अच्छे फूस का छप्पर है, और खूब मजबूत बंधा है। उसके छप्पर का फूस कुछ तितर-बितर हुआ है, परन्तु अच्छी तरह जमा देने से ही ठीक हो जायगा। दो मजूरों का काम है और यह पातू ही कर लेगा उसे दो दिन की मजूरी दे देगी।

दुर्गा की बात के उत्तर में पातू ने कहा—"हुँ ?"

"हुँ, तो उठ।"

"बहू तो आ जाय।"

"बहू आयेगी तो उसको और अम्मां को भेज दूंगी, तू जा।"

दुर्गा की मां चौतरा साफ करती-करती बोली—"अम्मा न जायगी बेटा। तू खाने को देती है, तेरा काम कर देती हूँ, लड़के का काम नहीं कर सकती। क्यों करूं? कभी मां कहता है, दो आने पैसा देता है, फिर मैं क्यों मरूं?"

पातू गरजा—'हम नहीं देते तो तेरा कौन बाबा देता है?"

"सुना दुर्गा, सपूत के बचन सुने?"

दुर्गा ने बाधा दी—"तुम चुप भी रहो. न जाना, चिल्लाओ नहीं। बहू आये—हम दोनों चली जांयगी। दादा, तू तो जा।"

कमर में हंसिया खोंस कर पातू नदी के किनारे पहुंचा। मयूराक्षी के बांध पर ताड़ के असंख्य पेड़ों की पंक्तियां खड़ी हैं। बड़े-बड़े पत्ते देख कर वह एक पेड़ पर चढ़ा।

उधर एक पेड़ पर 'आखना' अर्थात् राखहरि पत्ते काट रहा है। उसके उधर वाले पेड़ पर वह कौन है? पुरुष नहीं स्त्री है। 'आखना' की औरत परी है। इधर वाले इस पेड़ पर कौन है? पातू अनुमान न लगा सका, पूछा—"वहां कौन है?"

"मैं गना।···अर्थात् गणपति।"

"और कौन है?"

"मेरे पास बांका है। हो रहा छिदाम। हो मोती लाल।"

पेड़ों पर से सब वार्तालाप करने लगे। सहसा आखना चीखा—"दुस! दुस! दुसधा! दुसधा! बाबारे बाबा, मार ही डालेंगे! चोंच की मार भी कैसी है!"

आखना पर दो कौव्वों ने आक्रमण किया है। उसके सिर पर कांव-कांव करते हुए उड़ रहे हैं और चोंच मार रहे हैं। पेड़ पर कौव्वों का अड्डा है। उधर परी अपने पति को ही कोस रही है—"भोंदू, मुंहझौंसे को बार-बार मना किया कि उस पेड़ पर कौव्वों का अड्डा है, वहां न जा, माना ही नहीं! मजा मिल गया?···" आखना की मुसीबत देख कर वह खूब हंसी।

धम्म्! उधर कोई गिरा—"कौन गिरा? कौन! राम राम! भादों में पके खजूर की तरह चू पड़ा है! मर तो नहीं गया? नहीं मरा नहीं, हिलता-डुलता है! चलो—उठ बैठा। नदी किनारे की गीली मिट्टी है—बच गया! कौन है कौन? कौन है रे? क्या हुआ?"

गिरने वाले ने खड़े होकर जवाब दिया—"सांप!"

"सांप?"

"हां, पत्ते की तरफ हाथ बढ़ाया ही था कि साला फुफकार कर, फन निकाल कर खड़ा हो गया। क्या करता—कूद पड़ा।"

फडिंग पासी है! छोकरा करा है। बच गया। सांप पक्षियों के अण्डे खाने गया होगा!···अरे, बाप रे! पातू पर भी मुसीबत आई; एक पत्ते पर हाथ डालते ही असंख्य ततैय्या निकल पड़ी। पातू ने अंगौछे से उन्हें भगाने की कोशिश की। दुर, दुर, धत्, धत!

× × × ×

दुर्गा शीशा सामने रखे नहरनी से दांत खुरच रही थी।

साफ-सुथरी रहने की उसे सनक है। दांत मोती की तरह चमकने ही चाहिएँ। दांतों में पान की कोई ऐसी छाप लग जाती है कि अच्छी तरह रगड़ने से भी नहीं जाती। दुर्गा उसे नहरनी से खुरच देती है। बहू के लौटते ही पत्ते लेने जाना है। यह भी मुसीबत है; बालों में मिट्टी भर जायगी, शरीर में मिट्टी भर जायगी, कपड़े गंदे हो जायेंगे लेकिन क्या किया जाय—सगा भाई है।

मां बोली—"बहू रुजगार करती है, कभी मुझे भी एक पैसा दिया है; सास कह कर आदर किया है?"

दुर्गा हंस कर बोली—"रहने दो अम्मां, तुम को तो वे पैसे छूने भी न चाहिएं।"

मां तिनगी—"ये लो, सीता की बेटी मेरी सावित्री! . . . . फिर उसने तीन काल की गाथा आरंभ की—अपनी मां और सास के काल की श्रुति कथा, अपने काल की स्मृति कथा और अपनी बेटी और बहू की विवरण कहानी सुनाई। अंत में बोली—"बहू हरामजादी सावित्री कितने नखरे करती थी। हजार बार समझाया, नाक सिकोड़ कर कहती थी—छि! अब वही छि उसके गरम भात में घी हो रहा है। उसी रुजगार से पेट भरता है—"

उधर, मुहल्ले के भीतर से कोई गाली देता हुआ आ रहा है। दुर्गा बोली—"रहने भी दो, हल्ला न मचाओ, कोई आ रहा है।"

गालियां बूढ़ी दादी दे रही थी।

"होगी नहीं, दुर्गति होगी नहीं, और होगी। अब बिना आंधी के ही छप्पर उड़ेंगे, बिना आग लगे ही घर जलेंगे! धानों में चावल न होंगे, भूसी ही रह जायगी।"

दुर्गा ने हंस कर पूछा—"क्या हुआ दादी ?"

दादी ने उसी तीखे स्वर में झनकार के साथ कहा—"धम्म को तो सब चबा गये बेटी! पिथमी में तो धम्म तो रही नहीं गया!"

दुर्गा ने चिल्ला कर कहा—"क्या हुआ क्या, किसने क्या किया है ?"

"अरे वो गोविन्दे, अब तक देता रहा, आज कहता है नहीं।"

"क्या ?"

"क्या ? क्यों री तू विलायत से आई है क्या ? मुहल्ले वाले जानते हैं, गांव वाले जानते हैं, तू नहीं जानती ? तू है कौन री छोकरी ? वैसे ही कम दीख पड़ता है, मुंहजले सूरज की धूप नहीं देखती ? तू है कौन ?"

"मैं दुर्गा!"

दुर्गा ? मर ! अपनी ही तरंग में रहती है। दूसरे की बात याद ही नहीं रहती, क्यों ? गोविन्द के बाप ने मुझ से दो रुपये उधार लिये थे—तू नहीं जानती ? बूढ़ा हर महीने दो आने सूद दे आता था। फिर जब बुलाती थी, पहुँचता

था। काम-काज कर देता था। वह मर गया तब गोविन्द दस-बारह साल सूद देता रहा है और बुलाने पर गया है। आज बुलाने आई तो जानती है क्या कहता है—कहता है, दादी मैं तो बहुत दे चुका, अब सूद भी न दूंगा, असल भी न दूंगा, बेगार भी न करूंगा !·····मैं जाती हूं देबू के पास। घोर कलजुग है। सब यही कहने लगे तो मेरी तो दुर्दशा हो जायगी !"

बूढ़ी के ऐसे कई कर्जी हैं—कम से कम दस बारह होंगे। उनके पास दो बीसी से ज्यादह रुपया पड़ा है। परम्परा से वे ब्याज देते चले आ रहे हैं, बूढ़ी कभी मूल नहीं मांगती, वे भी नहीं देते। उनको भरोसा है कि बूढ़ी मर जायगी तो असल न देना पड़ेगा। गांव में ऐसे महाजन और भी कई हैं, सभी प्रायः स्त्रियां हैं। उनके वारिस भी हैं इनके कर्जा-कानून की धारा ही ऐसी है।

वृद्धा जाते-जाते रुक गई—"अरी दुरगा, सुन तो !"

"क्या ?"

"करनफूलों की एक जोड़ी है, लेगी ? सोने के हैं।"

"करनफूल ? किसके हैं ?"

"मेरे साथ चल। चीज बहुत बढ़िया है। किसी के हैं, वह अब लेगी नहीं, मैं क्या करूँगी ? तू ले तो देख ले।"

"नहीं दादी आज नहीं। अभी मुझे ताड़-पत्ते लेने जाना है।"

"मर, ताड़-पत्ते तू क्या करेगी ?"

"मुझे नहीं, दादा को चहिए।"

"वाह, बड़ी दादा की दुलारी है। दादा की फिकर में जान दे देगी।···" बूढ़ी बकती-झकती चली गई। कुछ दूर आगे बढ़ी तो पैर एक गड्ढे में पड़ गया, उसने बादलों को गाली दी, यूनियन बोर्ड का टैक्स लेने वालों को गाली दी, कुछ लड़के कीचड़ में खेल रहे थे, उनके चौदह पुरखों को गाली दी। जगन डाक्टर के दवाख ने के सामने पहुँची तो औषधि की गंध रोकने के लिए नाक में कपड़ा लगाया और दवा को गाली दी, डाक्टर को गाली दी, रोग को गाली दी, रोगी को गाली दी। रुपये डूबने की आशंका ने आज उसे बौखला दिया है। देबू के घर पर पहुँच कर उसने पुकारा—"देबू पंडित!"

किसी ने उत्तर न दिया। विरक्त होकर बूढ़ी घर में घुसी—"कान फूट गये हैं क्या? ओ देबू!"

बिलू बाहर निकली—"कौन, दादी?"

"मेरी तरह तेरे भी कान फूट गये हैं, आंखें फूट गई हैं, सुन नहीं पड़ता, देख नहीं पड़ता?"

बिलू के ओठों पर मुस्कान आई; उसने कोई जवाब न दिया। समझ गई कि दादी का मिजाज आज गरम है।

"कहां देवा छोकरा कहां है? देवा?"

"घर में नहीं हैं, दादी!"

"क्या कहा? जोर से बोल।"

"घर में नहीं हैं, चण्डीमण्डप गये हैं।"

"चण्डी-मण्डप ?"

"हां !"

"अच्छा वही जाती हू। वही फैसला होगा। अच्छा हुआ देबू भी है, छिरू भी है। हरामजादों को कान पकड़ कर ले आवेगा, चमण्ड तो देख, धम्म नही, विचार नही।"

बूढ़ी बकते बकते चण्डी-मण्डप की तरफ बढ़ी।

चण्डी-मण्डप में महफिल गरम हो रही।

भूपाल चौकीदार हाथ में लाठी लिए खड़ा है। पातू, राख हरि, परी, बांका, छिदाम, फडिंग और कुछ लोग षष्ठीतला में-सिर पर हाथ रखे बैठे हैं। उनके पास ताड़-पत्तों के गट्ठर पड़े हैं। मयूराक्षी का बांध जमींदार की सम्पत्ति है, वहां लगे हुए ताड़ के पेड़ भी जमींदार के हैं। उन पेड़ों से पत्ते काटने के अपराध में भूपाल सब को पकड़ लाया है। श्रीहरि गंभीर मुंह से हुक्का पी रहा है। देबू एक ओर चुपचाप बैठा है, उसे पातू की मण्डली वाले बुला लाये हैं। हरेन घोषाल स्वयं आया है, वह प्रजा समिति का मंत्री है। बोल भी वही रहा है।

"वे बाप-दादे से पत्ते काटते आ रहे हैं, उनका अधिकार हो गया है।"

श्रीहरि ने घोषाल की बात का कोई उत्तर न दिया। पातू

बहुत दिन से श्रीहरि से नाराज़ है—वह ज़रा गरम हो कर ही बोला—"पत्ते तो सदा से लेते आ रहे हैं—कोई नई बात तो हुई नहीं।"

"सदा से अन्याय करते आ रहे हो तो आज भी जबरदस्ती अन्याय करोगे ? पत्ते काटोगे, चोरी करोगे !"

देबू इतनी देर बाद बोला—"इसे चोरी नहीं कह सकते, श्रीहरि ! पहले कोई आपत्ति न करता था, वे ले लेते थे। अब आपत्ति उठी है तो न लेंगे। इसके बाद भी काटें तो तुम चोरी कह सकते हो।"

घोपाल बोला—"नो, नेवर। तुम ठीक बात नहीं करते देबू। पेड़ से पत्ते लेने का अधिकार इन्हें है। तीन पुश्त से लेते आ रहे हैं। तीन साल तक घाट से पानी लेने पर फिर कोई घाट बंद करता है—राह रोकता है ?"

श्रीहरि हँसकर बोले—"वह पेड़ है घोपाल, ताल नहीं है, राह भी नहीं है।"

"एस, गाछ इज़ गाछ, एण्ड पथ इज़ पथ; बट मैन इज़ मैन आफ्टर आल।"

"कल ज़मींदार पेड़ बेच दे या काट ले तो पत्ते लेने का अधिकार कहां चला जायगा ? बेकार की बातें न करो। खास ज़मीन के ही नहीं, माल ज़मीन के पेड़ भी ज़मींदार के हैं, प्रजा फल खा सकती है, काट नहीं सकती !

देबू ने एक लंबी सांस ली, उसके अंतर में एक विस्मृत

क्षोभ जाग्रत हुआ। उसकी खिड़की के पास कटहल का एक पेड़ था, घनी छाया रहती थी। घर का सामान बनवाने के लिए ज़मींदार ने कटवा लिया। कुछ दाम दिये थे परन्तु पहले जब उसके पिता ने आपत्ति की थी तब ज़मींदार ने इसी कानून के जोर से ज़बरदस्ती कटवा लिया था।

देबू बोला—"फिर यही करो श्रीहरि, पेड़ सब कटवा लो, प्रजा फल भी न खायगी।"

श्रीहरि हँसे—"तुम तो बेकार नाराज़ होते हो चाचा, मैंने तो बात उठने पर कानून की बात कही है ज़मींदार ऐसा क्यों करने लगे? लेकिन प्रजा जब राजा से विरोध करे तब राजा कानून का व्यवहार क्यों न करे? यह तो कोई अन्याय नहीं है।"

"किन्तु इस गरीब प्रजा ने क्या विरोध किया है? इन्हें इस तरह पकड़ कर लाने का और क्या अर्थ है?"

"इनसे पूछो। प्रजासमिति के सेक्रेटरी साहब से पूछो।" हरिजनों की ओर देख कर श्रीहरि ने कहा—"क्यों रे, चण्डी-मण्डप छाने के लिए तुम पैसे न लोगे?"

बात इतनी देर बाद साफ हुई! सब स्तब्ध हो गये परन्तु सब ने अंतर में एक जलन का अनुभव किया! सब से अधिक अनुभव किया देबू ने। ताड़-पत्तों का मूल्य और चण्डी-मण्डप छाने की मजूरी में जो असंगति है, वह इसका कारण नहीं है। कारण है श्रीहरि का ढंग!

बूढ़ी दादी यह मामला देख-सुनकर चुपचाप खड़ी रह गई

थी; अच्छी तरह सुन नहीं पाती, कुछ देर बाद बात पूरी तरह समझ में आई। वह बोली—"हां रे, भोंदुओ ! तुम चण्डी-मण्डप न छाओगे ? हिम्मत तो देखो, रहोगे कहां ?"

हरेन गोपाल को मौका मिला, उसने बूढ़ी को डांटा—' जो तुम्हारी समझ में न आवे, उसके बीच में न पड़ो दादी। चण्डी-मण्डप अब किस का है ? चण्डी-मण्डप रहे चाहे न रहे, उनको क्या ? ये तो ये, गांव वालों का ही क्या अधिकार रह गया है? चण्डी-मण्डप जमींदार का है। चण्डी-मण्डप नहीं वह जमींदार की कचहरी है।"

"तो जो राजा का है तो परजा का भी है। जो राजा का है, वही परजा का है।"

देबू ने हंस कर जरा जोर से कहा—"यह तो ताड़ के पत्तों में ही देख लो दादा !"

"कौन ? देबू ?"

'हां।"

"हां, यह तो ठीक है। हां, छीहरि पत्ते ये राजा से न लेंगे तो कहां से लायेंगे ?"

श्रीहरि ने कड़े स्वर में डांटा—"जाओ, जाओ, तुम घर जाओ। तुम को पंचायत करने के लिए किसने बुलाया है? घर जाओ !"

दादी की हिम्मत टूट गई। गांव में वह किसी से नहीं डरती, किन्तु इधर कुछ दिनों से श्रीहरि से डरने लगी है ! वह चुप-

चाप चली गई। जाते-जाते देबू से कह गई—'देबू घर जा, तेरा लल्ला रोता है।···" उसने झूठ बोला। उसने सोचा, देबू कहीं कोई नया झगड़ा न खड़ा कर दे। देबू पर उसका प्यार दिन दिन बढ़ रहा है।

देबू ने दादी की बात पर ध्यान न दिया। श्रीहरि से बोला—"अच्छा, श्रीहरि, तुम अब क्या करना चाहते हो?"

"अर्थात्?"

"अर्थात् इनका चोरी में चालान करवाना चाहते हो, तो वह करो और पत्तों के दाम लेना चाहते हो तो वे ले लो। बीस पत्तों की चटाई दो पैसे में मिलती है। उसी हिसाब से दाम जोड़ लो।"

"तो, तुम लोग झगड़ा ही करना चाहते हो, क्यों?···" श्रीहरि ने हरिजनों से पूछा।

"जी?"

देबू बोला—"गिन डालो, किसने कितने पत्ते लिए हैं, गिनो।"

सब पत्ते गिनने लगे।

श्रीहरि की मूर्ति भीषण हो गई; हिंस्र और क्रुद्ध गर्जन के साथ उसने ललकारा—"बस, पत्ते वहीं रहने दो!"

श्रीहरि के आकस्मिक और दुर्दान्त क्रोध के इस प्रचण्ड प्रकाश से सब चौंक गये। हरिजन पत्ते छोड़ कर अलग हो गये, केवल पातू उसी जगह खड़ा रहा। भवेश और हरीश

श्रीहरि के पास बैठे थे, वे भी चौंके। घोषाल तो हत्बुद्धि जैसा हो हो गया, दो-चार पग पीछे हट कर श्रीहरि का मुंह ही देखता रह गया। देबू भी चौंका परन्तु क्षण भर में संभल गया और उठ कर खड़ा हो गया। हरिजनों के निकट खड़े हो कर उसने दृढ़ कण्ठ से कहा—"पत्ते पड़े रहने दो, तुम सब जाओ। उठो, मैं कहता हूँ।"

सब ने उसके मुँह की ओर देखा—उसका शीर्ण मुख एक अद्भुत तेज से चमक रहा था। उस चमक में हरिजनों ने शायद अपने लिए अभय वरदान देखा। वे सब खड़े हो गये और बाहर जाने लगे।

श्रीहरि ने पुकारा—"भूपाल। टोक तो इन ससुरों को!"

देबू ने मंद मुस्कान के साथ उसकी ओर देखा फिर पातू से बोला—"सब अपने-अपने घर जाओ। जब तक मेरे बदन में हाथ न लगेगा तब तक तुम्हें कोई छू भी नहीं सकता!"

हरेन घोषाल लपक कर सब से आगे हो गया और बोला—"आओ!"

सब से अंत में देबू चण्डी-मण्डप से उतरा।

श्रीहरि की पिंगल आंखों में क्रूर शनिश्चर की सी हिंसा चमकने लगी।

इसी समय रास्ते में किसी ने ऊँचे कण्ठ से ताना मारा—"हरि बोल, हरि·····!···" और फिर अट्टहास का शब्द सुन पड़ा!

अनिरुद्ध है। श्रीहरि के अपमान से वह इतना आनन्दित हुआ है कि हँसते और ताली बजाते-बजाते नाचने सा लगा है!

श्रीहरि कुछ देर चुप बैठा रहा फिर एक क्रुद्ध और लंबी सांस खींची। भवेश और हरीश आदि श्रीहरि के अनुगत भी स्तम्भित हो गये थे। भवेश ही पहले बोला—"घोर कलिकाल है, हरीश चाचा!"

श्रीहरि अब बोला—"अब आप लोग मुझे दोषी न बताने लगें!"

हरीश बोला—"तुम्हें कैसे दोषी कहेंगे, अपनी आंखों से ही तो सब कुछ देखा है।"

"भूपाल!···" श्रीहरि ने भूपाल को बुलाया।

"जी!"

"तुम से अब हमारा काम नहीं चल सकता!"

"जी!···" भूपाल सिर खुजाने लगा।

भवेश बोला—"इतने आदमियों में भूपाल अकेला क्या करता, बेटा श्रीहरि? इस बिचारे का क्या अपराध है?"

"जी, इसके सिवा मैं चौकीदार हूँ, फौजदारी कैसे करता? आप तो यूनियन बोर्ड के मेम्बर हैं, आप ही बताएँ हुजूर!"

"तू कंकना जा, बाडुज्या बाबू के बूढ़े चपरासी नादिर सेख के पास। उससे कह दे, अपने लड़के कालू सेख को मेरे पास भेज दे, मैं नौकर रखूँगा।"

"कालू सेख?···" भवेश ने भय और विस्मय के साथ

पूछा।

"हाँ, कालू सेख।"

नादिर सेख कभी विख्यात लठियल था, कालू उसका उपयुक्त पुत्र है। तरुण, शक्तिशाली, कौशली और दुर्दान्त साहसी। फौजदारी में एक बार जेल भी हो आया है; फिर डकैती के सन्देह में भी पकड़ा गया था परन्तु छूट गया है। कालू सेख भयंकर जीव है।

श्रीहरि बोला—"किसी के साथ मैं अन्याय न करूँगा, भवेश बाबा। किसी का नुकसान भी नहीं करना चाहता। परन्तु जो मेरे सिर पर पैर रखेगा उसे मैं मिटा दूँगा, चाहे अन्याय हो, चाहे अधर्म।"···कुछ देर चुप रह कर वह फिर बोला—"यह नीच लोग—बरसात में मैं धान देता हूँ तब चूल्हा जलता है—आज मुझे अंगूठा दिखा कर उठ गये। ये देबू घोष, सेटेलमेंट में मैंने इसकी जमीन ठीक-ठाक लिखवा दी, रोज इसके घर की खबर ली है। तुम तो जानते ही हो, यह भी कोशिश की कि इसको स्कूल में फिर जगह मिल जाय। प्रेसीडेण्ट से भी कहा।"

भवेश बोला—"कलिकाल में किसी की भलाई न करनी चाहिये, बेटा!"

"वह नजरबंदी छोकरा ही काल हो रहा है। यह सब उसी की करतूत है। लुहारिन के साथ मौज करता है। और साला कर्मकार!"···श्रीहरि निष्ठुर हो गया—"नमक हरामों का

गाँव है। जी चाहता है कि गाँव का कोई उपकार न करे।"

हरीश बोला—"ऐसा न कहो भाई, भगवान् ने तुम को बड़ा बनाया है, भण्डार दिया है, उपकार तो तुम्हें करना ही चाहिए।"

थोड़ी देर चुप रह कर श्रीहरि सहज स्वर में बोला—"हरीश बाबा, षष्ठी काका से कहो कि काम शुरू कर दें। ईंटें तो तयार ही हैं। स्कूल की फर्श दस दिन बाद बन जायगी, और पानी बरस ले नहीं तो फर्श चिटक जायगी, परन्तु, पुल फिर कब बनेगा? इसके सिवा वह मेरा काम नहीं है, मैंने दस रुपये अवश्य दिए हैं, परन्तु यूनियन बोर्ड को दिए हैं पुल बनाने के लिए। बोर्ड से मैं क्या कहूँगा?"

हरीश का लड़का षष्ठी श्रीहरि की छत्रछाया में ठेकेदारी करता है। यूनियन बोर्ड की तरफ से शिवकालीपुर की राह में एक पुलिया बनेगी, श्रीहरि स्वयं स्कूल का फर्श बनवायेगा। ठेका षष्ठी चरण ने लिया है।

हरीश बोला—"तुम्हारे ही काम में लगा है भाई। कागज़ पत्तर लेकर सबेरे बैठता है तो रात को उठता है। तमादी का हिसाब है, बड़ा काम है!"

षष्ठीचरण श्रीहरि की गुमास्तागीरी के कागज़-पत्तर भी संभाल देता है। चैत का महीना है, बाकी का हिसाब हो रहा है, जिन के नाम चार साल की बाकी है उन पर दावा होगा। श्रीहरि के अपने लेन-देन का भी हिसाब है। उसकी मियाद

तीन साल है। उसका हिसाब भी हो रहा है।

भूपाल चला गया था, और कोई था नहीं इसलिए भवेश स्वयं चिलम भरने बैठा था। षष्ठीतल के किनारे लकड़ी की धूनी जलती है, वहीं बैठे भवेश ने चिलम में आग रखते-रखते किसी को बुलाया—"कौन है ? ओ—लड़के !"

एक लड़का लाल फूलों का गुच्छा लिए जा रहा था, पुकार सुनकर खड़ा हो गया।

"कौन है ? कैसे फूल हैं ? अशोक हैं क्या ?"

लड़का बैरागियों का नलिन है, वह महाग्राम गया था, कुम्हारों के यहां। ठाकुर जी के बगीचे में अशोक के फूल खिले थे, एक गुलदस्ता बना लाया है—नज़रबंदी को देगा। पंडित के घर और पड़ोसियों को देने के लिए थोड़ी सी कलियां भी लाया है। दो दिन बाद ही अशोक-षष्ठी है।···नलिन ने स्वभाव के अनुसार गरदन हिलाकर संकेत किया—"हां।"

"दिए जा थोड़े से। एक गुच्छा—"

नलिन थोड़े से फूल रख कर चला गया।

श्रीहरि बोला—"अपने ताल के किनारे मैंने भी अशोक की कलमें लगाई हैं।"

श्रीहरि ने एक ताल खुदवाया है, उसके किनारे अच्छे अच्छे पेड़ों की कलमें भी लगाई हैं।

—बाइस—

अशोक षष्ठी का दिन है। यह षष्ठी जो करते हैं; उनके

जीवन में शोक का प्रवेश नहीं होता; जिसका कुछ खो जाता है, वह उसे फिर मिल जाता है और जिसका कोई मर जाता है, वह फिर जीवित हो जाता है। स्त्रियां सवेरे से उपवास किए हैं। षष्ठी देवी की पूजा करने के बाद व्रत की कथा सुनेंगी; अशोक की आठ कलियां खायँगी—प्रसाद का दही और हल्दी मिला कर और उसी से लड़कों के मस्तक पर तिलक करेंगी। इसके बाद खायें पियेंगी परन्तु वह भी साधारण ही होगा। आज अन्न नहीं ग्रहण किया जाता।

बारह महीनों में तेरह षष्ठी होती है। प्रत्येक मास में स्वर्ग से षष्ठी देवी की नौका आती है, बारह महीने में वे तेरह रूप धारण कर पृथ्वी की संतानों का कल्याण करने के लिए मर्त्य-लोक में आती हैं। उनकी मांग में सिंदूर चमकता है, हाथ में चूड़ियां झलकती हैं, सर्वांग में हल्दी का प्रसाधन होता है, बड़ी बड़ी आंखों में काजल शोभित होता है। दूसरों के सात लड़के उनकी गोद में होते हैं और अपने सात लड़के पीठ पर। वैसाख में चंदन षष्ठी, जेठ में अरण्य षष्ठी, आषाढ़ में बांस षष्ठी, श्रावण में लुण्ठन या लोटन-षष्ठी, भांदों में चपेटा या चापड़ा षष्ठी, क्वांर में दुर्गा षष्ठी, कार्तिक में काल षष्ठी और अगहन में अखण्ड षष्ठी—संसार को अखण्ड परिपूर्ण कर जाती हैं। पौष में मूल-षष्ठी, माघ में शीतला षष्ठी, फागुन में गोविन्द षष्ठी और चैत में जब अशोक फूलों से भर जाता है तब शोक-दुःख और ताप का मोचन करने के लिए मां अशोक-षष्ठी आती हैं।

उनके आनन्दमय और कल्याणपूर्ण स्पर्श से संसार फूलों से भरे अशोक की ही भांति खिल जाता है। अशोक के बाद संक्राति के दूसरे दिन नील षष्ठी होती है। उस दिन तिथि के हिसाब से छठ नहीं होती परन्तु नील षष्ठी उसी दिन होती है।

पद्म सवेरे से ही गृहकर्म निपटाने के लिए व्यस्त हो रही है। काम से निपटकर नहायेगी, षष्ठी-पूजा करेगी फिर कथा सुनने बिलू के घर जायगी। इसके बाद अशोक की कलियाँ खानी होंगी। उसका भी एक मंत्र है। ऐसे दिन में अनिरुद्ध ने भी काम का झंझट बढ़ा दिया है। लुहारी की दूकान मरम्मत करने में जुट गया है। धौंकनी, हथौड़ा, निहाई, संडासी आदि से उलझ गया है। बहुत दिन से बन्द दूकान के जाले, कोयले, और कूड़ा-करकट साफ करना क्षण भर का काम नहीं है। इसके सिवा कोयले के साथ लोहे के टुकड़े भी पड़े हैं—बढ़ई के रंदे से उतरे हुए लकड़ी के परत जैसे पतले और नुकीले लोहे के टुकड़े चुभ जाँय तो मुसीबत खड़ी करदें। झाड़ू से साफ करके फिर गोबर से लीपना होगा। पद्म के साथ तारिणी का वह लड़का भी काम कर रहा है। लड़के को यतीन खिलाता है। दो-एक काम भी वह कर देता है परन्तु रहता हरदम पद्म के साथ है। अनिरुद्ध कभी धमकाता है तब भी लड़का कुछ कहता नहीं। आफत तब आती है जब वह बाहर जाता है! जाता है तो फिर आसानी से नहीं लौटता। यतीन उसे देबू के पास भेजता है, देबू आता है और बात-चीत करके लौट भी जाता है

परन्तु लड़के का पता नहीं मिलता। अन्त में रोटी खाने के समय आता है, कभी-कभी हरिजनों के मुहल्ले या किसी जंगल से ढूढ़कर लाना पड़ता है। ढूँढ़ने पद्म ही जाती है।

अनिरुद्ध को काबुली चौधरी से रुपये मिल गये हैं। ढाई सौ रुपये के बदले चौधरी ने जोत की सारी ज़मीन बंधक करवा ली है। अनिरुद्ध का मन पहले कचोटता था परन्तु रुपये मिलने पर उसने अफ़सोस छोड़कर उत्साह के साथ काम आरम्भ कर दिया है। लगान की बाकी के रुपये अदालत में जमा करवाने हैं, आपसी समझौते पर उसे विश्वास नहीं होता है और आपसी समझौते से वह दे ही क्यों? पाचुन्दी की बाज़ार से बैलों की एक जोड़ी लानी है; किसान तो उसने अभी रख लिया है। दुर्गा के भाई पातू को उसने पसन्द किया है और उसको नौकर रखा है। इसके सिवा पातू को वह प्यार भी करता है। दुर्गा से पातू ने अनिरुद्ध की वकालत भी बहुत की है। दूकान में अनिरुद्ध के साथ पातू भी काम कर रहा है। काम के साथ-किसानी की चर्चा भी हो रही है। बैल ख़रीदने की बात उठी है।

पातू की राय है कि दुर्गा से बछड़ा लिया जाय और बाज़ार से उसकी जोड़ मिलाई जाय सो जोड़ी बहुत बढ़िया होगी।

अनिरुद्ध ने हँसकर कहा—"दुर्गा बछड़े के दाम बहुत माँगती है।"

"सौदागर सौ रुपये तक देते हैं ! दुर्गा सवा सौ माँगती है। तुम को सस्ता दे देगी—मैं भी जब तुम्हारे साथ हूँ।"

अनिरुद्ध ने हँसकर कहा—"मेरी पूँजी तो कुल सौ रुपये है ! ये न होगा पातू, बाज़ार से दो छोटे और गैंठे बछड़े लेंगे। जमीन भी ज्यादा नहीं है—काम चल जायगा। बाजार न हो तो तुम भी चलना।"

पद्म ने तारिणी के लड़के से कहा—"हाँ रे, तू फिर लोहे के टुकड़े बिनने लगा। यही तेरा काम है ?"

लड़के ने कोई उत्तर न दिया।

पातू बोला—"ए, ए, यह तो अच्छा लड़का है ! ए छोकरे !"

लड़के ने दाँत दिखा कर पातू को मुँह चिढ़ाया।

"अरे, यह तो मुँह चिढ़ाता है ! बलिहारी है !"

अनिरुद्ध बोला—"पकड़ तो लाओ, कान पकड़ कर ले तो आओ, पातू !"

पद्म हाँ हाँ करके बोली—"पकड़ना नहीं, काट खायगा, काटेगा।"

लड़के में यह एक बुरी आदत है; जो उसे पकड़ता है तो तुरन्त काट लेता है। दाँत भी उसके छुरे की धार जैसे बने हैं। अतर्कित चोट से आक्रमणकारी को विव्रत करके वह अपने आपको छुड़ा लेता है और भाग जाता है ! यही उसका रण-कौशल है ! आज परन्तु पातू के आगे बढ़ने से पहले ही वह

चम्पत होगया।

पद्म व्यस्त हुई—"उचिंगें, उचिंगें, ओ रे उचिंगें, कहीं जाना नहीं, सुनता है।"

लड़के को सब उचिंड़े के नाम से बुलाते हैं, अच्छा नाम माँ-बाप ने रखा था परन्तु वह नहीं जानते हैं, लड़का भी नहीं जानता। उचिंड़े ने पद्म की बात सुनी ही नहीं। परन्तु घर की ओर ही गया. इससे पद्म को कुछ संतोष हुआ, वह भी चल दी।

अनिरुद्ध बोला—"कहाँ चली?"

"देखूँ, कहाँ गया है।"

"जाने दे, मरने दे, तुझे क्या? तू अपना काम कर!"

"हटो! आज षष्ठी का दिन है। तुम्हारी जबान के आगे रुकाई नही है?"...बड़ी-बड़ी आँखों की प्रदीप्त दृष्टि से पद्म ने अनिरुद्ध को डाँटा और चली गई।"

दाँत से ओंठ दबा कर अनिरुद्ध पद्म की ओर क्रुद्ध दृष्टि से देखता रह गया, पद्म ने घूम कर देखा भी नही। अनिरुद्ध ने एक लम्बी साँस लेकर काम में मन लगाया। कहावत है, बियाई नही और माँ बन गई—यही हाल है!

चलो उचिंड़े कही गया नहीं, यतीन की महफ़िल में बैठा है। यतीन की आवाज़ सुनकर ही पद्म ने उचिंड़े के अस्तित्व का अनुमान कर लिया।

"माँ जी कहाँ हैं?"

"हाँ, दूकान में।"

यहाँ तो मेरी ही खोज हो रही है, पद्म मुस्कराई। क्यों! माँ जी की खोज क्यों हो रही है? राजा-बेटा को किस चीज की जरूरत पड़ गई? न जाने क्या हुकुम मिलेगा। दरवाजे की कुंडी खड़का कर उसने संकेत किया—माँजी मरी नहीं, जिन्दा है! उधर यतीन के बैठके में महफिल गरम हो रही है। देबू, जगन, गिरीश, गदाई—कई आदमी बैठे हैं। कुण्डी की आवाज सुनकर यतीन हँसा और बरामदे से उठकर भीतर दरवाजे के पास खड़ा हुआ। धूल-गरदा और स्याही से भरे अपने बदन और मैले-कुचैले कपड़ों की ओर ध्यान जाते ही पद्म परेशान हो गई। बोली—"नहीं, नहीं, भीतर न आना।"

"न आऊँ?"

"न, मैं तो भूत बनी खड़ी हूँ।"

यतीन हँसा—"भूत बनी?"

"हाँ। यह देखो।" अपने दोनों हाथ दरवाजे से आगे बढ़ा कर उसने दिखाये—"जू जू भी आजाय तो डर जायगा।" एक नई पुलक से अधीर होकर वह हँसने लगी।

यतीन भी हँसा—"परन्तु जू-जू माँ, चाय का पानी अभी चाहिए। हाथ धो डालो।"

पद्म फिर गुनगुनाने लगी। चाय दिन भर में आदमी कितनी बार पीता है। उसका भी अच्छा भाग्य है। अनिरुद्ध माताल, यतीन, चाताल और उखिड़े दांताल।

यतीन लौटकर कर बैठक में पहुँच गया। चाय उसकी गोष्ठी का अन्यतम प्रधान आकर्षण है। हरेन इतनी देर में ही दो बार तगादा कर चुका है।

"चाय कहाँ है बाबू; बात जमती नहीं।"

बैठक में जगन आज बंगाल के राजनैतिक इतिहास पर भाषण दे रहा है। प्रजास्वत्व कानून में संशोधन की चर्चा हो रही है। बंगाल की धारा सभा में प्रजास्वत्व कानून की आलोचना चल रही है। बात श्रीहरि पाल के उस दिन के व्यवहार से उठी है। उसने कहा था—'माल भूमि अर्थात् प्रजास्वत्व वाली जमीन पर भी जो पेड़ लगे हैं, वे भी जमींदार के हैं, प्रजा उनके फल ही खा सकती है।'

जगन कहता है—"प्रजास्वत्व कानून में संशोधन से प्रजा को यह अधिकार मिल जायगा। जमींदार के विषदंत टूट जायंगे। उसदिन अखबार में छपा था कि कानून में कौन-कौन से संशोधन होंगे। मैंने कतरन संभाल कर रख ली है। यह कानून अवश्य पास होगा। ओह, स्वराज्य पार्टी की ओर से कैसे भाषण हुए हैं! आग लगादी है!"

गदाई ने पूछा—"फिर क्या हो जायगा डाक्टर?"

हरेन समाचार पत्रों में शीर्षक पढ़ता है या अदालतों की कार्यवाही देख लेता है। विस्तृत विवरण पढ़ने योग्य धैर्य उसमें नहीं फिर भी वह बोला—"बहुत सी बातें हैं। इतनी मोटी किताब होगी। जबानी किस को याद रहती है। क्यों डाक्टर?"

जगन को सब बातें याद नहीं हैं—सारी बातें उसकी समझ में भी नहीं आईं फिर भी उसने बहुत कुछ बताया।

सबसे पहले वही बोला—"पेड़ पर प्रजा का अधिकार स्थापित होगा।"

"हस्तान्तर विधान से ज़मींदार की उच्छेद-क्षमता उड़ जायगी।

"खारिज-फीस बंध जायगी, और प्रजा उसे रजिस्ट्री आफिस में जमा कर सकेगी।

"माल भूमि पर भी पक्का घर बन सकेगा।

"सीधी बात, ज़मीन प्रजा की होगी।"

गदाई बोला—"कहते हैं, कोर्फा का भी स्वत्व हो जायगा और बटाई—"

जगन बोला—"हाँ हाँ। कोर्फा का स्वत्व मान लिया गया तो फिर मनुष्य के पास रह क्या जायगा। कान में तेल डाल कर सो जाओ। बटाई की ज़मीन सब तेरी हो जायगी।"

देबू अपने स्वभाव के अनुसार चुप बैठा था। कई दिन से उसका मन अशांत हो रहा है। वह उस दिन की घटना पर ही विचार कर रहा था और सोच रहा था कि पातू आदि मेरी बात मान कर श्रीहरि के सामने से उठकर चले आये हैं! अब श्रीहरि का शासन-दण्ड किसी न किसी ओर से उनके सिर पर अवश्य गिरेगा। उन्हें बचाना पड़ेगा और उसे ही बचाना पड़ेगा। न्याय धर्म के अनुसार वह उन्हें बचाने के लिए बाध्य

हैं। किन्तु···उसने एक लंबी सांस ली। बिलू, मुन्ना, परिवार और जमा ज़मीन के सम्बन्ध में विचार करने के लिए उसे अवसर ही नहीं मिलता। कभी-कभी इसी तरह क्षणिक दुश्चिंता की भांति उनका ख्याल आता है।

जगन भाषण दे ही रहा था—"देशबन्धु चितरंजन आज होते तो क्या कहना था।"

चितरंजन का नाम सुन कर सब के शरीर में रोमांच हो आया। देशबन्धु को सब जानते हैं, उनका चित्र भी सब ने देखा है।

देबू की आंखों के सामने देशबन्धु की मूर्ति आ गई। उनका एक चित्र देबू ने अपने घर में टाँग रखा है। चित्र के नीचे महाकवि रवीन्द्रनाथ ने लिखा है—

"एने छिले साथे करे मृत्युहीन प्राण
मरणे ताहाइ तुमि करे गेले दान।"

यतीन ने भीतर से पुकारा—"उचिंड़े!"

बैठक में बैठे हुए उचिंड़े को इच्छानुसार चंचलता प्रकट करने की सुविधा न मिल रही थी। थोड़ी देर तक वह रास्ते के उस तरफ वाले जंगल में एक गिरगिट की लीला देखता रहा और देखते-देखते ही बिचारा सो गया।

हरेन ने उसे डाँट कर पुकारा—"ए छोकरे, ए!"

देबू बोला—"रहने दो। बच्चा है, सो गया है।"···वह स्वयं उठकर गया और यतीन से बोला, "क्या काम है?"

यतीन बोला—"चाय की कटोरियां पहुँचानी हैं।"

देबू ने सब को चाय दी। चाय पीते-पीते जगन ने महात्मा गांधी, पंडित मोती लाल नेहरू, जवाहर लाल नेहरू, यतीन्द्र मोहन और सुभाष वसु की चर्चा आरंभ की।

चाय पीकर सब चले गये। देबू सब से अंत में गया। जाने के लिए पहले वही उठा था परन्तु यतीन ने कहा—"आप से कुछ बातें करनी हैं, देबू बाबू!"

देबू बैठ गया। सब के जाने के बाद यतीन ने कहा—"अब विलम्ब न करें—समिति का काम अपने हाथ में ले लें।"

समिति—प्रजा समिति। यतीन कह रहा है, देबू को ही समिति का भार लेना होगा।

देबू ने कोई उत्तर न दिया।

"आप न लेंगे तो काम न चलेगा। सब आप को ही चाहते हैं। डाक्टर इससे शायद कुछ खिन्न हो। हो, परन्तु एक चीज बन गई है वह तोड़ी तो न जायगी।"

देबू बोला—"अच्छा, कल उत्तर दूँगा।"

यतीन हँसा; बोला—"उत्तर क्या देंगे। भार तो आप को लेना ही होगा।"

देबू चला गया। यतीन स्तब्ध होकर कुछ सोचने लगा।

बंगाल के ग्राम जीवन की दुर्दशा उसने विद्यार्थी अवस्था में ही पढ़ी थी, सरकारी अंकों और अनेक ग्रंथों एवं लेखों से जानकारी प्राप्त की थी परन्तु ऐसे रूप की तो उसने कभी

कल्पना भी न की थी। अभी चैत का महीना चल रहा है, खेतों की पूरी उपज भी खेतों से उठकर किसानों के घर नहीं आई और घर के भण्डार सूने हो गये हैं। धान श्रीहरि के घर में गये हैं या जंकसन के कारखाने में पहुँचे हैं। गेहूँ, जौ, दाल और आलू भी लोगों ने बेंच डाले हैं। तिल अभी खेतों में हैं परन्तु सौदागर उनके लिए भी कर्ज देते हैं। इसी बीच में श्रीहरि के गुदाम में एक दिन भीड़ भी लग चुकी है, उसने धान उधार देना शुरू कर दिया है। इस गाँव के प्रायः सभी खेत महाजन के यहाँ गिरों हैं—अधिकांश श्रीहरि ने ही बंधक रखे हैं। गाँव का प्रत्येक घर जीर्ण है, प्रत्येक मनुष्य मूक है, प्रत्येक पशु दुर्बल है। चारों ओर जंगल पड़ा है; गड्ढ़ी-गड्ढों से रास्ता दुर्गम हो रहा है। उस दिन पानी बरसा और रास्ते में कीचड़ ही कीचड़ भर गया। बड़ा भारी ताल है परन्तु पानी उसमें जरा-सा ही है। कोई हाथ सवा-हाथ गहरा होगा। उस दिन एक आदमी पानी में उतर कर मछली पकड़ रहा था, उस की कमर भी न डूबी थी।

आश्चर्य! इस स्थिति में भी मनुष्य जीवित हैं!

विशेषज्ञ कहते हैं, यह जीवन प्रेत का जीवन है। अथवा क्षय का रोगी दिन गिन रहा है। निश्चेष्ट आत्म-समर्पण करने के बाद तिल-तिल मृत्यु की ओर बढ़ रहा है।

यहाँ प्रजा समिति चलेगी? संचय संबलहीन किसानों के सामने खेती का समय—कठिन ग्रीष्म और दुर्योगभरी वर्षा

है ! आँखें श्रीहरि की गुदाम में लगी धान की राशियाँ देख रही हैं। यहाँ प्रजासमिति चलेगी—नहीं, किसी की रक्षा कर सकेगी ? समिति का प्रथम और प्रत्यक्ष संघर्ष श्रीहरि के साथ होगा। होगा क्यों, हो गया है।

सामने चौतरे पर उचिड़े सो रहा है !

यह इस गाँव की भावी पीढ़ी है ! निस्व, रिक्त, गृहहीन, स्वजनहीन, आत्मसर्वस्वहीन। जिस नीड़ की ममता से मनुष्य श्री अर्थात् लक्ष्मी की तपस्या करता है, उसे प्राप्त करना चाहता है— इसका वह नीड़ ही निर्मूल हो गया है।

पद्म की डाँट के झंकार से यतीन का ध्यान भंग हुआ। वह षष्ठी पूजा की थाली हाथ में लिए और झंकार के साथ बोलती हुई सामने आई। वह स्नान कर चुकी है, और एक पुरानी शुद्ध धोती पहने है। वह बोली—"अच्छे लड़के हो तुम। पचास बार जंजीर खड़काई—सुन नहीं पड़ी ? चलो, यही गनीमत है कि माँगोपाँग सब चले गये हैं। लो तिलक लगा लो ! लो, उठो !"

यतीन हँसकर खड़ा हो गया। शुचिस्मिता पद्म ने उसके मस्तक पर दही और हल्दी का टीका लगा दिया और बोली—"तुम्हारी माँ क्या आज दरवाजे की आड़ से टीका करती ?"

टीका लगा कर पद्म ने पुकारा—"उचिङ्गे ! उचिङ्गे ! आ ! देख तो, लड़के की नींद देख ! ओ उचिङ्गे !"

उचिंड़े एक नींद सो चुका था, भूख भी लग आई थी, दो-तीन बार पुकारते ही उठ बैठा।

"उठ, खड़ा हो, टीका लगवा। उठ, बेटा, उठ!"

उचिंड़े ने खड़े होकर हाथ फैलाया—'परसाद, परसाद दो—!"

पद्म हँसी—"पहले टीका तो लगवा!"

उचिंड़े ने सीधे लड़के की तरह मस्तक बढ़ाया, पद्म ने टीका लगाया।

यतीन बोला—"प्रणाम कर उचिंड़े। प्रणाम किया जाता है। ठहर मैं भी...।"

"राम राम! मुझे तुम नरक में डाले बिना न मानोगे।"

पद्म उचिंड़े को गोद में उठा कर और दौड़ कर ही घर के भीतर चली गई।

× × × × ×

चैत की दोपहर है। अलसाया हुआ यतीन तख़्त पर लेटा है। चारों ओर धूप फैली है। हवा गरम है और अस्तव्यस्त रूप से तेज़ी के साथ चल रही है। बट, अश्वथ और शिरीष आदि के बड़े बड़े वृक्ष कोंपल जैसे नये पत्तों से लदे हैं। गरमी से पत्ते कुम्हला गये हैं। उस दिन की वर्षा के बाद खेतों में हल चलने लगे हैं, किसान हल-बैल लेकर घर लौट रहे हैं। उनके बदन पसीने से तर हैं और भीगा हुआ काला चमड़ा धूप में चमक रहा है, जैसे तेल से चुपड़ा हुआ लोटा चमकता है। पासियों

और चमारों की औरतें गोबर, कंडे और लकड़ी बीनती फिर रही हैं। सामने रास्ते के किनारे शिरीष का एक वृक्ष है, फूलों से लदी एक लता उससे लिपटी है। उसके चारों ओर मधु-मक्खियों और भौंरों की गुंजार एक मधुर और सुरीले संगीत का जाल-सा बुनती जान पड़ती है। कुछ मधु लोभी पंखी डालों पर फुदक रहे हैं। दूर कहीं कोकिल बोल रही है। आकाश में जंगली तोतों के छोटे-छोटे गोल उड़ रहे हैं, उनकी दृष्टि खेतों में तिलों पर लगी है। रंगबिरंगी तितलियाँ देवलोक के वायु-ताड़ित पुष्पों की भाँति उड़ रही हैं।

गंध, गीत और वर्णछटा से भरे गाँव का यह एक अनिंद्य रूप है। इस गंध, गीत और वर्णछटा में कवि के काव्य जैसी मादकता है और है अँगुलियों से बुलाने का संकेत। इस संकेत ने ही शायद यतीन को उठा कर बिठा दिया और वह मोहग्रस्त की भांति जंगल में घुसा। पास के ही किसी पेड़ पर एक पक्षी बोल रहा है। उसकी बोली सुन्दर ही नहीं है, उसमें संगीत की एक समग्रता भी है; जैसे वह किसी गीत का एक चरण गा रहा है। यतीन सावधानी के साथ उसे ढूँढ़ने लगा। जंगल में कुछ बढ़ते ही उसे एक अपूर्व और मधुर गंध मिली। शब्द और गंध का उत्स ढूँढ़ने के लिए वह अग्रसर हुआ। आश्चर्य! पंखी और फूल क्या उसके साथ आँखमिचोली खेल रहे हैं? वह जितना आगे बढ़ता है, वे उतना ही पीछे हटते जाते हैं। ऐसा जान पड़ता है कि बस यही पेड़ है—परन्तु उसके पास

पहुँचते ही पंखी चुप हो जाता है और फूल छिप जाते हैं। फिर कहीं दूर से आवाज़ आती है, गंध भी हल्की हो जाती है, जान पड़ता है दूर से आ रही है। मोहग्रस्त की भांति यतीन और आगे बढ़ा।

"बाबू!···" किसने बुलाया? नारी का कण्ठ जान पड़ता है!

यतीन ने देखा—एक पेड़ की जड़ पर दुर्गा बैठी है।

"दुर्गा?"

"हाँ।···" कसी हुई धोती पहने और आँचल कमर में खोंसे दुर्गा पेड़ के नीचे बैठी न जाने क्या बिन रही है।

"यह क्या है? क्या बिन रही हो?"

दुर्गा ने एक अंजलि उसके हाथों में डाल दी! स्फटिक जैसे सफेद और टटके ये क्या हैं? इन्हीं से तो वह मदिर गंध आ रही है। इन्हीं की एक माला दुर्गा के गले में पड़ी है। विलासिनी तरुणी की ओर यतीन अवाक् होकर देखता रहा। शरीर की गटन में, आँख और मुख के लावण्य में, रूखे बालों में—सर्वांग में एक अद्भुत् रूप है।

दुर्गा ने मुस्करा कर कहा—"मऊ फूल!"

"मऊ-फूल?"

"महुआ फूल, बाबू, हम मऊ फूल कहते हैं!"

यतीन ने फूल सूंघे—कैसी उग्र मदिर गंध है। सिर न जाने कैसा हो जाता है—शरीर में सिहरन उठती है।

"बिन रही हूँ, गाय खायगी—दूध बढ़ेगा। और···" दुर्गा हँसी।

"और क्या होगा ?"

"और—वह आपके सुनने लायक नहीं है।"

"क्यों, हर्ज क्या है ?"

"और हम शराब बनाते हैं।"

"शराब ?"

"हाँ।···" मुँह फेर कर दुर्गा हँसी; फिर बोली—"कच्चे भी खाते हैं, बड़े मीठे हैं।"

यतीन ने झट से एक फूल मुँह में डाला। वाह ! खूब मीठा है: परन्तु मिठाई में भी वही उग्र मादकता है। उसने एक और खाया। फिर एक और। कुछ क्षणों में ही उसके कान गरम-से होने लगे। निश्वास उग्र उत्तप्त हो गई। किन्तु अपूर्व है यह मधु-रस।

दुर्गा ने सहसा चौंक कर कहा—"जान पड़ता है, मुहल्ले में कोई गड़बड़ हो गई है ! तभी तो ! ···" उसने झटपट टोकरी उठा कर कांख में दबाई और बोली—"जाती हूँ बाबू, देखूँ मुहल्ले में क्या हुआ।"

चलते-चलते वह घूम कर खड़ी हुई और हँस कर बोली—"मऊ और न खाना, मादक होगा ?"

"क्या होगा ?"

"मादक। नशा—नशा ···" दुर्गा चली गई।

नशा ! इसीलिए उसका सिर झनझना रहा है। शरीर में गरमी जान पड़ती है, उत्ताप बढ़ गया है।

"बाबू ! बाबू !"

अब कौन बुलाता है ? कौन ? जंगल में उंचिड़े घुसता दीख पड़ा।

"गाँव में गड़बड़ हो गई है, बाबू। कालू सेख चमारों के जानवर पकड़ ले गया।"

"पकड़ ले गया ? कालू सेख कौन है ? क्यों ले गया ?"

"कालू सेख—छिरू घोष का सिपाही। चलो न—तुम को सब बुला रहे हैं।"

यतीन चटपट लौटा। उंचिड़े पेड़ पर चढ़ गया और सब से ऊँची डाल पर बैठ कर महुवे खाने लगा।

श्रीहरि भूला नहीं, भूलने की बात भी नहीं है। गाँव की शासन-शृंखला के लिए लोकतः और धर्मतः वही उत्तरदायी है और इस उत्तरदायित्व को प्रतिपल उपलब्ध करता है—अनुभव करता है। आपत्ति-विपत्ति में वह गांव वालों की रक्षा करेगा और शृंखला भंग करने पर उन्हें दण्ड देगा, विद्रोह को दृढ़ता के साथ दबा देगा। यह उसका अधिकार है। जब वह अत्याचारी था तब उसे ऐसा करने का अधिकार न था, यह वह मानता है। परन्तु अब वह कोई अन्याय नहीं करता। आज सम्पूर्ण गाँव उसकी कर्तव्यपरायणता और धर्मपरायणता के परिचय से महिमा-मण्डित हो रहा है; चण्डी-मण्डप, षष्ठी-

तला, कुआँ और स्कूल आदि उसने अपने आप बनवा दिए हैं। रास्ते का नाला सदा से एक मुसीबत रहा है; इस विघ्न को दूर करने का उद्योग भी वह स्वयं ही कर रहा है। शिव-कालीपुर की सम्पूर्ण व्यवस्था को उसने बड़े यत्न के साथ सौष्ठव प्रदान किया है। इस सुव्यवस्था को अव्यवस्था में परिणत करने वाले विद्रोह का दमन करना उसका अधिकार ही नहीं, कर्तव्य भी है। परन्तु प्रारम्भ में ही वह कठोर दण्ड नहीं देना चाहता। चण्डी-मण्डप छाने के लिए जो मजूरी मांगते हैं, कहते हैं, मण्डप ज़मींदार का है, हम बिना मजूरी लिए काम क्यों करें, उन्हें वह बता देना चाहता है कि ज़मींदार की कितनी चीज़ें वे बिना मूल्य दिए ही भोग कर रहे हैं। वे थोड़े से ताड़ के पत्ते ही नहीं लेते, ज़मींदार के खास ऊसर में वे अपने पशु भी चराते हैं और गांव भर में यही गो-चर है। इसी लिए उसने नये सिपाही कालू सेख को हुक्म दिया है कि ज़मींदार-सरकार के बांध पर या ऊसर में चमारों के जानवर जावें तो उन्हें पकड़ कर कंकना के कांजी-हौस में पहुचा दो। नया सिपाही कालू सेख मालिक को अपना काम दिखाने के लिए बेचैन है, इस के सिवा इस काम में कुछ लाभ भी है, कांजीहौस वाले फी जानवर कुछ पुरस्कार भी देते हैं। उस ने जमीन तक झुक कर सलाम किया और उसी समय आज्ञा का पालन करने के लिए चला गया। भूपाल ने उसे बता दिया कि कौन से पशु श्रीहरि के अनुगत व्यक्तियों

के हैं, उन को छोड़ कर और सब वह कांजीहौस ले गया।

श्रीहरि के शासन-दण्ड का यह दूसरा चरण है। इस से भी लोग न समझेंगे तो और भी हैं। प्रारम्भ में ही वह कठोर दण्ड नहीं देना चाहता। अधर्म वह न करेगा। लक्ष्मी ने इस पर कृपा की है, यह उस के पूर्व जन्म के किसी पुण्य का फल है, इस का दुरुपयोग वह न करेगा। दण्ड का विधान करते समय भी उसे यह नहीं भूला कि दान के बराबर पुण्य नहीं है और दया के बराबर धर्म नहीं है। उसकी इच्छा थी कि जानवरों को अपने ही यहाँ बांध ले और पासी-चमार जब आकर रोएँ-पीटें तब उन का अन्याय अच्छी तरह समझा दे। यदि वह ऐसा करता तो गरीबों को कांजीहौस का महसूल न देना पड़ता। महसूल भी कम नहीं लगता, फी जानवर चार आने के हिसाब से चालिस-पचास जानवरों के दस-बारह रुपये लगेंगे। और थोड़ी सी भी देर हो गई तो एक आने के हिसाब से खुराकी लग जायगी यद्यपि खुराकी के नाम पर वे एक तिनका भी नहीं देते—जानवरों को भूखा रखते हैं। खुराकी के हिसाब में ढाई-तीन रुपये लग जायेंगे। लेकिन वह क्या करे? कानून ऐसा ही है। गैर-कानूनी काम करता तो देबू और जगन उसे मुसीबत में डालने के लिए शायद दरख्वास्त दे देते।.....चण्डी मण्डप में तकिए के सहारे लेटा हुआ वह हुक्का पी रहा था और ग्रामहितैषियों का व्यर्थ विक्रम देख रहा था। परन्तु इतनी जल्दी खबर किस ने दी है?

खबर ताराचरण नाई ने दी है। कालू सेख ने जब जानवरों को पकड़ा तब चराने वाले लड़के उसके पैरों पर गिर पड़े—"अजी, सेख जी ! तुम्हारे पैर पड़ते हैं, आज छोड़ दो—आज माफ कर दो !"

सेख को गुस्सा नहीं आया, गुस्सा आने की बात भी न थी। परन्तु लड़कों की हाय हाय से छुट्टी पाने के लिए उसने कृत्रिम क्रोध के साथ एक गहरी डाँट बताई—"भागो यहाँ से !"

ताराचरण भण्डारी उस समय नदी के बाँध पर था। वह खड़ा हो गया। लड़के सेख की डपट से डर कर कुछ पीछे तो हटे परन्तु जानवरों का साथ न छोड़ सके। दो-एक ने रोना भी शुरू कर दिया—।

कालू बोला—"अरे उल्लुओ, गधो, घर जाओ, और उन से कहो। रोओगे तो पिटोगे।"

लड़के उसकी बात नहीं समझे, जानवरों के मोह से वे उनके पीछे ही चलने लगे। उनका रुदन भी न रुका—"हाय राम, अब हम क्या करेंगे ? हाय क्या होगा !"

सेख ने उन्हें फिर डाँटा—"भागो—भागो-नहीं तो—"

लड़के कुछ पीछे हट गये लेकिन सेख के घूमते ही फिर साथ हो गए।

ताराचरण ने सब कुछ समझ लिया। कल श्रीहरि के पाँव का नाखून काटते हुए ही उसे इस का आभास मिला था। वह झटपट गाँव लौटा और देबू की खिड़की के पास होशियारी के

साथ खड़ा होकर समाचार दे गया। बोला—"जल्दी व्यवस्था करो, नहीं एक आना खुराकी लग जायगी और वह भी ढाई-तीन रुपये होगी। छै बज गये तो आज छोड़ेंगे भी नहीं। कल दो आने ज्यादा लगेंगे।"

खिड़की की तरफ से वह चला भी गया। वह जानता था कि श्रीहरि घोष चण्डी मण्डप में डटे होंगे। पण्डित के घर से निकलते देखकर मेरे ऊपर सन्देह करेंगे। पेड़ों की आड़ से उसने चण्डी मण्डप की तरफ जाकर देखा तो उसका अनुमान ठीक निकला। उसके ओंठों पर कौतुकपूर्ण मुस्कान की एक झलक आई।

× × × × ×

देबू थोड़ी देर तक भूमि की ओर देखता रहा। कई दिन से वह जिस चोट की आशंका कर रहा था, वह आज लग ही गई है। यह भी उसने कभी अस्वीकार नहीं किया कि चोट का उत्तरदायित्व मेरे ही ऊपर होगा। चोट लगते ही अपना सिर बढ़ाकर गरीबों की रक्षा करने के लिए वह प्रस्तुत ही था।

गरीबों के पास पैसा कहाँ से आयेगा? ताराचरण कह गया है, एक आना ज्यादा लग जायगा—ढाई तीन रुपये बढ़ जायेंगे। फिर कम से कम चालीस या पचास जानवर होंगे। उसने मन ही मन में हिसाब जोड़ा—दस से लगाकर पन्द्रह रुपये तक जुरमाना होगा। इतने रुपये वे कहाँ से देंगे? जमीन नहीं, जायदाद नहीं,—है तो वही टूटा घर और के

जानवर। गायों का दूध बेंचते हैं, गोबर से कंडे बेंचते हैं, गाय-बकरी के बच्चे बेंचते हैं—यही उनकी सम्पदा है। इछु सेख रुपये दे सकता है परन्तु एक के छै वसूल करेगा। इसके सिवा उनकी इस विपत्ति का उत्तरदायी मैं ही हूँ। वह जानता है कि उस दिन ताड़-पत्रों के सम्बन्ध में श्रीहरि के साथ उनका समझौता हो जाता, वे दब जाते और श्रीहरि छोड़ देता। परन्तु मैं ने ही उन्हें उठा दिया! अन्याय को अस्वीकार करने के लिए मैं ने भी प्रेरित किया था। आज अपने अवसर पर न्याय को—धर्म को शिरोधार्य न करने से बुरा ही होगा।

सोच-विचार कर देबू सिर उठा कर खड़ा हो गया। पुकारा—"बिलू!"

ताराचरण की आवाज़ सुनकर बिलू भी आ गई थी और आड़ में खड़ी हो गई थी। ताराचरण के जाने के बाद भी वह वहीं खड़ी रही। वह भी गरीबों की दशा पर ही सोच रही थी, अहा। बिचारे गरीब, उनके ऊपर ऐसा अत्याचार! इस स्तब्ध दोपहर में चमरैहा से औरतों के रोने की आवाज़ आ रही है। आवाज़ सुन कर बिलू भी रोने लगी। देबू की पुकार सुनकर उसने आँसू पोंछे और सामने आई।

देबू ने बिलू को नीचे से ऊपर तक देखा। कहीं सोने का एक टुकड़ा भी नहीं है। किसानों के घर में सोने के गहने होते भी नहीं, हुए भी तो नाक की कील, कान के फूल, गले का हार और हाथ की चूड़ियाँ—बिलू के वे सब भी

चले गये हैं।

बिलू बोली—"क्या कहते हो ?"

"अब कुछ नहीं है ?"

"क्या ?"

"ऐसा कुछ जिसे रख कर पन्द्रह रुपये मिल जायें ?"

बिलू ने क्षण भर कुछ सोचा, शायद मन में ही अपने भण्डार की तलाशी ली और फिर भीतर जाकर दो बालियां ले आई।

देबू का पैर पीछे हट गया—"मुन्ना की बाली ?"

"हाँ"

बालियाँ बिलू के बाप ने बनवाई हैं। देबू की अनुपस्थिति में बहुत आवश्यकता पड़ने पर भी बिलू इन्हें हस्तांतरित नहीं कर सकी।

बिलू बोली—"लो !"

"मुन्ना की बालियाँ ले लूँ ?"

"हाँ, ले लो, फिर बनवा देना, नहीं छुड़ा देना।"

"न छुड़ा पाया—न बनवा पाया तो ?"

"तो मुन्ना न पहनेगा।"

देबू ने दुविधा न की, बाली लेकर और कुरता पहन कर बाहर निकल गया।

जानवरों को छुड़ा कर वह शाम को लौटा ! आधा दिन धूप में दौड़ने से कपड़े पसीने से भीग गये हैं। जानवरों के

पैरों से उड़ी धूल ने बदन पर कीचड़ जमा दिया है। यतीन के यहां बैठक जम गई थी।

सबने एक साथ पूछा—"क्या हुआ ?"

"जानवर आ गये।".....देबू तृप्ति के साथ हँसा।

"क्या लगा ?"

प्रश्न का उत्तर न देकर देबू ने कहा—"यतीन बाबू !"

"कहिये।"

"आपसे एक बात कहनी है।"

"ठहरिये, आप बहुत थक गये हैं। चाय बनवा दूँ।"

"नहीं, मैं घर जाऊँगा। बात कह दूँ।"

यतीन के साथ देबू कमरे में गया।

देबू बोला—"प्रजासमिति का काम मैं करूँगा।"

"ठहरिये, आप चाय पीकर जायें।"

घर के भीतर जाकर उसने पुकारा—"माँ जी, माँ जी !"

किसी ने उत्तर न दिया।

पद्म घर में नहीं है, तब का गया उचिड़े अब तक नहीं लौटा, उसे ढूँढ़ने गई है।

यतीन ने स्वयं पानी चढ़ा दिया।

—तेइस—

हरेन घोषाल आज भीषण रूप से उत्तेजित हो रहा है। उसने गाँव भर में घोषणा कर दी है—प्रजा समिति की मीटिंग है ! प्रजा समिति की मीटिंग ! स्थान का उल्लेख करना वह भूल

गया। निश्चय हुआ था कि मीटिंग हरिजन बस्ती के धर्मराज-तला में होगी, परन्तु घोषाल की भूल से लोग नजरबंदी यतीन की बैठक के सामने जमा हुए।

हरेन बोला--"फिर यहीं सही। यहाँ से वहाँ तक जाना, फिर यहां जरूरत हुई तो चाय भी बन जायगी और कुरसी टेबल भी है। यही कर लो।"

यतीन की कुरसी और टेबल उठा कर उसने मीटिंग के तरीके से सजा भी दिया। फूलों की दो मालाएँ भी तैयार कर डालीं। इस में उस से भूल न हुई।

मीटिंग में आदमी काफी आ गये। हरिजन बस्ती से तो सब आये ही, गांव के किसान भी जमा हुए। जानवरों को कांजीहौस भेजने की घटना ने आज सब को उत्तेजित कर दिया था। मयूराक्षी का बांध ज़मींदार की खास जमीन में है लेकिन बांध प्रजा ने बनाया है। यहाँ सदा से पशु चरते आ रहे हैं। गाँव के ऊसर भी चिरन्तन काल से गोचर के रूप में व्यवहार किए जाते हैं। आज इस बात ने सब को बेचैन कर दिया है कि प्रजा को वहाँ पशु चराने का अधिकार नहीं है। आज यह अन्याय मूलक कानून चमारों पर लागू किया गया है, कल सब पर होगा।...चमारों और पासियों आदि ने इतनी बातें नहीं सोची। उन्होंने सुना है कि पण्डित जी आज कमेटी के अधिकारी बनेंगे। इतना सुनकर ही वे सकृतज्ञ चित्त लेकर आ गये हैं। पंडित ने आज उन के लिए जो कुछ

किया है वह उनकी कल्पना से भी परे है, कोई उनके लिए इतना नहीं कर सकता ! वे कृतज्ञ होकर आये हैं, निर्भय होकर आये हैं।...

हरिजन बस्ती में आज पण्डित की ही चर्चा है। दुर्गा की माँ तक मुक्त-कण्ठ से आशीर्वाद दे रही है।—सिर के बालों जित्ती परमायु होगी, सोने की दवात-कलम बनेगी, बेटे की गोद में बेटा खेलेगा, लछमी छलकती फिरेगी। हीरा है पंडित, हीरा !.....

शाम हो गई थी। दुर्गा अपने कमरे में तकिए पर छाती रखे लेटी थी और खिड़की से बाहर की ओर देख रही थी। वह भी यही सोच रही थी।—पंडित हीरा हैं ! बिलू दीदी भाग्यवती हैं ! आज वह सुकुमार नज़रबन्दी बाबू भी पंडित के सामने फीका पड़ गया है। दुर्गा का जी चाहा कि वह भी मीटिंग में जाय और आड़ में खड़ी होकर देख आये कि सबके बीच में पंडित कैसे सिर उठाये बैठे हैं। फिर उसने सोचा—नहीं, बैठक खतम हो तो वह बिलू दीदी के घर जायगी और पंडित जीजा से थोड़ी-सी दिल्लगी कर आयेगी। वह सोचने लगी कि बात आरम्भ कैसे करेगी !

उधर नज़रबन्दी से कहने लायक बहुत-सी बातें उसके मन में चक्कर लगा रही हैं।

"मऊ फूल की मिठास कैसी थी, बाबू ?"

दुर्गा अपने आप मुस्कराई। बाबू की आँखों के कोने में

लालच की झलक उसने स्पष्ट देख ली थी।...

परन्तु पण्डित से क्या कहेगी ?...

कमरे के सामने अमर कुण्ड का मैदान है, उसके बाद नदी का बाँध:—बाँध पर एक रोशनी चल रही है। थोड़ी देर में ही वह मैदान में आ गई।...

पंडित गंभीर आदमी है।...उसने एक लम्बी साँस ली। फिर आनंद से चंचल हो गई। बात उसे मिल गई है।...

"जीजा, तुम भाई एक पाठशाला खोलो।"

"कौन पढ़ेगा ?"

"कोई न पढ़े,—मैं पढ़ूँगी। लिखूँगी-पढ़ूँगी तो हूँगी नवाब...."

ओह, रोशनी तो गांव की ओर ही आ रही है। हाथ में लटकती हुई लालटेन की रोशनी में आदमियों के चलते हुए पैर साफ दीख पड़ते हैं। कौन है ? कौन हैं वे ? एक आदमी लालटेन लिए है, एक उसके पीछे है, एक नहीं दो हैं। चमरैहा के पास से ही रास्ता है। आने वाले निकट आगये हैं।

यह क्या ! लालटेन भूपाल चौकीदार के हाथ में है ! उसके पीछे थाने के जमादार हैं और उनके पीछे एक सिपाही। छिरूपाल के घर जा रहे होंगे। छिरूपाल के निमन्त्रण पर रात को जमादार का आगमन कोई नई बात तो नहीं है। पहले ऐसे मौके पर दुर्गा को भी न्यौता मिलता था। किन्तु जमादार के साथ सिपाही तो कभी नहीं आया। जमादार भी आज ऐसी

पोशाक में क्यों है ? वह तो पूरी बरदी डाटे है। सिपाही के सिर पर भी पगड़ी है। और श्रीहरि के न्यौते की महफिल भी रात के पहले पहर में नहीं, आधी रात में बारह बजे के आस-पास जमती है। दुर्गा चौंकी। अकस्मात् उसे नजरबंदी और पंडित जीजा का ख्याल आगया। क्यों आगया—वह भी न समझी। ख्याल आते ही वह कमरे से निकली और रास्ते में पहुँच गई। शुक्ला छठ का चंद्रमा अस्त हो गया है। अँधेरे में पेड़ों की आड़ लेकर वह उनके पीछे चली !

चण्डीमण्डप में आज अंधेरा है। छिरूपाल आज यहाँ नहीं बैठा। पाल की···पाल नहीं अब घोष बाबू हो गये हैं—घोष बाबू की गुदाम के बैठक में रोशनी हो रही है। भूपाल के हाथ की रोशनी ने भी वहीं प्रवेश किया। निमंत्रण ही है। चण्डीमण्डप देवस्थान है—वहाँ ऐसी बैठकें नहीं जम सकती। परन्तु श्रीहरि आजकल—।···दुर्गा हँसे बिना न रह सकी।

कोई कोई पशु रात में रस्सी तुड़ाकर भाग जाते हैं और खेतों में चर कर लौटते हैं। जिस पशु को एक बार खड़ा खेत चरने का स्वाद मिल गया है उसे जंजीर से भी बाँध दिया जाय तब भी वह रुक नहीं सकता। खूँटा उखाड़ कर पहुँचेगा। छिरूपाल आजकल साधु हो गया है ! इसी लिए वह हँसी। परन्तु नई औरत कौन है ? कोई तो होगी ही, कौन है ? दुर्गा कौतूहल संवरण न कर सकी। श्रीहरि के मकान की अगली गली से वह अच्छी तरह परिचित है, कई बार रात के अंधेरे में

इन्हीं रास्तों से वह लाई गई है। चूड़ियाँ हाथ के ऊपर चढ़ाकर वह श्रीहरि के कमरे के पीछे पहुँच गई!

जमादार कह रहा था—"दो साल के लिए भेज दूँगा"

श्रीहरि बोला—"फिर चलिए—मीटिंग हो रही है। जगन डाक्टर, साला हरेन घोष, गिरीश बढ़ई—अने लुहार—सब हैं। देबू और नजरबंदी को घेरे हैं! उठिए फिर—!"

जमादार बोला—"चाय जल्दी मँगवाओ! मैं ने तो अब तक चाय भी नहीं पी।"

श्रीहरि ने खबर भेजी थी कि नजरबंदी के यहाँ प्रजा-समिति की मीटिंग हो रही है। जमादार साहब के पास सलाम भेजा गया था और सलामी का इशारा दिया गया था। जमादार को स्वयं भी कुछ आशा थी। नजरबंदी को रंगे हाथों षड्यंत्र या कानून भंग के अपराध में पकड़ कर चालान करने से नौकरी में उन्नति हो जायगी, इनाम मिल जायगा, नहीं तो ऊपर वाले खुश तो हो ही जायेंगे। सलामी घाते में मिलेगी और सलाम की गिनती ही नहीं।

दुर्गा सिहरी। चुपचाप रास्ते में उतर आई और सोचने लगी फिर चूड़ियां ढीली कर लीं और उन्हें अच्छी तरह खनकाती हुई चली। उसी समय अंदर से पूछा गया—"कौन? कौन जाता है?"

"मैं"

"मैं कौन?"

"मैं चमारों की दुर्गा दासी।"

"दुर्गा! अरे-अरे- सुन-सुन!"

"नहीं"

भूपाल ने बाहर आकर कहा—"जमादार साहब बुलाते हैं।"

दुर्गा मुस्कराती हुई भीतर गई—"हाय राम! मैं कहूं, आवाज़ तो पहचानी जान पड़ती है लेकिन पहचान न पाई। जमादार बाबू हैं! मेरे बड़े भाग—आज किसका मुँह देख कर उठी थी।"

जमादार ने हँस कर कहा—"मामला क्या है? आजकल सुना है, प्रेम-सागर में गोते खा रही है। पहले अने लुहार—अब सुना है नजरबंदी बाबू!"

दुर्गा हँसकर बोली—"बताया है न आपके दोस्त—पाल ने!"···फिर वह बोली—"अब शायद गुमाश्ता जी कहना पड़ेगा—गुमाश्ता जी ने झूठ कहा है. गुस्से में कहा है—"

जमादार ने टोका—"गुस्से में, गुस्सा तो आना ही हुआ। तू ने पुरानी यारी क्यों तोड़ी?"

दुर्गा बोली—"आग लगा कर सारी चमरैहा जला डाली आप के मीत ने। घर पर डालने के लिए टीन के रुपये मांगे तो मुझे अँगूठा दिखा दिया आपके यार ने। पूछ लीजिए, बैठे तो हैं।"

श्रीहरि के मुँह का रंग उड़ गया। जमादार ने उनकी ओर देख कर कहा—"दुर्गा क्या कहती है, पाल बाबू?···" जमादार

का कण्ठस्वर क्षण भर में बदल गया।

दुर्गा ने समझ लिया कि समझौते का समय आ गया। वह बोली—"मैं घाट पर हो आऊँ जमादार बाबू।"

जमादार ने दुर्गा की बात का उत्तर न दिया, वह स्थिर दृष्टि से श्रीहरि की ओर देखता रहा। इस दृष्टि का अर्थ दुर्गा अच्छी तरह समझती है। यह जुरमाना वसूल करने का पूर्व राग है और इस पर्व के समाप्त होने में समय लगेगा! घाट पर जाने के लिए बाहर निकल कर दुर्गा फिर घूमी और शरीर से लोल तरंग उठाकर बोली—"आज माल खिलाना पड़ेगा दारोगा बाबू—पक्का माल!···" और फिर घाट की ओर चली गई।

श्रीहरि की खिड़की के पास जो ताल है उसके किनारे जंगल से ढके हैं। बाँस की कोठियों और तेंतुल एवं शिरीष आदि बड़े-बड़े पेड़ों का ऐसा झुरमुट हो गया है कि दिन में भी धूप नहीं पहुँचती। जमीन पर कंटीली झाड़ियों की भर-मार है और उनके बीच में कितनी ही बांबियां हैं। कहते हैं, हैं इन बांबियों में बड़े-बड़े सांप रहते हैं। श्रीहरि का ताल साँपों के लिए विख्यात है, विशेषतः चन्द्रबोड़ा साँपों के लिए। शाम होते ही वहाँ चन्द्रबोड़ा की सीटी जैसी आवाज सुन पड़ती है। घाट पर पहुँच कर दुर्गा पानी में न उतरी अपितु उसी जंगल में घुस गई! निशाचरी की भांति निःशंक और निर्भय चाल से वह जंगल पार के उधर के रास्ते पर पहुँच गई। इधर से अनिरुद्ध का घर निकट है। बैठक की रोशनी

भी दीख पड़ती है। दुर्गा दौड़ कर छाया चित्र की भांति अनिरुद्ध के पिछवाड़े की खिड़की में घुस गई।

प्रजासमिति के सभापति-परिवर्तन का कार्य समाप्त हो चुका है। अनिरुद्ध चाय बांट रहा है। जगन डाक्टर सोच रहा था कि विदाई-सभापति के रूप में वह एक गरमागरम भाषण देगा। देबू नये उत्तरदायित्व को निभाने की चिन्ता में था। सहसा अनिरुद्ध की खिड़की में एक छाया जैसी चकित मूर्ति को घुसते देख कर सब चौंके। सिर से पैर तक सफेद कपड़े से ढकी, द्रुत और हल्की पगध्वनि, आभूषणों की खनक! कौन है, कौन गई?

अनिरुद्ध झट घर में घुसा। पद्म है? इस तरह कहां से आ रही है? कहाँ गई थी?

"कमकार!"

दुर्गा! दुर्गा की आवाज है! क्रोध और विरक्ति से अधीर होकर अनिरुद्ध उसके सामने खड़ा हो गया।

दुर्गा ने संक्षेप में समाचार दिया और जैसे आई थी वैसी ही द्रुतगति से आभूषणों की मधुर खनक के साथ विलीयमान् रहस्य की भांति अन्तर्ध्यान हो गई। दौड़ कर वह फिर उसी जंगल में घुस गई।

घाट पर हाथ-पैर धोकर दुर्गा जब श्रीहरि के कमरे में गई तब उसे ऐसा जान पड़ा कि चमरैहा में आग लगाने का मामला निपट गया है। जमादार की आँखें प्रसन्न हैं। उसने दुर्गा की

ओर देख कर पूछा—"हाँफती क्यों है ?"

आतंक से आँखें फैला कर दुर्गा ने उत्तर दिया—"साँप !"

"साँप ! कहाँ ?"

"घाट पर। बहुत बड़ा था। चन्द्रबोड़ा। यह देखिए जमादार बाबू ···" उसने अपना दाहिना पैर रोशनी के सामने रखा। एक स्थान से ताजा खून निकल रहा था।

जमादार और श्रीहरि दोनों ही आतंकित हो गये। "सर्वनाश !" जमादार बोला—"बाँधो, बाँधो ! रस्सी, रस्सी ! पाल रस्सी लाओ !"

रस्सी लेने के लिए भीतर जाते-जाते श्रीहरि ने विरक्ति के साथ कहा—"क्या मुसीबत है ! यह आफत कहाँ से आ गई !" रस्सी लाकर और भूपाल के हाथ में देकर वह बोला—"बाँध ! जमादार बाबू, जल्दी चलिए उधर से निपट आवें।"

दुर्गा ने विवर्ण मुख और करुण दृष्टि से जमादार की ओर देख कर कहा—"अब क्या होगा, जमादार बाबू ?···" उसकी आँखें छलछला आईं।

जमादार ने आश्वासन दिया—"कुछ नहीं, कुछ नहीं !" और भूपाल के हाथ से रस्सी लेकर स्वयं पैर बाँधने लगे। भूपाल से बोले—"तू दौड़ कर थाने जा और लेक्सिन ले आ। कोई ओझा हो तो उसे भी बुला।"

दुर्गा बोली—"मुझे घर भेज दो जमादार बाबू। मैं अपनी माँ की गोद में मरूँगी !"

श्रीहरि बोला—"यह ठीक है। भूपाल उसे घर पहुँचा दे। दीनू ओझा और गडांची को बुला ले। दौड़ कर जावे और लौट आवे। चलिए जमादार जी !"

यतीन ने जमादार का स्वागत किया—बोला—"छोटे दारोगा ? इतनी रात में ?"

जमादार ने थोड़ी देर चुप रह कर उत्तर दिया—"इधर दूसरे गाँव गया था। सोचा, आपकी महफिल देखता चलूँ। किन्तु कहाँ, यहाँ तो कोई नहीं है !"

यतीन ने हँस कर कहा—"आप आये है—बाप महाशय आये हैं, फिर महफिल लग जाय। ओ, उचिड़ चाय का पानी तो चढ़ा दे !"

दुर्गा को घर पहुँचा कर भूपाल दवा लेने और ओझा बुलाने चला गया। दुर्गा की माँ रोने-पीटने लगी। उसका चीत्कार सुनकर मुहल्ले वाले जमा हो गये। पातू की वह सकरुण ममता के साथ बार-बार पूछने लगी—"कौन साँप था ? साप देखा था तुमने ?"

दुर्गा ने अत्यन्त करुण स्वर में कहा—"भीड़ न लगाओ तुम लोग !" "और फिर छटपटाने लगी। सतीश इस मुहल्ले में मातबर माना जाता है। दवा-दारू भी जानता है। साँप की दो-एक दवाएँ भी देता है। वह दौड़ कर बाहर गया दवा लेने। थोड़ी देर में एक जड़ लेकर लौटा और दुर्गा से बोला—"इसे चबाओ तो, कड़वी लगती है या मीठी ?"

दुर्गा ने जड़ मुँह में दबाई और तुरंत थूक दी—"थू ! थू ! थू !"

सतीश ने संतोष के साथ कहा—"कड़वी लगती है तो फिर कोई डर नहीं।"

धूल में लोटती-लोटती दुर्गा बोली—"मिठास से जी मतलाता है। अरे राम रे—वो कौन आता है—ओझा है, बुलाओ न !"

ओझा नहीं, जगन डाक्टर, हरेन घोषाल, अनिरुद्ध और कुछ और आदमी आये।

घोष चीखा—"हट जाओ, हट जाओ, हट जाओ ! सब हट जाओ।"

जगन ने झटपट दुर्गा का पैर खींच कर देखा—"हूँ, दाँत का दाग है।"

पातू की आँखों से आँसू बहने लगे, वह बोला—"अब क्या होगा, डाक्टर जी ?"

जेब से छुरी निकाल कर डाक्टर बोला—"ठहरो, दवा देता हूँ। अनिरुद्ध यह परमाग्नेट का दाना पकड़ो। मैं चीरा लगाता हूँ, तुम उसमें भर देना।"

दुर्गा ने पैर खींच लिया—"नहीं, जी, नहीं।"

"नहीं, क्या ?"

"ना-ना-ना ! कटे पर घाव न करो भाई।"

"घोषाल ! पैर तो पकड़ !"

...घोषाल चौंका। वह पातू की बहू से कटाक्ष विनिमय कर के मुस्करा रहा था।

दुर्गा ने फिर दृढ़ स्वर में कहा—"नहीं, नहीं, नहीं!"

जगन खीझकर बोला—"फिर मर!"

दुर्गा भूमि पर पट लेट गई और शायद चुपचाप रोने लगी। उसका सारा शरीर दरद के आवेग से काँपता जान पड़ा।

अनिरुद्ध की आँखों में आँसू आ गये—अपने को फिर भी जरा सँभालकर बोला—"दुर्गा! दुर्गा! डाक्टर की बात मानले।"

दुर्गा का कंपित शरीर अस्वीकार की भंगिमा से हिला।

जगन नाराज होकर चला गया। अनिरुद्ध ओझा ढूँढ़ने निकला। कुमुमपुर में एक मुसलमान ओझा उस्ताद है! हरेन ने एक बीड़ी सुलगाई।

थोड़ी दूर पर एक रोशनी रुकी। रोशनी के पीछे जमादार और श्रीहरि हैं। अब घोषाल भी खिसक गया।

दारोगा ने सतीश से पूछा—"कैसी है?"

"जी, अच्छी नहीं है। छटपटाती है।"

"गड़ाँची नहीं आया?"

"जी नहीं।"

"घोष, आप और एक आदमी भेज दें। मैं थाने से लेकिसन भेजता हूँ। आइये—"दारोगा और श्रीहरि चले गये।

थोड़ी देर तक छटपटाने के बाद दुर्गा कुछ स्वस्थ हुई, बोली—"सतीश दादा, तुम्हारी दवाई अच्छी है, अब मैं ठीक हूँ।"

और थोड़ी देर बाद वह उठ कर बैठी।

सतीश बोला—'दवा मेरी अचूक है।"

दुर्गा बोली—"मुझे ऊपर ले चल बहू।"

ऊपर बिछौने पर बैठ कर दुर्गा ने अपने जूड़े से बेल का एक काँटा निकाला और रोशनी में उसकी नोक घुमा फिरा कर देखने लगी।

पातू की बहू ने पूछा—"कौनसा साँप था? तुमने देखा था?"

दुर्गा बोली—"काला साप···!उसके ओठों के कोने में मुस्कान की एक प्रछन्न रेखा चमकी। दुर्गा को साँप ने नहीं काटा। कर्मकार के घर से लौटते समय उसने निश्चय किया था और घाट पर पहुँचकर बेल के कांटे से पैर में दंशन का चिह्न बना लिया था। वह ऐसा न करती तो क्या सबको खिसकने का मौका मिलता और जमादार क्या उसे यों ही छोड़ देता? शराब पी कर जमादार की जो मूर्ति होती है, उसके स्मरण से ही दुर्गा सिहर उठी।

किन्तु नजरबंदी और पंडित जीजा उसकी ऐसी हालत सुन कर भी देखने नहीं आये?

सच्ची बात तो वे भी नहीं जानते, फिर क्यों नहीं आये? नजरबंदी को तो खैर रात में निकलने का हुक्म नहीं। जमादार भी गाँव में ही है, छिरूपाल तो है ही, उसके न आने का कारण है, परन्तु पंडित जीजा? पंडित जीजा भी नहीं आये!

पातू की बहू ने पूछा—"अभी जलन होती है ?"

"जा बहू, तू जा। मैं सोऊँगी।"

"ना आज तुम सोने न पाओगी।"

दुर्गा अधीर होकर बोली—"सोऊँगी क्यों नहीं, जरूर सोऊँगी। मैं मरती नहीं मेरी मौत नहीं आई—तू जा—जा यहाँ से।"

पातू की बहू नाराज होकर चली गई। दुर्गा तकिए में मुँह छिपाकर लेट गई।

कौन ? नीचे कौन बोल रहा है ?—पातू दुर्गा कैसी है ? हाँ, पंडित जीजा ही हैं। सीढ़ियों पर चढ़ रहे हैं।

"कैसी है दुर्गा ?" पातू के साथ देबू कमरे में आया।

दुर्गा ने उत्तर न दिया।

'दुर्गा !"

दुर्गा ने अब मुँह उठाया, बोली—"इतनी देर में मर जाती पंडित जीजा तो !"

देबू बोला—"मैंने खबर ली थी कि तू अच्छी है। चरवाहा बता आया था।"

दुर्गा ने फिर तकिए में मुँह छिपा लिया; चरवाहा खबर भी दे आया ? अच्छा छोकरा है।

देबू बोला—"घर जा कर बैठा ही था कि महाग्राम के ठाकुर महाशय आ गये। क्या करता ? उनको बिदा करके आ रहा हूँ।"

मउ गाँव के ठाकुर महाशय ?···दुर्गा के विस्मय की

सीमा न रही।

महाग्राम के ठाकुर ? महामहोपाध्याय शिवशेखरेश्वर न्यायरत्न ? साक्षात देवता ! राजा के यहाँ भी जो पदार्पण नहीं करते, वे आये थे ?

× × × ×

देबू के विस्मय की भी सीमा न रही थी।

यतीन के यहाँ से लौट कर वह घर में बैठा दुर्गा के सम्बन्ध में ही सोच रहा था। दुर्गा विचित्र है, दुर्गा अद्भुत है, दुर्गा अतुलनीया है। बिलू सब कुछ सुन कर दुर्गा की भूरि-भूरि प्रशंसा कर रही थी और कह रही थी—"वह लाख हीरे वाली वेश्या की कहानी है—दुर्गा भी वैसी है। तुम देखना, अगले जन्म में वह किसी अच्छे घर में पैदा होगी—जिसकी कामना करके मरेगी, वही उसका स्वामी होगा।"

इसी समय किसी ने बाहर पुकारा—"मण्डल जी घर में हैं ?"

कण्ठ स्वर से देबू अनुमान न लगा सका कि कौन है। परन्तु स्वर सुनकर सम्मान उत्पन्न होता है। विस्मय के साथ उसने पूछा—"कौन ?" साथ ही साथ वह बाहर भी निकल आया।

"मैं !" एक आदमी लालटेन लिए खड़ा था, उसके पीछे से वक्ता ने उत्तर दिया—"मैं हूँ विश्वनाथ का पितामह।"

देबू विस्मय और संभ्रम से आवाक् हो गया। विश्वनाथ के पितामह—पंडित महामहोपाध्याय—शिवशेखरेश्वर न्याय-

रत्न ! उसका शरीर काँपने लगा। दूसरे क्षण में ही उसने अपने आपको संभाला और रास्ते में उतर का न्यायरत्न के चरणों में झुक कर प्रणाम किया।

"तुम को आशीर्वाद देने आया हूँ। कल्याण हो, धर्म तुम्हें कभी परित्याग न करे। जयस्तु ! तुम्हारी जय हो। कमरा खोलो, जरा बैठूँगा।"

देबू को अब ख्याल आया। उसने लपक कर कमरा खोला। दरवाज़े की आड़ में खड़ी बिलू ने सब देखा था, सुना था। उसने घर का सर्वोत्तम आसन बिछा दिया और लोटे में पानी ले कर खड़ी हुई।

न्यायरत्न बोले—"पैर धोओगी, बेटी ! आवश्यकता तो न थी।"

बिलू खड़ी ही रही ! न्यायतीर्थ ने चबूतरे पर बैठ कर पैर फैला दिए—"लो।"

बिलू ने पैर धोये और एक पुराने रेशमी कपड़े से पोंछ लिए।

आसन ग्रहण करके न्यायरत्न बोले—"अपना लड़का लाओ, चौधरी ! उसको आशीर्वाद दूँ।"

विस्मय ने देबू के चारों ओर एक मोहजाल-सा फैला दिया था; किसी अज्ञात पुण्य से उसकी कुटी में, रात के अंधेरे में स्वर्ग के देवता पधारे हैं और परम कल्याण के आशीर्वाद से उसका घर भर रहे हैं।

बिलू ने सोता हुआ लड़का ला कर न्यायरत्न के चरणों के निकट लिटा दिया।

न्यायरत्न ने शिशु की ओर देखकर स्नेह के साथ कहा—"विश्वनाथ का मुन्ना इससे छोटा है। अभी ही तो अन्नप्राशन हुआ है. कुल आठ महीने का है।"...फिर सुप्तशिशु के मस्तक पर हाथ रखकर बोले—"चिरंजीव हो, भाग्य प्रसन्न रहे।"... इसके बाद चद्दर के भीतर से दो कड़े निकाले और हाथ फैलाकर कहा—"लो।"

देबू और बिलू आवाक् हो गये। मुन्ना के ही कड़े हैं। आज ही गिरो रखे गये हैं।

"लो। मेरी बात अस्वीकार नहीं की जाती! लो बेटी, तुम ले लो।"

बिलू ने हाथ बढ़ाकर ले लिए—उसका हाथ काँप रहा था।

"लड़के को पहना दो बेटी। आज अशोक षष्ठी का दिन है, तुम्हारा घर अशोक आनन्द से पूर्ण रहे...!" फिर हँसकर बोले—"मेरी राज्ञी शकुंतला। उसने आकर संवाद दिया। चमारों की गाय काँजीहौस भेजने का समाचार मुझे मिल चुका था। सोचा था, किसी को भेज दूँ—गायें छुड़ा लाये। गो-माता भगवती भूखी रहेंगी। और जुरमाना देने में उन गरीबों का शायद सर्वस्व ही चला जायगा। उसी समय सुना कि तुम गायें छुड़ा लाये हो। आश्वस्त हुआ, मन में तुमको आशीर्वाद दिया, संकल्प किया कि एक बार तुमको बुलाऊँगा, आशीर्वाद दूँगा।

संध्या के समय विश्वनाथ की स्त्री ने आकर कहा—"बाबा शिवकालीपुर के पंडित को तो देखिए। आज छठ के दिन लड़के के कड़े अपनी चटर्जी गृहिणी के पास बंधक रख गये हैं। गृहिणी ने मुझे दिखा कर पूछा था, पंद्रह रुपये में ठीक हैं न ?' मेरा गला भर आया, मण्डल जी, अपार आनन्द से। तुमको बार बार आशीर्वाद दिया। परन्तु मन पूर्णतया संतुष्ट न हुआ। षष्ठी का दिन—लड़के का भूषण, लड़का शायद कड़े के लिए रोता होगा; उसी समय चूड़वा मँगाया। किसी के द्वारा तुम्हें भेजने की प्रवृत्ति न हुई। स्वयं आया—तुम्हें आशीर्वाद देने आया। तुम चिरंजीव रहो, तुम्हारा कल्याण हो, धर्म को तुम कर्म के बंधन में बाँध रखो। तुम्हारी जय हो। बेटी, कड़े बच्चे को पहना दो। मण्डल, तुम्हारे पास जब रुपये हों तब मुझे दे आना। तुम्हारे पुण्य को, तुम्हारे धर्म को मैं क्षुण्ण नहीं करना चाहता।

देबू की आंखों से आंसुओं की धारा बहने लगी।

बिलू की आंखों से भी आंसू बह रहे थे, उसने कड़े लड़के को पहना दिए।

न्यायरत्न बोले—"सुनो पंडित, तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ।"

उसी समय यतीन ने पुकारा—"देबू भाई"

"यतीन भाई, आइये, आइये।"

न्यायरत्न ने हँसकर पूछा—"ये—?"

देबू ने यतीन से परिचय कराया। यतीन थोड़ी देर तक

न्यायरत्न की ओर देखता रहा; फिर प्रणाम करके बोला—"आप के पौत्र शिवनाथ बाबू को मैं जानता हूँ।"

न्यायरत्न ने पहले नमस्कार किया फिर यतीन को आशीर्वाद दिया।

फिर हँसकर पूछा—"जानते हैं? वह शायद आप लोगों का समगोत्रीय है?"

प्रश्न ने यतीन का विस्मित किया; वह हँस कर बोला—"गोत्र एक है, गोष्ठी भिन्न है—"

न्यायरत्न मौन हो गये।

यतीन बोला—"तारा नाई ने बतलाया कि आप पधारे हैं, मैं दौड़ा आया, आपको देखने—"

"देखने योग्य तो अब कुछ नहीं रहा—देश भी नहीं, मनुष्य भी नहीं। प्रकाण्ड कीर्ति स्तम्भ था, उस पर बट वृक्ष जन्मा और उसकी जड़ों से सौध फट कर टुकड़े-टुकड़े हो गया। देख तो रहे ही हैं।" फिर हँसकर बोले—"इसीलिए सौध का कोई अंश जब दुर्योग में वज्राघात को प्रतिहत कर देता है तब आनन्द होता है। आज मण्डल ने मुझे यही आनन्द दिया है।"

देबू ने प्रसंग पलटने के लिए कहा—"आप एक कथा सुनाने के लिए कह रहे थे।"

"कथा? हाँ, सुनाता हूँ। एक ब्राह्मण थे, महान कर्मठ और महाभाग्यशाली। उनका ललाट ज्योतिर्मय था, सौभाग्य-

लक्ष्मी ने उसी ललाट में आश्रय लिया था। उनका प्रत्येक कर्म महत् था और प्रत्येक काम में सफलता होती थी; कारण उनकी कर्म शक्ति में यशलक्ष्मी का निवास था। उनका कुल अकलंक था, पत्नी-पुत्र-कन्या और बहू के गौरव से वह और भी उज्जवल हो गया था, कारण कुल लक्ष्मी ने उनके कुल में स्थान ग्रहण किया था। ईर्षातुर पाप ब्राह्मण के निवास के आस-पास सदा अस्थिर हो कर घूमता था। उसे यह सहन न होता था। बहुत सोचकर वह एक दिन अलक्ष्मी को बुला लाया और घर के बाहर से ब्राह्मण को पुकारा! ब्राह्मण ने पूछा—क्या चाहते हो?

"पाप बोला—'मैं बड़ा अभागा हूँ, मेरे दुःख कष्ट की सीमा नहीं है। मेरी संगिनी को आप आश्रय दीजिए, यही मेरी प्रार्थना है।

"ब्राह्मण बोले—मैं गृहस्थ हूँ; आश्रय प्रार्थी को स्थान देना मेरा धर्म है। वे रहें, बहू और कन्या की भांति उनका आदर होगा। इच्छा हो तो जब तक भाग्यानुकूल न हो तब तक आप भी रह सकते हैं। आओ!

"बुलाने पर भी पाप घर में प्रवेश करने का साहस न कर-सका, कारण ब्राह्मण के यहाँ धर्म का निवास था।

"अलक्ष्मी को आश्रय देते ही दुर्घटनाएँ होने लगीं। फल से लदे वृक्षों के फल सूख गये, फूल मुरझा गये। रात में ब्राह्मण जप कर रहे थे—उन्होंने सुना कोई रो रहा है। विस्मित होकर और जप समाप्त कर के उठे तो देखा कि उनके ललाट

से ज्योति निकली है और नारी रूप में परिवर्तित हो गई है। वही रो रही थी। ब्राह्मण ने पूछा—माता, तुम कौन हो ?

"तुम्हारी सौभाग्यलक्ष्मी ! अब तक तुम्हारे ललाट में थी, आज जा रही हूँ, इसीलिए रोती हूँ।

"ब्राह्मण ने कुछ देर चुप रहकर पूछा—एक प्रश्न करूँ मां ? मुझ से कौन सा अपराध हुआ है ?

"तुमने अलक्ष्मी को आश्रय दिया है। वह स्त्री अलक्ष्मी है। अलक्ष्मी और मैं एक साथ नही रह सकती।

"ब्राह्मण ने एक लंबी साँस ली, लक्ष्मी को प्रणाम किया और चुप हो गया !

"सवेरे देखा, वृक्षों के फल गिर गये हैं, फूल मुरझा गये हैं। सरोवरों में छिद्र हो गये हैं और उनसे पानी निकला जाता है। भूमि श्री हीना और गायें दुग्ध-हीना हो गई हैं। घर श्री हीन हो गया है।

"रात को फिर वैसा ही रुदन। शरीर से फिर एक दिव्याङ्गना। वे बोलीं—मैं तुम्हारी यशलक्ष्मी हूँ। भाग्यलक्ष्मी तुम्हें परित्याग कर गई हैं, तुमने अलक्ष्मी को आश्रय दिया है, सुतराँ मैं भी जा रही हूँ।

"ब्राह्मण ने उन्हें भी चुपचाप प्रणाम किया और वे भी चली गईं।

"दूसरे दिन उन्होंने सुना, लोग कहते हैं—ब्राह्मण लंपट है, इसने एक स्त्री को शरण दी है और उसके प्रति कुदृष्टि

रखता है। ब्राह्मण ने प्रतिवाद न किया।

"उस दिन रात में एक और नारी मूर्ति प्रकट हुई। वह कुललक्ष्मी थी। बोलीं—अलक्ष्मी आई है, भाग्यलक्ष्मी ने तुम्हें त्याग दिया है, लोग तुम्हें कलंकी कह रहे हैं; मैं कुललक्ष्मी हूँ, मैं कैसे रह सकती हूँ ?···वे भी चली गईं।

"दूसरे दिन ब्राह्मण के शरीर से एक और मूर्ति प्रकट हुई, नारी नहीं—पुरुष मूर्ति। दिव्य भीम कांति, और ज्योतिर्मय स्वरूप; ब्राह्मण ने पूछा—आप कौन हैं ?

"दिव्य कांति पुरुष बोले—मैं धर्म हूँ।

"धर्म ? आप मुझे किस अपराध से त्याग रहे हैं ?

"तुमने अलक्ष्मी को आश्रय दिया है।

"यह क्या मैंने अधर्म किया है ?

"धर्म सोचकर बोले—नहीं।

"फिर ?

"भाग्यलक्ष्मी तुम्हें परित्याग कर गई हैं !

"आश्रय प्रार्थी को शरण देना जब अधर्म नहीं है, तब उन्होंने मेरे अधर्म के कारण मुझे परित्याग नहीं किया। परित्याग किया है, अलक्ष्मी के संस्पर्श से बचने के लिए।

"हाँ।

"भाग्यलक्ष्मी का अनुसरण किया है यशलक्ष्मी ने और उनके पीछे गईं कुललक्ष्मी, मैं ने प्रतिवाद नहीं किया। उनकी गति ही यही है। परन्तु आप मुझे किस अपराध के कारण

परित्याग कर रहे हैं ?

"धर्म-स्तब्ध होकर खड़े रह गये।

"ब्राह्मण बोले—आपको मैं न जाने दूँगा; कारण आप ही के अवलम्ब से तो मैं जीवित हूँ। जब तक मैं आप को न छोड़ूँ तब तक आप को भी मुझे छोड़ने का अधिकार नहीं है। मैं ही आपका अस्तित्व हूँ।"

"धर्म स्तम्भित हो गये, अपना भ्रम उनकी समझ में आ गया; फिर ब्राह्मण से बोले—तथास्तु। तुम्हारी जय हो।··· वे फिर ब्राह्मण की देह में प्रविष्ट हो गये।"

न्यायरत्न चमत्कार पूर्ण ढंग से कथा कहते हैं। युवावस्था में वे अपने गाँव में नियमित रूप से भागवत की कथा किया करते थे। उनके वर्णन, स्वर माधुर्य और भावभंगी ने एक स्वप्न जगत् की सृष्टि की थी। वे स्तब्ध हो गये।

कुछ देर चुप रह कर यतीन ने पूछा—"फिर ?"

"फिर ?" न्यायरत्न मुस्कराये, बोले—

"इसके बाद की कहानी संक्षिप्त है। धर्म के प्रभाव से उस रात में फिर रुदन सुन पड़ा; ब्राह्मण ने देखा कि वही अलक्ष्मी स्त्री आकर कहती है—मैं जा रही हूँ—मैं चली।

"ब्राह्मण बोले—तुम स्वेच्छा से जा रही हो ?

"स्वेच्छा से···स्वेच्छा से जा रही हूँ।···और वह विलीन हो गई।

"उसी रात में भाग्यलक्ष्मी लौटीं, उनके पीछे यशलक्ष्मी

आई और फिर कुललक्ष्मी ।"

यतीन बोला—"सुंदर कथा है। लक्ष्मी ही यश देती हैं—वही कुल पवित्र करती हैं। उन्हीं के लिए इतनी खींच-तान है। लक्ष्मी ही सब कुछ हैं।"

"नहीं !" न्यायरत्न ने कहा—'धर्म। मण्डल ! तुमने इसी को ग्रहण किया है इसीलिए आशा होती है; और मैं आनन्दित हो कर दौड़ा आया हूँ। अच्छा, अब चलूँ !"

इसी समय समाचार मिला कि दुर्गा को साँप ने काटा है। चरवाहे ने बताया—"अब अच्छी है। उठ कर बैठी है।"

देबू न्यायरत्न को पहुँचाने के लिए साथ चला। रास्ते में यतीन ने विदा ली और अपने तख्त पर स्तब्ध होकर बैठ गया।

—चौबिस—

यतीन की मानसिक अवस्था विचित्र हो रही है। वह सोच रहा है कि देहात के एक एकान्त कोने में यह वृद्ध रहता है। चारों ओर अज्ञान, अशिक्षा दारिद्र्य और हीनता का ध्वंसोन्मुख वातावरण है; कठोर जीवन-संग्राम अजगर की कठिन कुण्डली की भांति कस रहा है और दम घोंट रहा है परन्तु इस स्थिति में भी यह अविचलित चित्त और सौम्य दर्शन वृद्ध स्वच्छ ऊर्ध्वग दृष्टि से देख रहा है और परमानंद से पूर्ण हो रहा है। समुद्र गर्भ की सीपी की भाँति ज्ञान का असीम भण्डार लिए बैठा है।

दण्ड के बाद दण्ड और प्रहर के बाद प्रहर पार कर रात गहरी होती जा रही है। दूसरे पहर के सियार और उल्लू बोल गये हैं। किसी पेड़ पर कोई उल्लू इस समय भी बोल रहा है परन्तु यह बोली दूसरी है, प्रहर-घोषणा की बोली से नहीं मिलती। प्रहर की बोली में घोषणा की स्पष्ट ध्वनि होती है। पेड़ों के कोटरों से इनके बच्चे अपरिणत कंठों से सीटी की दबी जैसी आवाज़ से बराबर बोल रहे हैं। चारों ओर असंख्य कोटि पतंगों की हलचल होती जान पड़ती है। आकाश के सूने और अँधेरे भाग में चमगादड़ों के गोल अपने काले पंख फैलाकर उड़ रहे हैं। उस दिन की वर्षा के बाद आकाश उज्ज्वल नील हो गया है। तारागण पूर्ण दीप्ति से चमक रहे हैं। चैत की झर झर वायु में फूलों की अदृश्य और अरूप गंध का संभार भरा है। अंतिम पहर में हिम के स्पर्श से वायु भारी हो रही है।

यतीन वृद्ध से एक बात पूछना भूल गया है। कहानी उसे बहुत अच्छी लगी है। इस कहानी और इस वृद्ध में उसने आज ग्राम-जीवन का मूल मंत्र पाया है। चिरंतन काल से ऐसे वृद्ध ही ऐसी कथाएँ सुनाते आ रहे हैं! कथा सचमुच अच्छी है—अच्छी ही नहीं, उसे सच्ची भी जान पड़ती है। केवल एक स्थान पर कुछ संशय हुआ है! अलक्ष्मी के आगमन से सौभाग्य लक्ष्मी का विलोप ठीक ही है। भाग्यलक्ष्मी के अभाव में कर्म शक्ति पंगु होती है, यशलक्ष्मी चली जाती हैं; लक्ष्मीहीन और पंगु कर्मशक्ति वाले मनुष्य का कुल गौरव

भी नहीं रहता। उचिंड़े की माँ सेटेलमेंट कैम्प के चपरासी के साथ चली गई है। परन्तु धर्म से वृद्ध का क्या अभिप्राय था, यह उन से नहीं पूछ सका! बहुत सोचने के बाद भी वह कोई ऐसा उत्तर नहीं पा सका जिसके साथ नवोपलब्ध सत्य का सामंजस्य होता हो। थक कर वह रात्रिकालीन गाँव की ओर देखता रह गया।

प्रगाढ़ अंधकार में गाँव खो-सा गया है। अनुमान से कहा जा सकता है कि सामने रास्ते के उस किनारे पर वह गढ़ैय्या है; सारी रात में केवल शाम को उसके घाट पर मिट्टी के तेल की एक ढिबरी जलती दीख पड़ती है। ढिबरी लेकर दो स्त्रियाँ बरतन माँजने आती हैं और थोड़ी देर में चली जाती हैं। ढिबरी की रोशनी में यतीन उनका मुँह भी देख लेता है। फिर वे दोनों अपने घर में घुस कर किवाड़े बन्द कर लेती हैं। गाँव के अधिकांश दरवाजे इसी तरह शाम होते ही बन्द हो जाते हैं। श्रीहरि घोष, जगन डाक्टर या उसके अपने यहाँ कुछ लोग आ कर बैठते हैं और इसके बाद भी जागते रहते हैं, परन्तु वह भी कितनी देर? दस बजते न बजते सारा गाँव निस्तब्ध हो जाता है। यतीन ने एक बार अच्छी तरह गाँव की ओर देखा। गाढ़ अंधकार में सुषुप्त और निश्चेष्ट गाँव की भावभंगी में सर्वथा असहाय शिशु के आत्म-समर्पण का भाव परिस्फुट हो रहा है।

यतीन को अपनी जन्म-भूमि कलकत्ता महानगरी याद

आ गई। कलकत्ता उसे बहुत पसन्द है। वह महानगरी संसार की श्रेष्ठ नगरियों में अन्यतमा है। दिन के प्रकाश और रात के अंधेरे का वहाँ कितना कम प्रभाव है? दिन में भी वहाँ बत्तियाँ जलती हैं और रात में रास्ते के किनारे प्रकाश ही प्रकाश फैला रहता है। मानवी तपस्या की दीप्त दृष्टि के सामने ज्ञान का अंधेरा महानगरी के द्वार-देश पर अवश और असहाय दृष्टि से देखता रह जाता है। चौराहों पर खड़े प्रहरी जाग्रत दृष्टि से घोषणा करते रहते हैं, हम जाग रहे हैं! गवेषणागारों में वैज्ञानिक अपनी गवेषणा की ओर तीव्र दृष्टि से देखते रहते हैं! गतिशील यंत्रों पर यंत्री खड़े हैं और आंव-राम उत्पादन हो रहा है। जल को आलोड़ित करते हुए जहाज चलते हैं, पोर्ट कमिश्नर की लाइन पर गाड़ी दौड़ती है; साइड में शंटिंग होती है। सड़कों पर मोटरें गरजती हैं, बीच-बीच में घोड़ों की टाप रोमांचक आवेश जगाती है। महानगरी सदा चलती ही रहती है, दिन और रात उसकी गति में अंतर नहीं डालते। आवागमन, ध्वस-निर्माण और हास्य-रुदन में वह अपने नित नये रूप अभिव्यक्त करती है!

और गाँवों का सदा एक ही रूप है। विचित्र हैं गाँव। विशेषत: इस देश के गाँव जो समाज निर्माण के आदि काल से अनन्त-परमायु पुरुष की भांति एक ही स्थान पर बैठे हैं। Indian Economics का एक स्थल उसे याद आया। Sir Charles Metcalf ने लिखा है—

"They seem to last where nothing else last" ...अद्भुत् ! "Dynasty after dynasty tumbles down, revolution succeeds revolution; Hindu, Pathan, Mogul, Maharatta, Sikh, English are masters in turn, but the village community remains the same."

यह क्या किसी दिन आंदोलित न होगी ? बीसवी सदी संसार में एक विराट् परिवर्तन लाई है। इस देश के देहात का यह जीर्ण स्थविर पुरातन क्या परिवर्तित न होगा ?

यतीन क्रांतिकारी तरुण है, उसकी कल्पना अनागत काल के नये स्वप्न देखती है। उसने एक लंबी साँस ली। वृद्ध कह गये हैं–"प्रकाण्ड सौध वट वृक्ष की जड़ों से फट गया है।" वह इन दरारों के ऊपर आघात करने के लिए कटिबद्ध है। इसी धर्म के अनुसार वह छोटा-सा द्वन्द्व भी देखता है तो उसे उत्साहित कर देता है।

घर के भीतर से दरवाज़े पर आघात हुआ।

यतीन ने पूछा—"माँ जी ?"

"हाँ।···" पद्म ने तिरस्कार के साथ कहा—"तुम्हें आज सोना नहीं है ? जब तक बीमार न पड़ोगे तब तक न मानोगे !"

"जा रहा हूँ।·· " यतीन हँसा।

"जा रहा हूँ नहीं, अभी उठो। आओ मैं पंखा झल कर सुला दूँ। चले !"

"तुम जाओ। मैं अभी सो जाऊँगा।"

"नहीं, तुम उठो। उठो, कहती हूँ, नहीं सिर पटक दूँगी।"

यतीन को उठ कर कमरे के भीतर जाना पड़ा परन्तु इतने से ही छुट्टी न मिली, पद्म बोली—"इधर का दरवाज़ा खोल दो, मैं हवा करूँ।"

"नहीं, जरूरत नहीं है।"

"जरूरत क्यों नहीं है ?"

दरवाजा भी खोलना पड़ा। पद्म यतीन के सिरहाने पखा लेकर बैठी और बोली—"एक महापुरुष कब के गये हैं—दुर्गा को साँप ने काटा है—अब तक लौटे नहीं और तुम—"

"अनिरुद्ध बाबू अभी नहीं लौटे ?"

"नहीं। थोड़ी देर ठहरो; दुर्गा मर ले तो आँसुओं में डूबते-डूबते आयेंगे। दुनिया में इतने आदमी मरते हैं—इस हरामजादी को मौत नहीं आती !"

यतीन सिहर उठा। पद्म के कण्ठस्वर में कितना रोष है। लंबी साँस लेकर उसने आँखें बंद कर ली। थोड़ी देर में ही उसके कानों ने दूर से आता हुआ एक विपुल शब्द सुना। शब्द द्रुततम गति से आ रहा है। भूमि में कंप उत्पन्न हो रहा है। वह उठ कर बैठ गया और बोला—"भूकम्प !"

पद्म हँस पड़ी—"कैसा लड़का है ! यह भूकम्प नहीं है पागल, डाकगाड़ी जा रही है। लेटो, लेट जाओ !"

"डाकगाड़ी ? मेल ट्रेन ?"

"हाँ, लेटो।"

उसी समय सीटी की तीव्र ध्वनि सुन पड़ी और गाड़ी मयूराक्षी के पुल पर आ गई। घम घम शब्द से दिशाएं भर गईं। घर-द्वार थर-थर काँपने लगे। जंकसन स्टेशन पर रोशनी हो रही है। वहाँ कारखानों में रात को भी काम होता है। यतीन को अकस्मात आशा की रेखा दीख पड़ी। दीहात भी हिल रहा है। जंकसन तक संसार के नवजीवन की लहर आ गई है। एक दिन मयूराक्षी पार कर के वह इधर भी आयेगी। उसने देखा, एक कम्पनी मयूराक्षी के बाँध के साथ वाली कच्ची सड़क पर मोटर सर्विस का ठेका ले रही है।

पद्म थोड़ी देर में पंखा रखकर सावधानी के साथ उठ गई। चलो, सो तो गया। ऊपर की मशहरी अच्छी तरह नहीं लगी। उँचिड़े को शायद मच्छर चबा डालेंगे!

यतीन के कमरे से बाहर निकल कर पद्म हैरान हो गई। ऊपर से उँचिड़े न जाने कब उतर गया है और रात के तीसरे पहर में चौतरे पर बैठा अपने आप ही कौड़ी खेल रहा है।

× × × × ×

देर से सोने के कारण यतीन सबेरे देर से ही उठा। उठा भी नहीं, उसे पद्म ने जगाया।—"उठ! लड़के उठ!"

यतीन ने जाग कर पूछा—"बहुत देर हो गई?"

"उधर तो सर्वनाश हो गया!"

"सर्वनाश हो गया?"

"छिरूपाल लठैत लेकर पेड़ कटवा रहा है। सब दौड़े गये हैं। दगा होगा।"

"कौन दौड़े गये हैं? अनिरुद्ध बाबू?"

"सब—सब। पंडित, जगन डाक्टर, घोषाल—बहुत से आदमी।"

यतीन प्रसन्न हुआ। बोला—"खूब तेज चाय बनाओ, माँ जी।"

"तुम नाचते-नाचते वहाँ न जाना।"

"फिर मुझे जगाया क्यों है?"

पद्म कुछ देर चुप रही, फिर बोली—"यों ही . " वह स्वयं भी न समझ सकी कि उसने यतीन को क्यों जगाया है—"मुँह हाथ धो डालो। मैं चाय बनाती हूँ।"

"उचिंड़े कहाँ है?"

"फौज के आगे का निशान—वह सब से पहले गया है।"

श्रीहरि ने कल के अपमान का बदला लिया है। चमारों पासियों के सामने उसका सिर झुका है। अपमान ही नहीं हुआ—उसकी समझ से गाँव की शृङ्खला तोड़ने की हीन चेष्टा की गई है। यह चेष्टा जिनके द्वारा हुई है, उनको दण्ड देने की व्यवस्था उसने रात में कर ली थी। कालू सेख की मारफत लठैत बुलाए और ज़मीदार की हैसियत से देबू, जगन, हरेन तथा अनिरुद्ध के पेड़ काट डालने का हुक्म दे दिया। पेड़ ज़मींदार के ऊसर में हैं। पहले किसान इसी तरह पेड़ लगाते थे,

ज़मींदार ने कभी आपत्ति नहीं की थी। आवश्यकता होती थी तो प्रजा से दो मीठी बातें करके ज़मींदार भी फल ले लेता था। डाल काट लेता था। परन्तु इस तरह जड़ से कभी न काटता था। काटना था तो आज से सौ वर्ष पूर्व—ज़मींदार और प्रजा में दंगा हो जाता था। पचास वर्ष बाद ज़माना बदल गया। फिर ऐसे वक्त में प्रजा ज़मींदार के हाथ-पैर जोड़ने लगी और घर में बैठ कर पेड़ के लिये रोने लगी। किन्तु आज वह तड़प कर निकली है।

यतीन समाचार के लिए चिंतित हो रहा था। वह सोच रहा था कि कहीं खून खराबी होगी तो बात बहुत बढ़ जायगी। एक बार वह स्वयं ही घटनास्थान तक जाने के लिए तैयार हुआ फिर यह सोचकर रुक गया कि—मुझे इस मामले में मान लेंगे तो घटना का रूप ही बदल जायगा।

पद्म इतनी देर में ही तीन बार झाँक कर देख गई है कि यतीन कमरे में बैठा है या नहीं।

तीसरी बार यतीन ने कहा—"मैं गया नहीं माँ जी, बैठा हूँ।"

"तुम्हारा विश्वास नहीं। जैसे भयानक लड़के हो तुम!"

यतीन मुस्कराया।

"हँसो नहीं तुम, हाँ..." रास्ते की ओर देखकर पद्म ने कहा—"लो! वह लो! नेलो आ गया। पैसे दो।"

वही चित्रकार—बैरागियों का नेलो आया। पैसे की ज़रूरत

पड़ने पर ही नेलो आता है वैसे नहीं। चुपचाप आता है और चुपचाप बैठ जाता है। जब तक उससे पूछा न जाय तब तक अपना आशय व्यक्त नहीं करता परन्तु उठकर जाता भी नहीं, बैठा ही रहता है। पूछने पर संक्षेप में कहता है—पैसा! माँग भी बड़ी नहीं होती—चार पैसे से लगाकर चार आने तक पूरी हो जाती है। आज नेलो कुछ उत्तेजित है, उसका फीका गौर वर्ण रक्ताभ हो रहा है, आँखों की पुतलियाँ अस्थिर हैं, आज वह बैठा नहीं, खड़ा ही रहा।

"क्यों नलिन ? पैसे चाहिएँ ?"

"पंडित का सिर फट गया।"

"किसका ? देबू बाबू का ?"

"हाँ ! और कालीपुर के चौधरी जी का।"

"द्वारिका चौधरी ?"

"हाँ—पंडित का आम काट रहे थे, पंडित कुल्हाड़ी के सामने खड़ा हो गया।"

"फिर ?"

"लठैत पंडित को धक्के देने लगे। चौधरी जी छुड़ाने गये। लठैतों ने दोनों को ढकेल दिया।"

"ढकेल दिया ?"

"हाँ, पेड़ काट रहे थे। कटे ठूँठ पर गिरने से दोनों के सिर फट गए।"

"फिर ?"

"बहुत खून गिरा ! उठाकर ला रहे हैं !"

"और सब क्या करते रहे ?"

"सब खड़े रहे, कोई बड़ा तो नहीं। कर्मकार सिर्फ एक लठैत को दो लाठियाँ मार कर भाग गये।"

"जगन डाक्टर कहाँ हैं ?"

"जंकसन गये हैं—थाने।"

यतीन कमरे में घुस कर टेलीग्राम लिखने बैठा। एक डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट को और एक एस. डी. ओ. को भेजेगा। जिला कांग्रेस कमेटी को भेजने के लिए एक चिट्ठी भी लिखी। चिट्ठी छिपा कर भेजनी होगी।

तार देने के लिए डाक्टर को भेजना पड़ेगा किन्तु पत्र उसे देना ठीक न होगा। देबू बाबू ठीक होते तो उनका जाना उचित होता। कुछ सोच कर उसने नेलो को बुलाया और कहा—"एक काम करोगे ?"

नेलो ने सिर हिला कर उत्तर दिया—"हाँ।"

"एक चिट्ठी जंकसन के डाकखाने में डालनी है। चार पैसे का एक टिकट लेकर लगा देना। क्यों ?"

नेलो ने गरदन हिला कर ही स्वीकार किया।

"किसी को दिखाना नहीं !"

नलिन ने फिर मौन स्वीकृति दी।

"इन चार पैसों का टिकट लेना और इन चार पैसों से तुम जल पान करना।"

नलिन ने चिट्ठी कमर में खोंसी, उसके ऊपर धोती का फेंटा कसा। पैसे खूँट में बाँधे। फिर सिर झुका कर यथासाध्य द्रुतगति से चल पड़ा।

× × × ×

सम्पूर्ण गाँव चंचल हो उठा है।

देबू और चौधरी को जगन के दवाखाने में लाया गया है; देबू स्वयं चल कर आया है। उसे चोट भी अधिक नहीं लगी, इसके अतिरिक्त वह जवान भी है—उत्तेजना भी काफ़ी हुई थी; इसीलिए वह काफ़ी खून गिरने के बाद भी भीत या अवसन्न नहीं हुआ। वृद्ध चौधरी अवश्य कातर हो गये हैं। चोट भी उन्हें अधिक लगी है। पहले चौधरी बेहोश हो गये थे; होश में आने के बाद भी उन्हें उठा कर लाया गया है। चौधरी आँखें बंद किए लेटे हैं. देबू दीवार के सहारे चुपचाप बैठा है। धो देने के बाद भी सिर से रक्ताभ जल बह रहा है। गाँव भर के आदमी दवाखाने के सामने खड़े हैं।

जगन टिंचरआइडिन, रुई, पानी और बैंडेज में व्यस्त है। हरेन उसकी सहायता कर रहा है। कभी-कभी लोगों को भीड़ न लगाने के लिए भी ललकार देता है।

बूढ़ी दादी एक पेड़ के नीचे बैठी रो रही है। दुर्गा दाँतों से ओंठ दबाए चुपचाप खड़ी है, उसकी पलकें स्थिर हो रही हैं। इसी समय यतीन दवाखाने में दाखिल हुआ।

जगन बोला—"पेड़ सब रुकवा दिए हैं। पुलिस नोटिस

जारी कर गई है, कोई पार्टी पेड़ों के पास नहीं जा सकती। मैं मना कर गया था कि जब तक लौट न आऊँ तब तक कुछ न किया जाय। पेड़ काटने दो। लेकिन लौट कर देखा कि देबू यह काण्ड किए बैठा है। अनिरुद्ध एक को लाठी जमा कर चम्पत हो गया है।"

भीड़ से निकल कर अनिरुद्ध सामने आया और बोला—"अनिरुद्ध ने ठीक किया है। वह मर्द है, औरत नहीं।"··· उस के हाथ में लोहे का डंडा है। वह बोला—"यह डंडा हाथ में न था नहीं तो सचमुच एक काण्ड हो जाता!"

यतीन बोला—"यह सब फिर देखा जायगा, पहले इनकी बैंडेज चटपट कर दीजिए।"

वृद्ध द्वारिका चौधरी ने आँखें खोलीं और मुस्करा कर हाथ जोड़े—"प्रणाम!"

यतीन ने भी नमस्कार किया, पूछा—"अब कैसे हैं?"

"अच्छा हूँ।"···वृद्ध ने मुस्करा कर कहा—"सोचा था कि बीच में पड़कर झगड़ा निबटा दूँगा, देबू कुल्हाड़ी के सामने खड़ा हो गया था, चुप न रहा गया।"

सब चुप हो गये। उत्तर देने लायक बात भी न थी।

वृद्ध बोले—"पंडित नमस्य व्यक्ति है। पण्डित ही नहीं वीर पुरुष है। बूढ़ा हो गया हूँ तो क्या, अभी चश्मा नहीं लगाता—पण्डित देवता है। कुल्हाड़ी के सामने जब वह खड़ा हुआ तब उसका जो रूप था वह उसने कभी खुद भी शीशे

में न देखा होगा। सचमुच चोर है!"

जगन बोला—"यह सब गँवारपन है। क्या फ़ायदा हुआ? तुम बुरा न मानना, देबू भाई!"

वृद्ध चौधरी हँसे—"सब के पेड़ कट गये हैं, देबू का पेड़ अब तक खड़ा है।"

जगन ने हरेन घोषाल को एक करारी डाँट बताई—"तुम्हारा ध्यान किधर है, घोषाल?"

हरेन चौंका।

देबू मुस्कराया। समझ गया डाक्टर चौधरी से नाराज़ हो गया है।

× × × × ×

पुलिस की जाँच हो गई।

श्रीहरि ने किसी बात से इनकार न किया। श्रीहरि की ओर से जो कुछ भी कहना था, वह दास जी ने कहा। दास जी अब ज़मींदार की कचहरी के बड़े कर्मचारी हैं, पहले यहाँ के गुमाश्ता थे। वे अभिज्ञ, चतुर और विषय-बुद्धि-सम्पन्न व्यक्ति हैं। प्रजास्वत्व और फ़ौजदारी कानून के साधारण वकील मुख्तार से भी अधिक जानकारी रखते हैं। श्रीहरि ने ख़बर भेज कर उन्हें बुलाया है। मामला अब गाँव वालों और व्यक्तिगत रूप से श्रीहरि के मध्य में सीमित नहीं रह गया। श्रीहरि ने ज़मींदार के गुमाश्ता की हैसियत में काम किया है इसलिए घटना का उत्तरदायित्व ज़मींदार पर पड़ गया है।

ज़मींदार अभी तरुण है। इस युग के बंगाली ज़मींदार का लड़का है। अंग्रेजी पढ़ी है—ज़मींदारी पसन्द नहीं करता। व्यापार करने की चेष्टा में कई बार नुकसान उठाकर अब ज़मींदारी को ही पकड़ कर बैठा है। ज़मींदारी में वह कानून के अनुसार ही चलने की चेष्टा करता है, पुराने ज़मींदारों की तरह ज़बरदस्ती करना अच्छा नहीं समझता, पुराने ज़मींदारों जैसा व्यक्तित्व भी उस का नहीं है, इसलिए उस की साधु चेष्टा भी फलवती नहीं होती। प्रजा की सुविधा के लिए एक नियम बनाता है और जब कलकत्ते जाने के लिए रुपये की ज़रूरत पड़ती है तब नायब और गुमाश्ता की बात मानने के लिए बाध्य हो जाता है। कलकत्ते में वह सिनेमा देखता है, थियेटर देखता है, थोड़ी-बहुत शराब पीता है और राजनीतिक सभाओं में दर्शक बन कर भाग लेता है। वह युनियन बोर्ड का मेम्बर है और लोकल बोर्ड के लिए खड़ा होकर हार गया है। अगली बार कांग्रेस का टिकट लेने की कोशिश कर रहा है। इस बार अर्थात् सन् १९२८ में कलकत्ते में कांग्रेस का जो अधिवेशन होगा उस में डेलीगेट बनकर जाने के लिए भी प्रयत्न कर रहा है।

ज़मींदार ने इस घटना को पसन्द नहीं किया; बोला था—"ऐसी आज्ञा जब हमने नहीं दी तब हमारा उत्तरदायित्व आप न मानें, श्रीहरि स्वयं निपटे।"

दास जी हँस कर बोले थे—"श्रीहरि जैसा गुमाश्ता कहाँ

मिलेगा ? यह भी सोचना ही चाहिए। गाँव वालों के साथ उस का झगड़ा हो गया है। गुमाश्ते की हैसियत से उस ने काम ठीक नहीं किया लेकिन लगान मिले चाहे न मिले सरकारी मालगुज़ारी वह पाई-पैसा चुका देता है। साल भर में हैण्डनोट पर भी दो हज़ार रुपये दे चुका है। अब सेटेलमेंट का ख़र्च भी वसूल किया जायगा, उसका वक्त भी आ गया। अकेले शिव-कालीपुर में ही आप को हज़ार से ज़्यादा रुपया देना पड़ेगा, इसके सिवा और भी गाँव हैं और उनके लिए भी मोटी रकम देनी पड़ेगी। ऐसे समय में श्रीहरि जैसे आदमी को साथ न रखना क्या उचित होगा ?"

ज़मींदार मीटिंग में दस बीस बातें कह सकता है, बराबर वाले स्वजनों और मित्रों में भी वह स्पष्ट वक्ता माना जाता है परन्तु दास जी जब इस तरह चबा-चबा कर बातें करते हैं, तब वह जलमग्न व्यक्ति की तरह हाँपने लगता है। असहाय की भाँति हाथ बढ़ा कर आत्म-समर्पण कर देता है।

"अच्छा एक काम न करें, शिव-कालीपुर श्रीहरि के पास रेहन रख दें ?"

"रेहन ?"

"हाँ, श्रीहरि को हम से दो हज़ार लेने हैं और सेटेलमेंट का ख़र्च भी पाँच हज़ार से ऊपर लग जायगा। श्रीहरि को गुमाश्ता रखेंगे तो रोज़ ऐसे झगड़े होंगे। वह अपनी मरज को रख लेगा।"

"रेहन-वेहन नहीं। वह लेना चाहे तो बेंच डालिए।"

"बेंचने में भी ज़मींदार को आपत्ति नहीं है। वह स्वयं कहा करता है—"ज़मींदारी है जमादारी।"

× × × × ×

जाँच में दास जी ने सब कुछ सविनय स्वीकार किया। "जी हाँ, ज़मींदार की तरफ़ से हमी ने पेड़ काटने का हुक्म दिया था। श्रीहरि घोष ने हमारे गुमाश्ते की हैसियत से ही पेड़ काटने के लिए आदमी लगाये थे। बैसाख मास में पेड़ हम हिन्दू नहीं काटते, इसीलिए चैत्र में काटने का इन्तज़ाम किया गया। इसी समय में हम साल भर के लिए लकड़ी काट कर रख लेते हैं।"

जगन बोला—"तो काटिए, अपने पेड़ काटिए, ज़मींदार क्या—"

दास जी ने टोका—"अपने ही पेड़ तो! वह सब पेड़ ज़मींदार के हैं।"

"ज़मींदार के हैं?"

"आप ही बताइये, ज़मींदार के नहीं हैं?"

"नहीं। हमारे हैं।"

"आपके? अच्छा, आप ने कभी उनकी डाल काटी है?"

"डाल नहीं काटी! लेकिन हैं तो हमारे कब्ज़े में।"

"हाँ, आप फल भोग करते हैं, लेकिन यों तो आप ज़मींदार के खजूरों से खजूरें भी लेते हैं—पत्ते भी तोड़ते हैं।

सरकारी तालों से लोग मछलियाँ पकड़ते हैं। ताल तक लोगों ने बाँट रखे हैं, इस ताल से वह पानी लेगा उस ताल से वह! अब क्या ये खजूर के पेड़ और ये ताल भी आप के हो गये?"

देबू इतनी देर के बाद बोला—"अच्छी बात है दास जी। लेकिन ये पेड़ आप के थे तो उन्हें काटने के लिए इतने लठैत क्यों भेजे थे? जबरदस्ती कब्जा वहीं किया जाता है जहाँ बेदखल होने की संभावना होती है।"

दासजी हँसे—"नहीं, हमने लठैत नहीं भेजे। हम ने तो प्यादे भेजे थे। लाठी उनके हाथ में रहती ही है। जैसे घर में ब्याह होगा वैसा ही बाजा बजेगा। आप के और हमारे यहाँ ब्याह हो तो एक ढोल बजेगी और एक काँसी। बहुत हुआ तो सहनाई भी हो गई। जमींदार के घर में कितने ही बाजे बजगे। जमींदार की तरफ़ से पेड़ काटने आये थे, पाँच सात पेड़ काटने थे—तीस-पैंतीस तो मजूर ही थे, उनके साथ आठ दस प्यादे आ गये तो कौन ज्यादा हो गये? हमें मालूम होता कि आप लोग इस तरह फ़ौजदारी करेंगे तो कम से कम पचास लठैत भेजते। इस के पहले थाने में रिपोर्ट भी करवा देते कि शांति भंग होने का भय है। आप तो कानून जानते हैं देबू बाबू, आप ही बताइये, पेड़ किस के हैं?"

आज दारोगा स्वयं जांच करने आये थे। वे अधिकार का दुरुपयोग नहीं करते और आदमी भी भले हैं, बोले—"आप कुछ भी कहिए दासजी, काम ठीक नहीं हुआ। आदमी के

दिल पर चोट नहीं की जाती। ग़नीमत है कि कानून आप के पक्ष में है। चलो, हमें इसमें कुछ करना भी नहीं है। स्वत्वाधिकार का मामला है। हमने नोटिस दे दी है—जबानी भी दोनों पक्षों से कहे जा रहे हैं—अदालत जब तक फ़ैसला न करे तब तक कोई पेड़ों के पास न जाय। कोई गया और शांति भंग हुई तो हम चालान कर देंगे। पुलिस मुकद्दमा चलाएगी।"

चलते समय दारोगा ने कहा—"प्रजास्वत्व कानून में संशोधन हो रहा है, यह आप जानते हैं दास जी ?"

"जी हाँ, जानता क्यों नहीं।" दासजी हँसे। फिर बोले—"होजाय दारोगा जी तो हमारा पिण्ड छूटे।"

दारोगा को बिदा करके श्रीहरि दास जी को अपने बैठके में ले गया। श्रीहरि ने नया बैठका बनवाया है। ऊपर फूस का छप्पर है लेकिन नीचे पक्की सीढ़ियाँ हैं, पक्का बरामदा है और पक्का फ़र्श है। दास ने तारीफ़ की—"वा-वा-वा ! बैठक तो बढ़िया बनवा ली है, घोष ! लेकिन तुमने सुना नहीं—घर पक्का बनवाना है तो पहले ज़मींदार बन लो !"

श्रीहरि ने तख्त पर पड़ी दरी झाड़कर कहा—"बैठिए।"

बैठकर दासजी बोले—"ज़मींदारी ख़रीदोगे घोष ?"

"ज़मींदारी ?"...श्रीहरि चौंका। ज़मींदारी की स्पष्ट कल्पना उसने कभी नहीं की।

उसने पूछा—"कौन गाँव है ? आस-पास हो तो···"

"खुद शिव-कालीपुर ? लोगे न ?"

श्रीहरि ने विचित्र संदिग्ध दृष्टि से दासजी की ओर देखा। शिव-कालीपुर की ज़मींदारी ? गाँव का प्रत्येक व्यक्ति उसकी प्रजा हो जायगा ! घोष महाशय सब के मालिक बन जायेंगे, बाबू जी, हजूर ! उसका अधीर मन कल्पनाएँ करने लगा। गाँव में बाज़ार लगवा दूँगा। नहाने के लिए पक्का घाट बनवा दूँगा। चण्डीमण्डप का गुम्बद पक्का हो जायगा, फूस के छप्पर की जगह पक्का मन्दिर बन जायगा। एल. पी. पाठ-शाला की जगह एम. ई. स्कूल होगा, नाम रखा जायगा श्रीहरि एम. ई. स्कूल। यूनियन बोर्ड से लोकल बोर्ड के लिए खड़ा हूँगा।

दास जी बोले—"खरीद लो घोष। रुपया तुम्हारे पास है। ज़मींदारी अचल सम्पत्ति होती है। उसके अतिरिक्त गाँव में तुम्हारे जो शत्रु हैं, वे पैर छुएँगे। सेटेलमेंट के फ़ाइनल पब्लिकेशन से पहले ही खरीद लो। दरख्वास्त देकर नाम बदलवा लेना। फ़ाइनल पब्लिकेशन के बाद पाँचवीं धारा लागू होगी। रुपये में चार आने वृद्धि तो हो ही जायगी। हाई-कोर्ट से मैंने आठ आने बढ़ाने की नज़ीर भी ले रखी है। सुनो, मैं सुविधा भी करवा दूँगा। हाँ, दरवाज़ा ज़रा बन्द तो कर दो।"

श्रीहरि ने दरवाज़ा बंद कर दिया।...

देर तक सलाह करने के बाद दोनों बाहिर निकले। दासजी बोले—"वह नोटिस यों ही है—बिल्कुल बेकार। नोटिस दी

है—तुम यदि जाओ और उससे शांति भंग हो तो यह होगा—तो वह होगा। किन्तु शांति भंग न हो तो ?" दास जी ओंठ दबाकर मुस्कराये।

श्रीहरि बोला—"फिर मैं निश्चिन्त होकर कर डालूँ ?"

"अवश्य। परन्तु होशियार, किसी को पता न चले। कोई झगड़ा न हो।"

"और गाजन के लिए ?"

"जैसा तुम ठीक समझना, कर लेना।"

"चण्डीमण्डप फिर ऐसे ही रहे ?"

"यह काम न करना घोष। मैं मना करता हूँ। चण्डीमण्डप के सेवक जमींदार हैं परन्तु अधिकार प्रजा का है। पक्का मण्डप, पक्का मंदिर जो भी बनवाना है, अपने घर में बनवाओ। सम्पत्ति रहती है, जाती भी है। सम्पत्ति चली जायगी तो तुम्हारा कोई अधिकार न रह जायगा।"

दास जी चण्डीमण्डप पर रुपया लगाने से रोक रहे हैं। कैसा समय लगा है ! जनता की चीज पर रुपया लगाना कोरी मूर्खता है !

× × × × ×

दूसरे दिन सवेरे गाँव में फिर हलचल दीख पड़ी।

दबू घोष के अधकटे आम्रवृक्ष को कोई रात में ही काटकर उठा ले गया है। कोई कौन ? श्रीहरि ले गया है। शांति भंग नहीं हुई, इसलिए कानून की पाबंदी नहीं टूटी। ताजे कटे पेड़

की जड़ के ऊपर चार अंगुल का तना रह गया है ! कटे पेड़ का अवशिष्ट भी विशेष नहीं है। कुछ पत्ते, कुछ कच्चे आम और थोड़ी-सी अँगुलियों जितनी मोटी डालें ही पड़ी हैं। नरम मिट्टी में गाड़ी के पहियों के निशानों और बैलों के खुरों के चिह्नों की सांकेतिक भाषा में रात की कहानी लिखी है।

घोषाल उबलता फिरता है—"रेगुलर थेफ्ट केस ! हथकड़ी लगवाकर चालान करवा दूँगा।"

देबू ने मना किया—"नहीं, ऐसी बातें न करो, घोषाल !"

जगन बोला—"दोपहर की गाड़ी से ही चलो, मुकदमा दायर कर आयें।"

देबू बोला—"नहीं।" "

धीरे-धीरे चलकर देबू यतीन के पास पहुँचा और बैठ गया।

यतीन बोला—"सुना है, पेड़ रातोंरात काट ले गये।"

देबू के चेहरे पर म्लान मुस्कान दीख पड़ी।

जगन बोला—"मैं कहता हूँ, मुकदमा दायर करदो, ये मानते ही नहीं।"

"क्या होगा मुकदमे से। कानून से पेड़ जमीदार का है। बेकार रुपये क्यों बरबाद किए जायें ?"

'इतने में ही आप थक गये हैं देबू बाबू ?"

"हाँ, थक तो गया हूँ यतीन बाबू। मुझसे ये झगड़े नहीं होते।"

"ठहरिए, पहले चाय बनवाऊँ। उचिंड़े ! उचिंड़े !"

उचिंड़े ही नहीं, उसके साथ एक और ज़मीमा भी आया।

"माँ जी से चाय के लिए कहो।"

हरेन बोला—"यह और कहाँ से आया ? राम अकेले क्या कम थे, सुग्रीव साथ में और हुआ !"

यतीन ने हँसकर कहा—"उचिंड़े का जंकशन का साथी है। कल पुलिस के साथ फौजदारी देखने आया था। वहाँ मुक्त और बंदी विहंगम की भेंट हो गई। उचिंड़े ले आया है।"

"आप भी नंदी-भृंगी में खुश रहते हैं। जमा भी आप ही के पास होते हैं !"

"मेरे पास नहीं, उचिंड़े इसे माँ जी के पास लाया है।"

"लुहारिन के पास ?"

यतीन ने हँस कर कहा—"हाँ"

"अनिरुद्ध मार कर भगा देगा।"

"कल समझौता हो गया है। अनिरुद्ध बाबू भगाना चाहते थे। माँ जी ने कहा—'यह बैल चरायेगा, खायेगा और रहेगा।' अनिरुद्ध बाबू ने बैल खरीदे हैं न। और दुकान में धौंकनी चलायेगा।"

उचिंड़े आया—"चाय लो बाबू।"

उधर ढफला बजा। जल्दी में उचिंड़े ने आधी चाय फैला दी, किसी तरह कटोरियाँ उतारीं और रखकर एक छलांग में रास्ते पर पहुँच गया; "डां-डां न्याटां ड्याटां ! आ रे गोबरा,

शिव निकल रहे हैं।"

गाजन का ढफला बज रहा है। वर्ष भर के बाद गाजन के शिव को आज जल से निकाला जायगा।

जगन बोला—"घोषाल जानते हो, भक्त कौन-कौन हैं?"

हरेन बोला—"ओनली फाइव।" एक हाथ की अँगुलियाँ फैला कर दिखा दी।

"चलो, ज़रा देखें।"

"चलो।"

जगन और हरेन चले गये।

यतीन बोला—"देबू बाबू?"

"हाँ।"

"क्या सोच रहे हैं?"

"सोच रहा हूँ"—देबू मुस्कराया···फिर बोला—"देखेंगे?"

"क्या?"

"मेरे साथ आइये।"

थोड़ी दूर पर ही श्रीहरि का घर है, घर के पास ही गुदाम है। गुदाम रास्ते से दीख पड़ती है। वहाँ अच्छी-खासी भीड़ लगी है। गुदाम के चौतरे पर सोने के रंग वाले धानों का ढेर पड़ा है। पास ही तीन बाँसों के बीच में बड़ा-सा तराजू लटका है। श्रीहरि एक पेड़ के नीचे कुरसी डाल कर बैठा है। कुछ आदमी देबू और यतीन को देख कर आड़ में छिप गये। तराजू पर बराबर धान तुल रहे हैं—दस राम-ग्यारह ग्यारह!

ग्यारह राम बारह बारह !'

देबू बोला—"देखा ?"

यतीन हँसकर बोला—"यदि तोर डाक केऊ सुनेना, तबे एकला चल रे।"

कुछ देर बाद यतीन बोला—"आप फिर झगड़ा निपटा लें देबू बाबू। आपको सचमुच बहुत कष्ट होगा।"

देबू हँसा. बोला—"उसकी चिंता मुझे नहीं है। मैं सोच रहा हूँ—इतने दिनों का मेला—हमारे गाँव में गाजन की कितनी धूम होती थी, गाँव भर के लोग प्राणपण परिश्रम करते थे। दूसरे गाँव वाले होड़ लगाते थे। अब वह समाप्त हो जायगा या श्रीहरि अकेला चौधरी बन बैठेगा ? देव-पूजा में भी हमारा अधिकार न रहेगा ? भगवान् भी हमारे न होंगे।"

नेलो आकर खड़ा हो गया।

यतीन ने पूछा—"क्यों ?"

"आठ आने पैसे चाहिए। घोष गाजन का मेला लगवायेंगे। खिलौने बना कर बेचूँगा। रंग लूँगा।"

"मेला लगवायेंगे श्रीहरि ?"" देबू उठकर बैठ गया।

नलिन को विदा करके यतीन बोला—"नलिन का हाथ खूब साफ़ है।"

देबू ने उत्तर दिया—"इसके नाना विख्यात कुम्हार थे।"

"कुम्हार ? नलिन तो बैरागी है !"

"हाँ। जब काँच के खिलौने चलने लगे तब बिचारा

मुसीबत में पड़कर बैरागी हो गया था। इसके अतिरिक्त विधवा लड़की का विवाह करने के लिए भी वैरागी बना।"···· कुछ देर चुप रह कर देबू बोला— 'देखता हूँ, श्रीहरि इस बार धूम-धाम के साथ मेला लगवायेगा!"

—पचीस—

ढफले की आवाज से सवेरे ही सवेरे क्यों थोड़ी रात रहते ही यतीन की आँख खुल गई। गाजन का ढफला बज रहा है पहले चैत के पहले दिन से गाजन का ढफला बजने लगता था। पिछली बार से पातू ने देवोत्तर चाकरान् जमीन छोड़ दी है इसलिए चैत की बीस तारीख से ढफला बजता है! दूसरे गाँव के एक बजाने वाले के साथ नगद पैसों पर नया इन्तजाम हुआ है। रात के अंतिम पहर में ढफले की ध्वनि यतीन को अच्छी लगी। ढफले की ध्वनि में एक गुरु गंभीर प्रचण्डता रहती है। रात के निस्तब्ध और अंतिम पहर में यह प्रचण्ड गंभीर ध्वान प्रवित्रता उत्पन्न करती है। दरवाजा खोल कर वह बाहर निकला।

यतीन विस्मित हुआ; गाँव में रात रहते ही जागरण की लहर फैल गई है! ढेंकियों में धान कूटे जा रहे हैं। औरतें रास्ते पर निकल आई हैं। उनके हाथों में पानी के लोटे हैं, चण्डीमण्डप में जल चढ़ाने जा रही हैं। बूढ़ी दादी जल्दी-जल्दी तेंतिस कोटि देवताओं के नाम ले रही है—यहाँ से भी

सुन पड़ता है। गाजन के कुछ भक्त स्नान करके लौट रहे हैं, वे कह रहे हैं—'बोलो-शिवो-शिवो शिवो हे! हर हर बम! हर हर बम!'

यतीन सबेरे ही उठता है परन्तु रात के अंतिम पहर में आज ही उठा है इसीलिए गाँव का यह रूप उसे नया जान पड़ता है। वह जब उठता था तब बूढ़ी दादी भगवान् और पुरुषों को गालियाँ देना आरंभ करती थी और स्त्रियाँ देवार्चना समाप्त करके गृह-कार्य में जुट जाती थी।

अनिरुद्ध के घर की खिड़की खुली। हल्के अँधेरे में उघिड़े और गोबरा छाया मूर्ति की भाँति निकले। उनके पीछे पद्म बाहर आई, उसके हाथ में भी पानी का लोटा है।

काँ काँ करती हुई एक बैलगाड़ी जा रही है, उस पर खाद लदी है। खेतों में मुँह अँधेरे ही काम शुरु होगया है। खाद डाली जारही है। खाद की गाड़ी पर ही हल रक्खा है। खाद डालकर खेत जोता जायगा। उस दिन के पानी का रस अभी जमीन पर है। धूप में कीचड़-सूख गया है और मिट्टी जोतने के लायक होगई है। हल का फार कोमल मिट्टी में पूरा घुस जायगा और निर्विघ्न, निःशब्द, स्वच्छन्द गति से छेने में धार-दार छुरी की तरह चलेगा। दोनों ओर बड़े-बड़े ढेले उलट जायँगे और धार में जरा सी भी मिट्टी न लगेगी, मामूली चोट से ही ढेले फूट जायँगे। बैल और भैंसें आराम के साथ धीर और अनायास गति से चलेंगे। ऐसी जुताई में किसान को

आनंद मिलता है—अंतर में आनन्द-रस का क्षरण होता है।

एक साथ छः हल जलूस की भाँति निकल गये। उनके पीछे खाद से भरी चार गाड़ियाँ हैं। हृष्ट-पुष्ट और बड़े-बड़े बैल देखकर आँखें ठण्डी हो जाती हैं। यह श्रीहरि घोष की माया है। घोष के घर में दस हल और बारह किसान हैं। घोष की सुप्रसन्न भाग्य छटा सर्वत्र प्रतिफलित हो रही है।

कुरता पहन कर यतीन रास्ते में उतर आया और गाँव पार करके मैदान में निकल गया। लम्बा मैदान है, इसके दूसरे किनारे पर मयूराक्षी का बाँध है। बाँध के पास हरा जंगल है, जगल में ताड़ के वृक्षों की पंक्तियाँ सिर उटाये खड़ी हैं—पलास, शिमुल, शिरीष और तेंतुल के पेड़ भी काफ़ी हैं। पेड़ों के ऊपर काले—अस्पष्ट आलोक से उद्भासित आकाश में जॅकसन के कारख़ानों की चिमनियां दीख पड़ती हैं। कारख़ानों में भोपूँ बज रहे हैं—एक साथ चार-पाँच कारखानों से आवाज़ निकल रही है।

मैदान पार कर यतीन बाँध पर चढ़ा और मयूराक्षी की तट-भूमि में उतरा। पानी पाकर घास का रंग हरा हो गया है। उसमें बड़े यत्न से जोती हुई तरी-फसल की ज़मीन और उसकी भुरभुरी मिट्टी सुहावनी जान पड़ती है। भूमि में सब्जियों की बेलें साँप की तरह फन बढ़ा कर फैलने लगी हैं। तीतरों के झुण्ड सवेरे ही खाद्यान्वेषण में निकल पड़े हैं। वे दीमकों की बांबियाँ और पतिंगों के गर्त खोद रहे हैं। यतीन के

पैरों की आवाज़ सुनकर कुछ तीतर फर-फर उड़े और जंगल में छिप गये।

आकाश लाल हो गया है। यतीन नदी की बालू पर पहुँच कर खड़ा हो गया। पूर्व के दिगन्त में जहाँ बालुका-गर्भ-मयी मयूराक्षी आकाश की सीमा के साथ मिल गई है, वहाँ सूर्योदय हो रहा है। दो-चार दिन बाद माघविषुव संक्रांति है। मयूराक्षी यहाँ ठीक पूर्ववाहिनी है।

मयूराक्षी पार करके यतीन जंक्शन के घाट पर पहुँचा। सप्ताह में दो बार उसे थाने में हाजिरी देने जाना पड़ता है। वैसे, वह चाय पीकर थाने जाता है। आज उषा के उन्माद में जब यहाँ तक आया है तब हाजिरी के काम से निपट कर लौटना ही ठीक होगा।

× × × ×

गाँव के रास्ते पर पैर रखते ही यतीन को एक नये झगड़े का समाचार मिला। कई दिन के झगड़ों ने गाँव के मंथर जीवन-प्रवाह की ताल भंग कर दी है। आज किसी ने श्रीहरि के बगीचे के सब पेड़ काट कर उसे तहस-नहस कर दिया है। अफवाहें, चर्चा और उत्तेजना से गाँव चञ्चल हो रहा है। क्रोध और दुःख से अधीर श्रीहरि चण्डीमण्डप में सिर के बाल नोचता हुआ घूम रहा है। आज उसकी पुरानी छिरूपाल की मूर्ति फिर प्रकट हुई है। गाँव से थोड़ी दूर पर उत्तर की ओर अर्थात् मयूराक्षी से विपरीत दिशा में बाढ़ के भय से सुरक्षित मैदान में श्रीहरि ने एक पक्के ताल का कीचड़ साफ करवाया है और

उसके चारों तरफ एक बगीचा लगवाया है। बगीचा पुराने किसान छिरूपाल के उन्मादक नशे और वर्तमान कुलीन श्रीहरि की कल्पना ने मिलकर बनाया है। श्रीहरि ने मालदह और मुर्शिदाबाद से आम, कलकत्ते से लीची और विभिन्न स्थानों से केलों की बढ़िया कलमें मँगवा कर लगवाई हैं। फल की कामना ही नहीं, उसे फूल का नशा भी है, इसीलिए अशोक, चम्पा, गुलाब, गन्धराज और बहुत से फूल भी लगे हैं।

श्रीहरि की कल्पना और भी आगे गई है। बगीचे में वह दो सुन्दर कमरे बनवाना चाहता है। कमरों के सामने एक पक्का चौतरा होगा, चौतरे के नीचे ताल तक गई पक्की सीढ़ियाँ होंगी। कल्पना को पूर्ण करने के लिए उसने कच्चे घाट के दोनों कोनों पर कनक चम्पा के दो पेड़ लगाये हैं। अशोक का पेड़ बगीचे के प्रवेश द्वार पर ही रखा गया है। पेड़ तैयार होते ही वह बगीचे में बैठने के लिए स्थान बनावेगा, और फिर जब इच्छा होगी तब मित्र-मण्डली के साथ यहाँ रात्रि-विहार करेगा। गाना, बजाना और पान-भोजन होगा—कंकना के बाबुओं की तरह।

पिछली रात में श्रीहरि के इस बगीचे को न जाने कौन काट-कूट कर बरबाद कर गया है। श्रीहरि कह रहा है—चिल्ला कर कह रहा है—"मैं भी उसका सिर काट डालूँगा।"

श्रीहरि की धारणा है कि उसने जिनके पेड़ काटे हैं, वही यह काम कर गये हैं। पंच पाण्डवों से असन्तुष्ट अश्वत्थामा ने

जैसे निष्ठुर होकर अंधेरे में पाण्डव पुत्रों की हत्या की थी वैसे ही गुस्से में भरा हुआ कापुरुष शत्रु उस के प्यार का बगीचा बरबाद कर गया है। श्रीहरि उसे छोड़ नहीं सकता। अश्वत्थामा के सिर की मणि निकाल कर वह भी बदला लेगा। थाने में खबर भेजी गई है। भूपाल यतीन को रास्ते में ही मिला था।

हरेन घोषाल बहुत दब गया है। श्रीहरि के इस दुर्दान्त रूप से वह बहुत डरता है। छिरूपाल ने एक दिन उसे पानी में गोते खिलाए थे और गरदन पकड़ कर ज़मीन पर नाक रगड़ाई थी। वह ब्राह्मण से नहीं डरता, भले-आदमी का सम्मान नहीं करता। यतीन लौटा तो वह सूखा मुँह लेकर उसके पास पहुँचा और बोला—"यतीन बाबू—केस इज़ सीरियस। छिरूपाल इज़ फ्यूरीयस।"

जगन घोष परम प्रसन्न हुआ है। वह सर्वोत्तम और सूक्ष्म विचारक विधाता के दण्ड के साथ इसकी तुलना करता है। थर्ड-क्लास तक पढ़ी हुई विद्या के बल से उसने देवभाषा में इसकी व्याख्या की—षण्डस्यशत्रु व्याघ्रेन निपातितः। अर्थात् षांड के शत्रु को बाघ ने मारा है।

देबू बोला—"नहीं डाक्टर, काम तो बुरा हुआ है। छि!"

"तुम रहने दो। तुम धर्मपुत्र युधिष्ठिर हुए।"

देबू ने कोई उत्तर न दिया, बुरा भी न माना। वह वास्तव में दुखित हुआ है। पेड़ श्रीहरि ने बड़े यत्न से लगाये थे, फल भी वही खाता। श्रीहरि ने जब उसका पेड़ कटवाया था, तब

भी उसे दुःख ही हुआ था। पेड़-पत्तों से उसे बड़ी ममता है। वे पेड़ बड़े होते—हर साल फूलों फलों से सजते, और पीढ़ियों तक इसी तरह फलते-फूलते। मनुष्य की अपेक्षा पेड़ की परमायु अधिक होती है। श्रीहरि, श्रीहरि के बच्चे और उनके भी उत्तराधिकारी इन्ही पेड़ों के फलों और फूलों से परितृप्त होते, देवता को भोग लगाते, गाँव में बाँटते। ऐसे पेड़ क्या इस तरह नष्ट करने चाहिए ?

भनभनाता हुआ उचिड़े हाज़िर हुआ—"दारोगा आया है।"

हरेन चौंका—"कहाँ ?"

उचिड़े इतनी देर में घर के भीतर पहुँच गया था, उत्तर गोबरा ने दिया—वह उचिड़े के पीछे था—बोला—"वह ताल देखकर गाँव में आ रहा है।"

अब जगन भी शंकित हुआ, बोला—"यतीन बाबू, वह बेटा हम लोगों के ही नाम लिखवायेगा। पुलिस भी शायद चालान कर दे। जमानत-ज़मानत की व्यवस्था आपको ही करनी पड़ेगी। कांग्रेस के सेक्रेटरी को चिट्ठी लिख दीजिए।"

दुर्गा आकर खड़ी हुई—"पंडित जीजा !"

"दुर्गा ?" "देबू यतीन के तख़्त पर लेटा था, उठकर बैठ गया।

"हाँ। घर चलो।"

"क्यों ?"

"पुलिस आई है। तालाशी लेगी। डाक्टर, आप के घर के सामने भी सिपाही खड़ा है।"

हरेन सब से पहले उठा—"माई गाड! मेरे घर में तो माँ की गीता पड़ी है!"

एक कॉस्टेबल और तीन चौकीदारों ने अनिरुद्ध का घर घेर लिया।

रास्ते में दुर्गा बोली—"पंडित जीजा!"

"क्या री?"

"घर में कुछ हो तो मुझे दे दो। मैं पेट में छिपा कर निकाल ले जाऊँगी।"

"क्या होगा मेरे घर में? कुछ नहीं है।"

घर के दरवाजे पर स्वयं सब इंस्पेक्टर खड़ा था, वह बोला—'पंडित, आपका घर सर्च करूँगा। दुर्गा, तू अन्दर न जाना।"

दुर्गा बोली—"अरे वाह, मेरा दूध का लोटा वहाँ पड़ा है। मेरे ऊपर क्यों बिगड़ रहे हैं?"

दारोगा हँसा, बोला—"तू बड़ी बज्जात है। कहाँ है लोटा, बता, चौकीदार ला देगा।"

देबू बोला—"आइये दारोगा जी, दुर्गा तू बैठ, मैं लोटा भिजवा देता हूँ।"

दारोगा ने कहा—"साफ़-सुथरी जगह देखकर बैठना दुर्गा, कहीं साँप बिच्छू न काट ले।"

देबू ने एक चीज़ के सम्बन्ध में न सोचा था।

तलाशी लेते समय पुलिस ने दाँव, कुल्हाड़ी और कटारी आदि को बड़ी तीक्ष्ण दृष्टि से देखा, वह पेड़ काटने के निशान ढूँढ़ रही थी। कपड़े देखे कि इनमें केले के रस के दाग हैं या नहीं। किन्तु उसे कुछ न मिला। फिर पुलिस ने प्रजासमिति का रजिस्टर उठाया। देबू इस रजिस्टर को भूल ही गया था। और सब घरों से पुलिस खाली हाथ लौटी थी।

श्रीहरि ने यतीन के नाम पर भी अपना संदेह प्रकट किया था। श्रीहरि के मित्र जमादार साहब होते तो पता नहीं क्या करते परन्तु सब इंस्पेक्टर ने इस बात को सुना ही नहीं, वह बोला—"घोष बाबू, प्रत्येक चीज़ की मात्रा होती है—आप मात्रा से बाहर न जाँय।"

इस संसार में जो सत्य के विधान का उलंघन करना चाहते हैं, वे भगवान् को सब से अधिक मानते हैं। विधाता प्रसन्न रहे तो सब अपराधों का दण्ड हल्का हो जाता है—यही विश्वास उनके लिए चरम सांत्वना होता है। श्रीहरि झटपट बोला—"नहीं, नहीं, यह मेरी भूल है। आप ठीक कहते हैं।"

देबू के घर की तलाशी लेने के बाद दारोगा ने कहा—"पंडित, हम आपको ही एरेस्ट करते हैं, आप प्रजासमिति के प्रेसीडेण्ट हैं और हमें सन्देह है कि यह काम प्रजासमिति के द्वारा ही हुआ है। अवश्य हमारी इनक्वायरी अभी समाप्त नहीं

हुई; फिलहाल आपको ही गिरफ्तार करने हैं। चार्ज अवश्य थेफ्ट है!"

देबू बोला—"थेफ्ट चार्ज—चोरी? मेरे विरुद्ध?"

दारोगा हँसा—"पेड़ काटना तो है ही, उसका समन एस० डी० को भेजेंगे। घोष की, लोहे के गेंगों की दो जाफरियां भी चोरी गई हैं।"

"मेरा चोरी के चार्ज में चालान करेंगे दारोगा बाबू?" देबू ने मर्मान्तक आक्षेप के साथ पूछा।

"आप तो जानते हैं पंडित, अर्जुन जैसे वीर को भी समय-दोष से नपुंसक बनना पड़ा था। आप दुखित न हों; देर हो गई है, खा-पी कर निपट लें।"

दारोगा के उत्तर से देबू को आश्चर्यजनक सांत्वना मिली। उसने हँस कर पूछा—"आप भी कुछ पानी-वानी पियेंगे?"

"नौकरी महापाप होती है पंडित, खाऊँगा अवश्य परन्तु आप के यहाँ भी नहीं, घोष के यहाँ भी नहीं, अपने यतीन बाबू हैं, वहीं कुछ हो जायगा।"

दारोगा यतीन के पास जाकर बैठा।

गाँव वाले सिर झुकाए बैठे थे, सब विस्मय के साथ सोच रहे थे—यह काम किसने किया?

औरतें देबू के घर में जमा हुई थी। बहुत सी आँगन में खड़ी थी, कुछ चौतरे पर बैठ गई थीं। बिलू जैसे पत्थर हो गई थी।

दुर्गा की आँखों से आँसुओं की अनर्गलधारा बह रही थी। बूढ़ी दादी के विलाप का अंत न था। पद्म बिलू के पास बैठी थी। बिलू के दुःख से वह भी असीम दुःख का अनुभव कर रही थी। वह सोच रही थी—अहा, इस दुःख को वह अपने ऊपर लेकर बिलू का दुःख यदि दूर कर सकती! घूँघट के भीतर से उसकी आँखों से भी आँसू टपक रहे थे।

अकस्मात् उचिड़े दौड़ता हुआ आया, कौशल के साथ भीड़ में सिर बढ़ा कर सीधा पद्म के पास पहुँचा और हाँफता हुआ बोला—"जल्दी घर चलो माँ जी!"

यतीन की देखा देखी वह भी पद्म को माँ जी कहता है।

पद्म ने खीझ कर गरदन के इशारे से ही पूछा—"क्यों!" वह समझ गई यतीन बुला रहा है, चाय बनानी पड़ेगी।

"कम्मकार को दारोगा जी पकड़े लिए जाते हैं।"

पद्म का दिल धक् से बैठ गया, उसका सर्वांग काँपने लगा। अनिरुद्ध को पकड़े लिए जाते हैं?···सभी चौंके।

सिर में तेल मलते-मलते देवू ने पूछा—"उसे क्या हुआ?"

"कम्मकार ने खुद ही कहा, मुझे पकड़ो।···दारोगा ने पकड़ लिया है"···उचिड़े जैसे भीड़ के भीतर घुसा था, वैसे ही बाहर हो गया।

किसी तरह आत्मसंवरण करके पद्म भी चली।

"लुहारिन!"

घूमकर देखा, दुर्गा बुला रही है।

"मैं भी चलती हूँ!"

उचिड़े समझा कर नहीं कह सका परन्तु झूठ नहीं बोला। स्तब्ध जनता के बीच से अकस्मात् अनिरुद्ध निकला और जोश के साथ छाती तान कर दारोगा के सामने खड़ा हो गया, बोला—"मैं ने—मैं ने पेड़ काटे हैं, पण्डित कुछ नहीं जानते। पकड़ना है तो मुझे पकड़ो, उन्हें छोड़ दो।"

दारोगा के साथ-साथ एकत्रित जनता भी विस्मय के साथ उस के मुँह की ओर देखने लगी।

"कल रात में मैंने आरी से पेड़ काटे हैं और जाफरी उठा-कर ताल में फेंक दी है।"

अनिरुद्ध ने भी झूठ नहीं कहा। तेज आरी के द्वारा अनिरुद्ध ने श्रीहरि से अपने पेड़ काटने का बदला लिया है। प्रतिशोध के उन्मत्त आनन्द से उसने नाचते-नाचते पेड़ काटे हैं और छोटे बच्चे की तरह बलिदान के समय बजने वाले बाजे के बोल उड़ाये हैं—खा-जिं-जिं. जिनाक-जि-जिं, ना-जि-जिं-जिनाक-जिना। किसी को पता नहीं चला, पद्म को भी नहीं। दोनों लड़कों को लेकर पद्म आज कल अलग सोती है; अनिरुद्ध चुपचाप निकल गया था और चुपचाप ही लौट आया। सवेरे से छिरू की बमक सुनकर वह पुलकित हो रहा था, पुलिस आने पर भी नहीं डरा। आरी को सवेरे ही आग में डालकर उसने अपराध का चिह्न भी मिटा दिया है। कपड़ों में केले

के दाग लग गये थे, उन्हें खिड़की के पास वाले ताल में गाड़ आया है। परन्तु दारोगा ने जब देबू पण्डित को पकड़ा तब वह चौंका। उस के दिल पर एक करारी चोट लगी। यह क्या हुआ ? पंडित को क्यों गिरफ्तार किया ? देबू को ? अभी तो वह जेल से बाहर आया है और फिर बेकसूर ही पकड़ा गया है ? इस गाँव में सब से भला आदमी, परोपकारी, उसका लँगोटिया साथी; विपत्ति का बधु देबू पकड़ा गया ? जगन को नहीं पकड़ा, हरेन को न पकड़ा, देबू ही पकड़ा गया ? भीड़ में बैठा और भूमि की ओर उदास चित्त से देखता हुआ वह यही सोच रहा था। उसके अपराध का दण्ड भोगने के लिए देबू भाई जेल जायगा ? सब आदमी चुपचाप हाय हाय कर रहे हैं। आक्षेप से वह अधीर हुआ। आत्मसंवरण करना कठिन हो गया। आवेग की प्रबल दीप्ति के साथ वह दारोगा के सामने खड़ा हुआ और अपना अपराध स्वीकार कर लिया।

देबू ने आकर उसे छाती से लगा लिया।

'कोई चिन्ता न करना अनि भाई। मैं प्राण देकर भी तुम्हें छुड़ाने की चेष्टा करूँगा।"

अनिरुद्ध उत्तर न दे सका, गंभीर पुलक से निर्विकार की भाँति हँस कर सजल आँखों से देबू की ओर देखने लगा।

गाँव भर ने अनिरुद्ध की तारीफ़ की। —मर्द जैसा काम किया है अनिरुद्ध ने। आदमी हो तो ऐसा।

घर के भीतर पद्म निर्वाक् खड़ी रही, आँखों से आँसू

ही बहते रहे। दुर्गा पास ही खड़ी थी। उचिंड़े और गोबरा भी वहीं थे। अनिरुद्ध के आते ही वे हट गये। अनिरुद्ध ने सजल आँखों से निर्विकार की भांति सब को देख कर कहा—"फिर मैं चला।"

पद्म ने भोजन न बनाया था, यतीन के भोजन में भी देर थी। देबू बोला—"मेरे लिए भात बना है। अनि भाई, वहीं से खा लो।"

देबू के घर में खा कर अनिरुद्ध थाने गया।

चलते समय दारोगा दुर्गा से कह गया—"थाने आना, तेरे नाम की एक रिपोर्ट है।"

आज यतीन ने स्वयं भोजन बनाया। उद्योग उचिंड़े और गोबरा ने किया, बताया दूर बैठकर दुर्गा ने।

पद्म थोड़ी देर घर में बैठी. फिर रही खिड़की से निकल कर ताल पर पहुँची। वहाँ बैठकर किसी नामहीन व्यक्ति को लक्ष्य कर तीक्ष्ण स्वर में कठोर और निर्मम शाप देने लगी:—

"शरीर में खून न रहेगा, अकाट रोग होगा। पत्थर का बदन होगा तो फट जायगा, लोहे का होगा तो गल जायगा। अलक्ष्मी आवेगी, लक्ष्मी बनवासिनी होगी, घर में आग लगेगी, धान जल कर भस्म हो जायेंगे।"

पद्म के मन में रूढ़ शापों के और भी तीखे शब्द घूम रहे थे—"बेटा मरेगा, वंश नाश होगा, दोनों लड़के एक ही बिछौने पर छटपटायँगे।"...परन्तु साथ ही साथ एक विशीर्ण

गौरवर्णा सीमन्तिनी का कातर करुणा से भरा मुंह भी याद आता था। धीरे-धीरे वह चुप हो गई।

दुर्गा ने आकर कहा— 'लुहारिन, चलो भाई, नज़रबन्दी बाबू भात लिए बैठे हैं।"

पद्म ने जवाब भी न दिया।

"मुँह जली उठती क्यों नहीं, भकोसेगी नहीं, तेरे लिए हम सब भूखे मरेंगे ?"

अब इस सुमधुर संभाषण से उचिड़े ने बुलाया।

पद्म ने उत्तर दिया—"तुम खाते नहीं, अभागो—मैं न खाऊँगी, जा।"

"नज़रबंदी बाबू देता जो नहीं। तू न खायेगी तो हमें भी न देगा, खुद भी न खायेगा। कम्मकार मर तो नहीं गया जो उस के लिए इतना रो रही है।"

"अरे मुँहजले..."गुस्से से भर कर पद्म उठी और सीधी घर में घुस गई।

× × × × ×

उनतिस चैत को अनिरुद्ध का मुकदमा है। मुकदमा लंबा-चौड़ा नहीं है; उसने स्वयं अपराध स्वीकार किया है—। सजा उसे हो ही जायगी। देबू कई बार सदर जा चुका है। वकीलों-मुख्तारों ने एक ही बात कही है कि दो महीने से लगा कर ६ महीने तक की सज़ा हो सकती है, हाकिम की जैसी मर्ज़ी हो।

इनस्पेक्टर इस बीच में और एक बार जाँच कर गया है। जाँच का विषय यह था कि इस घटना के साथ प्रजा-समिति का कोई संबन्ध है या नहीं। गाँव वालों से वह स्पष्ट शब्दों में कह गया है—"यह ठीक है कि प्रजा-समिति ने अनिरुद्ध से यह काम करने के लिए नहीं कहा परन्तु गाँव में प्रजा-समिति न होती तो यह काम भी न होता।"

दुर्गा को बुलाया गया था कि उसके विरुद्ध एक रिपोर्ट हुई है। यह नहीं बताया गया कि रिपोर्ट किस ने की है फिर भी दुर्गा समझ गई थी। इंस्पेक्टर ने तीक्ष्ण दृष्टि से उसकी ओर देख कर पूछा था—"सुनता हूँ कि यहाँ के जितने दागी बदमाश हैं उन सब के साथ तेरा मेल है, उनके साथ तू ..। मामला क्या है?"

दुर्गा ने हाथ जोड़कर कहा था—"जी हजूर, यह तो सत्य है कि मैं नष्ट-दुष्ट हूँ लेकिन मुझे यह कैसे मालूम हो कि हमारे गाँव के घोष महाशय—श्रीहरि घोष, थाने के जमादार बाबू और यूनन के परसीडन बाबू—सब दागी बदमाश हैं!"

इंस्पेक्टर ने डाँटा था परन्तु दुर्गा हिली नहीं। बोली—"आप सब को बुलाइये, मैं मुँह पर कह दूँगी। अभी उस दिन रात को जमादार आये थे, श्रीहरि के बैठके में बैठे थे, मुझे बुलाया—मैं गई। उसी दिन तो मुझे घोष की खिड़की वाले ताल पर साँप ने काटा था—परमायु थी, बच गई। रामकिसन सिपाही जी थे, भूपाल चौकीदार था—पूछिए उनसे।"

इंस्पेक्टर ने बात न बढ़ाकर कड़ी दृष्टि से देखा था और कहा था—"अच्छा, अच्छा, तू जा, होशियार रहना।"

दुर्गा परम भक्ति के साथ एक प्रणाम करके चली आई थी।···

पद्म को संभालना अवश्य कठिन हो रहा है। उसके मिजाज का पता ही नहीं चलता, अभी कुछ है, थोड़ी देर में कुछ हो जायगा। उचिंड़े और गोबरा हत्बुद्धि हो गये हैं। लेकिन वे घर में अधिक रहते भी नहीं। बीस तारीख को गाजन का बाजा बजा था, शिव बाबा जल से निकाले गये थे, तब से वे दोनों नंदी-भृंगी बने चण्डी-मण्डप में ही पड़े रहते हैं। गाजन के भक्तों की टोली बाण-गोसाईं को लेकर गाँवों में भीख माँगने जाती है—दोनों छोकरे भी साथ हो जाते हैं।

गाँव में इस बार गाजन का समारोह बढ़ा-चढ़ा दीख पड़ता है। श्रीहरि ने चण्डी-मण्डप में शिवाला और मण्डप बनवाने का विचार मुल्तवी कर दिया है परन्तु गाजन के प्रबन्ध में कमर बाँध कर जुट गया है। वह समझता है कि देबू घोष, जगन डाक्टर और एक दुधमुँहा आगंतुक बालक मुझे अपमानित करने के लिए ही गाजन का समारोह बिगाड़ना चाहते हैं। इसीलिए गाजन के प्रबंध में वह दुगने उत्साह के साथ भिड़ गया है। एक छोटा-सा मेला लगाने का भी प्रबंध हो रहा है। गाने-बजाने वाली कई पार्टियाँ बुलाई गई हैं। जो यह कहते हैं कि हम चण्डी-मण्डप के लिए बेगार न करेंगे उनको उस

आनंद-आयोजन के द्वार पर कुत्ते की तरह खड़ा रखने के लिए ही यह व्यवस्था की गई है! भात डालने से कौव्वे और कुत्ते स्वयं आ जाते हैं। वह जिस दिन धान उधार दे रहा था, उस दिन गाँव वाले उसके घर के आस-पास घूम-घूमकर उसकी दृष्टि आकर्षित करने का प्रयास करते थे। भवेश चाचा इसी बीच में कई आदमियों के लिए सिफारिश कर गये हैं। बातचीत चल रही है। वे अपनी भूल मान कर क्षमा माँगने के लिए भी प्रस्तुत हैं; प्रजा सम्मति भी वे छोड़ देंगे।···गड़-गड़ा पीते-पीते श्रीहरि मुस्कराया!···परन्तु हरिजनों को वह क्षमा न करेगा। कुत्ते होकर वे भगवान् के सिर पर चढ़ना चाहते हैं!

कल अनिरुद्ध का मुकदमा है। सदर जाना पड़ेगा। श्रीहरि चंचल हुआ। अनिरुद्ध को सजा हो गई तो घर में पद्म अकेली रहेगी। अन्न का अभाव होगा—वस्त्र का अभाव होगा। दीर्घांगी, आयतनयना, उद्धता, मुखरा पद्म। देख लूँगा कि अब वह क्या करती है! इसके बाद अनिरुद्ध की चौबिगही। लुहार की सारी ज़मीन ही नीलाम पर चढ़ी है, शायद हो भी गई हो। चलो, कल गाजन का दिन है, महाविषुव संक्रांति है, कल वह अनुपस्थित रहेगा, हरीश दादा और भवेश चाचा को ही भार देना पड़ेगा!

कालू सेख ने आकर सलाम किया, कहा—"हुजूर की माँ बुला रही हैं।"

"माँ ? ओह, आज नील षष्ठी है !"··· श्रीहरि उठकर घर के अंदर चला गया।

चैत संक्रांति से एक दिन पहले नील षष्ठी होती है। तिथि में छठ न होते हुए भी नील को मानता करने वाली स्त्रियाँ इस दिन षष्ठी का उपवास रखती हैं, पूजा करती हैं और लड़के के माथे पर टीका लगाती हैं। कहते हैं, नील अर्थात् नीलकण्ठ ने इसी दिन लीलावती के साथ ब्याह किया था। फिर लीलावती की गोद नीलमणि से शोभित हुई। नील षष्ठी का उपवास करने वाली स्त्रियों को नीलमणि जैसी संतान मिलती है।

पद्म सब षष्ठियाँ पालन करती है। आज भी उसने उपवास रखा है। परन्तु वह उचिड़े और गोबरा के लिए परेशान हो रही है। दोनों सवेरे से ही नहीं दीख पड़े। आज चड़क निकला है; भक्तों की टोली गाँव-गाँव घूम रही है। डफले वाला उसके साथ डफला बजाता है और लोहे की कीलों से भरे तख्ते पर एक भक्त लेटा है। यह क्या साधारण बात है ? वे दोनों इसी टोली के साथ घूम रहे हैं। पहले यहाँ भक्तगण अपने शरीर में बाण भी छेदते थे, अब नहीं छेदते।*... पद्म

* संयुक्त प्रांत आदि में भी निम्न जातियों के देवी भक्त चैत में ऐसे ही उत्सव करते हैं। वे जुलूस बना कर देवी की पूजा करने जाते हैं। जुलूसों में देवी भक्त कई कष्ट-साध्य प्रदर्शन करते हैं। लोहे के लम्बे बरछे से भक्त अपना एक गाल छेदता है और दूसरे गाल से बरछे का फल बाहर निकालता है। बरछे का वजन बराबर किया जाता है और उसके

कुछ देर और प्रतीक्षा करने के बाद चण्डीमण्डप के निकट खड़ी हुई। मण्डप में डफला बज रहा है। शायद चड़क लौट आया है; फिर शाम को जायगा।

चण्डी-मण्डप के आस-पास मेला लगा है। लग-भग बीस दुकाने हैं। मिठाई और पकौड़ी की दुकानें ही अधिक हैं। बैंगनी, फुलौरी और पापड़ तले जा रहे हैं; लड़कों के गुट्ट खरीद रहे हैं। चार-पाँच मनिहारी की दुकानें हैं, वहाँ तरुणियों की भीड़ ही अधिक है, वे फीते, बिंदी, महावर आदि ले रही हैं। पेड़ के नीचे तीन चूड़ी वाली बैठी हैं। एक पेड़ के नीचे बैरागियों का नेलो भी कुछ खिलौने लिए जमा है। वाह! लड़के ने खिलौने तो अच्छे बनाए हैं! वह बूढ़ा कैसा है, हाथ में हुक्का लिए तमाकू पीता है और गरदन हिलाता है! गाँव के जवान और अधेड़ धीरे-धीरे टहल रहे हैं। दो दिन के लिए खेती का काम बन्द है। इन दो दिनों में हल नहीं जोता जाता, बैल नहीं नथे जाते। दो दिन पूरी छुट्टी रहती है।

उचिड़े और गोबरा का पता न चला, फिर शायद चड़क अभी नहीं लौटा। यह डफला श्रीहरि घोष की माँ की षष्ठी पूजा का डफला है। पद्म को शायद यह पता नहीं चला कि श्री हरि ने इस बार दस डफलों की व्यवस्था की है।

पातू अपना गाँव छोड़ कर दूसरे गाँव में बजाने गया है।

दोनों सिरे दो आदमी पकड़ लेते हैं। अब ऐसे प्रदर्शनों की प्रथा उठती जा रही है।

सर्वत्र यही अवस्था है। बजाने वालों की चाकरान् जमीन सर्वत्र छिन गई है। इस गाँव का डफलिहा उस गाँव में जाता है और उस गाँव से इस गाँव में आता है। सतीश भी अपनी मण्डली लेकर दूसरे गाँव गया है।

पद्म घर लौट आई और आँचल बिछा कर भूमि पर लेट गई। दूसरे के बच्चों को लेकर उसे यह कैसी विडम्बना भुगतनी पड़ती है! थोड़ी देर बाद वह फिर निकली। इस बार दोनों दीख पड़े, उनके मुँह सूख गये थे और बदन धूलि धूसरित हो रहा था। वह दोनों को पकड़ लाई और यतीन के पास आकर बोली—"देखो, इनकी दशा देखो। तुम इन्हें डाँटते क्यों नहीं?"

यतीन मुस्कराया, बोला नहीं।

पद्म बोली—"हँसो नहीं। तुम्हारी हँसी से मेरे तन-बदन में आग लगती है। अन्दर चलो, टीका लगा दूं!"

टीका लगा कर पद्म ने कहा—"हँसने की बात नहीं है, तुम उचिंड़े से कहो, ऐसे बाहर जायगा तो निकाल दूँगा, खाने को न दूँगा, भगा दूँगा। गोबरा अच्छा है, उचिंड़े ही उसको ले जाता है, कल से कहीं बाहर न जांय।"

यतीन ने कृत्रिम गांभीर्य के साथ कहा—"तथास्तु माँ जी!"...फिर उसने उचिंड़े को करारी और गोबरा को हल्की धमकी दी।

× × × ×

उचिंड़े होम संक्रांति अर्थात् गाजनं के दिन घर में बैठे?

वह मुँह अंधेरे ही डफले की आवाज़ सुन कर और गोबरा को साथ लेकर खिसक गया और फिर न लौटा, वह जानता था कि घर गया तो पद्म पकड़ कर बिठा लेगी।

आज शिव बाबा की पूजा है। पूजा होगी, बलिदान होगा, होम होगा। आज लोहे की कीलों वाला तख्ता इस ढङ्ग से लगाया गया है कि भनभन् घूमेगा और उस पर भक्त दिन भर लेटा रहेगा।

उचिड़े ने गोबरा से कहा—"आज भाई मैं भी शिव का उपास करूँगा।"

"उपास ?"...गोबरा को भूख अधिक लगती है।

"हाँ। शिव बाबा का उपास। सब करते हैं। न करने से पाप होगा। उपास करने से खूब रुपया मिलता है।"

गोबरा इस बात से इनकार न कर सका कि सब उपास करते हैं। गाजन का उपवास सार्वजनिक ही होता है। चमारों और पासियों से लगा कर उच्चतम वर्ण के ब्राह्मण तक उपवास रखते हैं। अनिरुद्ध के मुकदमे में देबू उपवास रख कर ही गया है। श्रीहरि ने भी व्रत रखा है। परन्तु गोबरा यह न मान सका कि रुपया उपवास रखने से ही मिलता है।

उचिड़े ने गोबरा की अनिच्छा समझ ली, बोला—"बहुत भूख लगेगी तो वो—चौधरियों के बगीचे में आम तोड़ कर खायेंगे। खूब बड़े बड़े हो गये हैं—समझा ? आम तोड़ने पर चौधरी कुछ न कहेंगे और पाप भी न होगा।"

अब गोबरा को वैसी आपत्ति न रही।

"न होगा तो किसी के घर से माँग कर खा लेंगे।"

"उंहूं। माँ जी मारेंगी। कहेंगी—भिखमंगा कहीं का, निकल यहाँ से!"

"फिर चलो महागराम चलें। वहाँ यहाँ से ज्यादा धूम है और वहाँ माँगेंगे तो माँ जी को मालूम भी न होगा।"

गोबरा इस प्रस्ताव से विशेष उत्साहित हुआ।

गाँव के किनारे एक सूखे ताल पर लँगड़े पुरोहित का तीन पैर वाला घोड़ा घास चर रहा था। उचिंड़े खड़ा हो गया। बोला—"यह घोड़ा तो पकड़।"

"दुलत्ती मारेगा।"

"तेरा सिर, पीछे की एक टाँग तो टूटी है। दुलत्ती उठायेगा तो खुद ही जमीन पर गिर पड़ेगा। पकड़, इसी पर बैठ कर चलेंगे। धोती खोल के लगाम बनायेंगे।"

घोड़ा सचमुच दुलत्ती नहीं मार पाता, परन्तु काटता है, पागल कुत्ते की तरह दाँत निकाल कर काटने दौड़ता है। इसी लिए उचिंड़े को अश्वारोहण का संकल्प छोड़ना पड़ा।

शाम को गाजन की पूजा समाप्त हो गई। चड़क भी लौट आया है। भक्त आग के फूलों का खेल भी देख चुके हैं। बलि-होम भी हो गया है। मत्थे पर तिलक लगाये भवेश और हरीश चण्डीमण्डप में बैठे हैं। श्रीहरि अब तक सदर से नहीं लौटा। डफलिहा बड़े उत्साह के साथ अपने बाजे और

हाथों की करामात दिखा रहे हैं। बड़े बड़े डफले हैं और उनके सिर पर डेढ़ हाथ लम्बे परों के फूल लगे हैं; भले आदमी कहते हैं, ढाक का बजना जब बन्द हो जाता है तब उसकी आवाज मीठी लगती है परन्तु डफले की गुरु गम्भीर ध्वनि निपुण वाद्यकर के हाथ से जब रागिनी के बोल बोलती है तब आकाश और वायुमण्डल गूञ्ज जाता है—गुरुगंभीर ध्वनि का आघात मनुष्य के अन्तर में भी गुरुगंभीर झंकार उत्पन्न करता है। प्रत्येक ढफलिहा नाच नाच कर और अनेक भावभंगियों के साथ मुँह से बोल बोल कर क्रमशः डफला बजा रहा है। उन के नाचने के साथ कौव्वे के परों का गुच्छा भी जिसके ऊपर बगुले के सफेद पर लगे हैं, नाचता है।

हरीश ने आक्षेप के साथ कहा—"इस बार चौधरी नहीं आ पाये। महफिल जमती नहीं।"

चौधरी हर साल आते हैं। डफले के वे समझदार श्रोता हैं। सुनते हैं और ताल पर सिर हिलाते हैं। उनके पास एक पोटली रखी रहती है। डफलिहा जब बजाना बन्द करते हैं तब चौधरी वह पोटली खोलते हैं और किसी को पुराना कुरता, किसी को पुरानी चादर और किसी को पुरानी धोती देते हैं। इस बार चौधरी चारपाई पर पड़े हैं। सिर में जब चोट लगी थी तब लेटे थे, अभी तक उठे नहीं। घाव सूखता ही नहीं, साथ ही साथ हल्का बुखार भी आ जाता है।

चण्डीमण्डप के चारों ओर मेले में भीड़ बहुत हो गई है।

रात को कवियों का गाना होगा। कलरव का अंत ही नहीं। अकस्मात् कालू सेख को आवाज़ सुन पड़ी, "हटो, हटो, रास्ता छोड़ो!"

भीड़ ठेल कर कालू सेख ने रास्ता बनाया और बाहर निकला, उसके पीछे श्रीहरि है। घोष लौट आया! भवेश और हरीश अगवानी के लिए उठे।

पोपले मुँह से हँसते हुए श्रीहरि ने कहा—"मार लिया, दो महीने की सजा हो गई!"

देबू घोष भी भीड़ ठेलता हुआ जा रहा था। उदास आकृति के साथ वह यतीन के यहाँ पहुँचा।

× × × × ×

यतीन, देबू, जगन और हरेन—आज शाम की बैठक में यही चार हैं। सब चुप बैठे हैं। सोच रहे हैं, पद्म को यह समाचार कैसे सुनाया जाय।

भीतर दरवाजे की कुण्डी खड़की, पद्म बुला रही है। यतीन उठकर गया। अनिरुद्ध को सजा मिलने की बात सुनकर वह बहुत उदास नहीं हुआ। दो महीने की सजा, दण्ड हल्का ही हुआ है। जिस भावना के साथ अनिरुद्ध ने देबू को निरर्थक दण्ड से बचाने के लिए अपना अपराध स्वीकार किया है वह भावना बदल न गई तो जेल से एक नया मनुष्य होकर लौटेगा। यदि वह भावना बुद्बुद की भाँति क्षणिक हुई तो भी दुःख क्यों किया जाय? दारिद्र्य-व्याधि से जीर्ण

मनुष्य की मृत्यु तो निश्चित ही थी। उलझन पद्म ने उत्पन्न की है। यतीन की समझ में ही नहीं आता कि इस अशिक्षिता और आवेग सर्वस्वा ग्राम-वधू ने उसे किस माया से जकड़ लिया है। बुद्धि द्वारा विश्लेषण करने के बाद भी वह पद्म की उपेक्षा नहीं कर पाता। बृहत्तर जीवन और महत्तर स्वार्थ की तुला पर तौल कर भी वह इसका मूल्य घटा नहीं सकता। मिट्टी की मूर्ति में वह देवी के रूप की कल्पना नहीं करता—कर भी नहीं सकता; यह सोच कर तो वह हँसता भी है कि जल में विसर्जित करने के बाद मूर्ति गल कर कीचड़ बन जाती है और उसका रूप जल के नीचे पंक की समाधि प्राप्त करता है। परन्तु मिट्टी की यह भंगुर मूर्ति देवी कैसे हो गई है? ऐसा जान पड़ता है कि काल-सिन्धु में विसर्जित करने के बाद भी वह न गलेगी? शिक्षाहीन, संस्कृतिहीन—अभिमान और कुसंस्कार सर्वस्व पद्म मिट्टी की मूर्ति ही तो है!

रोते-रोते पद्म की दोनों आँखें लाल हो आई हैं! उसने पूछा—"दो महीने की सजा हुई है?"

यतीन को आश्चर्य हुआ। इतनी देर में ही इसे समाचार कैसे मिल गया? सिर झुका कर उसने कहा—"हाँ!"

पद्म एक लंबी साँस लेकर बोली—"चलो, राजी-खुशी लौट आवें। मेरा तो यही बड़ा भाग्य है कि उन्होंने सच-सच कह दिया है और पंडित को उनके पाप का दण्ड नहीं भोगना पड़ा। नहीं तो सात पीढ़ियाँ नरक में जातीं।"

यतीन आवाक् हुआ।

पद्म बोली—"पानी गरम है, चा तुम बना लो। मैं उन दोनों मुँह जलों को तो देखूँ। अभी लौटे नहीं। दिन भर के भूखे हैं।"

"तुम ने भी तो नहीं खाया, माँ जो, खा लो!" यतीन को याद आया—कल पद्म ने नीलषष्ठी का व्रत रखा था और आज का दिन गाजन के उपवास में बीता है।

"खाऊँगी! पहले उन दोनों को पकड़ लाऊँ!"

यतीन के बोलने से पहले ही पद्म चली गई।

अपनी खिड़की के घाट पर बैठी श्रीहरि की माँ अनिरुद्ध के सज़ा मिलने का समाचार सगर्व घोषित कर रही है। उस की घोषणा बहुत देर पहले आरंभ हुई थी, अभी समाप्त नहीं हुई। पुत्रगर्विता वृद्धा विलापपूर्ण रोदन ध्वनि की ही प्रतीक्षा कर रही है।

× × × ×

बैठक में वार्तालाप नहीं के बराबर ही हो रहा है।

चाय पाकर यतीन ने पूछा—"चौधरी अब कैसे हैं, डाक्टर?"

देबू चौंका। अनिरुद्ध के झमेले में दो दिन से चौधरी की खबर भी नहीं ली।

जगन ने उत्तर दिया—"कुछ अच्छे ही हैं। लेकिन वह घाव नहीं सूखता। मवाद आता है और हल्का बुखार भी हो

जाता है।"

यतीन बोला—"किसी दिन देखने जाऊँगा।"

देबू बोला—"कल सबेरे चलिए। मैं भी जाऊँगा।"

"मुझे भी बुला लेना देबू। मुझे तो जाना ही है, साथ ही चला चलूँगा। तुम भी चलोगे हरेन ?"

"टु मारो तो जा नहीं सकता ब्रादर ! वैसाख का पहला दिन है। खाता बदलवाना है। मुझे आलेपुर जाना पड़ेगा—इछू सेख के पास—चार-पाँच रुपये लाने होंगे। नहीं तो—वृन्दावन बेटा को तो जानते ही हैं—एक पैसे का भी उधार न देगा।"

पहला वैसाख—नया खाता।···देबू को भी याद आ गया। उधार सौदा वह नहीं लेता रहा परन्तु उसकी अनुपस्थिति में दुर्गा की मारफत जंकसन की एक दुकान से ग्यारह रुपये दस आने का सौदा मँगवाया गया है। अनिरुद्ध के झमेले में उसे यह बात याद ही नहीं रही। रुपये भी कहाँ से आवेंगे ? जेल से लौटने के बाद उसने अपने सम्बन्ध में तो कुछ सोचा नहीं। न सोचेगा तो भविष्य में क्या होगा ? यदि वह अकस्मात मर जाय तो क्या बिलू भी पद्म की भांति—या अंत में तारिणी की स्त्री की तरह— ; देबू सिहर उठा।··· मुन्ना भी क्या उंचिड़े को तरह—नहीं, नहीं। उसने अपने मन में ही कहा, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता।···कल नव-वर्ष का पहला दिन है, कल से वह अपने घर की ओर ध्यान देगा।

बस बहुत हो गया। स्त्री-पुत्र और उनके साथ दारिद्र्य लेकर दुनिया की चिंता में उलझने का अधिकार उसे नहीं है, भगवान् ने यह अधिकार दिया ही नहीं। यह भार—यह अधिकार श्रीहरि को मिला है। गाजन का सारा खर्च उसने दिया है।

देबू अकस्मात् उठकर खड़ा हो गया।

जगन ने पूछा—"क्यों ?"

"एक जरूरी काम याद आ गया है।"

देबू चला गया। रास्ते में चण्डी-मण्डप में शिव को प्रणाम किया—हे देवादिदेव महादेव, यह वर्ष तो तुमने अच्छा ही पार किया—आशीर्वाद दो कि अगला वर्ष भी अच्छा ही बीते।

लंगड़े पुरोहित ने उसे प्रसाद में निर्माल्य दिया।

× × × × ×

देबू सीधे दुर्गा के घर गया। दुर्गा ही दुकान से उधार लाई है, उसी की मारफत वह कल एक रुपया भेजेगा और महीने भर का समय माँग लेगा। समय कुछ अधिक ही लेना चाहिए। वैसाख के प्रारंभ में ही वह घर में जो तीसी, गेहूँ और जौ आदि हैं, वे बेच डालेगा। आलू भी खाने के लिए थोड़े बहुत रख कर निकाल देगा। ऋण सब से पहले चुकाएगा।

दुर्गा की माँ अँधेरे में चौतरे पर अकेली बैठी थी और किसी को गालियाँ दे रही थी—"राक्षस ! पेट में आग लगे—आग ! दम निकल जाय ! और तू हरामजादी खत्यानाशी,

मौत के आगे की झण्डी—तुझे क्या गरज पड़ी थी सब से पहले जाने की !"

देबू ने पूछा "चाची दुर्गा कहाँ है ?"

बिलू दुर्गा की माँ को गाँव के सम्बन्ध से चाची कहती है, देबू ने भी इसी सम्बन्ध से पुकारा।

दुर्गा की माँ ने थोड़ा सा घूंघट खींचा। कहते हैं, दमाद के सामने सिर खुला हो और वह बाल देख ले तो चिता पर बाल नहीं जलते। इसीलिए दुर्गा की माँ ने घूंघट बढ़ाया और बोली—"उस सत्यानाशी की बात न पूछो बेटा, 'रूपेन' चमार को न जाने क्या हो गया है, वहीं दौड़ी गई है।"

'रूपेन' अर्थात् उपेन, आत्मीय स्वजनहीन बिचारा वृद्ध उपेन ! परन्तु वह तो यहाँ रहता नहीं, कंकना में भीख माँगता है।

देबू ने पूछा—"उपेन क्या गाँव आया है ?"

"मरने आया है बेटा, गाँव में आग लगाने आया है। कल शाम को आया था, गाजन का मेला देखने। आज सवेरे पकौड़ी वाले ने यह सुन कर कि सेनेटरी बाबू आ रहे हैं थोड़ी सी तिबासी पकौड़ियाँ फेंक दी थीं, रूपेन ने वे उठाकर गपागप खा लीं। शाम से उसे नामुने हो गया है। हमारी दुर्गा बीबी सुनते ही दौड़ी गई हैं। आहा, दरद तो देखो !"

'नामुने' अर्थात् कालरा ! ···सर्वनाश, सामने ही बैसाख है—पीने के लिए एक बून्द पानी भी नहीं मिलता, उस पर

कालरा !

देबू लपकता हुआ उपेन के घर पहुँचा।

जरा-जीर्ण वृद्ध चौतरे पर पड़ा छटपटा रहा था—जँल—जल—जँल, उसकी आवाज़ आनुनासिक हो गई थी। दुर्गा अकेली खड़ी है, उस ने यथाशक्ति स्पर्श बचाकर मिट्टी के कुज्जे में पानी डाल दिया है। वृद्ध कुज्जे से दूर है और निस्तेज हो गया है। कंपित बाहु फैलाकर, विस्फारित दृष्टि से, तीव्र नम्रता के साथ चीख रहा है—"जँल—जरा सा पानी !"

देबू ने बरतन उठा लिया, उपेन के पास बैठ गया और धीरे-धीरे उसके मुँह में पानी डालने लगा। फिर दुर्गा से बोला—"दुर्गा, जल्दी से जगन डाक्टर को बुला। कहना मैं यहाँ हूँ।"

देबू को यतीन भी याद आया। फिर उसने सोचा, वह परदेशी है। उसे इस आफत में घसीटना ठीक न होगा। यह हमारा गाँव है, यहाँ के दुःख-कष्ट हमें ही सहने चाहिए। अतिथि-आगन्तुक को तो सुख का भाग ही मिलता है। दुःख में हिस्सा लेने के लिए वह उसे किस मुँह से बुलाए !

—छब्बिस—

नये वर्ष का पहला दिन। बूढ़े काँप उठे, आरंभ तो अत्यन्त अशुभ हुआ है। महामारी को साथ लेकर मृत्यु रुद्र रूप में प्रवेश कर रही है ! चण्डी-मण्डप में वर्ष का फलाफल

देखा जा रहा है और पत्रों पर विचार हो रहा है।

पिछली रात के अंतिम पहर में चमरैहा में तीन और पासियों के मुहल्ले में दो आदमी आक्रांत हुए हैं। उपेन मर गया है। श्रीहरि गंभीर होकर सोच रहा है। यह तो बहुत बड़ा उत्तरदायित्व आ गया है। गाँव की रक्षा करनी ही होगी। यदि वह इस समय में भी यह सोचकर विमुख बना रहे कि अभागों ने मेरा विरोध किया है तो वह निश्चित रूप से धर्म से पतित हो जायगा। काम तो उसने आरंभ भी कर दिया है। भूपाल चौकीदार को यूनियन बोर्ड भेजा है, सेक्रेटरी के नाम चिट्ठी लिखी है कि सेनेटरी इंस्पेक्टर को भेज दो। कल सबेरे ही तो वह आया था। चमारों और पासियों को चावलों की सहायता पहुँचाने का विचार भी उसने किया है। चण्डी-मण्डप के कुएँ को कालरा की छूत से बचाने के लिए भी कठोर व्यवस्था कर चुका है। कालू सेख पहरे पर खड़ा है!

बूढ़ी दादी ने आज सबेरे भगवान् को गालियाँ नहीं दीं, हाथ जोड़ कर तार स्वर से बार-बार कहा है—"भगमान ज रक्षा करो, हे भगमान्! दुहाई है! तुम्हारे सिवा गरीबों का' और कौन है दयामय! हे शिव बाबा गाँव बचाओ! हे भोले नाथ! हे काली मैय्या!"

पद्म उचिंड़े और गोबरा के लिए व्याकुल हो रही है। वे बे-लगाम लड़के, साँप देख कर उसे पकड़ने तक का दुःसाहस करने वाले—उन्हें कैसे बचाया जायगा? उसका बदन थर-थर

काँप रहा है।

यतीन भी चिन्तित हुआ है। वह अच्छी तरह जानता है कि बंगाल में कितने आदमी कालरा से मरते हैं, कितने मलेरिया से मरते हैं, कितने अनाहार मरते हैं, और कितने आधा पेट भरने के लिए भी भोजन नहीं पाते। विपत्ति को वह नहीं मानता; वह जानता है कि यह मनुष्य की अपनी ही त्रुटि है, अपनी ही अज्ञानता और अक्षमता के अपराध का उसे यह दण्ड मिलता है। और यह अपराध इसी देश में सीमित नहीं है, भेद बुद्धि और अक्षमता से उत्पन्न यह अपराध धरित्री में सर्वत्र हो रहा है।—व्याधि एक देश से दूसरे देश में संक्रमित नहीं हुई, उसी देश में अर्थ गृद्धों की धनोपार्जन शक्ति की प्रतिक्रिया से चोरी के रूप में और दान धर्म की प्रतिक्रिया से भिक्षा व्यवसाय के रूप में उत्पन्न हुई है। उसने पुलिस एडमिनिस्ट्रेशन की रिपोर्ट में पढ़ा है कि कुछ भिखारी बच्चों को दिन रात एक हाँडी में इसलिए बिठाए रखते हैं कि उनका अर्धांग न बढ़े। फिर उनके विकलाँग की दुहाई देकर भीख माँगने का व्यवसाय करते हैं। शायद इस देश में त्रुटि कुछ अधिक है, यहाँ अधिक आदमी मरते हैं—कुत्तों और बिल्लियों की भांति मरते हैं। प्रतिकार की चेष्टा भी हो रही है। शायद एक दिन—क्षण भर के लिए उसकी आँखें दमकने लगीं, ऐसा जान पड़ा कि आरती में रखी हुई कपूर की दो बत्तियाँ जल रही हैं। फिर उसने एक लंबी साँस ली। परन्तु आज वह इस

विनाश लीला को काल की बेदी पर बलि समझ कर दृढ़ चित्त से देख नहीं पाता। वह समझ ही नहीं पाया कि पद्म की भांति सम्पूर्ण गाँव ने उसके अंतर को अपनी ममता से कैसे भर दिया है। गाँव के इस विपर्य्य में वह सर्वथा अपने ही व्यक्ति की भांति शोक से चंचल और व्यथित हो गया है।

वैसाख का पहला दिन है! वह चैत के बीच में पानी बरसा था, उसके बाद वर्षा नहीं हुई। गरम और धूलि के कणों से पूर्ण वायु आँधी की भांति हू हू करती चल रही है। इस वायु में शरीर का रक्त सूखता-सा जा रहा है। जमीन आग की तरह गरम हो रही है। चारों ओर से तृषातुर हा-हा ध्वनि-सी उठ रही है। कहीं मनुष्य का चिह्न तक नहीं दीख पड़ता। एक दिन में ही—एक पहर में ही लोग भयभीत होकर अपने अपने घर में घुस गये हैं, रास्ते जन-मानव शून्य हो गये हैं। परन्तु देबू और जगन सबेरे ही निकले हैं और अब तक नहीं लौटे। यतीन भी बाहर गया था, अभी लौटा है। पद्म ने आँसुओं की वर्षा के साथ कहा है—'मेरो जान न लो, तुम्हारे पैर पड़ती हूँ। जरा सावधान रहो!'

यतीन की समझ में नहीं आता कि वह इस अबोध माँ जी से क्या कहे!

देबू उपेन का संस्कार करवाने गया है। सबेरे से वह अकेला ही एक सौ के बराबर हो गया है। यतीन इस अर्ध-शिक्षित ग्रामीण युवक की कार्य क्षमता और परार्थपरता देख

कर विस्मित हो गया है। उसने एक और नई चीज़ भी देखी है; जगन डाक्टर सर्वथा नये रूप में उसके सामने आया है। चिकित्सक का कर्तव्य पालन करने में उसने ज़रा सी भी त्रुटि नहीं की—कहीं भी शिथिलता नहीं दिखाई! निर्भीक जगन अपनी विद्या बुद्धि के अनुसार परम यत्न के साथ प्रत्येक व्यक्ति की चिकित्सा कर रहा है। गाँव में उसने कभी फ़ीस नहीं ली; कालरा जैसी महामारी में जब अन्य डाक्टर उपार्जन करने का विशेष सुयोग प्राप्त करते हैं तब भी उसने अपना नियम नहीं तोड़ा। यह जगन की महत्ता का परिचय है। आज उसके मुँह से कर्कश बातें भी नहीं निकलतीं—मीठे शब्दों में सब को आश्वासन दे रहा है।

देबू ने डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को तार दिया है। दुर्गा तार लेकर जंकसन गई है। पातू के हाथ उसने यूनियन बोर्ड को भी समाचार भेजा है। स्वयं वह रोगाक्रांत व्यक्तियों की सेवा में जुटा है—घर घर घूम रहा है। जो गाँव से हट जाना चाहते हैं—उनको सहायता दे रहा है। साथ ही साथ उपेन के संस्कार की व्यवस्था भी करवा रहा है। चमारों में इस समय तीन ही आदमी तगड़े हैं; उन में से एक गाँव छोड़ गया है, शेष दोनों अच्छे हैं परन्तु दो ही आदमी एक शव लेकर नहीं जा सकते। रास्ता भी थोड़ा नहीं है, वह मयूराक्षी के गर्भ में श्मशान है, कम से कम डेढ़ मील दूर होगा। बहुत सोच विचार कर अंत में लगभग ग्यारह बजे देबू अपनी गाड़ी और बैल लाय

और उपेन के संस्कार की व्यवस्था की।

संस्कार की व्यवस्था करने से ही देबू का कर्तव्य पूर्ण नहीं हुआ; उसने सोचा, चमारों और पासियों को दायित्व का ज्ञान कम है, हो सकता है कि आशंका के कारण कहीं गाँव के पास ही डाल आवें, शव के साथ वह श्मशान तक जाने के लिए प्रस्तुत हुआ। इसके अतिरिक्त पातू और उसका साथी कालरा के रोगी को लेकर श्मशान जाने में डर भी रहे थे। देबू ने अनुभव किया और पूछा—"डर लगता है पातू?"

पातू ने सूखे कण्ठ से पूछा—"जी?"

"डर लगता है क्या, इसे ले जाने में?"

"कुछ लगता तो है।"...भयार्त शिशु की भांति उसने स्वीकार किया।

"फिर चलो मैं भी चलता हूँ।"

"आप?"

"हाँ।"

पातू और उसका साथी—प्रसन्न हो गया। पातू बोला—"आप बांध पर खड़े भर रहें।"

"नहीं, मैं श्मशान तक चलूँगा।"

प्रचण्ड उत्ताप से उत्तप्त वैशाख की दोपहर में वे गाड़ी पर शव रख कर बाहर निकले। मैदान आज जनशून्य है। चरवाहे सब इन्हीं चमारों और पासियों के लड़के हैं। वे इतने डर गये हैं कि पशुओं को लेकर मैदान तक भी नहीं आये।

गाँव के आस-पास ही पशु लिए चुपचाप बैठे हैं। उन्होंने सोचा है कि, वैसाख की दोपहर में वे इस जलते मैदान में रोगाक्रांत हुए तो आग जैसी रेत में प्यास से छटपटा कर ही मरना पड़ेगा। चारों ओर जहाँ तक दृष्टि जाती है, सन्नाटा खाँ खाँ कर रहा है। चैत में जो वर्षा हुई थी उसका एक बूँद जल भी अब कहीं नहीं रह गया। ज़मीन से भी तरी निकल गई है। सिंचाई के बड़े और पुराने ताल मिट्टी से ऐसे पट गये हैं, उनके किनारे ऐसे टूट गये हैं कि पानी रुकता ही नहीं। गाँव के किनारे से लगाकर मयूराक्षी तक कहीं भी एक बूँद पानी का ठिकाना नहीं है। दोपहर की वैसाखी वायु आँधी की तरह चल रही है, उसमें आग भरी जान पड़ती है। गाड़ी धीरे-धीरे चल रही है—कां कां कां—पहियों से एक ही जैसी आवाज़ निकल रही है।

पातू बोला—"इस बार जान न बचेगी, कोई भी ज़िन्दा न रहेगा, पंडित जी।"

देबू ने स्नेहसिक्त स्वर में आश्वासन दिया—"तू पागल है पातू, डर किस बात का है?"

"डर?"...पातू हँसा, बोला, "एकदम पहले वैसाख के दिन गाँव में महामारी आई है! लोग कहते हैं, हम लोगों ने चण्डी-मण्डप नहीं छाया, इसलिए बाबा शिव ने—"

देबू ने एक लम्बी साँस ली। वह देव धर्म पर विश्वास रखता है। परन्तु बाबा शिव ऐसा अविचार क्यों करेंगे?

निरपराधों का अपराध ही क्या उनके निकट बड़ा हो जायगा? जिन लोगों ने देवोत्तर भूमि हड़प ली है, उन्हें तो कुछ भी नहीं हुआ। वह दृढ़ स्वर में बोला—"नहीं पातू। बाबा का तुमने कोई अपराध नहीं किया—मैं कहता हूँ।"

पातू बोला—"फिर ऐसा क्यों हुआ पंडित जी?"

देबू को शव के साथ जाते देखकर दुर्गा खड़ी हो गई—पास आकर तिरस्कार के स्वर में बोली—"जीजा, तुम कहाँ जा रहे हो?"

"अब लौटी दुर्गा? तार दे दिया?"

"दे दिया; लेकिन तुम क्यों जा रहे हो? लौटो—"

"तू चल, मैं अभी आया।"

"नहीं तुम भी चलो।"

"पागलपन नहीं करते दुर्गा, तू चल, मैं अभी आया।"

वे चले गये; दुर्गा की आँखों में अकारण ही आँसू आ गये।

जल्दी लौटने के लिए कह कर भी देबू जल्दी नहीं लौट सका। मयूराक्षी के पिंडली डूबने वाले और बालू मिले पानी में किसी तरह नहा कर वह दोफ़हर उतरने के बाद घर पहुँचा और बिलू को बुलाया—"बिलू!"

मुन्ना दौड़ कर बाहर आया और दोनों हाथ फैला कर बोला—"बा—बू!"

देबू दो पग पीछे हट कर बोला—"ना,ना,मुझे न छूना।"

मुन्ना पुलकित हो गया, उसे आंख मिचौनी के खेल का मजा मिला, वह खिलखिल करता हुआ हाथ बढ़ाकर और भी आगे बढ़ आया। मुन्ना को जो मजा मिला उसका स्पर्श देबू को भी हो गया—वह और भी पीछे हटा—"ना, मुन्ना, मुझे न छूना, वहीं खड़े रहो।" फिर उसने बिलू को बुलाया—"बिलू! बिलू!"

अभिमान जुरिताधरा बिलू बाहर आई और आदेश की प्रतीक्षा में चुपचाप खड़ी हो गई। देबू क्या उसका सर्वनाश करना चाहता है? यह जलती दोपहर, उस पर भयंकर महामारी और इसमें देबू की दौड़ धूप—यह सब उसके सर्वनाश के ही तो साधन हैं? वह दोपहर भर रोती रही है। दुर्गा आई थी, वह भी डाँट गई है, कह गई है, तुम जरा कड़ी हो जाओ बिलू दीदी, जीजा की लगाम खींचो—नहीं तो रोगियों के पीछे वह खाना-पीना भी भूल जायँगे और शायद तुम्हारा—अपना सर्वनाश कर लेंगे।

देबू ने बिलू का मुँह देख कर उसके अभिमान का अनुभव कर लिया। हँस कर बोला—"मेरी बिलू रानी को गुस्सा आ गया है? जरा मुन्ना को तो ले लो।"

बिलू के आँसू बाँध तोड़ कर बाहर आ गये, वह रोने लगी। देबू बोला—"राम, राम, रोती क्यों हो! मुन्ना को ले लो। आग जलाओ और एक पतीली पानी गरम कर दो। गरम पानी से ही हाथ-मुँह धोऊँगा और कपड़े भी धो डालूँगा।"

बिलू ने कोई उत्तर न दिया, मुन्ना को गोद में उठा लिया। मुन्ना ने सवेरे से देबू को न देखा था, वह चिल्लाने लगा—"बाबू दाव। बाबू दाव !"

बिलू ने उसकी पीठ पर एक मुक्का जमा दिया, बोली—"चुप रह, चु-उ-प।"...मुन्ना फिर भी न माना तो उसे गोद से ही उतार दिया।

देबू की सहन शक्ति जाती रही, उसने तिरस्कार के साथ कहा—"अः, बिलू, तुम्हें हो क्या गया है ? मैं कहता हूँ—मुन्ना को उठाओ !"

बिलू भी बिगड़ी हुई है, वह बोली—"क्यों, क्या मुझे मारोगे ? मुन्ना को बड़ा प्यार करते हो न !"

देबू स्तम्भित हो गया।

बिलू फफक कर रोने लगी; बोली—"इस तरह तिल-तिल जलाकर क्यों मारते हो, एकदम गला दबा दो—मुझे जहर ला दो !"

देबू उत्तर देने लगा—सांत्वना-मधुर उत्तर ही वह देने वाला था परन्तु दे न सका। वह चौंक उठा, जैसे उसके बदन से साँप छू गया है और सिहरा—मुन्ना ने पीछे से उसके दोनों हाथ पकड़ लिए हैं और खिलखिलाकर हँस रहा है। जैसे वह कह रहा है, पकड़ लिया है, पकड़ लिया है, पलातक को पकड़ लिया है। देबू ने घूम कर मुन्ना के दोनों हाथ पकड़ लिए और आर्तस्वर में बिलू से बोला—"जल्दी पानी गरम करो बिलू, जल्दी। मुन्ना के हाथ भी धोने पड़ेंगे, नहीं तो

अभी वह मुँह में लगा लेगा।"

मुन्ना उग्र अभिमान से हाथ पैर झटक कर रोने लगा। उसे जान पड़ा कि, बाबू मुझे छोड़ कर जा रहे हैं। वह केवल रोया ही नहीं, देबू के हाथ में पूरे बल के साथ काट भी खाया और दाँतों से उसका भीगा कुरता फाड़ डाला।

देबू डर गया। बिलू का हाथ पकड़ कर वह घर के भीतर खींच कर ले गया और बोला—"बिलू मेरी रानी, मैं तुम्हें सब कुछ समझाता हूँ। पहले पानी गरम कर दो और मुन्ना का मुँह धो दो।".....

बिलू का गुस्सा थोड़ी देर में शांत हो गया। मुन्ना को देबू की गोद में देख कर वह पुलकित हो गई। बोली—"तुम भी कितने निष्ठुर हो! मुन्ना मुझसे भी ज्यादा तुम्हें चाहता है और तुम उसे छोड़ कर बाहर भागते फिरते हो! बाहर जाकर तुम्हें शायद घर की याद भी नहीं आती, मुन्ना को भी तुम क्या भूल जाते हो?"

देबू बोला—"नहीं। अब मैं बाहर न जाऊँगा। प्रतिज्ञा करता हूँ कि बाहर न जाऊँगा।"

गरम पानी से हाथ-मुँह धोकर देबू ने मुन्ना को गोद में लिया था। पिता की गोद में बैठे मुन्ना ने माँ को निकट आते देखा तो पिता की छाती में मुँह छिपा लिया। बिलू हँसी—"यह देखो!"

मुन्ना बोला—"ना, दाव ना। मा दाव ना।"

बिलू खिलखिला कर हँसी—"अरे दुष्ट लड़के! माँ के पास न आयेगा? बाप को देखकर माँ को भूल गया? अच्छा मैं भी तुझे चिज्जी न दूँगी।"

मुन्ना ने माँ का मन रखने के लिए देबू से कहा—"बाबू मा दाई!"

बिलू बोली—"उँहुँ। बाबू को पकड़े रह। बाबू भाग जायेंगे।"

देबू का अन्तर रुद्ध आवेग से काँप उठा। उसका शरीर सिहरा।

बिलू ने सिहरन देख कर शंकित स्वर में पूछा—"हाँ जी, तुम्हारी तबियत क्या अच्छी नहीं है?"

हँसने की चेष्टा करके देबू ने कहा—"थकावट बड़ी जान पड़ती है।"

"चाय बनाऊँ, पियोगे?"

"बनाओ।"

चाय पीकर वह उसी नीरव उदासीनता में उद्वेग-उद्वेलित अंतर से किसी भीषण घटना की प्रतीक्षा करने लगा। शाम को चमरैहा से रोने की आवाज़ सुन पड़ी। अवश्य कोई मर गया है। देबू मुन्ना को सुला रहा था, आवाज़ सुनकर वह अधीर हो गया।

बिलू बोली—"शायद कोई मर गया।"

देबू ने तिक्त स्वर में उत्तर दिया—"मरे, मैं अब नहीं जाता।"

बिलू ने आवाक होकर उसके मुँह की ओर देखा, फिर बोली—"मैंने यह तुमसे क्या कहा है कि कोई मर भी जाय तो भी तुम न जाओ—या उनकी विपत्ति में तुम सहायता न करो—उपेन चमार था, उस के संस्कार के लिए तुम ने गाड़ी दी तब मैंने क्या मना किया था? लेकिन तुम श्मशान क्यों गये? वैसाख की दुपहरी—न खाना न पीना—इसीलिए मैंने कहा।"

मुन्ना देबू की गोद में सो गया था। बिलू ने उसे उठा लिया और बोली—"जाओ, एक बार देख आओ, तुम्हारे ऊपर उनका कितना भरोसा है—"

यंत्रचालित मूर्ति की भाँति देबू बाहर निकला। चण्डीमण्डप में ढोल-करताल के साथ कीर्तन का दल निकालने की तैयारी हो रही है। कहते हैं, मृदंग की ध्वनि से अमंगल दूर होता है।

चमरौहा में धर्मदेव की पूजा का आयोजन हो रहा है। देबू ने सतीश को बुलाया। सतीश ने आकर प्रणाम किया और कहा—"अवस्था तो भयानक हो गई है पंडित जी! शाम को और दो आदमी मरे हैं, गणा की घर वाली थोड़ी देर पहले मरी है।"

"चटपट संस्कार की व्यवस्था करो।"

"जी, वह हो रही है"····थोड़ी देर चुप रह कर वह

अपराधी की भाँति बोला—"सवेरे उपेन के साथ आप को जाना पड़ा, क्या करता, मेरी जात का न था। हमारे लिए आप को इतना परेशान न होना पड़ेगा।"

देबू ने पूछा—"शाम को डाक्टर आये थे ?"

"जी, हाँ, शाम को घोष बाबू ने भी आदमी भेजा था, कहलवाया था कि चावल ले जाओ। डाक्टर बाबू ने मना कर दिया कि तुम न लेना, हम नहीं गये।"

अन्यमनस्क देबू चुप हो गया। उसके अन्तर में एक गहरी उदासीनता घने कुहरे की भांति बढ़ती जा रही है—उसके सुख-दुःख संवेदन शून्यता से ढके जा रहे हैं और गंभीर उद्वेग उसे यह सहन नहीं करने देता। उस उद्वेग ने नीलकण्ठ के हलाहल को भांति उसे मोहाच्छन्न कर लिया है।

सतीश ने फिर पुकारा—'पंडित जी ?"

"मुझ से कहते हो ?"

सतीश हैरान हुआ, बोला—"जी हाँ, और यहाँ पंडित कौन है जो उसे इस नाम से बुलायेंगे ?"

"क्या ?"

"कहता हूँ, आप नाराज तो न होंगे ?"

"नहीं, नहीं, नाराज क्यों होने लगा !"

"कह रहा था कि घोष बाबू जब चावल देना चाहते हैं तब लेने में हर्ज क्या है ? सब को जरूरत है और ऐसी महा-विपत्ति में—"

देबू ने प्रसन्न सहानुभूति के साथ कहा—"नहीं, नहीं, कोई हर्ज नहीं है सतीश! घोष बाबू तुम्हारे शत्रु तो नहीं हैं। जब वे स्वयं देना चाहते हैं तब लेना ही चाहिए।"

सतीश ने देबू के पैर छू कर कहा—"आप ही जैसे सब होते पंडित जी, आप ज़रा डाक्टर बाबू से कह दीजिएगा, वे फिर नाराज़ होंगे।"

"अच्छा, अच्छा, मैं डाक्टर से कह दूँगा।"

"डाक्टर बाबू नज़रबन्दी बाबू के पास बैठे हैं।"

देबू लौटा, किन्तु आज यतीन के यहाँ जाने की इच्छा न हुई। घर आ गया, वहाँ दुर्गा भी बैठी है। दुर्गा बोली—"हमारे मुहल्ले गये थे पण्डित जीजा? गणा की बहू मर गई, नहीं?"

"हाँ"···उसने बिलू से पूछा—"मुन्ना कहाँ है?"

"तभी सोया था, अभी उठा नहीं।"

"सो रहा है।"···देबू ने संतोष की सांस ली।

लगभग चार घंटे हो गये हैं मुन्ना सो रहा है। नींद स्वस्थता का लक्षण है। उस ने दुर्गा से पूछा—"तू अब तक कहाँ थी?"

"जंकसन गई थी।"

बिलू बोली—"पानी पी लो। दुर्गा खाता बदलवा कर मिठाई ला रही है।"

"यही तो! हाँ री, दुर्गा, जंकसन वाले दुकानदार से किया हुआ वादा तो पूरा नहीं हो सका।"

"सब ठीक है, तुम चिंता न करो।"—दुर्गा हँसी, "बिलू दीदी जैसी लक्ष्मी हैं तुम्हारे घर में—तुम्हें क्या चिंता ? दीदी ने मुझे दो रुपये दिए थे, वह दे आई हूँ। कुछ आषाढ़ रथ यात्रा के दिन दे देना, कुछ चैत्र में—दुकानदार राजी हो जायगा।"

देबू ने इतनी देर बाद पूर्ण संतोष की साँस ली और अपनी स्वाभाविक मुस्कान के साथ कहा—"बिलू, मैं जरा यतीन बाबू के पास हो आऊँ।"

"रात में फिर जा रहे हो! अच्छा, जरा सा पानी पी लो।"

"मैं गया और लौटा। पानी अभी न पिऊँगा।"

"उपवास तो तुम खूब कर सकते हो!"···बिलू हँसी। देबू चला आया।

यतीन की बैठक में आज यतीन, जगन और चाय का उम्मीदवार गँजेड़ी गदाई ही है। चित्रकार नलिन भी आया है और एक कोने में चुपचाप बैठा है। आज वह एक रुपया चाहता है। गाँव छोड़ कर वह कुछ दिनों के लिए कहीं बाहर जाने वाला है।

जगन अनर्गल बोल रहा था। देबू को देखकर बोला—"मामला क्या है ? दोपहर के बाद दीख ही नहीं पड़े। मैं ने समझा, तुम डर गये हो—!"

देबू मुस्कराया।

यतीन बोला—"तबियत कैसी है, देबू बाबू? सुना था कि आप श्मशान गये थे, चार बजे के लगभग लौटे हैं।"

'बदन बहुत थका हुआ है, नहीं तो अच्छा ही हूँ।"

"चण्डीमण्डप में इस बात पर गोलमाल हो रहा है कि तुम चमार के साथ श्मशान गये थे।"

देबू ने सुना ही नहीं। बोला—"अच्छा डाक्टर, कालरे का विष शरीर में घुस जाय तो उसके लक्षण कितनी देर में प्रकट होते हैं?"

जगन खुलकर हँसा, फिर बोला—"तुम डर गये हो, देबू भाई?"

उधर से गदाई ने सकोच के साथ कहा—"डर कैसा? इसकी दवा है, एक चिलम गाँजा!"

देबू ने फिर कोई प्रश्न न किया, प्रश्न करने में भी उसे डर लगा। विज्ञान का सत्य कहीं उसकी उत्कण्ठा बढ़ा न दे! उसने बार-बार सोचा कि विज्ञान ही सत्य नहीं है, इस संसार में और भी कोई परम तत्व है और वह पुण्य है, धर्म है। मेरा पुण्य, मेरा धर्म मेरी रक्षा करेगा। अमृत का यह आवरण मेरे मुन्ना को महामारी से अवश्य बचायेगा।

यतीन ने पूछा—"मामला क्या है, देबू बाबू? अकस्मात् आपने ऐसा प्रश्न किया?"

देबू बोला—"जब घर लौटा—श्मशान में उपेन का शव मुझे उठाना पड़ा था; उसके बाद मयूराक्षी में स्नान कर लिया

या और घर लौटा...।—कौन ? दुर्गा है ?"

अंधेरे रास्ते पर हाथ में लालटेन लिए दुर्गा खड़ी थी।

रुँधे हुए गले से दुर्गा ने कहा—"हाँ, जल्दी घर चलो। मुन्ना की तबियत खराब हो रही है—पानी जैसी—"

देबू के बदन से बिजली-सी छू गई, एक छलांग में ही रास्ते पर उतर कर उसने कहा—"डाक्टर !"

धर्म-विश्वास का गला दबाकर वैज्ञानिक सत्य क्या उसके घर में ही रुद्र रूप में प्रकट हुआ है ?

× × × × ×

सर्वनाशी महामारी मानव शरीर का रस चूस कर उसकी जीवनी शक्ति को समाप्त कर देती है। वही महामारी देबू को पत्थर बना कर उसके घर से निकली। कालरा केवल मुन्ना को ही नहीं, बिलू को भी ले गया। पहले दिन मुन्ना गया, दूसरे दिन बिलू गई। शुश्रुषा में और चिकित्सा में कोई त्रुटि नहीं हुई। जंकसन से रेल के डाक्टर और कंकना से अस्पताल के डाक्टर आये थे। कंकना के डाक्टर संवाद पा कर स्वयं आये थे। गुणग्राही व्यक्ति हैं और देबू का आदर करते हैं। रेल के डाक्टर को जगन स्वयं बुला लाया था। देबू ने नींद और भूख को भूल कर सेवा की, भगवान के चरणों में सिर रखा, देवता की मानता मानी; दुर्गा प्राणपण से सहायता करती रही। जगन डाक्टर का कहना ही क्या, यतीन, सतीश, गदाई और पातू भी दरवाजे पर ही बैठे रहे फिर भी कुछ

न हुआ। देबू ने नीरव निर्वाक होकर अश्रुहीन आँखों से सब कुछ देखा—पत्थर की छाती पर दारुण आघात सहन किया।

बिलू का संस्कार जब समाप्त हुआ तब सूर्योदय हो रहा था। देबू ने सूना और कंगाल जीवन लेकर घर में प्रवेश किया। उसकी सुख-दुःख की अनुभूति मर गई है, मुस्कान उड़ गई है, आँसू सूख गये हैं और बातें समाप्त हो गई हैं। उसका मन निस्पन्द हो गया है, दृष्टि शून्य हो गई है और ओठों से लगा कर हृदय तक सूखे नीरस मरुस्थल की भांति खाँ खाँ कर रहे हैं। दीवाल के सहारे बैठ कर वह शून्य उदास दृष्टि से सामने की ओर देखने लगा। पथ, घाट, घर-द्वार और पेड़-पत्ते सब कुछ अपने स्थान पर हैं परन्तु देबू की दृष्टि में सब कुछ अर्थहीन—अस्तित्वशून्य—एकाकार हो रहा है; उसे एक सूना और असीम तृषा से आतुर धूसर मैदान दीख पड़ता है और दीख पड़ता है वेदना विधुर पाण्डुर आकाश। उस विवर्ण धूसरता में ही भविष्य लुप्त हो गया है—निश्चिह्न हो गया है!

गाँव भर के आदमी अपनी अकृत्रिम सहानुभूति लेकर एकत्रित हुए हैं, परन्तु देबू का यह रूप देख कर किसी के मुँह से आवाज़ तक नहीं निकलती। सांत्वना देने के लिए आया हुआ यतीन भी चुपचाप बैठा है। वह स्वयं आत्म-ग्लानि से व्यथित हो रहा है, उसे ऐसा जान पड़ता है कि

मैंने देबू को इस परिणाम की ओर ढकेला है। जगन भी स्तब्ध हो गया है! श्रीहरि, भवेश और हरीश भी आये हैं। वे भी मौन हैं। देबू के सामने बोलने में श्रीहरि को भी संकोच हो रहा है।

भवेश ही बोल सका—"हरि हरि हरि।"

निस्तब्ध मण्डली के दूसरे छोर से किसी ने बुलाया—"डाक्टर बाबू।"

जगन ने विरक्त होकर पूछा—"कौन है? क्या है?"

"जी, मैं हूँ गोपेश। दया करें—जरा चलें।"

"क्यों, क्या हुआ?"

देबू ने ओंठ तिरछे करके और रूढ़ भाव से हँस कर कहा—'होगा और क्या? समझ नहीं पाते? जाओ, देख आओ।"

जगन चुपचाप उठ कर खड़ा हो गया। यतीन बोला—"ठहरिए, मैं भी चलता हूँ।"

धीरे-धीरे जनमण्डली चुपचाप उठ कर चली गई। देबू अकेला रह गया। अब उसका जी चाहा कि एक बार जी खोल कर रोया जाय। किन्तु रो न सका। फिर सोने की चेष्टा करने लगा। चारों ओर दृष्टि घुमाई तो सैकड़ों स्मृतियाँ सामने आ गईं! दीवाल पर मुन्ना के हाथ के स्याही के टीके लगे हैं, बिलू के हाथ के सिंदूर के चिह्न हैं; पान की पीक है; मुन्ना का रंग-उड़ा काठ का घोड़ा, टूटी बाँसुरी, फटी तसवीरें। करवट

लो तो कुछ चुभा; बिस्तरे में हाथ डाला तो मुन्ना के दो कड़े निकले ! वही कड़े,—बिलू की नाक की लौंग, कान के फूल और हाथ का कंगन मिला। सॉस लेकर उसने अकस्मात् पुकारा—"मुन्ना ! बिलू !"

भीतरी दरवाजे से किसी ने झांक कर पुकारा—"देबू !"

"कौन है···" देबू उठकर गया—"बूढ़ी दादी ?"

बूढ़ी फफक कर रोने लगी।

बूढ़ी दादा ही अकेली नहीं आई, दुर्गा भी एक ओर बैठी रो रही है।

देबू ने सोचा कि रात के सन्नाटे में जब सब सो जाँयगे, विश्व प्रकृति निस्तब्ध हो जायगी तब एक बार जी भर कर रोऊँगा। घर में वह अकेला ही नहीं है, शाम को कितने ही आदमी आये थे, वे चले गये हैं, परन्तु जगन डाक्टर, हरेन घोषाल और गँजेड़ी गदाई देबू के साथ सोने के लिए आये हैं। श्रीहरि ने भूपाल चौकीदार को भेजा है, वह देबू के चौतरे पर लेटेगा। जब सब सो गये तब देबू उठा। चौतरे पर जाकर आकाश की ओर देखने लगा। मुन्ना नहीं है—बिलू नहीं है—संसार में कहीं भी नहीं है। स्वर्ग मिथ्या है, नर्क मिथ्या है, पाप मिथ्या है, पुण्य मिथ्या है ! मैंने कौन-सा पाप किया है ? पूर्व जन्म में ? कौन जाने ?···फिर उसने सोचा, यतीन के पास चला जाय। मुन्ना और बिलू की याद में

रोने के लिए उसने यह मौका निकाला था परन्तु अब वह भी अच्छा नहीं लगता। उसका अंतर आत्मग्लानि से भर गया है। वही तो मृत्यु का विष लाया था; उसी ने तो दोनों की हत्या की है, अब किस मुँह से वह उनके लिए रोये ?···

इतनी रात में रोशनी लिए कौन आ रहा है ? एक नहीं, कई आदमी हैं।

"पण्डित !"···देवू के सामने न्यायरत्न आ कर खड़े हुए, उनके साथ यतीन है, पीछे एक आदमी हाथ में लालटेन लिए खड़ा है।

"आप ! मैं तो—"

"चलो, भीतर चलो।"

"मैं तो प्रणाम भी नहीं कर सकता। अशौच हूँ।"

देवू के सिर पर स्नेह के साथ हाथ रख कर न्यायरत्न बोले—"अशौच ?"···वे मुस्काये।···"कुछ ले आओ पंडित, यहीं चौतरे पर बैठें। कमरे से सोते वालों की साँस का शब्द सुन पड़ता है। जो सो रहे हैं, उन्हें सोने दो। तुम्हारे साथ एकांत में कुछ देर बैठने के लिए इतनी रात में आया हूँ। लोगों की भीड़-भाड़ में आने की इच्छा नहीं हुई। रास्ते में यतीन साथ हो गये। इनकी दृष्टि जाग्रत तपस्वी की दृष्टि है, छिप नहीं सका। देखा तुम्हारी भाँति ये भी बैठे आकाश की ओर देख रहे थे। मुझ से कहने लगे, पण्डित के इस निष्ठुर विपर्यय के लिए मैं ही उत्तरदायी हूँ। इनकी आँखें

छलछला आई थी। इसीलिए इन्हें भी साथ ले आया। हमारी सुख-दुःख की बात में ये भी भाग लेंगे।" न्यायरत्न हंसे। वह हंसी सुख की न थी, दुःख की भी न थी, वह एक विचित्र दिव्य मुस्कान थी।

देबू भी मुस्कराया। न्यायरत्न की मुस्कान का प्रतिबिम्ब उसके ओठों पर भी दीख पड़ा। कमरे में एक मोढ़ा ला कर उसने रखा और बोला—"बिराजिए!"

न्यायतीर्थ बैठ गये, बोले—"बैठो, तुम भी, मेरे पास बैठो; यतीन बाबू, तुम भी बैठो।"

दोनों भूमि पर ही बैठ गये। देबू बोला—"उस दिन परम श्रद्धा के साथ बिलू ने आपके पैर धोए थे। किन्तु आज—आज वह कहाँ हैं?....."

न्यायतीर्थ बोले—"देबू भाई, मैंने उसी दिन समझ लिया था कि तुम इसी परिणाम की ओर बढ़ रहे हो। तुम को देख कर भी यही समझा था और तुम्हारी स्त्री को देख कर भी।"

देबू और यतीन विस्मित होकर उनका मुंह देखने लगे।

न्यायतीर्थ बोले—"उस दिन की कथा याद है? पूरी कथा न सुनाई थी, आज सुनाता हूं। इस समय कथा अच्छी तो लगेगी?"

देबू ने साग्रह कहा—"सुनाइये।"

न्यायतीर्थ ने कथा आरम्भ की—"धर्म के बल से ब्राह्मण अपने सौभाग्य पर फिर प्रतिष्ठित हो गये। पुत्र-कन्या-जामाता

और पौत्र-पौत्री-दौहित्र-दौहित्री समेत उनका परिवार देववृक्ष की तुलना करने वाला हो गया। फलों में अमृत का स्वाद-गुण, फूलों में अगुरु और चन्दन को भी परास्त करने वाली गन्ध, कोई फल अकाल में न गिरता, कोई फूल अकाल में न मुरझाता। उनका परिपूर्ण परिवार आनन्द, शान्ति और सुख से स्निग्ध एवं समुज्ज्वल था। लड़के भी सब बड़े-बड़े पंडित थे और जामाता भी। सब देशदेशान्तरों में स्वकर्म में प्रतिष्ठित थे। कोई किसी राजा का कुल पंडित था, कोई सभा पण्डित और कोई बड़ी पाठशाला का अध्यापक। ब्राह्मण अपने गाँव में ही रहते थे। ब्राह्मण एक दिन बाज़ार गये और एक मछुवारी की टोकरी देख कर चौंके। मछुवारी की टोकरी में काले रंग का एक सुडौल पत्थर रखा था, उस पर कुछ चिह्न बने थे। पत्थर नहीं, वह नारायण शिला थी—शालग्राम। मछुवारी की उस अपवित्र डलिया में, मछलियों के मांस की गंध में पड़ी नारायण शिला! ब्राह्मण ने उसी समय मछुवारी से पूछा—माँ, तुमने यह कहां पाया?

"मछुवारी ने मुस्करा कर प्रणाम किया और बोली—बेटा, नदी के किनारे मिला है, पक्का पाव भर है, बटखरा बना लिया है। इसमें बड़ी बरकत है। जब से मिला है, तब से बढ़ती का अन्त ही नहीं मिलता।

"बात ठीक है। मछुवारी के शरीर पर सोने के गहने हैं।

"ब्राह्मण बोले—देखो माँ, यह शालग्राम शिला है। तुमने

मांस की गंध में इसे रख रखा है, इससे बड़ा पाप होगा।

"मछुवारी हँसते-हँसते बेचैन हो गई।

"ब्राह्मण बोले—यह तुम मुझे दे दो। मैं रुपये देता हूं, पांच रुपये।

"मछुवारी बोली—नहीं बेटा, यह मैं न बेचूंगी।

"अच्छा, दस रुपये ले लो।

"नहीं, बेटा नहीं, यह मुझे सैकड़ों दस दिला देगा।

"अच्छा, बीस।

"नहीं बेटा, तुम्हारे हाथ जोड़ती हूं।

"अच्छा, पचास।

"नहीं।

"एक सौ।

"नहीं जी, नहीं।

"एक हज़ार।

"मछुवारी कोई उत्तर न दे सकी, आवाक् होकर ब्राह्मण की ओर देखती रह गई।

"पाँच हज़ार रुपये देता हूं।

"मछुवारी अब 'ना' न कर सकी। ब्राह्मण ने पाँच हज़ार रुपये गिन दिए और नारायण को घर में लाकर उनकी प्रतिष्ठा की। परन्तु आश्चर्य की बात है, तीसरे दिन ब्राह्मण ने स्वप्न देखा, एक ज्योतिर्मय और नटखट किशोर उनसे कह रहा है, तुम मुझे मछुवारी की टोकरी से क्यों ले आये? मैं वहाँ प्रसन्न था।

मुझे वहीं पहुंचा दो।

"ब्राह्मण विस्मित हुए।

"दूसरे दिन फिर वही स्वप्न। तीसरे दिन स्वप्न में देखा कि किशोर की मूर्ति भयंकर रूप से उग्र हो रही है, और वह कह रहे हैं—मुझे वहीं पहुंचा आओ, नहीं तो तुम्हारा सर्वनाश हो जायगा।

"सबेरे उठ कर ब्राह्मण ने गृहिणी से स्वप्न की चर्चा की। गृहिणी ने उत्तर दिया, तो क्या हम नारायण का परित्याग कर दें? जो होना होगा, होगा, तुम चिंता न करो।

"रात में फिर स्वप्न—फिर, फिर। तब ब्राह्मण ने पुत्रों और जामाताओं को स्वप्न का विवरण लिखा और उनका मतामत पूछा। मतामत आया, सब ने वही उत्तर दिया, जो गृहिणी ने दिया था।

"उस दिन रात में स्वप्न में ब्राह्मण ने उत्तर दिया—देवता, तुम रोज आकर मेरी नींद में बाधा क्यों डालते हो? मेरे कर्म, वाक्य और विचार से क्या तुम्हें मेरा उत्तर नहीं मिला? तुम्हें मैं मांस की टोकरी में नहीं रख सकता।

"दूसरे दिन ब्राह्मण ने पूजा समाप्त की और नातियों-नातिनियों को प्रसाद लेने के लिए बुलाया। जो सब से छोटा था, वह आने लगा तो ठोकर खा कर गिर पड़ा। ब्राह्मण ने चटपट उठा लिया किन्तु शिशु के शरीर में प्राण न थे। स्त्रियाँ रोने लगीं। ब्राह्मण स्थिर हो गये, उनके ओठों पर मुस्कान दीख पड़ी।

"रात में स्वप्न देखा, वही किशोर निष्ठुर मुस्कान के साथ कह रहा है, अभी समझ लो। सर्वनाश जिसका होता है, पहले उसका नाती मरता है।

"ब्राह्मण ने उत्तर न दिया, केवल मुस्कराये।

"फिर अकस्मात् परिवार में महामारी फैल गई। एक के बाद एक—एक एक कर दीप बुझ गये! और रोज रात को वही स्वप्न। रोज ब्राह्मण नीरव मुस्कान में उत्तर देते।

"परिवार सूना हो गया—रह गये ब्राह्मण और उनकी ब्राह्मणी।

"फिर स्वप्न देखा—ब्राह्मणी है, अभी समझ लो!

"ब्राह्मण बोले—तुम बड़े नटखट छोकरे हो, मुझे बहुत विरक्त करते हो।

"दूसरे दिन ब्राह्मणी भी गई। आश्चर्य—फिर स्वप्न भी न दीखा।

"ब्राह्मण ने श्राद्धादि समाप्त किया, फिर एक झोली में शालग्राम शिला रखी और उसे गले में लटका कर निकल पड़े। तीर्थ से तीर्थान्तर, देश से देशान्तर—नद नदी, वन-जंगल, पहाड़-पर्वत पार करते हुए घूमने लगे। पूजा का समय होता तो स्थान स्वच्छ करके बैठते, फूल तोड़ कर पूजा करते और फल तोड़ कर भोग लगाते, प्रसाद लेते।

"चलते-चलते ब्राह्मण मानसरोवर के किनारे पहुंचे। स्नान करके पूजा पर बैठे। आँखें मूंद कर ध्यान किया ही था कि दिव्य

गंध से स्थान परिपूर्ण हो गया, आकाश में देव-दुंदुभी बजी। किसी ने उनके अंतर में पुकारा—ब्राह्मण! मैं आया हूं।

"ब्राह्मण ने आँखें न खोलीं—पूछा, कौन हो तुम?

"मैं नारायण।

"तुम्हारा रूप क्या है?

"क्यों, चतुर्भुज। शंख, चक्र—

"उंहुं, जाओ-जाओ-तुम जाओ।

"क्यों?

"मैंने तुम्हें तो नहीं बुलाया!

"फिर, किसे बुलाया है?

"वह एक नटखट छोकरा है, रोज स्वप्न में आकर मुझे धमकाता था। उसे बुलाया है।

"अब उसी स्वप्न वाले छोकरे की आवाज सुन पड़ी—ब्राह्मण! मैं आया हूं।

"ब्राह्मण ने आंखें खोलकर देखा—हाँ, वही है!

"किशोर ने हंस कर कहा—मेरे साथ चलो।

ब्राह्मण ने आपत्ति न की, बोले—चलो। तुम्हारी दौड़ ही देखूं।" "किशोर दिव्यरथ पर बिठा कर उन्हें एक अपूर्व पुरी में ले गया। बोला—यह तुम्हारी पुरी है।" "पुरी के द्वार खुल गये; साथ ही साथ वही छोटा नाती बाहर निकला जो सब से पहले गत हुआ था। उसके पीछे और सब थे।"

कथा समाप्त करके न्यायतीर्थ चुप हो गये।

देबू ने एक लंबी साँस ली और मुस्कराया।

यतीन मुस्कराया नहीं, वह अद्भुत ब्राह्मण की कहानी पर विचार कर रहा था।

न्यायतीर्थ फिर बोले—"उस दिन तुम को और बिलू को देख कर यही कथा मुझे याद आई थी। फिर जब सुना कि तुम उपेन रैदास के साथ श्मशान गये हो, उसकी सेवा करते रहे हो—तब ऐसा जान पड़ा कि तुम ने मछुवारी की टोकरी में रखी शालग्राम शिला का उद्धार करने के लिए हाथ बढ़ाया है। आत्मा—नारायण है, किन्तु चमारों-पासियों की देह को मैं मछुवारी की डलिया से मिलाऊं तो—तुम आधुनिक—नाराज न होना।"

देबू की आंखों से अब कुछ आँसू गिरे।

न्यायतीर्थ ने अपनी चादर से सस्नेह आँसू पोंछ दिए। फिर देबू के सिर पर हाथ रख कर थोड़ी देर तक मौन बैठे रहे। इसके बाद बोले—"अब चलूं भाई। सांत्वना तो तुम्हारे अंतर में ही है, प्राणों में ही उसका उत्स है। भागवत मुझे अच्छी लगती है। मेरा शशी जिस दिन मरा, उस दिन भागवत से ही सांत्वना प्राप्त की थी। इसीलिए भागवती लीला की एक कथा सुनाई है।

यतीन और न्यायतीर्थ साथ-साथ उठे। रास्ते में यतीन ने कहा—"ये कथाएं यदि आप इस युग के लिए भी उपयोगी कर देते।"

न्यायतीर्थ ने हंस कर पूछा—"अनुपयोगी तुम्हें कहां जंची भाई ?"

"असंतुष्ट तो न होंगे ?"

"नहीं, नहीं। सत्य की मुक्ति के सम्मुख मैं मस्तक नत करने के लिए बाध्य हूं। असंतुष्ट क्यों हूंगा ?" न्यायतीर्थ शिशु जैसी मुक्त हंसी के साथ बोले।

"वह आपकी मछलियों की टोकरी, चतुर्भुज शंख, चक्र—"

"भगवान् के अनंत रूप हैं। जो अच्छा लगे वह बिठा लो। इसके अतिरिक्त ब्राह्मण ने चतुर्भुज मूर्ति तो देखी ही नहीं। उन्होंने अपने स्वप्न की मूर्ति उसी उग्र किशोर को स्वीकार किया।"

यतीन का चैठका आ गया था, रात भी काफी बीत चुकी थी। बात बढ़ाने का अवकाश न मिला। न्यायतीर्थ चले गये।

यतीन तख्त पर बैठकर कुछ सोचने लगा। अकस्मात् उसके अंतर में रवीन्द्रनाथ की एक कविता की कुछ पंक्तियां गूंजने लगीं !—

भगवान् तुमि युगे युगे दूत पाठायेछे बारे बारे,
दयाहीन-संसारे।
ताराबले गेलो क्षमा करो सबे, बले गेलो भालोबासो,
अंतर हते विद्वेष विष नाशो।
वरणीय तारा, स्मरणीय तारा, तबुओ बाहिर द्वारे—
आजि दुर्दिने फिरानु. तादेर--व्यर्थ नमस्कारे।...†

†भगवान तुम ने युग युग में बार-बार इस दयाहीन संसार में अपने

—सत्ताइस—

दो महीने बाद। गाँव कालरा की महामारी से मुक्त हो गया है।

आषाढ़ का पहला सप्ताह है। सप्तमी को अम्बुवाची पड़ी है। कहते हैं, इसी दिन धरित्री ऋतुमति होती है। आकाश घनघोर बादलों से ढका है। जान पड़ता है कि पानी बरसने ही वाला है। पिछले दिनों की उमस देख कर किसानों ने अनुमान लगाया था कि इस बार वर्षा जल्दी आरम्भ होगी। जेठ के अन्त में मृगशिरा नक्षत्र में उमस जितनी अधिक होती है, आषाढ़ में उतनी ही जल्दी पानी बरसता है। अम्बुवाची में यदि वर्षा की झड़ी लग जाय तो ऋतुमति धरित्री की मिट्टी पानी में भीग कर अपूर्व उर्वरा हो जाती है। अम्बुवाची के तीन दिन खेत जोतने का निषेध है। गांव में डफला बज रहा है, कुश्ती का डफला।

अम्बुवाची में किसान आपस में कुश्ती प्रतियोगिता करते हैं। इधर कुसुमपुर और आलेपुर में यह समारोह अधिक होता है। ये दोनों मुसलमानों के गाँव हैं। अम्बुवाची की कुश्तियाँ हिन्दू मुसलमान दोनों के समारोह की वस्तु हैं। किसानी के पूर्व शायद किसान अपनी शक्ति की परीक्षा करते हैं। इस इलाके में

दूत भेजे हैं। वे कह गये—सबको क्षमा करो, सबको प्यार करो, अन्तर से विद्वेष का विष निकाल दो। वे वरणीय हैं, स्मरणीय हैं, फिर भी आज इस दुर्दिन में उन्हें दरवाजे से ही कोरा नमस्कार करके लौटा दिया है।

भरतपुर कुश्तियों का सब से बड़ा अखाड़ा है। विभिन्न स्थानों के पहलवान माने जाने वाले किसान भरतपुर में एकत्रित होते हैं। वहाँ जो विजयी होता है वही इस इलाके में श्रेष्ठ वीर माना जाता है। फिर भी कुश्ती की प्रतियोगिता में मुसलमान अपेक्षाकृत अधिक उत्साह प्रकट करते हैं।

यतीन की बैठक के सामने रंचिड़े और गोबरा ने थोड़ी सी जगह खोद कर अखाड़ा बनाया है और दिन भर वहीं लड़ते भिड़ते हैं।

आज निष्प्रावान किसानों के घर में अरन्धन है। ऋतुमती धरित्री के वक्ष पर आग न जलानी चाहिए इसीलिए इन तीन दिनों में ब्राह्मण और विधवाएं अग्निदग्ध या अग्निसिद्ध वस्तुएं नहीं खातीं। देबू आज अरन्धन व्रत का पालन कर रहा है। वह अकेला बैठा है और शांत एवं उदास दृष्टि से मेघमेदुर आकाश की ओर देख रहा है। वर्षा के सजल घन मेघ जमा होते हैं, चक्कर खाते हैं और दूरदिगन्त के अन्तराल में छिप जाते हैं, इधर के दिगन्त में फिर नये मेघ पुंज प्रकट हो जाते हैं। वर्षा होने ही वाली है। अजस्र वर्षण से पृथ्वी सुजला होगी, फिर शस्यसंभार से श्यामला हो जायगी। मनुष्य का दुःख-दर्द दूर हो जायगा।.....देबू ऐसी ही बातें सोच रहा है। उसके जीवन में जो आकस्मिक और प्रचण्ड दुर्घटना हो गई है उसने देबू की प्रकृति में भी परिवर्तन कर दिया है। अब वह शांत, उदासीन और सर्वथा एकाकी मनुष्य हो गया है, गाँव

वाले उसे प्यार करते हैं, श्रद्धा करते हैं फिर भी उसके पास अधिक समय तक बैठ नहीं सकते। देबू की निश्चेष्ट और निर्वाक उदासीनता में वे हांफने-से लगते हैं।

रात में—गहरी रात में देबू यतीन के पास जाता है। तब उसे साथी मिलता है। यतीन ने उसे कुछ पुस्तकें दी हैं। बंकिम ग्रंथावली देबू के पास थी, रवीन्द्र नाथ की कुछ रचनाएं, शरत् ग्रंथावली और आधुनिक लेखकों की कुछ पुस्तकें यतीन ने दी हैं। पुस्तकों द्वारा उसका संगीहीन समय निरुद्वेग प्रशांति से बीत जाता है! कभी-कभी वह चौतरे पर बैठ कर शिवली के उस वृक्ष की ओर अपलक दृष्टि से देखता रहता है जिस के साथ बिलू की सैकड़ों स्मृतियां विजड़ित हैं। बिलू को शिवली के फूल बहुत पसन्द थे। शरत के कितने ही प्रभातों में देबू ने भी बिलू के साथ वहाँ फूल बिने हैं।

आज शाम को उसे आलेपुर जाना है। आलेपुर के सेवक आये थे और कह गये हैं कि आप को हमारी कुश्ती प्रतियोगिता के पाँच पंचों में एक पंच बनना पड़ेगा। उस ने हंस कर कहा था—"मुझे क्यों इछू भाई, और किसी—"

इछू बोला था—"बस, बस, ऐसा भी कहीं हो सकता है? आप जो फैसला देंगे, उसे पाँचों गांव के आदमी मानेंगे।"

देबू के अंतर में यह आकांक्षा रही है कि पांचों गांवों के आदमी उस की बात मानें परन्तु आज कितना बड़ा मूल्य लेकर यह आकांक्षा पूरी हुई है?

देवू सोचने लगा कि—मेरे साथ यतीन भी आलेपुर चले तो बहुत अच्छा हो। यतीन को वह प्यार भी करता है और श्रद्धा भी। यतीन कभी-कभी कहता है—'हमारे देश में लोग शारीरिक शक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न ही नहीं करते।' अम्बुआची की कुश्तियां उसे दिखाता और बताता कि एक दिन था जब सभी कुश्ती लड़ते थे—इस चण्डीमण्डप की भांति यह प्रथा भी अब तक बची है। चण्डीमण्डप इस बार छाया नहीं गया, बरसात में वह गिर पड़ेगा। गांव के आदमियों ने छवाया नहीं, श्रीहरि ने भी हाथ नहीं लगाया। श्रीहरि तो उसे गिराना ही चाहता है। इस बार दुर्गा पूजा के बाद सर्वशुद्धा त्रयोदशी के दिन वह उसी स्थान पर मन्दिर बनवायेगा, पक्का मण्डप खड़ा करेगा। चण्डीमण्डप अब प्रत्येक प्रकार से श्रीहरि का है। श्रीहरि ही अब इस गाँव का ज़मींदार भी है। शिव-कालीपुर की ज़मींदारी उसने ही खरीद ली है। चण्डीमण्डप उसकी अपनी सम्पत्ति हो गया है। अनाच्छादित चण्डीमण्डप की दीवालें बैसाख की आंधियों के कारण अभी धूल से भर गई हैं। वसु-धाराओं के पुरातन चिह्न तक नहीं दीख पड़ते।

श्रीहरि भी अब देवू को प्रायः बुलाता है—"आओ चाचा, मेरे यहां भी पधारो।"...वह व्यङ्ग नहीं करता, आंतरिक श्रद्धा के साथ बुलाता है।

उधर श्रीहरि के साथ फिर द्वन्द्व होने की सम्भावना बीज से अंकुर की भांति बढ़ रही है। सेटलेमेंट की पांचवीं धारा लागू

होने वाली है। श्रीहरि इस आधार पर लगान बढ़ाने की माँग करेगा कि—अनाज का मूल्य बढ़ गया है। उस दिन श्रीहरि ने यह चर्चा प्रारम्भ भी की थी। देबू ने कहा था, पहले यह तो देखो कि आस-पास के गाँवों में क्या होता है। सब गाँवों में लगान बढ़े तो तुम भी बढ़ा लेना।

सरकारी सर्वे के फलस्वरूप जमींदारों को लगान बढ़ाने के लिए सार्वजनिक पर्व जैसा अवसर मिल गया है। प्रजा चिन्तित हो रही है। गाँव के मातबर देबू के पास गुपचुप आते हैं। उसने बताकर कहा है, निश्चय भी किया है कि अब वह दुनिया के बखेड़ों में न पड़ेगा फिर भी नहीं मानते। वैसे लगान बढ़ाने की चर्चा सुन कर वह सिहरा भी है! गाँव की ओर देखता है तो मनुष्यों को दो धोतियाँ और पेट भरने के लिए दो मुट्ठी चावल भी नसीब नहीं होते, इस पर लगान भी बढ़ गया तब तो लोग मर ही जायेंगे। किसान का लड़का श्रीहरि जमींदार होकर ये बातें भूल गया है, परन्तु मुन्ना और बिलू को खोकर और प्रायः सन्यासी होकर भी वह इस बात को भूल नहीं पाता। कई दिन से यतीन के साथ इसी विषय की चर्चा हो रही है।

देबू ने सोचा है कि इस स्थिति में उसे यह काम अपने हाथ में लेना ही होगा। परन्तु कभी कभी यह ख्याल भी आता है कि दुनिया भर के बखेड़े में न पड़ना ही अच्छा है। उसे न्याय-तीर्थ की कथा याद आती है। यतीन ने उसे कथा का दूसरा अर्थ समझाने की चेष्टा की है परन्तु उसे वह अर्थ जंचा नहीं। साथ

ही साथ उसे स्वयं ही यह बात आश्चर्यजनक जान पड़ती है कि वह केवल धर्म कर्म में ही अपना मन क्यों नहीं लगा पाता।

जगन और हरेन तो लगान वृद्धि के सिलसिले में अभी से युद्ध घोषणा कर देने के मंसूबे बाँध रहे हैं। हरेन रास्ते में, मुहल्ले में और घाट पर घोषणा करता फिरता है कि धर्मघट करो। हम लोग तो हैं ही।

धर्मघट बंगाल की जनता के लिए बहुत पुरानी प्रथा है। धर्मघट नाम से ही इसकी प्राचीनता का परिचय मिल जाता है। पहले जनता किसी कार्य की साधना के लिए धर्म को साक्षी बनाकर घट स्थापित कर, प्रतिज्ञा करती थी। बाद में यह ज़मींदार और प्रजा एवं पूंजीपति और श्रमिक के संघर्ष क्षेत्र में सीमा बद्ध हो गया।

जनता में जो प्रबल उत्तेजना अनुभव करते हैं, संघ शक्ति की प्रेरणा से असंभव को संभव करना चाहते हैं, वे अपने स्वार्थ को हंसते-हंसते बलिदान कर देते हैं। गाँवों का इतिहास देखा जाय तो प्रत्येक गाँव में एक आध ऐसे व्यक्ति का परिचय मिलेगा जिसके पूर्वज अपने समय में प्रजा धर्म-घट के नेता बन कर और अपना सर्वस्व नष्ट कर भावी पीढ़ी को दरिद्र बना गए हैं। कई गाँवों में ऐसे खण्डहर पड़े हैं, जो पहले समृद्धिशाली किसानों के घर थे परन्तु वे धर्मघट के कारण बरबाद हो गये; अपने वंशजों में से कोई पेट भरने

के लिए गाँव छोड़ गये हैं और कोई रोग और अनशन से प्राण देकर वंश ही निर्मूल कर गये हैं।

परन्तु ऐसे धर्मघटों के लिए जिस सार्वजनिक अवसर की आवश्यकता होती है वह बहुत कम मिलता है। अवसर के साथ साथ प्रेरणा देने योग्य व्यक्ति की भी आवश्यकता होती है। इस बार ऐसा ही सार्वजनिक अवसर आया है। प्रत्येक गाँव में ज़मींदार लगान बढ़ाने की चेष्टा कर रहे हैं और प्रजा अधिक लगान देने के लिए प्रस्तुत नहीं है, वह इसे अन्याय समझती है और ज़मींदारों की कोई भी युक्ति स्वीकार नहीं करती। वह कई पीढ़ियों से प्राणपण परिश्रम करके जिस भूमि को उर्वरा बनाती आ रही है उसमें उत्पन्न शस्य को अपना ही समझती है। इसके विरुद्ध वह कोई तर्क सुनना नहीं चाहती। प्रत्येक गाँव में प्रजा इसी विषय की चर्चा कर रही है और इस चर्चा की प्रत्येक तरंग देबू तक पहुचती है।

आलेपुर के मुसलमान किसानों ने आज देबू को कुश्ती देखने के लिए बुलाया है—इस निमंत्रण के पीछे भी वही तरंग है। कुश्ती के बाद इसी विषय की चर्चा होगी।

महाग्राम की तरंग भी देबू के निकट तक आ गई है। गाँव वाले न्यायतीर्थ जी के पास गये थे। न्यायतीर्थ जी ने उन्हें देबू के पास भेज दिया है। साथ में एक चिट्ठी भी लिख दी है—"पंडित, मेरे शास्त्र में इस का विधान नहीं है। तुम्हीं यह काम कर सकते हो, सोच समझ कर निर्णय कर दो।"

देबू ने न्यायतीर्थ को मन में ही प्रणाम किया है।····· तुम मेरे कंधे पर यह बोझ डाल रहे हो देवता? अच्छा, मैं यह भार उठाऊंगा।··· उसके होठों पर एक विचित्र मुस्कान दीख पड़ी है। उस दिन न्यायतीर्थ के सामने जो मुस्कान आई थी वैसी ही यह मुस्कान भी है। वह सोच रहा है कि मैं अनुचित संघर्ष न करूंगा। कानून जब वृद्धि का अनुमोदन करता है तब प्रजा को लगान बढ़ाना ही पड़ेगा। परन्तु वृद्धि न्यायसंगत होनी ही चाहिए, प्रजा की स्थिति देखकर की जानी चाहिए। आज भी रथयात्रा के दिन जब न्यायतीर्थ के गृहदेवता की रथ यात्रा के उपलक्ष में मेला लगेगा तब वहाँ पाँच सात गाँवों के आदमी जमा होंगे। प्रत्येक गाँव के मातवर न्यायतीर्थ से आशीर्वाद लेने आयेंगे। न्यायतीर्थ ने देबू को भी निमंत्रण दिया है। देबू ने निश्चय किया है कि वहीं सब गाँवों के चौधरियों से परामर्श करने के बाद कोई निर्णय किया जायगा।·····

'पों—भस-भस-भस' मुंह से रेलगाड़ी दौड़ाता हुआ उचिंड़े आया और क्षण भर के लिए खड़ा होकर बोला—"नजरबंदी बाबू बुलाते हैं" और फिर मुंह से सीटी बजाता हुआ दौड़ा—'पों—भस-भस-भस्।

उचिंड़े के ढङ्ग देखकर देबू मुस्कराया।

यतीन ने अनिरुद्ध की चर्चा की।

"दो-महीने हो गये देबू बाबू। कर्मकार को तो अब आ

जाना चाहिए था। मेरे हिसाब से उन्हें दस दिन पहले छूटना चाहिए था। थाने वाले भी यही कहते हैं।"

"यही तो, अनि भाई को तो अब तक आ जाना चाहिए था।"

"मैं सोचता हूं कि जेल में कोई और झगड़ा करके सजा तो नहीं बढ़वा ली।"

"आश्चर्य नहीं जो ऐसा ही हुआ हो। अनि भाई का क्या भरोसा! उनके बदन में प्रचण्ड शक्ति है और दुर्दान्त क्रोधी है। अनिरुद्ध सब कर सकता है!" देबू ने कहा—"लुहारिन शायद बहुत चिन्तित हो रही है!"

यतीन मुस्कराया—"माँ जी? देबू बाबू! वह भी विचित्र हैं। देखते नहीं, ये दोनों आवारा छोकरे अब कहीं नहीं जाते! दिन-रात आस-पास ही घूमते रहते हैं। माँ जी भी चौबीसों घण्टे इन्हीं में उलझी रहती हैं। एक दिन अनिरुद्ध के सम्बन्ध में पूछा था—बस! फिर कभी ख्याल आवेगा तो पूछेंगी।"

इस साधारण बात से ही देबू की आँखें भर आईं, मुन्ना को गोद में लिए हुए प्रसन्नबदना बिलू उसे याद आ गई।

यतीन बोला—"दुर्गा ने बल्कि दो-तीन बार पूछा भी है।"

आँखें साफ करके देबू मुस्कराया, बोला—"दुर्गा आजकल मेरी तरफ बहुत कम आती है। एक दिन पूछा तो कहने लगी—गाँव वालों को तो जानते ही हो जीजा! मैं बहुत आऊं जाऊंगी तो तुम्हें लपेट कर कितनी ही बातें बनायेंगे।"

देबू ने ठीक कहा। दुर्गा देबू के यहाँ प्रायः नहीं ही जाती परन्तु अपनी माँ को दूध देने भेजती है और पातू दिन में बार २ हालचाल पूछने पहुंचता है। रात में पातू देबू के घर में ही सोता है—यह भी दुर्गा का प्रबन्ध है। इसके अतिरिक्त दुर्गा भी अब बदल-सी गई है। अब वह पहले जैसी लीला चंचला तरंगमयी नहीं रह गई। आश्चर्यजनक रूप से शांत हो गई है। शायद उसे भी देबू की छूत लग गई है। यतीन का किशोर तरुण रूप भी अब उसको विचलित नहीं करता। कभी-कभी वह देबू को दूर से देखती है और उसी की तरह उदास दृष्टि से भूमि की ओर निरर्थक देखने लगती है!

यतीन ने कुछ देर बाद कहा—"श्रीहरि घोष ने सदर में दरख्वास्त भेजी है कि गाँव की प्रजा धर्मघट की तैयारी कर रही है और इसकी जड़ में मैं हूं। मुझे यहाँ से हटाने की चेष्टा भी हो रही है। शायद मुझे जाना ही पड़ेगा। मुझे इस स्नेह-पागलिनी स्त्री की चिन्ता है। इतना ही भरोसा है कि आप हैं, परन्तु यह भी एक झंझट है। इसके अतिरिक्त यह स्त्री भी अद्भुत है फिर दो लड़के पाल लिए हैं। ये क्या खायेंगे—कैसे गुजर होगी? मैं चला जाऊंगा तो किराए के दस रुपये भी न मिलेंगे। जमीन भी सुना है, नीलाम हो रही है। उधर आकुलिया का फेलू चौधरी भी श्रीहरि के साथ मिल गया है और उसने नालिश कर दी है। बाकी लगान और तमस्सुक के रुपये—दोनों मिलकर तो बहुत हो जायेंगे। जमीन नहीं बच सकती। आजकल माँ जी धान

कूटती हैं, कंकना के बाबुओं के यहाँ काम कर आती हैं परन्तु इतने से दोनों लड़कों समेत घर का खर्च तो नहीं चल सकता !"

देबू ने कुछ देर सोच कर कहा—"जेल के दफ्तर से ही अनिरुद्ध की पक्की खबर मिलेगी। न होगा तो मैं कल जाऊंगा और पता लगाऊंगा।"

देबू सदर गया और दो दिन तक न लौटा। यतीन और भी चिन्तित हुआ। और कोई यह बात नहीं जानता, पद्म से भी नहीं कही गयी। तीसरे दिन देबू लौटा। अनिरुद्ध का पता नहीं चला। जेल से वह दस दिन पहले छूटा था। देबू ने उसे बहुत ढूंढ़ा, इसी में दो दिन लग गये। जेल से निकल कर वह एक दिन सदर में ही रहा था, दूसरे दिन जंकसन तक गया था। वहां से एक स्त्री को साथ ले कर फिर चला गया। इतना ही मालूम हुआ है कि वह कारखाने में काम करने के लिए कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली या लाहौर गया है। वह यही कह गया है कि जब कारखाने में ही काम करना है तब यहां क्यों करे—बड़े कारखाने में क्यों न करे। कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली, लाहौर जहां ज्यादा पैसे मिलेंगे वहीं काम करूंगा।

घर के भीतर से कुण्डी खड़की।

यतीन और देबू ने चौंक कर एक-दूसरे का मुंह देखा। फिर कुंडी खड़की। यतीन उठ कर गया और पद्म के सामने अपराधी की भान्ति सिर झुका कर खड़ा हो गया।

पद्म ने पूछा—"वह क्या जेल से निकल कर कहीं चला गया है ?"

"हां"

"कलकत्ता, बम्बई ?"

"हां"

पद्म ने और कुछ न पूछा, घूम कर दीवार के सहारे बैठ गई। "वह चला गया है ? जाय ! उसका धर्म उसके साथ है !"

पद्म की यह मूर्ति देख कर यतीन विस्मित न हुआ। उचिंड़े और गोबरा पद्म को उदास देखते ही उसके पास पहुंच गये। यतीन बहुत-कुछ आश्वस्त होकर देबू के पास लौट आया।

\+ + + + +

चार दिन बाद। आज रथ यात्रा है।

वर्षा कल रात से आरंभ हो गई है। मूसलाधार। वृष्टि ने चारों ओर जल ही जल भर दिया है। झड़ लगी है। किसानों ने सिर पर पत्तों की छतरी लगा कर घनघोर वर्षा में ही खेतों में काम शुरू कर दिया है। खेतों की मेंड़ों में जो कटाव हो गये हैं, वे बंद किए जा रहे हैं, चूहों के बिल भरे जा रहे हैं। पानी को खेतों में ही रोक लेने के लिए पूरी किलेबंदी की जा रही है। पैरों के नीचे की मिट्टी मक्खन जैसी मुलायम हो गई है और उसमें से सोंधी गंध निकल रही है। पानी से भरे खेतों पर बादली आकाश का आलोक प्रतिफलित हो रहा है और वे चक् चक् चमक रहे हैं। कहीं-कहीं बेड़ के हरे धान सब्ज मलोचे

की तरह लग रहे हैं। वायु से धान के पेड़ हिलते हैं—ऐसा जान पड़ता है कि अदृश्य लक्ष्मी-देवी मेघलोक से कोमल चरण रखती हुई उतरी है और पृथ्वी पर आसन बिछा कर बैठ गई है।

यतीन इस वर्षा में ही बैठक से रास्ते पर उतरा। उसके साथ दारोगा हैं। दो चौकीदार यतीन का सामान सिर पर उठाये हैं। देखा, जगन, हरेन प्रायः सभी गांव वाले वर्षा में ही खड़े हैं। यतीन का अनुमान ठीक निकला है। उसे यह गांव छोड़ देने की आज्ञा दी गई है। अब उसे सदर में—अधिकारियों की निगाह के ठीक नीचे—रखने की व्यवस्था की गई है। दरवाज़े पर म्लानमुखी पद्म खड़ी है; आज उसके मुंह पर घूंघट नहीं है। दोनों आंखों से आंसुओं की धारा बह रही है। उसके पास उचिंड़े और गोबरा खड़े हैं—स्तब्ध और विपन्न।

पहले यतीन विस्मित हुआ था, सोचा था, पद्म शायद कोई गोलमाल कर देगी। मूर्छा-व्याधि-ग्रस्ता पद्म शायद मूर्छित ही हो जाय। परन्तु पद्म ने केवल आँसू बहा कर उसे निश्चिन्त कर दिया। उसके पास उचिंड़े और गोबरा शांत-शिष्ट बने बैठे थे। पद्म ने उनसे कुछ भी न कहा।

उचिंड़े ने पूछा—"तुम चले जाओगे बाबू?"

"हाँ। तुम माँ जी के पास खूब अच्छी तरह रहना उचिंड़े। क्यों? मैं चिट्ठी लिखूंगा।"

उचिंड़े ने गरदन हिला कर स्वीकार किया, फिर कहा—"फिर तुम न आओगे बाबू?"

यतीन ने गरदन हिला कर हंसने की चेष्टा की परन्तु एक लंबी साँस लेकर रह गया। फिर बोला—"माँ जी, जिस दिन मैं छूटूंगा—एक न एक दिन तो मुझे छोड़ेंगे ही—तुम्हारे पास आऊंगा।"

पद्म चुप बैठी रही।

यतीन ने कहा—"सावधान रहना, घर में कोई अभिभावक नहीं है।"

पद्म ने नीरव रोदन में भी मुस्का कर हाथ ऊपर उठाये और आकाश की ओर देखा।

यतीन की आंखें छलछला आईं। आत्म-संवरण करके उसने कहा—"कोई बात हो तो पंडित से कहना—उनकी सलाह लेना।"

पद्म का मुख अब चमका,—"हाँ, पंडित हैं।" आंखें पोंछ कर वह बोली—"तुम भी सावधान रहना।"

नलिन, वह चित्रकार लड़का भी भीड़ में चुपचाप खड़ा था। वह चुपचाप आगे आया और झट से प्रणाम करके अभ्यास के अनुसार चुपचाप चला गया।

यतीन उसे देख कर मुस्कराया।

हरेन ने हाथ पकड़ कर कहा—"गुड बाई ब्रदर!"

जगन बोला—"रिलीज़ होने पर खबर देना।"

सतीश पासी ने आकर प्रणाम किया और एक तहाया हुआ मैला कागज देकर, निर्बुद्धि की भाँति हंसते हुए बोला—"हमारा गाना! आपने कहा था लिखेंगे! लिखा रखा था, दे नहीं पाया।"

यतीन ने काग़ज़ यत्न के साथ जेब में रख लिया।

आश्चर्य ! दुर्गा नहीं आई।

दारोगा बोले—"अब चलिए यतीन बाबू।"

यतीन ने दृढ़ पदक्षेप से अग्रसर होकर कहा—"चलिए।" देबू उसके साथ-साथ चला। जगन, हरेन और अन्य गाँव वाले पीछे चले। रास्ते में चण्डीमण्डप पर श्रीहरि घोष खड़े थे। मजूर मण्डप का फूस उतार रहे हैं; वर्षा से वह गिर पड़ेगा। इसके बाद वह मंदिर बन जायगा। श्रीहरि घोष ने भी भद्र मुस्कान के साथ उसे एक क्षुद्र नमस्कार किया।

गाँव पीछे छटा और खेत आ गये। यतीन ने कहा—"अब आप लोग लौटिए।"

देबू ने कहा—"चलिए, मैं बाँध तक चलूंगा। वहाँ से महाग्राम जाऊंगा, ठाकुर महाशय के यहाँ। आज उनके यहाँ रथयात्रा है।"

सुनसान रास्ते में एक ताल के किनारे और पेड़ की छाया में दुर्गा खड़ी थी। उसे किसी ने नहीं देखा परन्तु वह इनको ओर देख कर जैसी की तैसी खड़ी रह गई।

सब चुपचाप चल रहे हैं। ऐसा जान पड़ता है कि सबकी वाणी वेदना में खो गई है। दारोगा बाबू भी मौन हैं। जैसे सब की सम्मिलित वेदना ने उनके हृदय को भी अज्ञात रूप से स्पर्श कर दिया है।

यतीन को कितनी ही छोटी बड़ी बातें याद आ रही हैं। खेतों

को देख कर उसकी विचार धारा बदल गई। इस विस्तीर्ण मैदान में एक दिन हरे धान लहरायेंगे, धीरे-धीरे हेमंत आयेगा और वे स्वर्ण के वर्ण से उद्भासित हो जायँगे। किसानों के घरों में सोने की फसल के ढेर लग जायँगे—।

क्षण भर बाद उसे ख्याल आया—फिर ? फिर वे धान कहाँ जायेंगे ?

उसकी आँखों के सामने अनिरुद्ध के घर का चित्र आया, कुछ और घर भी झलके। पुराने घर, सूने आँगन, अभाव पीड़ित मानव, महामारी, मलेरिया, ऋण का भार, दुबले-पतले और अध नंगे बच्चे। उचिंड़े और गोबरा—भावी पीढ़ी के प्रतिनिधि हैं।...

फिर उसे ख्याल आया—पद्म उसके मस्तक पर अशोक-षष्ठी का टीका लगा रही है।

हठात् उसे 'स्टैटिस्टिक' बातें तुच्छ जान पड़ने लगीं। कठिन वस्तुगत हिसाब की बातों में अर्ध सत्य ही है ! परन्तु संसार केवल हिसाब से ही नहीं समझा जा सकता। यह बात एक दिन न्यायतीर्थ ने कही थी। उसकी आँखों के सामने न्यायतीर्थ की छवि आ गई। उसने सिर झुका कर उन्हें बार-बार प्रणाम किया और स्वीकार किया कि संसार और संसार के कुछ मनुष्य अंक-शास्त्र की सीमा में ही बंधे नहीं हैं। न्यायतीर्थ हिसाब से ऊपर हैं—परिमाप से परे हैं। और यह मनुष्य जो साथ चल रहा है—पंडित देवू घोष; यह अर्ध शिक्षित किसान हृदय की विशा-

लता से अपने निर्धारित मूल्याङ्क को पीछे छोड़ गया है—यतीन यह भी निश्चित न कर सका कितनी दूर पीछे छोड़ गया है, यह भी अंकशास्त्र के लिए एक रहस्य जान पड़ा कि कैसे पीछे छोड़ गया है।

हिसाब की इस भूल से ही तो सृष्टि बची हुई है। अंकशास्त्र के बड़े-बड़े हिसाब लगा कर घोषणा की गई कि धूमकेतु के साथ एक टक्कर होगी और पृथ्वी चूर-चूर हो जायगी। हिसाब गलत न था परन्तु किसी रहस्यमय के संकेत से पृथ्वी भूल से धूमकेतु की बगल से निकल गई और बच गई।...

ऐसा न होता तो इस समाज की सब शृंखलाएं तो टूट चुकी हैं। नाई, धोबी, लुहार,कुम्हार आदि ने ग्रामों की सनातन व्यवस्था के अनुसार निर्धारित अपने कार्य छोड़ दिए हैं। जिस बंधन ने एक गाँव से पंचग्राम, सप्तग्राम, नवग्राम दसग्राम, विंशतिग्राम, शतग्राम और सहस्रग्राम को एक सूत्र में बाँध रखा था उसकी प्रत्येक गाँठ खुल गई है।

महाग्राम का 'महा' विशेषण 'महु' में परिणत हो गया है, केवल शब्दार्थ में ही नहीं, वास्तविकता में भी उसका महा-महित्व विलुप्त हो गया है—अठारह मुहल्लों का गाँव आज कुछ घरों की बस्ती रह गया है। जीर्ण और वृद्ध न्यायतीर्थ किसी तरह दिन काट रहे हैं।

नदी के उस पार नवयुग नये महाग्राम की रचना कर रहा है। नवयुग की इस रचना का जो रूप होगा उसे यतीन ने

पुस्तकों में पढ़ा है और अपने जन्मस्थान कलकत्ते में प्रत्यक्ष देखा है। उस रूप के स्मरण से ही अंतर सिहर जाता है, ऐसा जान पड़ता है कि सम्पूर्ण पृथ्वी का प्रकाश बुझ जायगा, वायु स्तब्ध हो जायगी, सम्पूर्ण सृष्टि दुर्वृत्त—धर्षिता नारी की भाँति अन्तःसार शून्य कंगालिनी बन जायगी। उसका अंतर जीर्ण होगा, वक्ष में हाहाकार भरा होगा परन्तु बाहर चमक-दमक दीख पड़ेगी और मुंह पर कृत्रिम मुस्कान खेलेगी। अंक शास्त्र के नियमानुसार उस दुर्भागिनी सृष्टि का अंत क्षय रोगी की तिल-तिल मृत्यु में होगा। फिर भी वह आज हताश नहीं है। समुद्र तट की बालुका राशि में एक बालुका कण की भाँति ब्रह्माण्ड की व्याप्ति के मध्य में यह पृथ्वी है, इसमें जो जीवन रहस्य है—वह ब्रह्माण्ड के गूढ़ उपग्रहों के रहस्य का अतिक्रम है;—जीवन का एक ही कण प्रकृति की प्रतिकूलता और मृत्यु की अमोघ शक्ति को परास्त कर सैकड़ों, सहस्रों, नहीं नहीं, लाखों और करोड़ों धाराओं में—प्रत्येक काल में उच्छ्वसित होकर महाप्रवाह के रूप में बहा है। वह सम्पूर्ण बाधाओं को पार करेगा। आनन्दमयी प्राणवती सृष्टि में असीम शक्ति है—वह जीवन विकास की संपूर्ण विरोधी शक्ति को ध्वंस कर देगी। उसे पूर्ण विश्वास है कि भारत का जीवन प्रवाह बाधाओं और विघ्नों को पार कर फिर प्रवाहित होगा।

न्यायतीर्थ जीर्ण हो गये हैं। उनका युग बीत चुका है—वे न रहेंगे परन्तु उनकी स्मृति, उनका आदर्श नव-जन्म ग्रहण

करेगा। यतीन मुस्कराया। उसे न्यायतीर्थ का पौत्र विश्वनाथ याद आया। वह आयेगा। और देबू घोष गाँव की विशृङ्खला के इस युग में, ध्वंस और निर्माण के इस क्षेत्र में—श्रीहरि पाल, कंकना के ज़मींदार और थाने के दारोगा की लाल आँखों को तुच्छ मान कर खड़ा हो गया है, महामारी के आक्रमण को इसने रोक दिया है। देबू का आलिंगन करते समय उसने स्पष्ट अनुभव किया है कि उसके वक्ष में अभयमंत्र आलोड़ित हो रहा है और उस मंत्र में सब बाधाओं और सब विघ्नों को रौंद कर जीवन की सार्थकता प्राप्त करने का अदम्य आग्रह भरा है।

उत्तेजना से यतीन के शरीर में कंपन की एक लहर दौड़ गई। आनन्द से उसकी आँखें दीप्त हो गईं। यही आनन्द उसके लिए सांत्वना है—उसने अपना कर्तव्य किया है, बंदी-जीवन में भी वह देबू के जागरण में सहायक हुआ है। यह बंदीत्व उसके अपने जीवन जागरण के भावप्लावन की गति रोकने में समर्थ नहीं हुआ। इसी तरह नये काल की धर्षण प्रचेष्टा भी विफल होगी—मनुष्य बच जायगा। कोई चिंता नहीं, कोई भय नहीं!

बाँध पर खड़े होकर देबू ने कहा—"यतीन बाबू! अब जाता हूं, नमस्कार!"

यतीन बोला—"नमस्कार देबू बाबू! विदा!..." देबू के दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर उसका मुंह देखने लगा; फिर अकस्मात् रुक कर बोला—

"उदयेर पथे शुनि कार वाणी भय नाई ओ रे भय नाई
निःशेषे प्राण जे करिबे दान क्षय नाई तार क्षय नाई।"

फिर उसने सर्वथा अकस्मात् ही अपना मुंह फिरा लिया और क्षिप्रगति से चलने लगा! देबू यतीन के गति-पथ पर दृष्टि जमा कर देखता रहा। उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी। उसे अपने सर्वथा एकाकी जीवन का ख्याल आ गया—बिलू और मुन्ना नहीं हैं, जगन और हरेन अब पहले की तरह आकर कलरव नहीं करते; गाँव भर से वह अलग होता जा रहा है। आज यतीन बाबू भी चले गये। अब दिन कैसे कटेंगे? वह किस के सहारे जीवित रहेगा?...सहसा उसे न्यायतीर्थ की कथा याद आई। कहाँ, मेरे वे शालग्राम कहाँ हैं? आकाश की ओर देख कर उसने सर्वस्वहीन की भाँति हाथ फैला दिए और अस्फुट कातर स्वर में संपूर्ण अंतर के साथ पुकारा—"भगवान्!"

मयूराक्षी के गर्भ में उतर कर यतीन खड़ा हो गया। ऊंचे बाँध पर खड़े, ऊर्ध मुख और ऊर्धबाहु देबू को देख कर वह आनन्द और तृप्ति से पुलिकत हो गया। मोहग्रस्त की भाँति देबू की ओर देखता ही रह गया।

दारोगा ने पुकारा—"यतीन बाबू, चलिए।"

दूर पर डफला बजता सुनकर देबू सँभला और एक लंबी साँस ली। डफला बज रहा है। महाग्राम में डफला बज रहा है।

न्यायरत्न के यहाँ आज रथयात्रा है। भगवान् शायद रथ पर बैठे हैं। रथ शायद चलने लगा है। वह रथ कहाँ रुकेगा—कौन जाने!

बाँध के रास्ते पर ही वह तेजी के साथ चलने लगा।

—समाप्त—